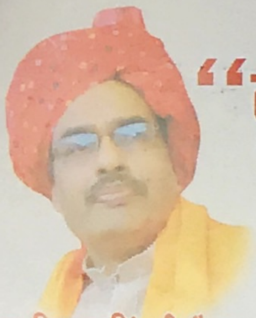
बुंदेली बसंत

ISSN : 0975-8011



२०१७

बुन्देली लोक संस्कृति के संरक्षण व संवर्धन हेतु आयोजित



मा. शिवराज सिंह जी चौहान
मुख्यमंत्री म.प्र. शासन

इक्कीसवें

"बुन्देली उत्सव-२०१८"

के आयोजन पर

हार्दिक शुभकामनायें



मा. विश्वास सारंग जी
सहकारिता मंत्री म.प्र. शासन

म.प्र. राज्य सहकारी बैंक मर्यादित, भोपाल (म.प्र.)

सशक्त सहकारिता, समृद्ध मध्य प्रदेश

मध्यप्रदेश के किसानों को शून्य प्रतिशत वार्षिक
ब्याज दर पर फसल ऋण के प्रणेता एवं शिल्पकार मध्यप्रदेश के

मुख्यमंत्री श्री शिवराज सिंह चौहान

ने ऐतिहासिक एवं क्रांतिकारी निर्णय लेकर प्रदेश को देश में
अग्रणी राज केरूप में स्थापित कर **किसान युग** की शुरूआत की है।

"समृद्धि आपकी योजनाएं हमारी - अपेक्स बैंक"

अमानतों पर ब्याज दर - 0911.2015

क्र.	अवधि	सामान्य	वरिष्ठ नागरिक
1.	180 दिन या 1 वर्ष से कम	8.00%	8.50%
2.	1 वर्ष से 3 वर्ष तक	8.50%	9.00%
3.	3 वर्ष से अधिक	8.25%	8.75%
4.	बचत खाते	4%	4.%

सौजन्य से : जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्या., छतरपुर (म.प्र.)

बुन्देली साहित्य, संस्कृति तथा इतिहास को समर्पित-

ISSN-0975-8011
पंजी क्र. MPHIN-17761/12/1/2002-TC

बुन्देली बसन्त

अंक १८, फरवरी २०१७

★

संरक्षक :
शंकरप्रताप सिंह बुन्देला 'मुन्नाराजा'
राजमहल परिसर, छतरपुर (म.प्र.)
मोबाइल : ०९४२५१४१४५५, ०९९८५०३०५५

★

संपादक :
डॉ. बहादुर सिंह परमार
एम.आई.जी.-७, न्यू हाउसिंग बोर्ड कॉलोनी
पन्ना रोड, छतरपुर (म.प्र.) ४७१००१
मोबाइल : ०९४२५४७४६६२, ०९७५५४६८९८९
e-mail : bsparmar1962@gmail.com

★

सह संपादक :
डॉ. हरिसिंह घोष
घोषयाना, संकटमोचन मार्ग, छतरपुर (म.प्र.)
मोबाइल : ०९४२५४१४२०६६

प्रकाशक:
बुन्देली विकास संस्थान
महल परिसर, छतरपुर (म.प्र.) ४७१००१

★ संपादन एवं प्रबंध पूर्णतया अवैतनिक एवं अव्यावसायिक

★ **आवरण चित्र :** (महाराजा छत्रसाल व उनकी गाथा)
अंशुमान सोनी
द्वारा-राजकुमार सोनी
गोवर्धन टाकीज के पास, छतरपुर (म.प्र.)

★ **सहयोगी राशि :**
२०० रुपये

★ **मुद्रक :**
आकृति ग्राफिक्स, छतरपुर (म.प्र.)

★ **संगणकीय अक्षर संयोजन :**
★ प्रतिमा तिवारी
छतरपुर (म.प्र.)

अनुक्रमणिका

भाषा, साहित्य और आलोचना

इतिहास, परम्परा और संस्कृति

बुन्देली गद्य

बुन्देली काव्य

अन्य

संपादकीय -

हिन्दुस्तान के मध्य भूभाग में स्थित बुन्देलखंड अँचल का अतीत गौरवशाली रहा है। चेदि, जुझौति, दशार्ण देश की संज्ञाओं से अभिहित अँचल चंदेलकाल तक उत्कर्ष की सीमाओं का स्पर्श करता रहा है। यशोवर्मन, धंग तथा गंड जैसे यशस्वी शासकों ने इस अँचल में अनेक जन कल्याणकारी कार्य संपादित कराये। पुरातत्व व स्थापत्य की दृष्टि से अनेक महत्वपूर्ण संरचनाएँ आज इस बात की गवाही दे रही हैं कि इन शासकों का चिंतन कितना लोकहितकारी था। चंदेलकालीन तालाब आज भी जल प्रबंधन के उत्कृष्ट उदाहरण हैं। चंदेलों के पराभव से लगभग चार-पाँच शताब्दी बाद वीर छत्रसाल के रूप में वीर बुन्देला शासक का अभ्युदय हुआ जिसने इस अँचल से अन्यायी शासन का अंत कर इसका एकीकरण करने का महत्वपूर्ण प्रयत्न किया। इन्होंने बुन्देली अस्मिता को नई ऊँचाईयों पर पहुँचाने का प्रयास किया। राज-काज की भाषा के रूप में जन भाषा बुन्देली का प्रयोग किया। निज भाषा-निज भूमि तथा निज संस्कृति को स्वाभिमान से जोड़कर अँचल में राष्ट्रीयता तथा स्वदेश की भावना को विस्तारित किया। बुन्देली कवियों को संरक्षण प्रदत्त कर लोकभाषा को जन भावनाओं की अभिव्यक्ति का माध्यम बनने की प्रेरणा दी किंतु छत्रसाल के उपरांत उनके उत्तराधिकारी लम्बे समय तक इस अँचल को एक साथ न कर पाए और दिल्ली दरबारों की सत्ता के इशारों से संचालित होने लगे। इस तरह बुन्देलखंड की रियाया को दोहरी गुलामी की मार झेलना पड़ी जिसके दुष्प्रभाव आज तक अँचल भोग रहा है। आज भी आजादी के सत्तर साल बाद भी जनचेतना का प्रवाह धीमा है। शिक्षा का प्रसार कम है, अन्याय-अनीति का प्रतिकार धीमा है जिससे महिलाओं व अन्य जन सामान्य की स्थिति देश के अन्य अँचलों की तुलना में बदतर है जिससे अँचल पिछड़े होने का विशेषण भोगने को अभिशप्त है।

महिलाओं की स्थिति पर जब हम नज़र दौड़ाते है तो पाते हैं कि अतीत से वर्तमान स्थिति तक स्त्रियों के साथ भेदभाव किया जाता रहा है जबकि अतीत में अनेक महिलाओं ने अपने व्यक्तित्व की तेजस्विता से अपने को सिद्ध किया है। महाराज छत्रसाल की माँ लाल कुँवरि के उत्सर्ग को अँचल विस्मृत नहीं कर सकता है। महाराज छत्रसाल की बहू जैतकुँवरि ने भी अपनी वीरता को सबित किया था। जब उनके पति जगतराज युद्ध में घायल हो गए तो उन्होनें मोर्चा संभाला था जिससे प्रसन्न होकर महाराज छत्रसाल ने उन्हें छह लाख की स्वतंत्र जागीर प्रदान की थी। अंग्रेजों से संघर्ष में झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई एवं उनकी हमशक्ल झलकारी बाई का नाम स्वर्ण अक्षरों में अंकित है ही। साथ ही महाराज पारीछत की पत्नी राजो के बलिदान को भुलाया नहीं जा सकता। प्रवीण राय की प्रशंसा करने को तो दिल्ली दरकार भी विवश हो गया था। इसके साथ अनेक विदुषियों ने साहित्य व संस्कृति के क्षेत्र में अपनी दमदार उपस्थिति अतीत में अंकित कराई है। आजादी की लड़ाई में भी साथ-साथ भाग लिया किंतु उनकी भागीदारि अत्यल्प रही। आज भी स्त्रियाँ आगे बढ़ रही हैं किन्तु देश के अन्य हिस्सों की तुलना में कम। इसके पीछे हमारी पितृ सत्तात्मक सोच है। पर्दा प्रथा के पीछे अशिक्षा तथा दकियानूसी सोच है। बुन्देलखंड अँचल में अब गुलाबी गेंग जैसे संगठन बन गए है, जो अपने हकों के लिए जागरूकता के कार्यक्रम चला रहे हैं। बुन्देलखंड अँचल में सांस्कृतिक विरासत महिलाओं के माध्यम से सुरक्षित है। माताओं की शिक्षा से ही बच्चे आगे बढ़ते हैं। अभी भी अशिक्षित

व पिछड़ी सोच से महिलाओं के प्रति पुरूषों को दृष्टि हीन है, इसका परिणाम विभिन्न अपराधों के रूप में हमारे सामने उपस्थित हैं। इस स्थिति से मुक्ति के लिए सामूहिक प्रयत्नों की आवश्यकता है। इसमें सर्वाधिक प्रभावी अल्प शिक्षा ही है। वैज्ञानिक सोच से संपन्न शिक्षा ही लैगिंक भेदभाव में कमी ला सकती है।

बुन्देलखण्ड अँचल में इस समय नशाखोरी की लत से जनजीवन अस्त-व्यस्त और भस्त है। गाँव-गाँव और मजरों-टोलों में नशा का गृह उद्योग संचालित हो रहा है। इससे गरीबों के घर तो बर्बाद हो ही रहे हैं, साथ ही नयी पीढ़ी में नशाखोरी की लत तेजी से बढ़ रही है। अपराधों में बढ़ोत्तरी हो रही है। चोरी, लूट तथा अन्य आर्थिक अपराधों के साथ सामाजिक हिंसा की घटनाएँ भी नशा के कारण बढ़ रही है। नशा के समास करने में महिलाओं की भूमिका प्रभावी हो सकती है घर-गाँव तथा समाज क महिलाएं नशा के विरूद्ध जागरूक हो जाएं तो सामाजिक परिवर्तन लाया जा सकता है। नशाखोरी को रोकने के लिए जन जागरूकता का अभियान निचले स्तर पर सामाजिक संगठनों के साथ शिक्षकों, साहित्यकारों तथा कवियों को चलाना चाहिए। इसके लिए उन्हें प्रतिबद्धता से कार्य करना होगा।

बुन्देली भाषा को समृद्ध बनाने के लिए उसमें विभिन्न विधाओं में रचनाओं का सृजन किया जा रहा है। आज बुन्देली में काव्य के साथ, निबंध, नाटक, व्यंग्य, संस्मरण, समीक्षा, साक्षात्कार तथा डायरी का लेखन हो रहा है। बुन्देली शब्दों का व्युत्पत्ति कोश, लोकोक्ति कोश तथा वृहद बुन्देली शब्द कोश का प्रकाशन उसके आगे बढ़ने का प्रमाण दे रहे हैं। विश्वविद्यालयों में बुन्देली साहित्य पर चर्चायें होने लगी हैं। बुन्देली में फिल्में बनने लगी व प्रदर्शित हो रही है। इन सब प्रयासों से भविष्य ठीक दिखाई देता है किंतु अभी भी तथाकथित पढ़े-लिखे लोगों को अपनी बोली में बात करने में हीनता का बोध होता है, जो चिंतनीय है। आज कुछ विद्वानों द्वारा राष्ट्रीय स्तर पर लोकभाषाओं की सम्पन्नता से हिनी के भविष्य पर संकट दिखाई देता है और वे बोलियों को बोली ही बने रहने की वकालत करते हैं। इस संबंध में मेरा स्पष्ट मानना है कि हिन्दी बोलियों से ही जीवन-रस ग्रहण करती है। वह बोलियों का समुच्चय है। हिन्दी और बोलियाँ एक दूसरे की पूरक हैं, बोलियाँ नहीं रहेंगी तो हिन्दी भी नहीं रहेगी। एक दूसरे की परस्पर पूरकता का अहसास करते हुए बोलियों का विकास करना चाहिए न कि पृथक्करण ।

इस दौर में एक बात बहुत कष्ट दे रही है कि लोग आत्मकेन्द्रित होकर क्लीव हो रहे हैं अन्याय के खिलाफ बोलने वालों की संख्या घट रही है, ठहरो और देखो की नीति पर लोग चल रहे हैं जिससे समाज में प्रतिगामी ताकतें मजबूत हो रहीं हैं तथा इंसानियत क्षरित हो रही है। अन्त में अपने प्रिय कवि श्री महेश कटारे 'सुगम' की इन दो पंक्तियों से समापन कि-

देखत रये अन्याय और अपनौ मौ नईं खोलौ।
अब जब खुद पै परी अबेरा फिरन लगे भन्नाने।।

बहादुरसिंह परमार

चिट्ठी मिली अपुन की

बुन्देल भूमि का गौरव और शान अपने आप में अनूठा-बुन्देली-बसन्त का अंक-17 माह-फरवरी 2016 से साक्षात्कार हुआ। पढ़कर मन प्रसन्न हो गया। दिन-प्रति-दिन यह अंक अपनी श्रेष्ठता को स्थापित कर रहा है।

इस नवीन अंक में-भाषा, साहित्य और आलोचना खण्ड से-रचनाऐं-लेख जिनमें-बुन्देली लोक गाथाओं में लोक जीवन-डॉ. सीमा तिवारी का लेख, जन्मोत्सव के-बिसरते लोकगीत-डॉ. कुँजीलाल पटैल, मनोहर जी का लेख सराहनीय है।

दूसरी ओर-इतिहास परम्परा और संस्कृति खण्ड से-बुन्देलों की वीरभूमि-बुन्देलखण्ड-डॉ. यशवन्त सिंह जी कृत एवं बुन्देली लोक पर्वों में, निहित वैज्ञानिक चिंतन बुन्देली लोक पर्वों में, निहित वैज्ञानिक चिंतन डॉ. कविता सिंह जी का लेख और डॉ. जयवीर सिंह का लेख हिन्दू या भारतीय एक दृष्टि विचार उत्तेजक हैं। गद्यखण्ड से लुकलुक की बीमारी(व्यंग्य) श्री राजीव नामदेव-राना लिधौरी-का और लागे न जियरा हमार, श्री रामस्वरूप पाण्डेय जी की रचना, साथी नई बहू के पाँलागने श्री हर गोविन्द जी के लघु कहानी काफी मनोरंजक बन पड़ी है।

काव्य खण्ड से-बुन्देलखण्ड की माटी, श्रीमान् रामगोपाल प्रजापति-अनजान की रचना, बिटिया हमें बचाने, डॉ. वर्षा सिंह की रचना, कोख की पुकार, डॉ. कृपाल वर्मा की रचना आनंदित कर देती है। बुन्देली बसंत काफी ऊँचाइयों की ओर अग्रसर होते हुये निश्चित एक बड़ा-पाठक वर्ग तैयार कर रहा है।

-ओ.पी. रिछारिया

परकोटा वार्ड, सागर म.प्र.

संस्कार और संस्कृति से समाविष्ट बुन्देली बसंत का यह अंक 17 फरवरी 2016 पठनीय संग्रहणीय है। गागर में सागर चरितार्थ करते इस अंक में बुन्देली रसरंग को आपने स्थान दिया है। बहुत-बहुत धन्यवाद स्वीकारें।

-गुलाब चन्द

18, विधानसभा मार्ग, लखनऊ

रावशंकर प्रताप सिंह बुन्देला, मुन्नाराजा के प्रखर प्रताप और बुन्देलखण्ड के प्रति उनके अन्त: करणीय असीम समर्पण और संरक्षण के परम पावन प्रयास के प्रतिफल स्वरूप बीस वर्षीय बुन्देलखण्ड विकास संस्थान, महल परिसर, छतरपुर (म.प्र.) अब बौद्धिक दृष्टिकोण से बुन्देली संस्कृति से ओतप्रोत संस्कार युक्त संस्थान के स्वरूप में स्थापित हो चुका है।

विभिन्न कार्यक्रमों हेतु गठित लगभग 25 समितियाँ और उनके 175 से अधिक पदाधिकारी तथा सदस्यों की प्रायोजना से प्रबन्धतंत्र एवं संरक्षक की उच्चकोटि की प्रशासनिक क्षमता के साथ-साथ व्यवहारिक दूरदर्शिता प्रदर्शित होती है। समितियों के पदाधिकारियों तथा सदस्यों का कार्य सराहनीय रहा है।

बुन्देली उत्सव हेतु निर्मित आकर्षक भव्य और विशाल मंच यद्यपि पर्यटक ग्राम बसारी में बसा है किन्तु वास्तव में अपनी प्रथम झलक में ही यह पर्यटक के हृदय में बस जाता है।

बुन्देली बसंत मात्र एक पत्रिका ही नहीं है, अपितु बुन्देलखण्ड की सामाजिक, सांस्कृतिक, भाषायी, साहित्यिक, परम्पराओं एवं इतिहास का एक संग्रहणीय मानद अभिलेख है। बुन्देली बसंत में सामग्री के चयन और सामग्री की समालोचना के विषय में प्रयास करना प्रथमतः अपनी क्षमताओं के बाहर है, द्वितीयतः मूल्यवान् स्थान विद्वानों के लिये सुरक्षित रखना कर्त्तव्य भी तो है।

-श्रवण सिंह सेंगर

कैरोखर हाउस, गुरसराय-झाँसी

बुन्देली बसंत 2016 का अंक मिला इसमें बुन्देलखण्ड और बुन्देली को केन्द्र मे रख कर अनेक लेखों का समावेश किया गया है। कई लेख शोध परख तथा स्तरीय होने के साथ संग्रहणीय है। विशेष कर डॉ. दया दीक्षित का लघु उपन्यास तथा डॉ. कन्हैयालाल अग्रवाल का कालिंजर सम्बंधी लेख बहुत महत्वपूर्ण हैं। अंक अब्दुल रहमान मंजर (हरिविष्णु अवस्थी), निर्मलचन्द्र निर्मल (डॉ. घनश्याम भारतीय), महारानी बृषभान कुवरि (डॉ.उमाशंकर उमेश)तथा डॉ. कामिनी के आलेख नई जानकारीयाँ देते है। डॉ. मोना जैना, नरेश कुमार पाठक, श्रमण सिंह सेंगर के लेख ऐतिहासिक तथ्यों को उद्घाटित करते है।

इस अंक में बुन्देली के नाटकों की परम्परा की जानकारी डॉ. लखनलाल खरे ने दि है। आचार्य दुर्गाचरणशुक्ल ललित निबंध तथा गुणसागर सत्यार्थी का आलेख प्रशंसनीय है।
अंक में बुन्देली उत्सव का प्रतिवेदन, सम्मानितों का परिचय तथा नयी पुस्तकों की जानकारी पाठक की ज्ञानवृद्धि करती हैं।

-डॉ. गंगाप्रसाद बरसैया

भोपाल

बुंदेली बसंत तौ न्यारौ बसंत है।
हम सब खों प्रानन सें प्यारौ बसंत है।।
बन्न बन्न के खिलत हैं, नए गीतन के फूल।
कवितन क्यारी किलकतीं मन भँवरा रए भूल।।
बुंदेलन की आँखन कौ तारौ बसंत है
मूरत शिल्प वास्तकला सब जामें दरसात
संस्कृती साहित्य कौ सूरज उगत दिखात
पूनौ की जुँदैया भुन्सारौ बसंत है।
चायें आँधी आउत रए चाएँ उठै तूफान
मुरझाबे बारौ नहीं जौ बसंत उद्यान
अबै नौं न एसौ निहारौ बसंत है।
सबई भांत की सम्पदा जामें धरी समेट
करत रहत परमार जू सब खों सादर भेंट
खिलत बारऊ मइना दुलारौ बसंत है।

- डॉ. शिवाजी चौहान

पूर्व उपप्राचार्य-गुरसराय-झाँसी उ.प्र.

बुन्देली बसंत 2016 का अंक प्राप्त हुआ इसके माध्यम से बुन्देलखण्ड की संस्कृति, समकालीन रचनाधर्मिता तथा इतिहास से परिचित होने का मौका मिला। इस पत्रिका के बारे में एक सुझाव है कि इसमें अन्य लोक अंचलो की सामग्री को भी स्थान दें तो अच्छा होगा।

-डॉ. राजेन्द यादव हिन्दी विभाग

डॉ. हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय सागर

बुन्देली बसंत 2016 का अंक प्राप्त हुआ। भाषा, साहित्य, और आलोचना, तत्पश्चात इतिहास, परम्परा और संस्कृति, बुन्देल गद्य, बुन्देली काव्य एवं अन्य विविध सामग्री को देखकर आँखें चुँधिया जाती हैं तथा मन सोचने को विवश हो जाता है कि सम्पादक कैसे इतना ढेर सारा कार्य कर लेते है।

श्री सुरेन्द्र शर्मा, शिरीष, डॉ. उमाशंकर खरे, उमेश, डॉ.दुर्गेश दीक्षित, डॉ. गुणसागर सत्यार्थी, श्री हरिविष्णु अवस्थी, डॉ. कैलाश विहारी द्विवेदी, डॉ. वीरेन्द्र निर्झर, पं. अपिलदेव तैलंग, डॉ. लखनलाल खरे, डॉ. गंगाप्रसाद बरसैया, डॉ. रामनारायण शर्मा, गुप्तेश्वर द्वारका गुप्त, डाल चन्द्र अनुरागी, पन्ना लाल असर, डॉ. सुरेश पराग, डॉ. हरिकृष्ण हरि, श्री महेश कटारे, सुगम, आचार्य भगवत दुबे, श्री नवल किशोर सोनी मायूष, डॉ. अवध किशोर जडिया एवं डॉ. कामिनी आदि आदि को पढ़ कर सारी थकान मिट गई।

-देवकी नन्दन शान्त

शान्तम् 10/30/2 इन्दिरानगर, लखनऊ

आपका बुन्देली बसन्त अंक मैंने पढ़ा काफी रोचक और सहेज कर रखने योग्य सामग्री से भरा यह-अंक अनमोल खजाने की तरह है। इस अंक में-कहानी-सगुनियाँ, डॉ. सुरेश पराग जी की एवं दिन डूबे लौं कहानी, ओ.पी. रिछारिया जी की और कवियन की पौ बारह-व्यंग्य रचना श्री सुरेन्द्र नायक जी की काफी अच्छी और मजेदार लगी।

बुन्देली पनिहारी, दहेज और बुन्देली गाँव-जैसी कविताएँ-अच्छी लगी। सम्पादक और उनकी पूरी कार्यकारिणी परिषद् को कोटि-कोटि बधाई

-जगदीश प्रसाद दुबे

कैलाशनगर, भोपाल

बुन्देली बसंत कौ सत्रहवौ अंक (2016)मिलौ, पढ़ कै भौत नोनो लगो। इतेक बिलात जनवन के आलेख, काव्य पढ़ कै मन गद्‌गद हो गऔ। साहित्य की कोनउ विधा ई में नई रय गयी। षटरस को आनंद मिलो। बुन्देली साहित्य, संस्कृति कौ अनमोल खजाना है बुन्देली बसंत। ई मे छपे भये सबरे गद्य आलेख एक शोध से कम नईया। भोत नोने है।

आपके भौत नोने सम्पादन व आपकी बुन्देली सेवा, साहित्य सेवा, लगन, श्रम व ऊर्जा को हमाई तरफन से सेकरन बार नमन है।

-राजीव नामदेव

शिवनगर कॉलौनी, टीकमगढ़

बुन्देली बसंत 2016 में यूँ तो कबर पृष्ठ अति सुन्दर और भावपूरित छपा है और लेख व आलेख, कहानी, कथा, गीत, मुहावरे आदि उच्च स्तर पर विद्यमान हैं। ज्ञान वर्धक रोचकता समेटे हुए जैसे-डॉ. दुर्गेश दीक्षित द्वारा बुन्देली लोक संस्कृति में राम,एन.डी. सोनी जी की साहित्य होली गुप्तेश्वर द्वारका जी की पतिबिरता, डॉ. दयाराम बेचैन का अटका, डॉ.सुरेश पराग जी की बुन्देली कथा सगुनियाँ आत्मसात करने वाली है।

वही नई पोथियों की सूची और डॉ. देवदत्त द्विवेदी जी की समय जानने की विधियाँ समयानुसार रोचकता लिये हुये है। पं. गुणसागर सत्यार्थी द्वारा लिखी हमारी दीवानगी के शिकार ईसुरी कड़वा सत्य को परिभाषित करता है। तो दूसरी ओर दो पुस्तकों की बुन्देली संस्कृति को संरक्षित सार्थक समीक्षा गागर में सागर की भाँति हुई है।

अन्त में यही कहूँगा कि बुन्देली बसंत के संरक्षक मण्डल, संपादक मण्डल मुद्रक व समिति के सम्मानीय सभी सदस्य परोक्ष और अपरोक्ष रूप से सहयोग कर्ता दर्शक गुनी श्रोताओं की सहभागिता निःसंदेह सराहनीय है।

-पन्नालाल असर

रामगोमती भवन, सुभाषनगर, झाँसी

मिलो-बुन्देली बसंत को अंक।
फरवरी 17-सोहल अंक।।
अंशुमन गेटअप छवि भायी।
शुभम् चेतक की अँगड़ायी।।
संपादकीय-लयें-सजगता-खूब।
अनुक्रमणिका सें अन्यँऊ भी खूब।।
अपुन की चिट्‌ठी-कर रई बात।
बोल कें हँस-दे रई सौगात।
विशेष में-अति-विशेष उपन्यास।
लघु क्रम गुन अवगुन भी खास
सजी-एक अठ्‌ठावन-पृष्ठी शोभा।
देख -पढ़ सबई-मन लोभा।।
लगै-नोनो-नोनो रुचिकर।
कयें सीकर का नईं सुखकर।

-डॉ. एल.आर. सोनी, सीकर

ठंडी सड़क, दतिया (म.प्र.)

बुन्देली बसंत 2016 के अंक में बुन्देली के उस लेखन को रेखांकित किया जा रहा है। जो आज समकालीन संदभों में प्रासंगिक है इसमें विधागत विविधता है। डॉ. दया दीक्षित का लघु उपन्यास की नायिका बुन्देलखण्ड के गॉव के वह बेटी जो अपने मायके और ससुराल में लगातार संघर्ष कर के ना केवल अपने परिवार की अस्मिता को बचाती है बल्कि आज के संदर्भ मे स्त्रियों को प्रेरणा देने का काम करती है।

-श्री नन्द किशोर पटेल

छत्रसाल नगर, छतरपुर

श्रद्धांजलि :

दिवंगत बेटी रागिनी के प्रति

बेटी प्राणों से भी प्यारी, इसकी गरिमा न्यारी।।
दीपशिखा बन आई, रागिनी चहुँ दिशि की उजियारी।
घर की छवि दूनी बढ़ती थी, जब गूँजी किलकारी।।
उज्ज्वल-कोमल, तन-मन से सुरभित थी घर-फुलवारी
पूरे घर को किया व्यवस्थित, अँगना हो कि अटारी
सकल गुणों की खान रही, संघर्षों से ना हारी।
समाधान करती शंकाएँ, जितनी भी हो भारी।
अमर रहे रागिनी, ब्रजलता-केशव कुल बलिहारी

-ब्रजलता मिश्र

केशवकुल 352, नानक गंज, सीपरी बाजार झाँसी

बुन्देली आसुकवि त्रयी के कवि रामसहाँय जू

-डॉ. के. एल. वर्मा बिन्दु

बुन्देली आसु कवित्रयी में तीन ठौ कवि माने जातै। पैले कवि शिबू दा जिनने आला रचौ दूसरे कवि भूपत सिंह यादव ''लल्ला''औ तीसरे कवि स्व. श्री रामसहाय जू कारीगर जो फड़ साहित्य के जाने माने कवि हतै। बुन्देली लोक काव्य की कैऊ विधाऐं मानी जाती जिने गाँउन गाँउन में सुनौ जा सकत। फड़ बाजी की सैकरन तरजन में, ख्याल चौकड़ियाँ-फागें, सैर मंज-तड़का, लावनी, कीरतन, भजंन, औ छन्दयाऊ फागें गाई जाती हैं, जे अनहोनी विधायें अब अपनेई आप लुप्त हो होकें मर रईंयें। झाँसी जनपद की मऊरानीपुर तैसील में मेंढ़की गाँव के ईसुरी चौकड़याँ सम्राट कये जातैं, ऊसेई छन्दयाऊ फागन में स्यावरी गाँव के आसु कवि रामसहाँय जू कारीगर अनोखे फनकार भये। श्री गनेशीलाल जू बुधौलिया ने फाग फड़ साहित्य पै अनोखों खोजबीन कौ काम करौ, उनई के संग डॉ. श्याम सुन्दर बादल जू ने फाग साहित्य पै खोज कर करूँ कें बुन्देली को पिटारो भर दओ। दोई जनन नैं भुजबल सिंह, ख्यालीराम, गंगाधर, मीर खाँ, गोटीराम, चुन्नीलाल, दुर्गादास, अनेकन अज्ञात कवियन खों उजागर कर करू दओ पे इनकी पैनी नजर फड़ काव्य के गायक रामसहाय जू पै नई परी सो नई परी।

जनपद में ऐसौ कऔ जातै आसु कवि जू के पिता श्री कवि हतैं, उनकै पिता सोऊ कविता रचत रततै गाउत रत तै औ गाँवबारन, खों सुनाउत रततै। कऔ जातै के होनहार विरवान के होत चीकने पात, सों बात बनी पत्ता चीकने भये, फले-फूले सुगंध फैली काय के ..... बादलन की उमड़ घुमड़ में बाँस की पोर धरती कौ सीना फोर अपनेई आप फूट जातैं, कोऊ रो कई नईं पाउत, टोक नई पाउत, सिर खों ऊँचों कर करू कें पोर की नुकीली नोंके अपनौ सिर ऊँचौ कर लेत। जई वात आसु कवि पै सोरा आना साँची होतै। कवि हिरदै में समाये सोये संस्कार भावनाउन की उमड़न, घुमड़न अंकुरित होवे के काजै अकुला अकुला, वियाकुल होकें कुल-विलाउन लगत, चुल-बुलाउन लगत, समाज के ठेकेदारन को तिरस्कार कौ भाव, सम्मान कौ अभाव, घिरना कौ व्योवहार भेद से मिली उपेक्षा की वेदना की पीरा, असनीय दर्द की पीर पिरा पिरा कर ऐसी पिरी, रिसी, बई, भौतई बई की ऊकी धार उनके काव्य में बन बनूँ के बैठ गई। नौनी कद काठी के धनी, सुभामानी रुकवौं नई जानत तै सो रुके नईं, झुक वौ नई जानत ते सो झुके नई, वे सिरम कै पुजारी हते, कला के पारखी हते, सुंदरता के उपासक सुघड़ सिलपी हतै, सरसुती मईया की सेवा में मौन मूक लगन से लगे रतते। दया, माया, ममता, करुणा, परोपकार, त्याग उनके जीवन के अमूल्य गुन हतै जो फाग में राग बन बनूँ कें उनके कोकिल कंठ से मधु सौ मिठास घोरत रतते। कवि को भाव-पक्ष औ कला-पक्ष अद्‌भुत कऔ जा सकत ये, कला सौन्दर्य झालर सो झिल मिलात, नर-नारी खों रिझाउत, भुलाउत भरमाउत, मटकाउत, अटकाउत सोचवेखों मजबूर कर करूं देतै, सोचवे खों उकसाउत ये।

बुन्देली धरती ककरीली पथरीली नुकीली कई जातै सौ इते के मान्स ऊके अनुरूप होतै कऔ जातै। तन खों बली बना लौ ऐसौ, सै ले बरसा सरदी घाम, मन खों बली बनालौ ऐसौ टेक न छोड़े आठौ याम। ई उक्ति खों इनने अपने जीवन में पूरी की पूरी उतार लई ती, वे सिरम के पुजारी हतै, तन मन से सबल ते, समाज की नोक झोक से मन को कंचन बनायो, कुरीतिओं से जूझना सीखो, सो वे आनबान के धनी सुआभमानी हते, अभिमानी नईं। मान मरजादा के बचाबे के लाने 150 बीघा पडुआ के खेत खों इनने ऐसें छोड़ दओ तो जैसे कोनऊ राह चलत चहत गली के पेड़ की छायरी खों छोड़ देतै, इसी ठसक ने इन्हे ठसकीला बनाऔ, नुकीलो बनाऔ, चुटीलौ बनाऔ, औ काव्य जगत में अपनौ खुदई स्थान बनाओ। काव्य की पगडण्डी से काव्य में राजपथ तक की यात्रा लगन से करी जी सें विजय श्री इनके चरनन खों चूमत रई। कऔ जातें, जो विश्राम की कामना नई करते, विजय श्री उनके चरण चूँमती है। उनने फड़-गायिकी में तुरन्त रचना रच रचूँ कें फड़न कौ दंगल जीत जात लऔं, विजयश्री उनकी प्रिया हती, तो पराजय उनकी दासी। यह सबउ ने पिताजी से मिलो तो काव्य के रूप में, सो इनने पिता रिन से उरिन होवे के काजै ई धरोहर खों ऑंगू सोई सरका दई ती, बेल खों आँगू फैला दई, मूलधन से बियाज भौतई पिआरौ होते, उनके सुपुत्र डॉ. दयाराम वर्मा जू उनके साँचे साँचे सपूत कढ़े कै रामसहाँय जू की बुन्देली पूँजी खों मय बियाज के, मूल पूँजी कौ खजानो भरवे में लगे रतये। कऔ जात -

कल से पियारा, आज होता है ।
मुमताज से पियारौ ताज होता है ।।
पिता को साँचो सुख सन्तान की प्रगति,
बिन्दु मूलधन से पियारा ब्याज होता है ।।

चिरइयाचिरवा, तिनका तिनका चुन चुन्नू चैनुअन के काजे घोसला बनाउत, ऊमें चैनुआ मौजे उड़ायत, जोऊ गुन राम सहाँय जू में कूट-कूट कें भरौ तो काय के वे कवि के संगे कारीगर सोउ हतै,सो उनने स्यावरी मेड़की धमना, मऊरानीपुर में नोने से नौने अनहोने कैऊ घौसला रचे, जिनमें जाने अनजाने जाने कितने जनन कौ जीवन बनों सुधरो। वे कन्नी के धनी हतै उतने ई करनी के सोऊ धनी हतै। सिल्प सौन्दर्य खाँ उकेरवो उनको काम हतौ, उनके मन की उथल पुथल चुलबुलात ती, कुल बिलात ती, उफान बन कें उफनात ती, उबरात ती, बगर जात ती, जेई उफान उनकी फड़ फागन में उफना-उफना ऊफान बन उफरा जात ती उबरा जात ती, काय कें जब मन की हँड़िया उफनत हती तौ फद-फद फदकत ती, फेन में बरबूला बनत तै, बिगरते फूलत ते, फटत ते भीतर भाव की जिन्स चुरती ती, पीर पिरवी ती औ हँडियन के ओठन सै बगरन लगत ती, फाग बन बनूँ के। कवि के मन की हँडिया ऐसी फदकी कै फड़ की फड़वाजी में बाजी की जीत जिता गई। कढ़ी फदकी-पकी कड़ी से कड़ी, जो बड़ी से बड़ी, मिल गुथ्थम गुथ्था होकें फड़ की जीत की, साँकर बन गई। साँकर की लड़ियाँ बुन्देली सौन्दर्य खाँ झिल झिला रई, झल झला के अपनी छटा छलका रई झलका रई बुंदेली जनी मान्सन खाँ मनई मन पुलका रई कुलका रई किलका रई- किलोलन में।

बुन्देलखण्ड में बियाव की बिरिया उनकी गारी चाव से गाई जातें :- देखिए

'घ' वर्ण खौं लेकें अधरोस्ठ रचना रची जो सौ नौने की नौनी बन गई। घ से दो ठौ अंग औ चौ अंग हो गये सौ रचना की टेक में घ वर्ण चार वेराँ आऔ। रचना की सिरवन्दी करे सजो सजाओ बैठे यें।

घाली मेघनाद ने साँघा घली लखन कें आँघाँ
घायल धरे लखन खों आगे, हरी दायनी जाघाँ
घड़ी रात रई जड़ी लियाये, जिनने सागर लाँघा.
घाँघ रही न खात जड़ी के, घालत लखन छलाघा
घा कारीगर आद अंत है अधर रंग से गा- घा

आसु कवि जू चमतकारी कवि हतै। उनकी फागें मिले जुले छन्दन की रचना दिखाई देती ये। इनकी सिंहावलोकन फाग ईको पियारों सो नमूना कऔ जा सकतै। सिंग की आदत होत ऊ चलती बिरियाँ पीछे खों देख के आँगू खों चलतये। कवि की रचना ऐसई चाल में चलत दिखातै। रचना के पैले चरण को आखरी सबद दूसरे चरण को आगे सबद बनकें रचना खों रच देतै। देखिए कृष्णावतारी रचना, ईखो नमूना कईजात।

दोहा- *नन्दलाला ने सखिन खों निकट लियों बुलवाय*
आये जमुना तीर पै गऊयें रहे चराय
टेक - *गऊयें चरा रये नन्दलाला, नंदलाला संग ग्वाला*
छंद- *ग्वाला लीने टेर फेर कीनी नई देर घेर, धौरी*
धूमर फेर टेर - सखा चटपट।
चटपट सखा फेर रये गइयाँ, गुइयाँ ग्वाल वाल लरकइयाँ।
ठैयाँ स्याम कदम की छइयाँ - बैठे झट पट।
उड़ान- झटपट हरि के सखा उठ, चटपट फेरे धेनु।
धेनु चैन से सखा चरा रये, स्याम बजा रये वेन।

कवि खों सरसुती मइया कौ अनोखो वरदान कऔ जा सकत यै। ऐसी नोनी फागन खों वे हालऊँ हाल गुनत रचत जातते औ गाउत जात तें। इतनोई नई आगूँ देखों कवि ने एक अच्छर न खोलकें रचना रची जी में चमत्कार खों चमका चमका के चमका दऔ - रचना एकाद अच्छरी तौ हैई अद ओष्ठ सोऊ बन गईये-

नानी नान नुनो नन्नी न, नें नें नुनो ननी ना।
नन्ना ना नो नानें नै नै, नुनें नना नानी ना
नोनी नुने न नोने नोने, ननू नुने नोनी ना
नन्नू ना नो नन्ने नन्ने, नन्नी नान नुने ना।

ई रचना में कवि ने अपनौ उपनाम नन्नू कओये। बुन्देली में खेत काटवें खों नुनवो, नुनुना, सुवना कऔ जातै। कवि पक्के किसान हते, किसानी को सबई रंग ढंग जानत ते, ऊ रंग ढंग खों एक अच्छर की रचना में रच रचू दऔ। इतनोई नई उनकी एक दूसरी रचना तौ बिना लठिया मात्रा की बेजोड़ कई जा सकतयै-

डगर चलत पनघट झट, नटखट बढ़कर।
झटकत व मटक पटकत, पकरत जल लकर।

मटक चलत झट सरपट सरपट,
धर सर पर मटक पकर चट।
छलकत दध सर पर रस तर तट,
लचकत कमर उड़त पट।
हर हर डरत नवल लरत उत,
कर पकरत तर तर वट।

लोक कवि के काव्य की ऐसी अनूठी रचनायें उनके कला कौशल की अचल धरोहर बन बैठी, जीसे वे फड़ के फड़ फटा-फट जीत जात तै।

केशव जू कौ स्थान अपनी रचनन में अद्भुत हतौ, उने काव्य कौ कठिन पिरेत लौ कऔ जात तौ, काय की उनकी रचनान खौ वोऊ समझ सकत तौ जो गुन आगरो हुइये, उनकी रचना में अलंकार चमत्कार कोल-कोल के भरो तौ देखिए-

माल वनी बलि केशवदास, बस केलि बनी वलमा।
मा सम सोम सजै बन वीन, नवीन बजै वन सोम समा।।

ई सवइया खो उल्टी सूदों उचारने से एकई सौ उचारन होत ये, ऐसी ई रचना लोक कवि अपने नरेन्द्र छन्द (चौकड़िया) में कर अपनों कौसल कुसलता से कर देते, जी कौ जोड़ फड़ सहित में कर वो कठिनई नई असम्भव होतै। लोक कवि चौकड़िया की अरधाली में बड़ी चतुराई से भर भरू के धर देतें औ फड़ खों जीत लेते। देखिए-

जा-जा कैआ सिख खसि आकें, केना बना बनाकें।
ना झामस दै दै समझाना, कै ना मना मना कें।
बे नर जानो नौ जारन वे, कैसा कसा कसा कें।
ना जा जाँ बे बेजा जाना, कै बानर रन बाँ कें।

लोक कवि राम सहाय जू खों राशियन कों ज्ञान खूब हतौ उनने अपनी कूट रचना रचवे ई को प्रयोग खूब करों देखिए इस फाग में ई की नौनी झलक-

टेक- *रो रो वृष रास अति दीना, पता लगा दो मीना।*
बोली मीन रास से बानी, मोरी सुन लो सखी सयानी।
सपने मिले मोय दिल जानी, आकर प्यारे।
प्यारे मोरे मिलने गुइयाँ, हँस हँस मिले कंठ मोय सइयाँ
उठतन भोर दिखाने नइयाँ, हो गये नियारे
उडान- *मुसकिल भऔ अब जीना।*
टेक - *मीन रास ने मीन लिखे है, लये वृष ने चीना।*

आसु कवि जू पै लेख लिखवे के काजे मैं खुदई स्यावरी गाँव गऔ तौ उतै के लोगन नैं बताव तौ के गाँव के औ घर के घरइया इनै 'दद्दा' कै कै कें बतयाबू करे। एक जने झंक बूढ़े हते उनने कई ती कै कारीगर ने वक्त परे पै आन बान सान राख वे पडुआ की 150 बीघा जमीन छोड़छाड़ दई ती, काँयके वे गाँधी जू खों भौत मानत तै उनके विचारन खों गा-गा के गाँवन गाँवन फैलाउत रत ते, गाँधी जू के कैवे पै अंगरेजी उन्नन खों त्यागवे के काजै उनने एक चौकड़िया ऐसी कई ती-

कपड़ा नईं विदेशी लेने, पइसा परतई देने।
मिले मुफ्त में तौ नई लेने, चूले में दै देने।

ओई बेराँ उनके पुत्र डॉ. दयाराम वर्मा जू ने दद्दा कौ एक संसमरन सोऊ सुनाव तौ कै झाँसी के सरकारी अफसर ने दद्दा खो पंचायती राज पै पैली पंच बरसी योजना पै कविता बाँचवे घाट कोटरा बुलउआ दऔ तौ। दद्दा बुलउआ अऊतनई थैला में बेल गड़ई डार के, झाँक मजीरा धर धरू, कलेऊ डार कें निगतईं जा पौचे ते घाट कोटरा। उतै सबे कविअन नै सासन के सुर में सुर मिला मिलू के सुना सुनू दई कैऊ फागें औ बाहवाही लूट लई। पै दद्दा हते सच्चे सूदे उनने जैसी दसा वैसी कथा गा गा सुना दई जो उत बा नोनी नई लगी। दूसरे दौर में अधिकारिअन ने कई कै साजी सी रचना सुना दो कारीगर जीसें आगूँ

विकास खों बल मिले, दद्दा ने साहित्यिक रचना तुरंत फुरत रच के गा गा के सुना दई

सर वर विकास मध्य, सुन्दर सरोज खिले,
सरवर की सुन्दरता दूनी दिखाई है।
कलिन की सुगंध मलंदन की लगी आन,
छोड़े मकान सुरत सर की लगाई है।
गाँव-गाँव फैल रई उन्नति की छाँव-छाँव,
मानो बसंत ने लओ डेरा जमाई है।

जिलाधीस जू हतै रसिक साहित्यिक परख करवे वारे वे दद्दा से भौतई प्रसन्न भये औ इनाम में लोटा, बाल्टी, झाँक-मजीरा दैकें विदा करौ औ झाँसी बुला के उनकों सम्मान कर करू के **आसु कवि** औ कुशल गायक को प्रमाण पत्र दै दऔ, ऐसे हते आसुकवि कारीगर। डॉ. बहादुर सिंह परमार जू ने कई है कै-इनके काव्य गुरू पं. वैजनाथ द्विवेदी थे। इन्होंने स्वाध्याय व उच्च कोटि के विद्वानों **की संगत** से काव्य में प्रवीणता हासिल की। आप अच्छे वास्तुकला विद्, मूर्तिकला विद् तथा चित्रकला विद् थे वे श्रेष्ठ गायक एवं संगीतकार थे'' कथन अक्षरत: साचौ है ... काय के इनके लाने कऔ ये कै -

वास्तु कला के जाने माने, कारीगर मरदानें।
मूर्तिकला के निपुन नगीना, जानत सवई घराने।
चित्रकला के चतुर चितेरे कै रये लोग पुराने।।
फाग तुरत, फुरती में रचतई, ऐसे हते सिआने।
राग रागिनी तान के सुनतन सबके सबई चिमाने।।
'बिन्दु' आसु कवि रामसहाय, गुन के हते खजाने।।

जो लौ जिये ठसक से जिये कर्म की, पूजा कर करू के सरसुती की आरती उतारत रये-

जब तक ठुनकी इन की कन्नी, सबने काटी कन्नी।
फड़वारन में सोरा आना, हो गये सवई चवन्नी।
चौकत चकित, राग सुन फागन, तनवन्ती ज्यों हिन्नी।
विन्दु राम सहाँय भये वनरा, रस में डूबी बन्नी।।

आखिर में कऔ जा सकत ये कै कवि कविता की पगडण्डी से चल चलू कें उत्थान के राजपथ पै भावपक्ष और कला पक्ष के दोई पायदानन खों सबल कर करू के आगू पौचौ तौ, फूलौ तौ फलौ तौ औ समय के आँगू लाचार हौं कें संसार से विदा लै गऔ तौ फूटा कुम्भ जल जलई समानौ, अनहोने कवि हीरा को हीरा-कारीगर धूरा में हिरा गऔ तो,

जौ लौ जिये, जिये दमखम सें मिलके तुमसे हमसे।
बुन्देली की सेवा कर गये, फड़ जीते खुद दम से।
मन की मौज करी फागन में, छेड़ी ताने सम से।
टक्कर लई बड़े-बडेन से, लरे न कांऊ कम से।
रामसंहाय विदा की बिरिया, स्यावरी सपरी गम से।।

-163, नीरजा नगर, जेके रोड, भोपाल
मो. 9425079493*

नोट:-आसु कवि रामसहांय कारीगर के सुपुत्र डॉ. डी.आर. वर्मा 'बेचैन' जो बुन्देली के सशक्त हस्ताक्षर है, उन्होंने लेख की सामग्री 'नई टकसार' पुस्तक भेंटकर उपलब्ध कराई।

*****

बुन्देली लघुकथा -

माचिस की काडी के दो टूका

-राजीव नामदेव 'राना लिधौरी'

एक बेर बुन्देलखण्ड के जिला सागर के इते के पास के गाँव कौ एक भौतई गरीब जने पनै मोंड़ा को नाँव सागर की **विश्वविद्यालय** में लिखावें के लाने गओ। उतै केबाबू ने कई कि नाँव लिखाई की फीस लगत है पैइसा देओ तौ वो बोलो कि हम तौ भौतई गरीब हैं हमनों पइसा टका नईयाँ, तौ बाबू बोलो तो फिर तुमाए मोड़ा कौ नाँव नहीं लिख सकत। ऊ गरीब ने भौत विनती करी हा हा थराई करी तो बाबू ने उए एक उपाय बताओ कि तुम हरि सिंह गौर दादा जी जीनें जौ कॉलेज बनाओ है उनसें से जा लिखा लाओ कि इनकी एडमिशन की फीस माफ कर दई जाये तो फिर तुमाए मौड़ा कौ एडमिशन ई कालेज में हो जेहै, नईतर न हुइए।

वो गरीब गौर साहब कौ पतौ-ठिकानौं पूँछत भए, उनके घर लौ पौच गओ। तो उतै वो का देखत है कि घर के बाहरें आँगन में एक खाट बिछी हती और ऊ पै एक जने साधारण से कपड़ा पैरें बैठे हते। वे दाड़ी बनाउत की ब्लैड से माचिस की एक काडी के दो टूका कर रए हते। जाँ सै ऊ गरीब ने दूर से उने जौ करतन तको सो वो बिनई कछु कय उतै से लौटन लगों, वो जैसे मुरकवे खौं भओ कि इतैक में गौर साहब ने ऊए लौटतन तकलओ, सो उनने तुरतई आवाज लगाई - 'कौ आय रे, कैसे आव हतो और हमसै बिनई मिलै, कैसे जा रओ। इतै आओ, अब ऊ गरीब की सुट्टी पुट्टी गुम हो गयी।

डरात-डरात भय वो एंगरे आओ और ऊनै साँची-साँची कै दई कि हम तौ तुमाए ऐंगरें अपने मोड़ा कि फीस माफ करावें के **लाने आये हते**, पर आप तौ मोए भौत कंजूस दिखाने कि माचिस की काड़ी कै सोउ कौउ दो टूका करत है। सो हमने जा सोसी कि जो आदमी माचिस की काड़ी के दो टूका कर रओं वो भला हमाय मोड़ा की फीस माफ कैसे कर सकत है। ईसें हम बिना कछु कय इते से सटकन लगने हते। और वो गरीब उनके चरनन पै गिर परो। माफी माँगन लगों, तब गौर साहब ने ऊए उठाके बैठाओ और फिर गौर साहब ने ऊ खौं बड़े प्रेम से समझाओ कि आदी काड़ी से काम चल सकते है तौ हम एक काडी काय बरवाद करें और ई से हमायी बचत होत है और फिर देश की सोउ बचत होत है।

तुमै जौ पतौ नईयाँ कि ई माचिस की एक डबिया ओर इतैक बिलात काड़ी बनावे के लाने कितैक पेड़न खौ काटो जात है। फिर गौर साहब ने एक कागज पै जा लिख कै दे दई कि ई मोड़ा की सबरी फीस माफ कर दई जाय जबलौ जौ ई कालेज में पढ़े इनसै कौनऊ फीस नई लई जाये।

तो ऐसे हते डॉ. हरि सिंह गौर साहब जीके नाँव से आज इतेक बड़ो विश्व विश्वविद्यालय चलत है जीकौं जगत्तर में भौत नाँव है।

-शिवनगर कालोनी, टीकमगढ़ (म.प्र.)
पिन- 472001 मोबा. 9893520965

*****

संस्कृति के निर्माण में कला की भूमिका

-पं. वसन्त निरगुणे

संस्कृति और कला जीवन के सबसे महत्वपूर्ण अंग है। दोनों का मकसद जीवन को सँवारना है। दोनों ही मनुष्य के भीतर से पैदा होती है। यह कार्य मनुष्य के भीतर की प्रकृति करती है। बाहर की प्रकृति उसकी संस्कृति को रचने में उत्प्रेरित करती है। जीवन और प्रकृति मिलकर संस्कृति का निर्माण करती है। उसमें पशु-पक्षी से लगाकर छोटे से छोटे सूक्ष्म से सूक्ष्म जीवाणु-जीवजन्तु, कीड़े-मकोड़े भी शामिल होते हैं। संस्कृति में समस्त चराचर सृष्टि शामिल होती है। सारा लोक और ब्रह्माण्ड उसका हिस्सा होते है। मनुष्य संस्कृति का निर्माता और उसका सजग संवाहक भी है। प्राचीन संस्कृति में से नयी संस्कृति का जन्म भी मनुष्य की आवश्यकता और यदृिच्छा पर निर्भर करता है। विभिन्न संस्कृतियों का योग भी यौगिक संस्कृति का कारण होता है। संस्कृति सदैव संवेदनशीलता की भूमि पर खड़ी होती है। उसके बंध इतने लचीले होते है कि किसी भी विजातीय संस्कृति के प्रभावशील तत्व उसके घेरे में आ सकते है। यहाँ दो बातें बहुत स्पष्ट रूप से समझने की जरूरत है कि संस्कृति के निर्माण में करने वाले तत्व अलग होते हैं और संस्कृति को प्रभावित करने वाले तत्व अलग होते हैं। मनुष्य के बिना संस्कृति के निर्माण की कल्पना अधूरी है। पशु और मनुष्य में सबसे बड़ा फर्क यही है कि पशु कोई संस्कृति निर्मित नहीं कर सकता, जबकि मनुष्य संस्कृति निर्मित कर सकता है।

संस्कृति के निर्माण में मनुष्य का विवेक काम करता है। केवल प्रकृति और तत्व मिलकर संस्कृति का निर्माण नहीं कर सकते, उसमें मनुष्य की अन्तश्चेतना का योगदान जरूरी है। पहले पहल जब मनुष्य मिट्‌टी और घास-बाँस-लकड़ी के घर में रहने लगा, तब वह मिट्‌टी के बर्तन और वस्त्र बनाने लगा। संभवतया कला का जन्म भी मनुष्य यानी स्त्री-पुरुष के समन्वित प्रयास से हुआ है। इसका मतलब हाथ और पैरों से किये जाने वाले श्रम की महत्ता की प्रतिष्ठा जीवन में मनुष्य ने इसके भी पहले कर ली थी। श्रम ही वह शक्ति है, जिससे मनुष्य की सभी कलाओं का जन्म हुआ है। श्रम संस्कृति का एक अनिवार्य अंग है। जिसे जीवन में कर्म की संज्ञा से अभिहित किया जाता है।

आदिमानव को सबसे पहले श्रम भोजन प्राप्ति के लिये करना पड़ा होगा। उसे शिकार का पीछा करने के लिये पैरों और हाथों की गति को बढ़ाना पड़ा होगा। दौड़ना पड़ा होगा। हाथों में पत्थर के पैनें टुकड़े रखना पड़े होंगे। पैने टुकड़ों की निर्माण प्रक्रिया में मानव कला का प्रादुर्भाव छिपा है। पत्थरों से अग्नि पैदा करने में, पेड़-पौधों के पत्तों को जोड़कर तन ढँकने में आदिमानव को श्रम करना पड़ा था यही श्रम विज्ञान और कला का जन्मदाता रहा है।

प्रकृति की रहस्यात्मक गतिविधियों का प्रभाव मनुष्य के मानस और अवचेतना पर निरन्तर पड़ा है और उसके रहस्यों को जानने की अथक् जिज्ञासा मनुष्य के मन में शुरू से रही है। प्राकृतिक शक्तियों पर मनुष्य काबू नहीं पा सका है, इसलिये उसे पाने की कोशिश में अनेक प्रविधियों का आविष्कारक होने का श्रेय भी मनुष्य को ही जाता है। धर्म, दर्शन, अध्यात्म, साहित्य, कला और विज्ञान की रचना मनुष्य की इसी कोशिश का परिणाम है।

रचनाशीलता की प्रवृत्ति होने के कारण मनुष्य प्रकृति के उपादानों की उपयोगिता को समझकर विज्ञान के सहारे भौतिक सामाग्रियों का निर्माण करता आया है और कला के विभिन्न आयाम रचते आया है। जिस वस्तु, विचार और आचार का मनुष्य सृजन करता है, वह संस्कृति का हिस्सा हो जाता है। संस्कृति मनुष्य के विचारों और आचारों का समुच्चय होती है। वे आचार-विचार वाचिक परम्परा में तो अभिव्यक्त होते हैं। कला परम्परा में भी, जो कि मनुष्य की रचना होती है, आचार-विचार की साक्षी होती है। कला की कोई भी वस्तु हो, संस्कृति का निर्माण करती है। क्योंकि उसमें कोई न कोई परम्परा स्मृति या स्वप्न का सार समाया होता है। मनाव की रचना का संसार बहुआयामी, वैविध्यपूर्ण और कल्पनाशील है। पश्चिम के प्रसिद्ध समाजशास्त्री डॉ. जी.पी. मर्डाक ने ठीक कहा है-कि "संस्कृति में मनुष्य के उन प्रत्येक क्रिया-कलापों को शरीक किया है, जिनसे मनुष्य बनता है, जिसके उससे सांस्कृतिक बलय पूरा होता है।"

संस्कृति मनुष्य के कई बौद्धिक, धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक, साहित्यिक, कलात्मक और रचनात्मक, कार्य-कलापों से प्रकट होती है। यहाँ तक कि मनुष्य के चलने-फिरने, उठने-बैठने, बोलने-चलने, पहनने-ओढ़ने तक से संस्कृति पहिचानी जा सकती है। किसी भी अंचल, देश की संस्कृति विशेषकर उसकी जीवन शैली के अतिरिक्त सबसे अधिक कला और वाचिक परम्परा में अभिव्यक्त होती है। कला और वाचिक परम्परा में मनुष्य की संस्कृति की सूक्ष्म से सूक्ष्म और संश्लिष्ट अभिव्यक्तियों को परखा जा सकता है। संस्कृति में वे सभी अभिप्राय और संस्तर मौजूद होते हैं, जो मनुष्य को संवेदनशील बनाते हैं और मनुष्य को जगत की सर्वश्रेष्ठ कृति बनाते हैं। संस्कृति उसी मनुष्य को हर देश, काल, परिस्थिति में बचाने का कार्य करती है।

लोक में कोई व्यक्ति, समाज और देश बिना संस्कृति के संभव नहीं है। यहाँ तक कि जीवन में काम आने वाली भौतिक वस्तुओं में भी संस्कृति के मूल चिन्हों की स्पष्ट छाप देखी जा सकती है। भौतिक सामग्री में पुरानी से पुरानी और नई से नई संस्कृति और कला के स्मृति चिन्ह मिल सकते है। मिट्‌टी, लकड़ी, पत्थर, धातु आदि में उकेरे विभिन्न जातीय रूपाकार मनुष्य की ऐतिह्य और पुरा संस्कृति के सबूत होते हैं। विश्व की प्राचीन संस्कृतियों के चिन्ह इन्हीं पुरा अवशेषों में मिले हैं, जिसके आधार पर उस काल की स्थापत्य कला संस्कृति के और इतर बाह्य तथा आन्तरिक अनुषंगों की पहचान होती है।

संस्कृति के सृजन में कला की भूमिका क्या हो सकती है? इस बात पर विचार-विमर्श जबसे संस्कृति का ताना-बाना बुना जाने लगा, तब से ही होने लगा था। कला संस्कृति का एक महनीय रूप है। अंग है। कला संस्कृति में प्राय: रंग भरती आई है। वह जीवन के सारे रंगों को समाहित ही नहीं करती बल्कि समारोहित भी करती है।

संस्कृति संस्कार से बनती है। संस्कार जो जीवन को

संजोने का कार्य करते हैं। मनुष्य के जन्म से लगाकर मृत्युपर्यन्त जीवन में कुछ न कुछ ऐसा अमूल्य जोड़ते चलते हैं, जिससे संस्कृति समृद्ध होती चलती है। बहुत से संस्कार मनुष्य ने कलानुष्ठानों में इस तरह बुना है जो कलानुशासन को गति प्रदान करने का काम हर समय करते है। और उस कला-संस्कृति का संरक्षण भी करते चलते हैं। संस्कृति में कला परम्परा के आगे बढ़ाने और संरक्षित करने की हजारों सालों से यही पारम्परिक विधि रही है। इससे बढ़कर और कोई तरीका खोजा भी नहीं जा सकता है, क्योंकि इसमें मनुष्य की स्मृति का सबसे बड़ा योगदान रहा है। भले ही न जाने कितने ही विज्ञान के संवेदी यंत्रों का आविष्कार हो जाय, स्मृति को संरक्षित करने की बजाय मनुष्य की स्मृति को विस्मृति की ओर धकेलने की चेष्टा करते हैं। क्योंकि विज्ञान मनुष्य को निर्भर होने के लिये मजबूत करता है, ऐसे में लोकविज्ञान की पारम्परिक विधाओं के कलाविहीन होने का खतरा सदैव बना रहता है, तब संस्कृति भी खतरे में पड़ जाते हैं।

भूमिका में कला संस्कृति के लिये क्या करती है :-

1. कला संस्कृति की अभिव्यक्ति का सबसे प्रमुख और नजदीकी संसाधन है। चित्र, नृत्य परम्पराओं और महागाथाओं की लम्बी श्रृँखलाओं में जातीय संस्कृति की सम्पूर्ण अभिव्यक्ति देखी जा सकती है।
2. कला में संस्कृति के संवेदी तत्व सबसे अधिक मुखर होते हैं। नृत्य, नाट्य, कथा गाथा गायन आदि में इसकी उपस्थिति परखी जा सकती है।
3. संस्कृति निर्माण के मूल तत्व बिल्कुल अलग होते हैं। कला संस्कृति को गढ़ती नहीं, वह तो उसके आन्तरिक मर्म और सौन्दर्य को संस्कृति में रहकर विस्तारित करती है।
4. कला संस्कृति को दृश्य-श्रव्य रूप प्रदान करती है। नृत्य, नाट्य, चित्र और शिल्प इसके उदाहरण है।
5. कला संस्कृति के सूक्ष्म से सूक्ष्म भाव, प्रभाव और दिखाव को अपने में हर संभव संजोकर रखती है। कला जब परम्परा बन जाती है तो उसमें ये तत्व पीढ़ियों तक विगलित करते हैं।
6. कला संस्कृति के चाक्षुष और श्राव्य आनंद के चरम को द्विगुणित करने में समर्थ होती है। चित्र आँखों की कला है तो गीत-संगीत कानों की कला है। नृत्य-नाट्य आँख और कान दोनों की कला है।
7. कला जीवन के आन्तरिक तनावों को मुक्त करती है। और कहीं न कहीं जीवन के अध्यात्म को खोलती है। नृत्य, गायन और चित्र में इसकी चरम स्थिति देखी जा सकती है।
8. कला चाहे वाचिक हो या रूपंकर अथवा प्रदर्शनकारी। उसका ध्येय किसी न किसी संस्कृति को प्रकट करना है। कोई भी कला संस्कृति के बिना निष्प्राण होती है।
9. कला संस्कृति की परम्पराओं को हर काल में जीवित और जीवन्त रखने की चेष्टा करती है। कला एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी एक कण्ठ से दूसरे कण्ठ तक इन्हीं कारणों से पहुँचती हैं और हजारों वर्षो की यात्रा में होती हैं।
10. कला के बिना संस्कृति में रस निष्पत्ति असंभव है निखालिस संस्कृति और केवल कला कभी अर्थपूर्ण नहीं हो सकती।
11. कला धर्म, दर्शन, अध्यात्म, विज्ञान और साहित्य की अभिव्यक्ति है। कलां के पारम्परिक अभिप्रायों में इन विषयों की गहराइयों तक पहुँचा जा सकता है।
12. कला जीवन को बचाये रखने का साधन है। जब जीवन बचता है। तब संस्कृति अपने आप बच जाती है। जीवन से बाहर कुछ भी नहीं।
13. संस्कृति और कला एक दूसरे के बिना नहीं रह सकती। संस्कृति कला की अन्तनिर्भरता सावयवी है। संस्कृति में कला है और कला में संस्कृति समाहित है। संस्कृति में से ही कला की नई-नई शाखाएँ प्रस्फुटित होती है। रामायण, महाभारत, भागवतपुराण इसके उदाहरण हैं।
14. जिन विचारों को शब्दों नहीं व्यक्त किया जा सकता, उसके लिये कला में रंग और आकारों के माध्यम से रूपायित किया जा सकता है। कला में रंग और आकारों के माध्यम से रूपायित किया जा सकता हैं। शब्द से आगे की अभिव्यक्ति की भाषा रंग, आकार, स्वर, नृत्य संगीत आदि ही है।
15. कला में संस्कृति के मूल्यों को संरक्षित किया जा सकता है। जीवन के मूल्यबोध को बचाया जा सकता है।
16. वाचिक परम्परा और लिखित साहित्य में संस्कृति की उन सभी बातों को सहेजा जा सकता है जो मनुष्य को मनुष्य बनाती है। वेद, पुराण, उपनिषद संस्कृत वाङ्मय इसके प्रमाण है। ज्ञान परम्परा का संरक्षण ऐसा ही होता आया है।
17. कला संस्कृति के सौन्दर्यबोध की अनुरक्षा में सदैव सजग रहती है।
18. गीत-संगीत, नृत्य-नाट्य, रूपक, कथा, गाथा, मिथक, कहावत पहेली आदि कला के विविध आयाम संस्कृति की व्याख्या में ही रचे जाते हैं।
19. चित्र, मूर्ति तथा विभिन्न शिल्पों को गढ़ने के मूल में संस्कृति के प्रवाह को प्रकट करना ही है।
20. महागाथा या महाकाव्य मनुष्य संस्कृति के आख्यान ही हैं।
21. समस्त अनुष्ठान, पूजा-पाठ, व्रत-उपवास, तीर्थ, यात्रा, नदी-पहाड़, वन-वनस्पति, घर-आँगन, स्वर्ग-नर्क, संस्कृति और कला के ही कहीं न कहीं अंग होते हैं।
22. लोक देवी-देवता, देवालय, मठ-आश्रम, स्थापत्य के अर्थ-आशय भी कला के अविभाज्य अंग है, जिनमें संस्कृति के लक्षण प्रकट किये जाते है और प्रस्थापित भी किये जाते हैं।
23. कला में किसी भी जाति और देश के सांस्कृतिक इतिहास का अंकन देखा जा सकता है।
24. कला में संस्कृति-समय को देखा और परखा जा सकता है। उत्खनन में मिले कला के पुरावशेषों में समय को पढ़ा

आ सकता है। जो मानव संस्कृति के विकास की लुप्त कड़ियों को हमारे सम्मुख खोलता है। मृद् भाण्ड, सिक्के, मूर्तियाँ, खिलौने आदि इसके प्रामाणिक दस्तावेज कहे जा सकते हैं।

25. कला की कृति बनती-मिटती रह सकती है, लेकिन इसकी विधियाँ और संस्कृति विमुख नहीं होती विधियाँ परम्परा में जीवित और जीवन्त रहती है। और संस्कृति सदैव निरन्तरता ग्रहण करती रहती है। संस्कृति के बाहर जिन कलाओं का प्रार्दुभाव होता है, उसका जीवत्व बहुत लम्बा नहीं होता।

26. संस्कृति समय के साथ नया रूप ग्रहण करती है। उसमें समय के महत्वपूर्ण सत्य-सार समाहित होते रहते हैं, इसी प्रकार कला भी समय के पद्चिन्हों को अपने में अंकित करती चलती है। संस्कृति में समय के सार तत्वों को संरक्षित करने का यह तरीका पारम्परिक है।

27. जहाँ शब्द या भाषा अर्थ प्रकट करने में असमर्थ अथवा अमूर्त होने लगती है, तब चित्र और स्वर-संगीत अर्थ के पार ले जाने की क्षमता को प्रकट करते है। संस्कृति एक प्रवाह और कलाएँ उसकी सुन्दर धाराएँ है। संस्कृति में से अनेक कला रूप प्रकट हो सकते है, लेकिन कला संस्कृति का कलात्मक रूप ही गढ़ सकती है।

-एच.7 उमा बिहार,
नयापुरा, कोलार रोड, भोपाल-42
मो. 09479539358

*****

बुन्देलखण्ड में लुप्त होती 'देवी ढारवे' की प्रथा

-रजनी नामदेव

अपनैं बुन्देलखण्ड में एक प्रथा भौत पुरानी हमाये पुरखन के जमानें से चली आ रई है कि गाँव में सबई घरन से घर की सबसे बड़ी महिला भुकाभुके उठ कै सपर- खौरकें अपने गाँव की देवी जी ढारवे रोजउ नियम से जात है। ऊके बीमार परबे पर ऊ घर सें कौनउ औरई जनी हुए वा जैहे पर देवी जू ढारबें जरूर जैहैं, ऊ में नागा न हुईये।

हात में गढ़ई लैकें जी में कुँआ कौ शुद्ध ताजौ पानी, कछु फूल व कछू जनें दूध सोई ऊ गढई में डार लेत हैं, फिर वे देवी जू कि मढ़िया में उनकी मूर्ति को ढार कै (सपरा कै) चाँवर रोली सें टीक कैं, फिर तनक पूजा ध्यान करकें, घरै वापिस आत हैं, फिर घर कौ औरउ कामकाज करत अय।

इतै जा बात भौत ध्यान देबे वारी है कि जब लौ वे देवी जू न ढार आये, तब लौ उन्हें कोई बिना सपरै छू नई सकत, इतै पवित्रता कौ भौत ध्यान दओ जात है। इतै शुद्ध रैवो भौत जरूरी रात अय।

देवी जू ढारवे की जा प्रथा गाँवन में तो अबे भी देखबे को मिल जेहै, पर शहरन में जा प्रभा हरां हरां लुप्त हो रई है। ऐसौं लगत है कि शहर की जनियन (महिलाओं) कौ रोजई देवी जू लों जावे कौ टैम नईया, तो कछुउन कौ शरम आत हुइए, बैसे भी शहरन की आजकाल की नई नई बहुउन की तो बड़े, बजुर्गन की परवाह नईयाँ वे अब उनै परदा तक लौ नई करतीं हैं, ऐसें वे गढ़ई ले कर रोजु मंदिर ढारवे जाने में लजातीं हैं।

नौ देवयिन के दिनन जरूर गाँवन के संग-संग शहरन में सोई आज के मोड़ा मोडियाँ देवी जू ढारवे जात हैं। जा सोस के नोनो लगत है कि चलो साल भरे में इन नौ दिनन के तो इनै देवी जू की याद आ जात है। नईतर आज की युवा पीढ़ी कौ तो मंदिर जाबें कितै टेम मिलत है, हाँ, ब्यूटीपार्लन जाबे को और घरे बनबे-सजरबें खौं एनई टेम मिल जात है और घूमबे फिरबै के लाने जब चाहे जितैक चाहे टैम मिल जात है।

लूअर लगें ई जींस और लेगी के उन्ना के पहरावे ममें में ई खौं पैर के मौड़ियाँ तो मौडियाँ कछु जागां तो उनकी मताईयाँ सोई इनै पैर के बिन्नू फिरत रात अय। अब जे कैसें देवी जू ढारबे जा सकत जौ तो अपुन सोई सोस सकत है।

पर सोसबैं बारी बात जा अय कि जब जा प्रथा भौत पुरीनी आय और हमारे इतै पीढ़ी दर पीढ़ी चली आ रई है तो जरूर ई में कछु न कछु हमाये पूर्वजन पुरखन की सोस रई हुइये।

वैसे जा बात तो है कि दिन के ऊँगने पर सबसै पेला देवी ढार के हम ईसुर को स्मरण कर लेत है कछु पूजा ध्यान हो जात है और देवी जू सें हम अगाऊँ कै लाने आशीश माँग लेत है घर की खुशहाली के लाने हात जोर के बिनती करत हैं, देवी जू सोइ हमाई और हमाये पूरे कुल की रक्षा करत हैं।

सबई धरमन में कछू न कछू तौ प्रभा होत है कि सबसें पैलां ईसुर कौ ध्यान करो चाइये, ईसें हमाव पूरो दिन अच्छौ जै है। जैन धरम में तो घर के सबरे जनै सुबह उठकर पैला मंदिर में दर्शन करबे जात फिर घर के औरउ काम काज करत। ऐसई मुसलमानों में भी भुकाभुकै मस्जिद मैं नमाज पढ़ी जात है ई धरम में तो अजान देके चेताओ जात है कि उठो नमाज कौ टैम हो गओ है, झट्टई मस्जिद मैं आ जाऔ। ऐसई हमाये हिन्दू धरम में भी देवी ढारबे की जा प्रथा ऐई के लाने शुरू भई हुइए जीसें घर कौ कम से **बुन्देलखण्ड में लुप्त होती 'देवी ढारवे' की प्रथा**कम एक जने तो मंदिर में जाकै पूजा ध्यान करै, जीसै, हमाई अगाऊ की पीढ़ी धर्म संस्कृति सें जुरी रय और हमाए रीति रिवाज कौं मानत रय।

कम एक जने तो मंदिर में जाकै पूजा ध्यान करै, जीसै, हमाई अगाऊ की पीढ़ी धर्म संस्कृति सें जुरी रय और हमाए रीति रिवाज कौं मानत रय।

हमें आधुनिकता की दौर में अपने पुरखने कै समय से चले आ रये रीति-रिवाज नई बिसरने अय। उनैं समय-समय से मानत रने है,तवईं हम सबई कौ भलौ हुइये। वैसे भी कई जात है कि हमाओं देश 'संस्कारन और रीति रिवाजन' कौ देश अय। जब हम और रोजउ देवी की पूजा-ध्यान करकै खबर लेहे तो, वे सोई हमाई खबर रखें।

-C/o श्री सी.एल.नामदेव (रिटायर्ड एस.डी.ओ.)
शिवनगर कॉलोनी, कुँवरपुरा रोड, टीकमगढ़ (म.प्र.)
मोबा. 9893520965

*****

जुँदैया पूनों की

-ओ.पी.रिछारिया

रतनपुर गाँव के गेंवड़े से गुपला की सैलून की तरफ-एक-एक करके मान्स जुरत जा रऐ ते। गुपला खों जा परख खूबई हती के-को हजामत बनवा वे खो बैठों है, और को हमाई दुकान में नॉय-मॉय की डढ़ेली कर वे खों जुरे हैं, मनों कौन से का कइऐ-कई-'जे के राज में रइऐ-सो ओई कैसी कइऐ-ऊँट बिलैया ले गई, सो हाँ-जू-हाँ जू कइऐ-सो दो कहो नें, चार कुआओ ....।''

- तनक देर बाद सैलून में-पंडत जू आ गऐ ....। पैलें तो उन नें अपनो सोला बगराओ-''काए रे गुपला .... जा दुकान में .... कैसी बास सी आ रई है, - साफ-सफाई नई राखत् का?''

गुपला - नें सबर को घूँट पी लओ ....। फिर बोलो - पंडित जू सफाई तो हमने भुन्सारे पैले हल्ला कर डारी ती। तुम तो जा बताओं- कैसे पधारे ....? बार बनवाने हैं-के दाढ़ी बना दऐं .....? पंडत जू खींसे निपोर के बोले-लेओ-कई नेकी और पूँछ-पूँछ ....। दाढ़ी तो बनवावे खों .... आऐ ते। हय तो विराजो-मूड़ा पे ... हम ... अबईं छोल दऐं .... गुपला सोई बुलयावे में कम न हतो ...।

- पंडत जू ने-धीरे-धीरे.... दाढ़ी बनवाने के बहाने - अपनो उल्लू सीदो करवे की तैयारी-करी ...।

- जा बताओ गुपला - अपने रतनपुर गाँव में - आसों की साले-पटैल जू ... सोने के कटोरा में - खीर धर कें कौन दिना बॉट हैं ....? तोऐ पतो है ...?

- गुपला की तारी सी खुल गई। असल बात जा-आऐं दाढ़ी तो गई होरी में -पंडत जू खों-पटैल जू की खीर हथियाने हैं ...। जा तो गाँव भरे खों मालूम हैं, के शरद पूनों की रात में-चन्द्रमा की छुटक-जुँदैया में-पटैल दद्दा अपने खानदानी सोने के कटोरा में - खीर बना के धर देत है। फिर ओ खीर में - रात में इमरत बरस जात है, सो बा इमरत खीर बन जाता है ... जे के पा लेवे से शरीर के सबई रोग-दोष दूर हो जात हैं।

-अब ऐसी खीर-बना कें- पूनों की जुँदैया में-चाहों सो कोऊ भी धर देवे मनों कहाँ ..., कई हॉथ पॉव के काय ले, मों में मूँछें जाऐं ... मूँछ बिचारी का करें, जब हॉथ ने फेरे जाऐं... ? को इत्ती ओहर करे ...?

- फिर सोने को कटोरा भी तो-सब कें नई होत् ...। ऐसे - पटैल जू की इमरत खीर पे सबकी आँखें गड़ी रहत ती!

- पंडत जू -तनक खुन्सया के बोले-काय रे गुपला-मैंने कछू पूँछी तो से ...? पटैल जू - खीर कौन दिना बॉट हैं ..., सो तूँ तो चिमाँ के रे गओ ...? ..

- गुपला बोलो - हल्ला ने करो ... अबे। सिपाई भैया दो बेरे - दुकान कोद फिर गए हैं...., अबई ... कऊँ सुन लई तो और आफत् ...।

और फिर शरद पूनें भियाँने हैं, ..? सो पतो चलई जै है, पटैल जू तो भले आदमी है, हर कोई-उन्हें पुटया लेत ... मनों ... उनकी घरबारी ...।

-पंडत जू बोले ... अरे। राम-राम-राम।

- गुपला बोलो - राम-राम नई .... पंडत जू .... रामबती ... कहो .... रामबती .....।

- अरे। हाँ भइया गुपला रामबती तो भोतई लड़ंकू लुगाई है। - बा तो खीर पे हॉतई नई धरन देत ....। चरचा चलई रईती के थाने की तरफ से सिपाई भैया आ गये-- काय रे! काय की बातें आ हो रई हैं ? ......! सिपाई भैया दुकान में पिढ़त भऐ बोले ....! पंडत जू और गुपला भइया सन्ना के रै गये। सिपाई भइया को- ताव भर गओ - सो खिच्चया के बोले - काय रे ... मई कैंसो घूँट पी के तो रे गऐ ..., अबे तुमोरे-खीर-खीर चिल्ला रऐ थे। -और हमें देख के-अब का- साँप सूँघ गओ ...?

- आँ हाँ ... मालक नाराज तो नें होओं आप तो ऊँसई - गाँव भरे में चकडंडो सो दऐं फिरत हो ...., - हमोरें ... आप से कौनऊँ बातनई - लुकात। - असल में पटैल जू - की सोने के कटोरा बारी इमरत खीर की - चर्चा हो रई ती।

- गुपला ने - उलायती बात सँभारी ...।

- पंडत जू ने ... हाँ में हाँ भरी - और बात झेल के बोले - अरे सिपाई भइया अपनई अपन तो हैं, यार मिल जुर के बॉट लेबी -। मनो तीसरे खों हवा न लग पावे ... न बनी बनाई बात बिगड़ गई तो ठीक न हुइऐ ? इत्ती, बात होई रई ती - के जबई एक लफंगा और आ गओ - अरे! का ठीक नें हुइऐ ...? ... अकड़ के सैलून में घुसत भओ भारंगी लफंगा आओ - और गुपला खों आँखें नटेर के बोलो - हमें बतारऐ के नई ? काए की चरचा लगाऐं ते ....? ... पंडत जू- और गुपला दोई जनें ससरया गऐ ...। काटो तो .... खून नई ...। वे सिपाई भैया कोद -हेरन लगे ...। सिपाई भैया खों ... किरोध भर आओ - सो बिफरया के बोलें - जो का मजाक है? भारंगी दूर हटो - गुपला के पास से ...।

- हम से पूँछो का पूँछने ....? सिपाई भैया भारंगी पे अकड़ परे ...।

हम जा पूँछ रऐ ते .... के कौन - सी बनी - बात - बिगड़वे की जे ओंरे के रऐ हैं ? भारंगी बोलो-हमें तो सोई कछू पतो चले ...।

- तुम तो जा बताओ - भारंगी - अबे तनक देर पैले .... तुम - पान के टपरा पे तीन-चार-मुँगरे लुवाऐं - काऐं को पिलान बना रऐ ते ....? बिना पूँछे ...? - कहूँ चोरी-चकारी को पिलान तो नई बन रओ तो ? बोलो ... ?

- सिपाई ने ऐंड़ के पूँछी ....?

- अरे नई-नई दद्दा ...। भला आज तक हमने ऐंसो काम करो है ? बिना तुमसे पूँछे ...? भारंगी ने चापलूसी करी।

- सिपाई के कान ठाँड़े - हो गए ...। बोलो... हव चलो-चलो छोड़ो चरचा ....। - असल बात जा है, के पटैल जू की इमरत खीर शरद पूनों के दूसरे दिन - सब खो बॉटी जै है, ... सो अपन चारई जनें मिल जुल के लेलै हैं ...। पाँचवें खों हवा न लगन दे है ...? और हाँ तुमाई खीर में से आधी हमाई कहाई ठीक है ... सिपाई भैया ने दबी जुबान से समझाओं -वा भैया का कइऐ .... ? कई खीर खौं सौंज-महेरी खों न्यारे ...। ऐंसो नई होत .... भारंगी तो - साफ मेंट गओ ...। सौ सिपाई भैया खों - मिसमिसी भरी .. उठ के भारंगी की कालर पकड़ लई और बोले - सारे दिन भर लोगों की आँखों में धूरा डारत फिरत, दिन में तरैंये दिखात्-बातों से साँप आँधरे करत जब तो हमने कछू नई कई ..। तेने खुसी से - जो कछू धरो, पाकट में डार दओ-सो ... हमने धर लओ ... और खीर बॉट वे खों - पटना की मिरचें लगी ..? इत्ती चरचा होई रई ती - के ओ तरफ से -पटवारी कक्का और स्कूल बारे मासाब-सैलून में पिढ़ आऐ-। सैलून में - पंडत जू - भारंगी, सिपाई भैया खों देख के गुपला से बोलें-काए रे आज तो बेजा - लबर दंग परी है, हमें तो - बारों में डाई कराने हती ..?

– गुपला ने – सोची चलो एक ग्राहक तो आ गओ – सो बोलो –आओ पटवारी कक्का, भीतरे कढ़ आओ – मासाब तुम काऐ बाहर ठाँड़े आ जाओ ... ।

– मासाब बोले-रैन दो अबे हम दोई जनें-तनक देर से – आ जै हैं ... । अबे तुमाऐ जरौं तो अबेर हो जै है .. । हमोरे जात हैं .... ।

– पटवारी कक्का बोले – हव जा सोई साँसी कई – लौट के आए जात हैं ।

मनो गुपला भैया – जा तो बताई देओ पटैल जू की खीर कबे बँटने ...? भारंगी खों-किरोध भरो .... सो बोलो – पटवारी जूँ – कहाँ की मेड़ डरने, कहाँ को खेत
बँटने ... जो काम देखों ...? खीर बँटवे को काम हमोरे देख ले हैं ....?

– इतनी बात सुन के पंडत जू तो तमतमा गऐ-और उठ के बोले-सबके सब सुवारथ के मीत होरे।

सुर नर मुनि की, जाई रीति।
सुवारथ लाग करें, सब प्रीति ।

चलो सब-जब शरद पूनों हो जे है ... जब देखी जै हैं ... । धीरे-धीरे-एक-एक करके सब रे-सरक गऐ .. । ने कोऊ ने दाढ़ी बनवाई न हजामत .. । गुपला विचारो –हाथ पे हाथ धरें-बैठो रे गओ. ।

– शरद पूनों की रात आई ... । पटैल जू और उनकी घरबारी रामबती – दोई जनें – घर के आँगन में – सोने को कटोरा में – खीर – धरें – बैठे रऐ । रात भर जगनवार करी ...?

भुन्सारे पहरे को – तरा डूबे खों भओ –के इतने – मैं पौर के दोरे में –कोऊ ने – साँकर बजाई । साँकर को ऐरो सुन कें – पटैल जू बोले- देखियो रामबती-दोरे में कोऊ टेर रओ है । –रामबती रात भर की उसनींदी सी हती –सो बोली –इत्ते भुन्सारे से को आ जै है ...? बेहर के झकोरा में किबारे हल रऐ – हुइऐं? –ऐंसी के –के–मईं के मई चिमाँ गई .... ।

– पौर के दोरे में – नेता जू के खास आदमी-छुट्टन भैया और गाँव कोटवार, दोई जनें – ठाँड़े-ठाँड़े-किबार-खुलबे की बाट हैर रऐ ते-जब किबार नई खुलत दिखानों-सो-दोबारा-छुट्टन ने किबार भड़के .... ।

– तनक देर बाद – रामबती ने किबार खोल दऐ – अरे ! ... कोटवार दादा तुम आ टैर रऐ ते ... हम जानें – कोऊ और है ?

– छुट्टन खो तो मानो आग लग गई, हम नेता जू के खास आदमी । शहर से भगत आऐं-और इते किबार नई खुल रऐ ...? सो बिफरया के बोलें .... काऐं रामबती भौजी .... तुम्हें आदमों की चिनार नईयाँ...? सब धान बाईस पसेरी-तौलत रैत हो ? रामबती सो खिच्चया परी-सो कैन लगी – कोटवार दादा जो को है ....?

–कोटवार दादा हँसन लगे .... । अरें ! रामबती .... इन्हें नई चींनत। अपने गाँव के मठोले मम्मा को बड़ो मौड़ा छुट्टन आऐ .... । आठ-दस साल से – शहर में रैनलगो है, नेता जू – के संगे .... । उनको खास आदमी – कहाओ जो .... हाँ।

– सो हमें का इनसे जाजाद बँटाऊने –इते काय खो आऐं जा बताओ रामबती –तो गुस्सा में – बोल गई .... ।

– कोटवार दादा बोले – आज नेता जू को जन्म दिन है । – शहर में –बड़ी-बड़ी फोटो टंग गई हैं । जन्म दिन की –बधाई के पोस्टर टँग गऐ ... ।

–रामबती बोली-जन्म दिन है ....? अबे छै: मइना पैले – जब तुमाऐं पटैल जू-प्याज बैचवे गये ते शहर – सो केत आऐं ते के नेता जू – को जन्म दिन है ... । शहर की गैल बन्द हो गई ती । बीच में ट्रेक्टर-ट्राली फँस गई । कोऊ खो कढ़न नई दओ-सो बे-लोलैयाँ लगे लों घरे लौट पाऐं ते और तुम के रऐ – के कल जन्म दिन हैं ? साँची बात बताओ-जबे पटैल जू झूँठी बोले हते के अबे तुम झूठी बोल रऐ ...?

छुट्टन खों गुस्सा आ गई सो बिफरया के बोलो – देखो रामबती भौजी जादाँ खुदबैरे में ने परो ... । कबे जन्म दिन हतो, .. कबे नें हतों ....

बड़े-बड़े नेता कहात् हैं, कछु आदमी पैली बेर के जन्म दिन में नई आ पाऐ ते .... । सो भैया जू जनता की सुबधा देख कें – छै महिना बाद फिर के जन्मदिन मना रऐ हैं ... । जो विचारे रे गऐ ते – अब बे औरें बधाई देवे खो आ जैहें .... । सो ऐ में तुमाऐ दद्दा को, का हरजा है ...? बोलो ।

– रामबती –चिल्ला परी – ऐ ! मों समॉर के बोलियो-हमें जादाँ लटका-झटका ने बताओ-अबे तक तो हम तुम्हें समझत ते पाऊँने दाखल मनो अब हम – बो लप्पा फोर है, के हमाऐ दोरे से खिरका लो और खिरका से गेंवड़े लो भगत जै हाँ । इतने में –

– हल्ला सो सुन के पटैल जू बाहरे आ गऐ – बोले का बात है भैया काऐ को –हल्ला दऐ हों ...?

कोटवार दद्दा बोले – पटैल जू तुमाऐं घरे – जो शरद पूनों की इमरत खीर सोने के कटोरा में धरी है बा पूरी-की-पूरी खीर मय कटोरा के हमें दे दो–नेता जू के जन्म-दिन पे तुमाई तरफ से – पठौनी दई जाने हैं, सो उठा लियाओ कटोरा-और हमें दे डारो .... ।

पटैल जू हक्के-बक्के से ठॉडे मों देख रऐ – फिर बोले वा भैया का कइऐ-''कई हींग पजी सो घोड़ो ने खाई .... ।'' मेहनत हम करें – रात भर हम जगे ... और खीर तुम्हें सौंप दऐं .... जो तो – अपनो भात्-पराऐ मड़वा –कर बो हो गओ ... ।

छुट्टन बोलो – ऐ को मतलब है, के भैया जी के जन्म-दिन पे तुम खुश ने कहाने .... । हम नई जानत् – अगली साले जो डेम बनवे वारों है, ओ में-तुमाओ खेत नप जावे, चाऐ घर नप जावें फिर ने कइयो – के भैया जू नें मदद नई करी ....? खीर नई देने सो न देओ – हम जात है, चलो चलिऐ । – कोटवार दद्दा और छुट्टन भैया जा बे खों लौट परे – सो- रामबती बोली –

– अरे ! छुट्टन-अगली दारे-जब जन्म-दिन मनाओ जै है सो हम एक बोरा सोयाबीन दे दे हैं ।

अबई छै: मईना बाद-सोयाबीन आओ जा रहो है .... । सो फिर के मना लइये बेटा जन्मदिन ।

मगर पटैल जू खों कछु अनिष्ट की शंका घेरे गई । – सो उनने छुट्टन भैया और कोटवार दादा खों लौटा के घरे-लुवा लियाऐं – पानी पियाओ फिर सोने को कटोरा खीर समेत उठा के – छुट्टन के हॉथ पे –धर – दओ ... । – और बोले-हमाई तरफ से नेता जू खों पठौनी दे दइयो ।–

दूसरे दिन – दिन –ऊगत जा रओ तो–पटैल जू के दोरे में –

गुपला, पंडत जू-सिपाई भैया, पटवारी कक्का और मासाब आन बैठे । पटैल जू और रामबती के भीतर से किबारे जड़े ते । तनक देर बाद भारंगी – पत्ता चाटत् आ रओ तो ओ ने – सुनाई के खीर को कटोरा तो नेता जू के घरे पौंच गओ ... । हम ने तो छुट्टन से छुड़ा के तनक सी खीर ले के खा लई । जो हुइऐ सो देख हैं ... ।

– काऐ के – अब तो एक साल बाद आ है–

– दूसरी –''जुँदैया पूनों की ।''

–रिछारिया घाट, परकोटा वार्ड
सागर (म.प्र.)
मो. 9755811972

*****

दीवाने आजादी : दिमान राव हमीर सिंह जू देव

-श्रवण सिंह सेंगर

दिवान हमीर सिंह जू देव चन्देरी नरेश राव दुर्जन सिंह के पुत्र कुँवर जोरावर सिंह के पुत्र थे। सन् 1743 ई. से सन् 1758 तक राव साहब ने चन्देरी में शासन किया, अपने समय के प्रख्यात प्रजा पालक रहे हैं। राज्य के विभाजन के परिणाम स्वरूप दिमान राव हमीर सिंह जू देव को चन्देरी तथा पाली के आस्थानों के साथ पान उद्यान भी प्राप्त हुये थे। राव हमीर सिंह ने भारत के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में सक्रिय एवं अग्रणी भूमिका का निर्वाह किया था।

बुन्देलावंश – अंग्रेजों की दृष्टि से

The Bundelas are a proud turbulaut race, avers to labour and eveready to quarrel with each other or with their rulers of they think them selves aggrieved .... The Bundelas love for honourary distiction Is well known and Reos and Divans are pleutiful throughout the district.

''बुन्देले अहंवादी एवं आक्रामक प्रवृत्ति की जाति है, श्रम से बचते हैं, जिससे अप्रसन्न हो जाते हैं, उससे विवाद आपस में भी कर लेते हैं, और अपने शासकों से भी विवाद कर लेते हैं। सम्मान के प्रति उन का प्रेम सर्वविदित है। जनपद में रावों तथा दिमानों का बाहुल्य है।'' E.T.ATKINSON -

एटकिंसन की यह टिप्पणी 1874 ई. की है। आगे उन्होंने लिखा है कि राव हमीर सिंह पाली का परिवार जनपद ललितपुर के अग्रणी परिवारों में से एक था।[3] राव साहब के अतिरिक्त जनपद के अन्य महत्वपूर्ण बुन्देला परिवार जैसे राजा मर्दन सिंह जू देव, बानपुर तथा राजा बखतबली शाहगढ़ भी अंग्रेजों के विरुद्ध आक्रामक तथा युद्धरत रहे हैं। राब साहब ने अपने प्रभाव क्षेत्र पाली में अंग्रेज अधिकारियों को 1858 ई. के अन्त तक प्रवेश तक नहीं करने दिया।

उल्लेखनीय है कि 1811 ई. में सिंधिया ने अंग्रेजों के सहयोग से प्रतिकार, की भावना से, बुन्देलों पर आक्रमण किया और चन्देरी पर अपना आधिपत्य करना चाहा। राजा मोर प्रहलाद की ओर से दिमान तखत सिंह तथा कुँवर उमराव सिंह ने एक सप्ताह तक युद्ध किया। किन्तु चन्देरी के एक ठाकुर के विश्वासघात से अंग्रेजों को सफलता प्राप्त हुई 4 और चन्देरी दुर्ग सिंधिया के आधिपत्य में आ गया। 1829 में पुनः नवीनत : आक्रमण की स्थितियाँ उत्पन्न हुई। सिंधिया ने अंग्रेजों से सहायता ली कर्नल बैप्टिस्ट ग्वालियर से चन्देरी आया, किन्तु महाराज ओरछा की मध्यस्थता से शांति स्थापित हुई।[5] युद्ध नहीं हुआ।

1841-43 के बुन्देला विद्रोह ने भारत की स्वतंत्रता का बीजारोपण कर दिया था। बानपुर राजवंशीय बुन्देला, नारहट के जागीरदार, मधुकर शाह, जवाहर सिंह, बुन्देला चंद्रापुर तथा गुढा के गणेश जू ने विप्लवी विद्रोह करके तथा महाराज पारीक्षत बुन्देला राजा जैतपुर ने अंग्रेजों की कैथा छावनी को आगलगाकर भारत की आजादी का बिगुल बजा दिया था।[6]

राव साहब हमीर सिंह पाली को अंग्रेज कभी गिरफ्तार नहीं कर सके। इंगलैण्ड की महारानी ने क्षमादान का घोषणा पत्र जारी कर दिया था। 15 दिसम्बर 1858 को आयुक्त झांसी ने यह ज्ञात करना चाहा कि महारानी की क्षमा दान घोषणा का राजद्रोही सामान्य जनता तथा विशेष कर विप्लवकारियों पर क्या प्रभाव पड़ा 20 दिसम्बर को उत्तर दिया गया कि घोषणा का जनता के कुछ भाग पर अच्छा प्रभाव हुआ किन्तु नेतृत्व पूर्णत: तैयार नहीं हैं।[7]

क्षमादान घोषणा के सम्बन्ध में अधिकांशत: क्रान्तिकारीगण आश्वस्त नहीं हुये। अंग्रेजों पर विश्वास नहीं था। दूसरा कारण यह है कि बिना शर्त आत्म समर्पण को क्रान्तिकारी अपमान समझते थे। रावहमीर सिंह के समस्त आस्थान राजसात् कर लिये गये थे, इसलिये रावसाहब ने अपनी जागीर वापिस प्राप्त करने के पश्चात हो समर्पण करने की शर्त अंग्रेज अधिकारियों के समक्ष प्रस्तुत की। 8 सितम्बर 1859 को आयुक्त झाँसी मण्डल ने शासन को पत्र लिख कर यह सुझाव दिया कि राव हमीर सिंह तथा ठाकुर देवीसिंह को उनकी अपनी शर्तों पर क्षमा प्रदान किया जाना उचित नहीं है। जन सामान्य में अंग्रेजों की अक्षमता की अभिस्वीकृति का सन्देश जायेगा।[8] उन्हें जीवन तथा स्वतंत्र रहने की गारण्टी प्रदान की जा सकती है। किन्तु आस्थान अवश्य ही जब्त किये जायेंगे। इस आशय का पत्र आयुक्त ने स्वयं राव हमीरसिंह को भी लिखा था। अंग्रेजों की नीति यह थी कि यदि रावहमीर सिंह को उनके अस्थान अभी दे दिये जायेंगे, तो वे पाली में रहकर अंग्रेजों की विपत्ति का कारण बने रहेंगे। रावहमीर सिंह, पाली पर अंग्रेज सरकार के द्वारा राजद्रोह का मुकदमा चलाया गया। उनके ऊपर गम्भीर राजद्रोह करने के आरोप लगाये गये थे। मुकदमे की कार्यवाही में शीघ्रता की गई। और आदेशार्थ जार्ज कूबर सेक्रेटरी के पास प्रेषित कर दी गई। इसके पश्चात हमीर सिंह तथा देवीसिंह के विरुद्ध उपायुक्त अर्थात कलेक्टर ललितपुर ने मुखबिर दल के बयान अंकित किये और 6 अप्रैल 1860 को आयुक्त झाँसी को भेज दिये।

अंग्रेज अधिकारियों को यह सन्देह था कि जब पुलिस बल राव साहब को निरुद्ध करने के लिये भेजा जाता है। तो वे ग्वालियर राज्य की शरण प्राप्त कर लेते हैं। अंग्रेजों के आग्रह पर ग्वालियर राज्य दरबार की ओर से अपने अधीनस्थ अधिकारियों को राव हमीर सिंह को निरुद्ध करने हेतु आवश्यक निर्देश दिये गये।[9]

6 जनवरी 1861 को दिमान हमीर सिंह पाली ने अपने साथी सोनावरी के दिमान मर्दन सिंह एवं तेरह अन्य सहचरों के साथ क्षमादान घोषणा के अन्तर्गत अपने समस्त अस्त्र शस्त्रों सहित समर्पण कर दिया। समर्पण के पश्चात उपायुक्त चन्देरी ने आयुक्त से निर्देश प्राप्त किये कि राव हमीर सिंह के विषय में अग्रिम निर्देश क्या है?

उपायुक्त अर्थात् तत्कालीन जिला मजिस्ट्रेट ललितपुर ने खेद व्यक्त करते हुये कथन किया कि राव साहब के प्रकरण में उनके सम्बन्ध में कार्यवाही करने में त्रुटि हुई है। उनके साथ संवेदनशीलता से उचित तथा अपवाद स्वरूप व्यवहार करना चाहिए था। गम्भीरतापूर्वक विचारोपरांत आयुक्त झांसी ने राव हमीर सिंह को मासिक पेंशन देकर उन्हें शांति पूर्वक रहने की व्यवस्था की। अन्तर्निहित नीति यह थी कि पाली अथवा जनपद में उन्हें कहीं भी रखे जाने पर वे शांत नहीं रह सकते है, और इस कारण के शासन के लिये विपदा के स्रोत बन सकते है।[10] इन समस्त परिस्थितियों से अवगत कराते हुये आयुक्त झांसी ने 26 जनवरी 1861 को सचिव कूवर को विवरण सहित परिस्थितियों का उल्लेख किया। राव साहब के विषय में अवगत कराया गया कि

प्रथमतः वह कुलीन राज परिवार के प्रमुख है। इसलिये उनके शाँति पूर्वक रहने की आशा करना शासन के लिये घातक सिद्ध हो सकता है।

इस आधार पर दिमान हमीर सिंह पाली को गवर्नर जनरल की समिति ने उन्हें वाली से दूर मुरादाबाद भेजे जाने हेतु शीघ्र तैयारी करने के आदेश दिये। राव[11] साहब को 9 मई 1861 को उनके पुत्र तथा दो महिलाओं सहित, आठ अश्वारोहिओं तथा एक थानेदार की सुरक्षा में झाँसी भेज दिया गया। उन्हें 30-00 रू. पैंशन दी गई।

राव साहब के साथ जो दो महिलाऐं थीं, उनको अंग्रेजों ने अपने स्वयं के व्यय पर मुरादावाद जाने के आदेश दिये, कारण बताया गया कि वे उनकी पत्नी नहीं थी। बहिन, बुआ आदि सम्बन्धों का उनके यहाँ कोई महत्व नहीं होता है। धैर्यवान राव हमीर सिंह को पुत्र की चिंता ने भावुक बना दिया। पुत्र को कहाँ रखें? साथ में रखना उचित नहीं था। अंग्रेज पाली में रखने हेतु तैयार नहीं थे, आँखों की नमी से उत्तर मिल गया, मातृसम्बन्धी नगर पन्ना भेजे जाने हेतु अंग्रेज अधिकारियों से आग्रह किया।[12] कुँवर निर्भय सिंह को विदा करते समय पिता पुत्र दोनों संवेदनाओं की आवृत्ति और मर्माहत पीड़ा की अनुभूति के कारण दुःखी हो गये।

पुत्र मोह में विवाद अवसाद तो स्वाभाविक है ही, विशेषकर अवयस्क पुत्र को विलग करने में घनीभूत ममत्व स्पष्ट प्रकट होने लगा। राव साहब क्षितिज की ओर एकटक निहारते रहे।

बालक को हृदय पर शिला रोपण उपरान्त विदा किया।

ब्रिटिश शासन को यह आवेदन दिया गया कि राव साहब के पुत्र की शिक्षा की व्यवस्था पाली में किये जाने की अनुमति दी जावे। इस शर्त पर अनुमति प्रदान की गई कि निर्भय सिंह को शिक्षण अवधि, में अजमेर में रहना होगा।[13] पाली में रहकर शिक्षा ग्रहण करने की अनुमति प्रदान नहीं की गई। यह प्रतिबन्ध भी किया गया कि 21 वर्ष की आयु तक अजमेर में ही रहकर अध्ययन करना होगा। अवयस्क बालक के प्रति भी ब्रिटिश शासन भय ग्रस्त था। क्योंकि जनभावना उनके साथ थी।

राव साहब के कुँवर निर्भय सिंह की ओर से अपील दायर की गई कि पिता के द्वारा स्वतत्रता की प्रेरणा से ब्रिटिश शासन के विरुद्ध यदि कथित अपराध किया गया है, तो इस आधार पर सम्पत्ति से वंचित करके पुत्र को प्रताड़ित किया जाना न्यायोचित नहीं है। फरवरी 1862 में यह अपील विचारण हेतु स्वीकार कर ली गई। आठवर्ष पश्चात् 1868 में लेफ्टिनेण्ट गवर्नर ने यह आदेश दिया कि निर्भय सिंह को उनके आस्थान में अथवा किसी अन्य आस्थान में एक भाग इस शर्त पर प्रदान किया जाय कि 21 वर्ष की आयु तक उन्हें अजमेर में ही रहना होगा। अंततः उन्हें बानपुर आस्थान का 1/3 भाग आय 500.00 रु. वार्षिक प्रदान किया गया।[14]

राव हमीर सिंह जू देव अपने आवासीय स्थान पाली में सदैव नित्यप्रति अपने सह बन्धुओं ग्रामवासियों से विभिन्न विषयों पर वार्तालाप में व्यस्त रहते थे। परिजनों के सानिध्य का सुख था। मुरादाबाद में कोई व्यक्ति पूर्व परिचित भी नहीं था, इस प्रकार का एकान्तिक जीवन व्यतीत करते हुए, उन्हें पाँच वर्षो से अधिक अवधि व्यतीत हो गई। अपने इस एकाकी जीवन से क्षुब्ध होकर उन्होंने ब्रिटिश सरकार को 24 सितम्बर 1866 को यह आश्वासन दिया कि भविष्य में उनका आचरण शासन की स्वीकृत के अनुरूप ही रहेगा, उन्हें अपने परिवार के साथ रहने दिया जाय।

2 नवम्बर 1866 को शासन की ओर से सचिव ने यह प्रस्तावित किया कि राव हमीर सिंह को ललितपुर जनपद के किसी भाग में रहने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए। क्योंकि उनकी स्थानीय जनमानस में लोक प्रियता एवं प्रभाव तथा अंग्रेजों के प्रति शत्रुभाव बुन्देलों को कभी भी क्रान्ति हेतु उत्प्रेरित कर सकता है। उनका यह प्रस्ताव अमान्य कर दिया गया। एक सम्मानित तथा गरिमा युक्त व्यक्तित्व के आश्वासन पर भी भयाक्रान्त फिरंगियों की तुच्छ मानसिकता ने मानवीय मूल्यों की अवहेलना कर दी।[15]

राव साहब ने फरवरी 1873 में पुनः इच्छा व्यक्त की। उन्हें ललितपुर में रहने की अनुमति दी जाय विकल्प में झांसी में रहने के लिये तैयार हूँ। 10 अप्रैल को शांति में बाधक होने के आधार पर अनुमति नहीं दी गई। किन्तु सचिव ने 25 मई 1873 को आयुक्त झाँसी से पूँछा कि राव हमीर सिंह को झांसी रहने की अनुमति प्रदान किये जाने में क्या आपत्ति है? 29 मई 1873 को मुरादाबाद के मजिस्ट्रेट ने अवगत कराया कि रावसाहब तीन माह के अवकाश में वतन जाना चाहते हैं, यदि यह स्वीकार न हो तो ललितपुर अथवा झांसी में रहने की इच्छा पूर्ण की जाय।[16]

3 जुलाई 1873 को उपायुक्त (कलेक्टर) ललितपुर ने आयुक्त, झांसी को लिखा कि राव हमीर सिंह का ललितपुर और आसपास झांसी के ठाकुरों पर पूर्ण प्रभाव है। उनका झांसी मण्डल के किसी भी भाग में आवासित होना अनिष्ट अथवा उपद्रव का उत्प्रेरण करेगा। 7 जुलाई को पुनः लिखा गया कि ललितपुर जिले के समीप राव हमीर सिंह को आने की अनुमति देना अविविवेकपूर्ण होगा, क्योंकि उस क्षेत्र में अब भी दस्यु अधिक हैं।[17] राव हमीर सिंह ने क्षमा घोषणा के अनुसार समर्पण करने से मना कर दिया था, इसलिये उनकी समस्त सम्पत्ति राजसात करली गई थी। उनके भ्राता मदन सिंह को वह सम्पत्ति प्रदान कर दी गई थी।[18]

राव हमीर सिंह जू देव के विषय में 1876 तक कोई उल्लेख प्राप्त नहीं होता है। पन्द्रह वर्षों के दीर्घ अन्तराल तक यद्यपि अंग्रेजों ने उन्हें अपने वतन के दर्शन नहीं करने दिये, क्योंकि उनके मन मस्तिष्क में राव साहब के भय का भूत कुण्डली मारे बैठा था।

उनके क्षेत्र में राव साहब के अंग्रेजों के विरुद्ध संघर्ष की गाथाऐं लोक मानस में आज भी गायी जाती हैं। लोकगीतों में राव हमीर सिंह जू देव आज भी अमर है।

-कैरोखर हाउस, गुरसरॉय झांसी

संकेत -

1. Jhansi-A Gazetteer-By D.L. Drake-Brockman, I.C.S.
2. Statistical Descriptive and Historical Account of the north Western Provinces of India-Vol.I (1874) By Edwin T.Atkinson, B.A.
3. डॉ. काशी प्रसाद त्रिपाठी-बुन्देला विद्रोह (1841-43)
4. पत्रावलिया-यू.पी. सेन्ट्रल रिकॉर्ड, ऑफिस, इलाहाबाद
5. Dr. Saletore, C.M.-Press List of Bundelkhand
6. डॉ. काशी प्रसाद त्रिपाठी-पृष्ठ 1
7. पत्रावली संख्या-10 तथा डॉ. सैलेटेर पृष्ठ -50
8. पत्रावली संख्या-27 तथा डॉ. सैलेटेर पृष्ठ -85
9. पत्रावली संख्या-63 तथा डॉ. सैलेटेर पृष्ठ -105

10,11 तथा 12 -पत्रावली संख्या-121 तथा डॉ. सैलेटेर पृष्ठ -122-125

13,14 पत्रावली संख्या-121 तथा डॉ. सैलेटेर पृष्ठ -191

15. ई.टी.एटकिन्सन-पृ.346,

16,17, पत्रावली संख्या-121 तथा डॉ. सैलेटेर पृष्ठ -230-31

18. ई.टी.एटकिन्सन-पृ.345-346 तथा झाँसी गजेटियर (1909)पृ.108

*****

तुलसी की भवितव्यता

-उदय शंकर दुबे

रामचरित मानस जैसे अप्रतिम और कालजयी ग्रंथ के रचयिता गोस्वामी तुलसीदास का जीवन चरित्र वैचित्र्यमय है। उसके जीवन चरित्र से संबंधित कई ग्रंथ अब तक प्रकाश में आ चुके हैं। यथा वेणीदास कृत मूल गोसाई चरित्र, भवानीदास रचित गोसाई चरित, अविनाश कृत तुलसी प्रकाश, सरीला रियासत की रानी कमल कुंवरि की रचना तुलसी चरित, रामशरण कृत तुलसी चरितामृत आदि। इसके अतिरिक्त गोस्वामी तुलसीदास अखाड़ा-तुलसी मंदिर तुलसी घाट के संग्रह में किन्हीं रामप्रसाद गुलाम द्वारा रचित तुलसी चरित ग्रंथ की एक हस्त लिखित प्रति सुरक्षित है। यह ग्रंथ अभी तक अप्रकाशित है। यह प्रति नागरी लिपि में सुन्दर अक्षरों में लिखी हुई है। प्रति का लिपिकाल संवत् 1857 सन् 1800 ई. है। यह प्रति झांसी-बुन्देलखण्ड में लिपिबद्ध हुई थी। लिपिकर्त्ता कोई भगवान थे। उन्होंने ग्रंथ की पुष्पिका में अपना नाम, समय, स्थान का उल्लेख कर दिया है।

इस तुलसी चरित के रचयिता राम प्रसाद गुलाम के विषय में कोई जानकारी नहीं प्राप्त होती। ग्रंथ की भाषा के आधार पर कहा जा सकता है कि ये बुन्देलखण्ड के किसी क्षेत्र के निवासी थे। ग्रंथ का रचनाकाल भी अज्ञात है। प्रति का लिपिकाल सन् 1800 ई. है। इस आधार पर तुलसी चरित सन् 1800 ई. के पूर्व लिखा गया होगा। ग्रंथकार ने इसमें तुलसी से संबंधित अलौकिक घटनाओं का वर्णन किया है। अधिकांश वृतांत पूर्व में लिखे गये चरित ग्रंथों के अनुसार हैं केवल ग्रंथारंभ में वर्णित तुलसी की होतव्यता (भवितव्यता) एक नया प्रसंग है। जिससे ज्ञात होता है कि तुलसी को अपनी भवितव्यता का दर्शन हुआ था। पूरा ग्रंथ रामचरित मानस की शैली में दोहा-चौपाई छंद में लिखा गया है। इसमें कुल चार सोरठा, बयालिस दोहे और दो सौ उन्नीस चौपाइयाँ है। कवि ने शंकर पार्वती के कथोपथन के माध्यम से तुलसी चरित का वर्णन किया है।

ग्रंथकार रामप्रसाद गुलाम ने तुलसी को भक्तमाल का सुमेरु कहकर उनकी वंदना की है। नाभादास ने अपने भक्तमाल ग्रंथ में तुलसी को भक्तमाल का सुमेरू कहा था और वाल्मीकि का अवतार स्वीकार किया था-''कलि कुटिल जीव निस्तार हित वाल्मीकि तुलसी भयो।'' वंदना के पश्चात कवि ने तुलसी और उनकी पत्नी की कथा का वर्णन करते हुये लिखा है कि जमुना के तट पर स्थित राजापुर में तुलसी ने जन्म लिया था। उनकी स्त्री परम भागवत थी। वह निरंतर राम नाम का जप करती रहती थी। एक दिन अपनी पत्नी से मिलने की अभिलाषा से तुलसी ससुराल गये। पति का दर्शन पाकर वह बहुत प्रसन्न हुई। तुलसी का चरण धोकर उनकी परिक्रमा की तथा हर प्रकार से सेवा की। फिर उसने तुलसी से नम्र निवेदन करते हुये कहा कि वेद, पुराण जैसे ग्रंथों का कहना है कि सच्चा स्नेह भगवान राम से करना चाहिये नर तन धारण कर भगवान से प्रीति करने पर जीवन कृतार्थ हो जाता है। उनके शरण में जाने से कोई दुःखी नहीं होता नारी का वचन सुनकर तुलसी परम प्रसन्न हो उठे तुलसी का मन श्री राम के चरण कमलों में रम गया।

भगवान शंकर पार्वती को संबोधित कर कहते हैं कि हे उमा! एक दिन तुलसी अपनी पत्नी के साथ मंदिर में बैठे थे। पत्नी ने उनसे कहा कि हे साईं! मैंने ध्यान में एक चरित्र देखा है आप भी प्रातःकाल जाकर उसे देखिये। गाँव के पश्चिम की ओर रास्ते में जो सुन्दर वह वृक्ष है उसी के पास जाकर आप आसीन हो जाइये। वही पर वृक्ष के नीचे आपको वह कौतुक (चरित) देखने को मिलेगा। स्त्री के ऐसा कहने पर दूसरे दिन प्रातःकाल होने के पूर्व ही तुलसी उस वट वृक्ष के समीप पहुँच गये। वह वृक्ष के नीचे आसीन न होकर वे वृक्ष पर चढ़ गये और आराम से एक शाखा पर बैठ गये। कुछ क्षण उपरांत ही षोडश श्रृंगार किये हुये एक रूपवती युवती आकर वट वृक्ष के नीचे खड़ी हो गई। कुछ देर बाद वहाँ पर घुड़सवार पहुँच जाते हैं। वृक्ष के नीचे खड़ी रूपवती युवती को देखकर वे मोहित हो गये और उससे उसका परिचय पूछने लगे। युवती ने अपना परिचय देते हुये कहा कि-

चौपाई - *सुनहुँ बटोही हमरी माया। हम क्वारी कन्या जग जाया।*
हमरे ग्राम न धाम कबीला। विचरत फिरत करत निज लीला।।
जो राखै हम कहँ करि दाया। ता सन हम संग ओर निभाया।
यहि विधि वचन नारि जब भाषे, तब स्वारन के मन अभिलाषे।।

दोहा - *स्वारन मन होत बित्ता कीनो तेज पसार।*
तिहि क्षण पाँचों अभसत प्राण काढ़ि इक बार।।

पाँचों सवारों की मृत्यु हो जाने पर वही वट वृक्ष के पास पाँच बटोही आ गये। उस रूपवती युवती ने उन पाँचों बटोहियों को एक-एक घोड़ा देकर उन्हें वहाँ से चले जाने का आदेश दिया और उस स्थान से चलने को उद्यत हुई।

वट-वृक्ष की शाखा पर बैठे तुलसी इस दृश्य को आश्चर्य-पूर्वक देख रहे थे। उन्होने सोचा कि इस रूपवती नारी ने विचित्र कौतुक किया। जैसें ही उसने चलने के कदम बढ़ाया तुलसी ने सावधानी पूर्वक वट-वृक्ष से उतर कर उसके सामने जाकर हाथ जोड़कर खड़े हो गये और सविनय पूछा कि -

पाण जोर तुलसी तब भाषा। को तुम कहौ सत्य तजि माखा।। कहिये मो सन आपुन नामा। कहँ आई कहँ गमनी वामा ।।

नारी का उत्तर -

तुलसी गिरा सुनत मुसक्यानी।
पुनि आपन निज नाम बखानी।।
होततविता (होतव्यता) मोर सुन नाऊँ।
पाँचौं निमित्त आइ पति ठाऊँ।।
पंच स्वार मृत्यु हरि आजू।
यही भूमि महि यतन विराजू।।

दोहा - *उन पाँचों की मृतु हती, उन पाँचों कह बाज।*
जो विधि जाके भाल लिख, से मुहि करने काज।।

यह सुनकर तुलसी ने भवितव्यता रूपी नारी का यश-गान किया और कहा कि भवानी आप मेरी भी होतव्यता मुझे बताने की कृपा करें। नारी ने कहा हे तुलसी तुम धन्य हो, परम भक्त हो, तुम्हें राम-सीता का दर्शन अवश्य प्राप्त होगा। यह मेरा आशीर्वचन है। तुलसी को आशीष देकर होतव्यता रूपी नारी ने चलने को पग बढ़ाया

और कुछ ही क्षण में अंतर्धान हो गई। तुलसी प्रसन्न मन घर लौट आये और पत्नी को पूरा वृतांत बताया। भवितव्यता का साक्षात दर्शन पाकर तुलसी एवं उनकी स्त्री ने अत्यधिक श्रद्धा और विश्वास के साथ राम-सीता के दर्शन हेतु तपस्या में लीन हो गये। तपस्या का फल केवल तुलसी को ही नहीं संसार को प्राप्त हुआ-रामचरित मानस ग्रंथरत्न के रूप में।

चरित लेखक रामप्रसाद ने तुलसी की भवितव्यता का वर्णन किस आधार पर किया है, यह कहना कठिन है किंतु रामचरित मानस में स्थान-स्थान पर भवितव्यता का उल्लेख हुआ है। तुलसी ने स्वरचित महाकाव्य में कथा प्रसंग में रुचिरता और प्रभावोत्पादकता हेतु अलौकिक तत्वों का सहारा लिया है। ये तत्व हैं - श्राप, स्वप्न, आकाशवाणी, भवितव्यता और माया। यहाँ माया से तात्पर्य ब्रह्म और जीव के मध्य स्थित माया से नहीं है जो समस्त जीवों को अपने में आबद्ध किये रहती है। अपितु देवताओं और राक्षसों की प्रच्छन्न माया से है जिससे वे अपने कार्य की सिद्धि करते हैं। भवितव्यता वह अलौकिक तत्व है जिसे कोई जान नहीं सकता। तुलसी ने रामचरित मानस में कई स्थलों पर इसका उल्लेख किया है। भानुप्रताप की कथा का वर्णन करते हुये वे भावी की प्रबलता को दर्शाते हैं -

तुलसी जसि भवितव्यता, तैसी मिलै सहाइ।
आपुन आवै ताहि पै, ताहि तहाँ लै जाइ।।
जेहि रिपु छय मोइ रचेउ उपाऊ।
भावी बस न जान कछु राऊ।।
भूप विकल मति मोह भुलानी।
भावी बस न आय मुख बानी।।
भूपति भावी मिटइ नहि, जदपि न दूषन तोर।
किये अन्यथा होइ नहि, विप्र श्राप अति घोर।।
बालकाण्ड।।

अयोध्याकांड में कैकेयी के रूठने पर दशरथ की दशा का वर्णन करते हुये तुलसीदास ने भवितव्यता को प्रबल बताया है - तुलसी नृपति भवतव्यता बस काम कौतुक लेखई। स्वयं वशिष्ठ मुनि भरत को समझाते हुये कहते हैं - सुनहु भरत भावी प्रबल विलखि कहेउ मुनिनाथ। हानि लाभ जीवन मरण जस अपजस विधि हाथ।। तुलसी ने बार-बार भावी की प्रबलता पर जोर दिया है। इससे रामप्रसाद गुलाम द्वारा वर्णित कथा का मेल बैठता है। रहीम जैसे कवि ने भी भावी की प्रबलता को स्वीकार किया है -

रहिमन भावी बहु प्रबल होत आपने हाथ।
राम न जाते हरिण संग, सीय न रावण साथ।

राम प्रसाद गुलाम द्वारा तुलसी चरित ग्रंथ में तुलसी द्वारा भवितव्यता का साक्षात् दर्शन पाने का प्रसंग अपने आप में बड़ा विलक्षण प्रसंग है। वैसे इसका सारा श्रेय तुलसी की स्त्री को है जिसने यान में भवितव्यता का दर्शन प्राप्त किया था और उसे अपने पति तुलसी दास को बताया।

-साहित्य कुटीर, कठारी बाजार,
पो. खमरिया, जिला-संत रविदास नगर
(भदोही, उ.प्र.) 221306

*****

प्रेम गली अति सांकरी, तामें दो न समाहिं

-उमादेवी उपाध्याय

प्रेम की संकरी गली में दो को निभाव नईं हो सकत जब लौ संसारी बंदन नें छूटहैं तौ लो ईश्वर सें नातो नई होत। संसार के विषयन कौं मोह हरें-हरें छोरौ। संसार छोड़ कै कां जेहौ, संसार त्याग करवे की जरूरत नइयां विषयन को मोह छोड़वे की जरूरत है। व्रत में हमेसइ के लाने त्याग करवे की आज्ञा है पै हमेसइ के लाने त्याग नई हो सकत। ई से व्रत विधि बताई गई है धीरें-धीरें संयम बढ़ैहौ, वैराग बढ़ैहौ तो ईसुर सेवा में ध्यान को अनूठों आनंद मिलहै।

एक दइयाँ एक चौबे जू मथुरा से गोकल जावे का निकरे नौका पे बैठके उने जमना जू के पार जाने तो, चौबे जू भांग के नसा में हते, वे नौका में बैठे औ चम्पू चलाउन लगे। अपने हातन के बल कौ पूरो भरोसो होवे से कन लगे नाव अवई गोकल पहुंच जैहे। चौबे जू ने सबरी रात नाव चलाई। भुन्सारो भये चौबे जू सोचन लगे जो मथरा जैसो कौन सो गाँव आय? काउ सें पूछी जो कौन सो गाँव आय? जबाब मिलो के मथुरा आय। ओई विसराम घाट उर ओई मथरा। नशा उतरवे पै चौबे जू खों अपनी मूरखता को आभास भओ, चौबे जू ने साईं रात नाव चलाई पै नाव तौ रस्सी के जरिएं घाट सें बंधी हती, वे नाव खोलवोअइ भूल गये ते सारी रात चलावे पे उतई के उतई रह गये। जा अवस्था चौबे जू की नई अपुन सबई की है। अपुन सबई इन्द्रियन सुख के नशा में चूर हो जइयत। जीव खां इन्द्रियन कौ सुख भोगवे कौ नशा चढ़ गओ है। वासना काउ खां अगाऊँ नई बढ़न देत। सुखी होवो चाउत हौ तौ संसार के विषयन से प्रेम नईं करौ। अपने घरई मेंई वैराग्य खौ साधौ। बिना वैराग्य के ज्ञान और भक्ति की शोभा नइयां। ज्ञान उर वैराग्य होवे पै भक्ति बढ़े तबई ईश्वर को साक्षात्कार होत है। लौकिक व्यौहार के ज्ञान में द्वैत औ ईश्वर के सरूप संबंधी ज्ञान में अद्वैत है। व्यौहार के सरूप कौ ज्ञान द्वैत भाव से भरो भओ है। व्यौहारिक ज्ञान में ज्ञाता और ज्ञेय अलग-अलग होत। परमेसुर कौं ज्ञान होवे पै ज्ञाता उर श्रेय एक बन जात। सेवा-स्मरण करवे सें तन्मयता बढ़त है। ईसुर कौं अपरोक्ष साक्षात्कार हो जात। जीसें जो जीव ईसुर में मिल जात है। ई के बाद वो जो नई कै सकत कै मैं ईसुर खां जानत हों उर ऐसो भी नई कै सकत कै मैं ईसुर खां नई जानत। गोपी सब में श्री कृष्ण खां देख कै जीव भाव भूल गई तीं।

लाली मेरे लाल की जित देखौं तित लाल।
लाली देखन में गई मैं भी हो गई लाल।।

श्रुति कात है कै उतै न तौ मैं रात औ न तू। वृत्ति ब्रम्हाकार हो जात। श्री कृष्ण के सरूप कौ जियै भली-भांत ज्ञान होत है वो ईसुर से अलग नई रै सकत, सबमें ईसुर के दर्शन करवे वारौ खुदई ईसुर बन जात है।

-पन्ना (म.प्र.)

*****

संगै को लै गऔ

-शिवाजी चौहान

जीके लानें तुम दिन्नारात एक कर रए। न ईबेराँ न ऊ बेराँ, नायँ मायँ दरेरा देत। आकास पाताल एक करत, न अगाईं न पछाई, न ऊपर न नेचैं न अपनों न तपनों, न अँदयारौ न उजयारौ न नदिया न नारे, न बैरीन मिन्त न कीरा न पतींगा कछुअई नईं देखत। अँदयारौ ढो रए। आँखे चैथरी ऊपर चढ़ी। हाव हाव परी। एक धुन चौबीसऊ घंटा सवार रत सराबिअन की नाई। ऐसेई बरोंटी में दबे रत। बौ काऊ कौ नई भऔ जी के लानें तु मूँड मुडायँ मूँड जेवरिया बाँदे। जा काया तौ अपनी नईं भई। लोऊ लुक तौ अपनें तन कौ अपनी जान लैलेत। तुमें पतौ नई हुइयै तौ सुनौ।

एक सिकारी सिकार के लानें भुन्सारे से डाँग कुदाईं निकर गऔ। इतै से उतै सें इतै जंगल को जंगल छान मारौ पै कऊँ परनाम नईं परौ। डाँड़ै सीत नईं लगौ। भूकौ प्यासौ, चिल्ला घाम खन्नात दुपरिया लू के चाँटा से गालन पै घल रए ते। बिचारौ मन मारकें घैलया कें एक बिरछा के छायरे तरै बैठ गऔ। कहू घोकन लगौ। नैकई बैठ पाव हुये के इत्तेई में एक हिन्ना कौ बच्चा धर कड़ौ। फिर का काने। ऊनें हालऊँ तुपक सुदयाई औ बाकौ पिछम्मौ धरौ। बच्चे कछु मनक परी कै कोऊ पछाई लगौ। वौ प्रान छोड़ के भगौ कै सिकारी ने भगतई भगत में बंदूक घाल दई। पछाई की टाँगन में कछू छर्रा घुसगए तौऊ वौ एक टाँग तीन पाँव के बल भगत गऔ। एक घनी झाड़ी में दुक गाऔ। हार गऔ तो भौत भै-भीत हतो। हपा रऔ तौ। साँस नई समारईती। जौन पाँव में छर्रा छिदेते ऊसें रकत के बूँदा मई तक टपकत गए जितै लुक बौगऔ हतौ। वौ अहेरी लोऊ की बूँदें देखत-देखत मईं पौंच गऔ जितै वौ हिरन कौ सावक छिपौतौ। बानै फिर ऊ के ऊपर तुपकिया चला दई। बौ बच्चा मर गऔ। अपयँ घरै लै गऔ। अपन खाब अपने परिवारै खबाब। जा कौ जो अरथ निकरौ कै अपनो खून अपनौं नईं भऔ तौ दूसरो अपनों कैंसे हो सकत।

अबई अबई की बात है कल दिन पछाई की विदेस में एक राजा हतौ, आजकल बाय राष्टपती सोऊ कन लगै। कैबे को मतलब जौ है कै वौ मुलक कौ मालिक कहाउत। ऊयै राज करत करत मुलकन सालैं हो गई ती। गद्दी नई छोड़ैं चाउत तौ मनमानी करत तौ। जनता जीबे सै तंग आ गई। हड़गई, उकता गई ती। मरबे-मारबे पै उतारूँ हो गई। बौखला गईती। अन्त में बौई भओ जो नई होनें तौ। परजा नें गद्दी हतया लई। जा बात लीबिया देस की आय। ऊ राष्टपती कौ नाव मुअम्मर गद्दाफी हतौ। ऊनौ डेढ़ सौ (150) कुन्तल सोनों हतौ। अररर हद्द हो गई। सोने कौ बिटा लगाँय तौ। का क्वाऊत 150 कुन्तल सोनों। बाराबाट बाट होगऔ। दरबार बिलखत फिरौ। पदर में पइसा नई रऔ। गोली कौ सिकार सोई होनें परौ। जौ नतीजा भऔ। और सुनो अपनें देस के करकें यानी सीमा सें लगौ भओ एक बचकानी देस है। ऊमें अबै लों राजासाई हती। उतै की परजा हलके राज कुअँर खौं चाहतती बड़े खों नई। गद्दी के लानें बड़े ने हल्के खों मरवा दव। जनता बैक गई। देस परजा के हाँत में चलौ गऔ। कैबेकौ मतलब उतै परजातंत होगऔ। लोकतंत्र जियैकत। रैगए बड़े कॅवर हातन पै हात धरें। सब की निगा सें उतर गए। रैगए निबुआ नोंन चोंखें।

कछू जादाँ पुरानी बात नईंयाँ। मुंज भोज के बड़े भैया हते। परजा भोज के बेबार से खुस हती। मुंज के मन में पाप समागऔ। सोचन लगै कै ऐसौ न होय कै भाग के पाँसे पलट जायँ और भोज उज्जैन कौ राजा बन जाय। सौ एक दिना उनने चार जल्लादन खों बुआऔ और उनसें कई कै भोज खों जंगल में लैजाब जान सें मारबे के पैलें दोऊ आँखें निकार लिओ जिनें हम अपने पाँवन सें कुचल दें। भोजखों जल्लाद लै गए। देखत में भोज खबसूरत यानी सुन्दर तौ हतेई। सीधे सादे भोले भाले भोज पै हत्यारन खों दया आ गई। भोज के बलदें एक मिरगा मारकें बाकी आँखें निकार लई। उतैऊ बन में एक साधू रहत तौ। बई के सुपरस भोज खों कर दवऔ। बोले महराज जा लरका की देखरेख करत रइऔ। कछू दिनन में हम आ हैं सो लै जैं। जल्लाद मुंज नों पौचे। राम जुहारे भई मुंज बोले भोज खों मार आए। बोले हव हजूर। फिर मुंज नें पूँछो कै भोज नें मरती बेराँ कछू कही ती। सिरकार कई तौ कछू नई हती पै एक बड़े पत्ता पै अपने तन कौ रकत निकार के एक पतरी लकरिया से ऊ लोऊ में डुबो कें जा चिठिया अपुन खों लिखी ती सो पढ़ लैबी। बा में लिखीती कै बड़े भइया खों चरन छूबौ पौंचै। आज मोय ई बात कौ कूत परौ कै जो धन धाम राज गद्दी आप मरबे पै संगै लै जे हौ। इत्ती पढ़तनई मुंज की आँखन से मऊअन छाई अँसुवा टपकन लगे। अब भोज कैसौ भइआ काँ धरौ। अबई राज पाट धन धाम कौ का हुयै। जौ काऊ कै संगै नहीगऔ न जैहै। बाद में भोज खाँ जल्लादन ने मुंज से मिलवा दऔ मुंज मौत खुसी भए। भइया खों छाती सें लगालव। छमा माँगी। खूब हिलक हिलक कें रोए।

अबै का भई और अँगाई सुनौ।

यूनान के सिकन्दर ने भारत पै कई हमला करे। धन लूट-लूट के अपयँ मुलक लैग औ। मामूली नई हतौ बड़ा बीर विद्वान हतौ। ना संसारी बाकौ लोहत मानत ती। जब वाकी मरवे की घरी आई सो बौ फूट-फूट के आठ-आठ आँसुवा रोन लगौ। बैदन से गिगयानों पतयानो कन लगो। मोय बचा लो। जीवन कौ सबसें बड़ौ सच मौत है जो सबाल जम से नचकेता नें पूँछौ तौ। मरबे के पैल सिकन्दर ने अपने कर्ता काम दारन से कही के हमाये खजाने में जो जो होय रतन सोना चाँदी मोरी आँखन के ऑगू धरदो। उयै मैं जी भरकें देख लैवँ। जो धन पावे मैंने कित्ते निरदोषन कौ खून बहाब। घर मड़ैयाँ फूँकी। कित्तौ बड़ौ अपराध करौ जिये ई सुर सपनिन में छमा नहीं कर है।

एक फूटी कौड़ी तक मोरे संगै नई जानें। सिकन्दर हाथ जोर कें सबसे कहन लगौ कै मोरे मरवे के बाद जब मोय अरथी पै धरौ तो दोई हात अरथी के बाहर निकार दिऔ जीसें दुनिया देख लेबे के सिकन्दर संगै कहू नई लैगव जैसो अब तो वैसौई गव। जौ उदाहरन पिस्तुत करौ तौ सिकन्दर महान नें।

संगै को लैगऔ कोऊ नई। जा बात इतै सिद्ध हो गई।

अन्त में धन, बैर, बुराई, लराई-भिराई करवा देत। डकैती डरवा देत, मान्स मरवा देत, चोरी, अपहरन, अदालत, कचैरी तक की नौबत ल्यादेत। धन मानुष कौ सबसे बड़ो बैरी होत। धींग धीगां करवाऊत। जाकी तीन गती होती। भोग-दान-नास। ईसें भइया हरौ साजे कामन में धन लगाव, गरीबन के लरकन खों पढाव, बिटिअन को ब्याव करौ काये सें कै कवीनें सोइ कई-

''जिदना हंसा खों उड़ जानें, इतई धरौ सब रानें।
काहे मरौ जात माया खों संग छदाम न जानें।।
तोखों जोर जोर मर जानें, जानें की खों खानें।
धरम शिवाजी कर लै जीखों अन्तै कामें आनें।।

-पूर्व उप प्राचार्य, गुरसराँय, झाँसी
मोबा. 9005320134

*****

महाराज दलपतशाह का गढ़ा ताम्रपत्र

-डॉ. कन्हैयालाल अग्रवाल

महाराजा दलपतशाह का विवेच्य ताम्रपत्र गढ़ा (जबलपुर) निवासी श्री फकीरशाह के वंशजों के पास है। गढ़ा जबलपुर महानगर का एक उपनगर है, जो जबलपुर-नागपुर मार्ग पर स्थित है। प्रस्तुत ताम्रपत्र में तेरह पंक्तियां है। ताम्रपत्र लेख की लिपि सोलहवीं शती ई. की नागरी लिपि है और इसकी भाषा मध्ययुगीन हिन्दी की बुन्देली प्रकार की है। पूरा लेख गद्य में है। इस लेख को पहलीबार श्री बालचन्द्र जैन ने उत्कीर्णलेख शीर्षक ग्रंथ के पृ. 178-79 पर प्रकाशित किया था।

ताम्रपत्र लेख महाराजा दलपतशाह ने गढ़ा से संवत् 1487 के कार्त्तिक मास के शुक्ल पक्ष की पंचमी को जारी किया था। दलपतशाह गढ़ा-मण्डला के राजा संग्रामसाह के पुत्र थे। उनकी राजधानी चौरागढ़ थी। चौरागढ़ नाम के तीन स्थल हैं। पहला स्थान गाडरवारा से 22 मील आग्नेय दिशा में है। यहां महाराजा संग्रामशाह ने एक दुर्ग बनवाया था और अपनी राजधानी स्थापित की थी। दूसरा स्थान किसलपुरी से छह मील उत्तर चुरियागढ़ है। तीसरा स्थान कवर्धा से 12 मील वायव्य दिशा में है। इनमें से पहले स्थान पर दलपतशाह की राजधानी थी। किन्तु वे गढ़ा से 28 मील दूर दमोह जिला में स्थित सिंगोरगढ़ में रहते थे। संग्रामशाह का शासनकाल 1500 ई. से 1541 ई. तक माना जाता है। अतः दलपतशाह का राज्यारोहण 1541ई. में हुआ और उन्होंने सात वर्षों तक शासन किया अर्थात् उनका शासन 1548 ई. में समाप्त हुआ। वासुदेवविष्णु मिराशी[1] ने ब्रिटिश संग्रहालय में सुरक्षित संग्रामशाह के एक सिक्के के आधार पर कहा है कि संग्रामशाह का शासन कम से कम 1543-44 ई. (वि.सं. 1600) तक रहा। डॉ. सुरेश मिश्र[2] मिराशी के कथन के आधार पर दलपतशाह की शासनावधि 1550 ई. तक निर्धारित करते है। किन्तु सिक्कों पर अंकित लिपि बनावट के आधार पर किसी शासक का शासनकाल निर्धारण करना सदैव त्रुटिहीन नहीं होता। अतः मुद्रा की लिपि और बनावट के आधार पर संग्रामशाह की अन्तिम तिथि का निर्धारण करना कल्पना पर आधारित है, जिसमें घटा-बढ़ी की पूरी संभावना है। किन्तु गढ़ेशनृपवर्णनम्[3] के अनुसार उन्होंने अठारह वर्षों शासन किया। रामनगर अभिलेख [4] में कहा गया है कि ''उस क्षितिपमणि (संग्रामशाह) के पुत्र दलपति नामक पवित्र कीर्त्ति वाले राजा हुए, जिनकी कीर्त्ति का गान करने के लिए शेषनाग को इतने ही और मुखों की अभिलाषा थी। उसके चरणरज को रजोमुखी जन भी सदैव ग्रहण थे। छलरहित होकर उसने प्रजा का पालन किया। दान देने के कारण उसके हाथ सदैव गीले रहते थे। वह सदैव हरिस्मरण करता था और शरणार्थियों को शरण देता था।''

दलपतशाह द्वारा जारी इस ताम्रपत्र की तिथि सं. 1487 है। बालचन्द्र जैन इस तिथि को शक संवत में अंकित मानकर लेख की तिथि 1565 ई. निर्धारित करते हैं। किन्तु इस तिथि के पहले ही दलपतशाह की मृत्यु हो चुकी थी। अतः इस तिथि को किसी भी प्रकार मान्य नहीं किया जा सकता। अकबर के सेनापति आसफ खां ने 1564 ई. में जब गोंड राज्य पर आक्रमण किया तब दलपतशाह की विधवा रानी दुर्गावती शासिका थी। अतः लेख की तिथि शक संवत में अंकित न होकर विक्रम संवत् में लिखी गई है। भारतीय अभिलेखिकी में विक्रम संवत के लिए प्रायः संवत् अथवा सं. लिखा जाता है और शक संवत के लिए शक संवत लिखा जाता है। इसलिए अभिलेख सं. अक्षर विक्रम संवत के लिए प्रयुक्त हुआ है। ताम्रपत्र की तिथि विक्रम संवत होने से यह 1430 ई. होगी। अतः दलपतशाह 1430 ई. में शासन करता हुआ प्रमाणित होता है। यह किसी भी प्रकार मान्य नहीं किया जा सकता। तब क्या यह ताम्रपत्र जाली है ? कई राजवंशों के ताम्रपत्र जाली प्रमाणित हुए है। उदाहरण के लिए समुद्रगुप्त का संदिग्ध गया ताम्रपत्र लेख[5] और रानी दुर्गावती की तथा कथित जन्मकुण्डली[6] तथा हैहयराजा पृथिवीदेव का लाफा ताम्रपत्र जाली प्रमाणित हुए हैं। किन्तु ये राजकीय ताम्रपत्र[7] लेख हैं, जो किसी निश्चित उद्देश्य की पूर्ति के लिए जारी किये गये हैं। किन्तु हमारा विवेच्य ताम्रपत्र लेख मुस्लिम संत बाबा कपूर साहिब और उनके पुत्र-पौत्रों आदि के लिए कूड़ा और कचनारी गाँवों के प्रत्येक घर से एक अधेला वसूल करने का अधिकार प्रदान करता है। क्या यह संभव है कि कोई संत-महात्मा दो गांवों के प्रत्येक घर से एक अधेला प्राप्त करने के लिए किसी कूट ताम्रपत्र लेख की रचना कर उसे प्रसारित करेगा? हमारे विचार में ताम्रपत्र कूट नहीं है।

ऐसा प्रतीत होता है कि ताम्रपत्र के उत्कीर्णकर्त्ता ने 1587 के स्थान पर 1487 अंकित कर दिया है। इसीलिए यह गड़बड़ी हुई है। ताम्रपत्र लेख की तिथि वि. सं. 1587 मानने पर यह ईसवी सन् की 1530 तिथि निर्धारित होती है। इसी समय संग्रामशाह का शासन समाप्त हुआ। दलपतशाह का शासनकाल 18 वर्षो का बताया गया है।[8] स्लीमेन और कनिंघम भी रामपतशाह की इस शासनावधि को सही मानते है।[9] इसप्रकार दलपतशाह ने 1530 ई. से 1548 ई. तक शासन किया। अबुल फजल ने दुर्गावती का शासनकाल 16 वर्ष और मृत्यु 1564 ई. में बताई है। अतः 1548+16= 1564 का समय बिल्कुल उपयुक्त प्रमाणित होता है।

अबुल फजल ने दलपतशाह की शासनावधि सात वर्ष बताई है, जो ऐतिहासिक कालक्रम के अनुरूप नहीं है और गलत प्रमाणित होती है। अबुल फजल ने अपने ग्रन्थों के लिए समस्त सामग्री स्वयं एकत्र नहीं की। अतः अन्य शासकीय कर्मचारियों द्वारा संग्रहीत जानकारियों का दोषपूर्ण होना स्वाभाविक है। इसका सबसे अच्छा उदाहरण आदिलशाह का बुरहानपुर संस्कृत अभिलेख[10] है जिसमें फारनकियों की वंशावली का वर्णन किया गया है, इस अभिलेख से अबुल फजल की आइने अकबरी और फरिश्ता की तवारीख पर पानी पड़ जाता है। संस्कृत अभिलेख के अनुसार फारूकी वंश के संस्थापक राजा मलिक से अन्तिम शासक आदिलशाह तक सात पीढ़ियां होती हैं, किन्तु फरिश्ता छह और अबुल फजल 8 पीढ़ियों का उल्लेख करता है। अतः इन दोनों इतिहासकारों द्वारा दी गई वंशावली त्रुटिपूर्ण है। अबुल फजल इतिहासकार न था। वह अकबरी दरबार में वाक्यानवीस के पद पर नियुक्त था। रामभरोसे अग्रवाल[11] का कथन है कि उसे इतिहासकार मानना भूल है। नौकरी के कारण उसके लिए अकबर की चापलूसी करना अनिवार्य था। इसीलिए उसने दुर्गावती को घमण्डी और

चापलूसों से घिरी बताया है। अकबर का समकालीन बदायूंनी ने अपने ग्रंथ मुन्तखब-उल-तवारीख में अबुल-फजल को लफंगा और चापलूस कहा है। अत: उसकी वही जानकारी सत्य मानी जा सकती है, जो अन्य स्रोतों से प्रमाणित हो।

ताम्रपत्र लेख से ज्ञात होता है। कि बाबा कपूर साहिब को कूड़ा और कचनारी ग्रामों के प्रत्येक घर से एक अधेला लेने का अधिकार प्रदान किया गया था। दानदाता राजा ने भविष्य में शासन करने वाले राजाओं से आग्रह किया है कि वे यह दान बाधित न करें और बाबा कपूर साहिब के पुत्र-पौत्रों, चेलों को उत्तराधिकार से यह लाभ उन्हें मिलता रहे। परम्परानुसार दूसरों के उपकार के लिए अपनी वस्तु का त्याग करना दान है। वस्तुत: किसी वस्तु से अपना स्वत्व हटाकर दूसरे का स्वत्व पैदा करना ही दान है। मुसलमानों के भारत आगमन से पहले मुख्य रूप से ब्राम्हणों को ही दान देने की परम्परा थी। किन्तु मध्यकालीन भारत में मुस्लिम फकीरों और उनकी तकियों को दान देने की परम्परा प्रारम्भ हुई। इस प्रकार का दान नागौद (सतना) राज्य के महाराज भोजराज के शासनकाल में श्री शाहताज महाबली सांई बाबा के उचेहरा तकिया को मिती सावन सुदी 12, संवत 1539 (1482 ई.) को और राजा शिवराजसिंह जू देव द्वारा संवत 1862 को दिया गया था।[12] इसी परम्परा में वर्तमान दान बाबा कपूर साहिब को दिया गया था। दान देन के बाद उसकी सुरक्षा का दायित्व भी दानदाता राजा का होता था। इसलिए भविष्य में होने वाले राजाओं से यह आग्रह किया जाता था कि वे दान को बाधित न करेंगे। अत: सभी ताम्रपत्रलेखों में कुछ शापात्मक श्लोक जोड़ दिये जाते थे, जिनमें दान के महत्व और दान के पालन की आवश्यकता प्रतिपादित की जाती था। ताम्रपत्रलेखों में यह भी लिख दिया जाता था कि दान बाधित करने वाले को इहलोक और परलोक दोनों में दुख: भोगना पड़ेगा। विवेच्य ताम्रपत्र में दान को बाधित करने वाले को वर्णसंकर होने का शाप दिया गया है और गौ हत्या का पापी कहा गया है। ताम्रपत्र लेख की अंतिम पंक्ति में ताम्रशासन का लेखक अधारसींघ को बताया गया है। दुर्गावती के शासनकाल में एक अधारसींघ कायस्थ दीवान के पद पर नियुक्त था। संभवत: दोनों आधारसींग एक है। ताम्रपत्र लेख का पाठ इस प्रकार है -

मूलपाठ

1. ।।राम ।।
2. श्री बाबा कपूर सहिब
3. सही
4. सं. 1487 के वर्ष (बर्पे) नाम कातिक वदि 5 क : (?) अ
5. दाहे।। श्री महाराजाये राजा ।। श्री महारा -
6. जा श्री राजा दलपत साहेब पटो प्रदंत्त सास्य
7. अैसी जो।। ।। केनत्तर करो गढ़ा के परगनै
8. के गाऊ कूड़ा 1 कचनारी 1 जगात पै रोजा 8
9. परगनै 8 । अधेला घर पाछे सो हमेसा
10. हमेस पाऐ जा (ए) ऐमैं आन तरा नै होहे। औ गढ़ा
11. को कोउ राजा होऐ (आ) गावजा (घ) लेऐ तौ वन -
12. संकर होऐ और आगव जा कोउ पैसा कोठी
13. लेऐ तो सीवर्न माए होऐ गाउ मारे को पाप औ
14. र ऐनके बेटा चेला नाती से तक सो रषतावन
15. आवै तो सीरकार से माफ ताके विद्वान सरका -
16. र के पांच (पाट) लीषो अधारसींघ गढ़ा बैठ पटौ सही

संदर्भ सूची

1. संशोधन मुक्तावलि, खण्ड 3 पृ. 209- 12
2. रानी दुर्गावती, पृ. 11
3. श्लोक 3
4. दलपतिनृपतिर्वभूवतस्य क्षितिपगणेस्तनपय: पवित्रकीर्त्ति:। अभिलषति मुखानियस्य कीर्त्ति चिरमुपगातु गियन्ति नागनाथ : ।।61।।
   विवरणवारिभिर्नियत-मार्द्रकरस्य हरिस्मरण-परायणस्य शरणस्य वंशी भवतात्
   निरूपधि-पालित-प्रकृतिकस्य हि यस्य सदा चरणरजो रजोगुण जुषोऽ पिजानाजगृह:।।7।।
5. गुप्त अभिलेख (कार्पस, खण्ड 3) पृ. 319-29
6. रानी दुर्गावती पृ. 67-68
7. एपि. इण्डि. खण्ड, 9 पृ. 293-96
8. श्लो. 29
9. रानी दुर्गावती, पृ. 12 पर उद्धृत
10. एपि. इण्डि, खण्ड 9 पृ. 309, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, भाग 6 संख्या 1, पृ.3
11. गढ़ा मण्डला के गोंड राजा, पृ. 54
12. प्रतीहार राजपूतों का इतिहास, पृ. 112, 117

-पलटन मस्जिद के पास,
नौगाँव, छतरपुर
मो. 9424911221

*****

बड़ी कठिन पैरेदारी

-पूरन चन्द्र गुप्ता 'पूरन'

परन कुटी पै पैरौ दे रय, लक्ष्मन भइया वृतधारी।
देखत हैं सब नर नारी।।
घोर रात में हैं सब सोरय, जागत भइया बलहारी।
बड़ी कठिन पैरेदारी।।1।।
जब हीं एक ओर तें आई।
चन्द्रमुखी सी वो मुस्काई।।
बोली आकें करो सगाई।।
ज्वाला सी बन इक नारी। बड़ी कठिन पैरेदारी।।2।।
लक्ष्मन बोले अचरज करकें।
हौ को तुम आईं बन ठन कें।।
अबला अकेली रात हनकें।
तुम हौ को कैवे वारी। बड़ी कठिन पैरेदारी।।3।।
हम महलों की राजकुमारी।
देख तुम्हीं खों दिल मैं हारी।।
जइसे अब लों रही कुमारी।
मान लेव बात हमारी। बड़ी कठिन पैरेदारी।।4।।
बोले लक्ष्मन हम बनवासी।
हैं सेवक हम वे सुखरासी।।
तुम न रै सक हौ उदारी।
पड़ जै पूरन जौ भारी।। बड़ी कठिन पैरेदारी।।5।।

बौरी दरवाजा, टीकमगढ़
मोबा. 9425877410

*****

दतिया के हित परमानंद जी बने वृन्दावन वासी

-आचार्य विष्णु मोहन नागार्च

हित परमानंद नगार्च के पिता ज्योतिषराय एवं बाबा मृजाद राय दतिया नरेश इन्द्रजीत जू महाराज के समय राजकीय सम्मान के साथ कटेरा-झांसी से दतिया बुला लिये गये थे तभी से ये दतिया के हो गये। दतिया नरेश ने तिगैलिया के पास लता पताओं से आच्छादित एक विशेष स्थान इनको निवास के लिये दिया था, जिसका नाम कुंजनपुरा मोहल्ला पड़ा। मूल रूप से कुंजन शब्द वृन्दावन के कुंज निकुंज भावना से जुड़ा हुआ है। सम्पूर्ण कुंजनपुरा लता पताओं से आच्छादित था और हित परमानंद जी के सेव्य ठाकुर जी श्री रसिक शिरोमणि लाल जी एवं चतुर शिरोमणिलाल जी श्री राधा रसिक राय जी एवं राधा वल्लभीय रसोपसना की निधि श्री राधारानी की नाम सेवा जी आद्यावदी विराजमान है। चारों तरफ बसंत की, होली की, शरद की, विवाह उत्सव की कुंजें थीं। जिनमें हित परमानंद जी अपने आराध्य श्री राधावल्लभ लाल जी को लाड़ लढ़ाया करते थे। यह कुंजनपुरा कुंज शब्द से बना है, कालांतर में इसको बिना किसी प्रमाण के हरदौल की बहन कुंजावती से जोड़ दिया गया है। जिसके कोई प्रमाण प्राप्त नहीं होते हैं।[1]

हित परमानंद जी ने हित धर्म के प्रचार के उद्देश्य से दतिया एवम् दतिया के आसपास जैसे भाण्डेर, नदीगांव, वृन्दावन में हितोपसना से सम्बंधित बारह जोड़ी युगल सरकार के मंदिरों का निर्माण किया था या करवाया था।[2] हित परमानंद जी का काल विक्रम संवत 1780 से ई. सन् 1723 से विक्रम संवत 1876 ई. सन् 1819 तक माना जा सकता है। आपका बचपन से ही श्री राधा बल्लभीय सम्प्रदाय से लगाव रहा और आप वृन्दावन धाम चले गये आपने वृन्दावन धाम के राधा वल्लभीय सम्प्रदायाचार्य गोस्वामी गुलाब लाल जी महाराज से मंत्र दीक्षा प्राप्त की।

चरण कमल हरिवंश के, सेवत सुख आनंद।[3]
राधा नाम सहस्त्र कहि, नितहित परमानंद।।
हित गुलाब गुरु गुरुन गुरु, लघुमति मदन गोपाल।
करहु कृपा रसमय कहूँ राधा नाम कृपाल।।

आपने दतिया जो कि शैव और शक्ति के पूजन का प्रमुख स्थल था, दतिया को राधा वल्लभीय रसोपासना का गढ़ बना दिया और आपने ही राधावल्लभीय समाज गायन शैली की स्थापना की उस समाज गायन के स्वयं मुखिया रहे।[4]

आपके बाद गोपाल लाल नागार्च, किशोरी लाल जी नागार्च, गया प्रसाद जी, श्री राधागोविंद जी, श्री मदन मोहन जी, श्री राधामोहन जी मुखिया रहे, वर्तमान में इस परम्परा का निर्वाह श्री हरिमोहन जी मिश्र, श्री विनोद कुमार नागार्च, श्री राधावल्लभ नागार्च समाज परम्परा के मुखिया धर्म का निर्वाह कर रहे हैं।[5] झेला परम्परा में सीताराम भट्ट, विनोद मिश्र, लालजी मिश्र, श्री मोहन मिश्र समर्पित हैं।

आपने दतिया की अनेक महारानियों को एवं दतिया नरेशों को हितोपासना की साधना हेतु अनेकानेक पोथियां लिखकर प्रदान की हैं। आप एक कुशल रचनाकार एवं प्रतिलिपिकार थे, आपने महारानी सोनकुंवरि, महारानी बखंत कुवरि (प्रिया सखी), महारानी दीप कुंवरि, महारानी, रतन कुंवरि दुल्हैया, महाराजा राव राजा परीक्षित बहादुर जू देव को पाठार्थ अनेकपोथियां लिखि। लेखक की ये पोथियां क्रमशः विक्रम संवत 1829, 1833, 1834, 1855, 1860, 1872 की प्राप्त हुई। आपके द्वारा लिखी गयी पांडुलिपियां दतिया, छतरपुर, वृन्दावन, पटना, जोधपुर, हितरूप ग्रंथालय वृन्दावन, मधुकर शोध संस्थान दतिया से लेखक को देखने को मिली है।[6]

सर्वप्रथम लेखक ने नागरी प्रचारिणी सभा वाराणसी का खोज विवरण, मिश्रबंधु विनोद का खोज विवरण, किशोरी शरण अलि की साहित्य रत्नावली, दतिया से निकलने वाला समाचार पत्र दतिया प्रकाश में दतिया की सांगीतिक परम्परा महेश मिश्र सन् 1980 में हित परमानंद की संक्षिप्त रचनाओं के नाम पढ़ने को मिले, लेखक ने अपने पिता श्री राधामोहन जी नागार्च से हित परमानंद जी के विषय में जानने की इच्छा व्यक्त की पिताजी ने बताया हां वह राधा वल्लभीय सम्प्रदाय के नाद शाखा के एक स्तंभ थे एवं कुशल वाणीकार थे, उनकी छठवीं पीढ़ी मे मेरा जन्म हुआ है। तुम सातवीं पीढ़ी में आते हो, उनके हाथ के ग्रंथ तो बहुत थे लेकिन कुंजनपुरा स्थित भवन की छत गिरने से वह नष्ट हो गये। सन् 1980 से ही लेखक ने हित परमानंद जी के साहित्य की खोज करना शुरू कर दी दतिया, छतरपुर, जयपुर, जोधपुर, पटना, वृन्दावन के अनेक ग्रंथालयों की खोजबीन की यद्यापि यह कार्य श्रम साध्य अर्थसाध्य एवं चुनौतियों से परिपूर्ण है, फिर भी वस्तु के उपलब्ध होने पर आनंद दायक भी है, हित परमानंद की रचनाएं बड़ी मात्रा में उपलब्ध हुई जिन रचनाओं में हित सहस्त्रनाम, लाल जू की नामवली, श्री राधा रस सहस्त्र नाम, श्री राधा जू की ब्रज नामवली, श्रीहित रस विवाह, रस विवाह पच्चीसी, गुरु भक्ति विलास, श्रीहित जन्म कथा, श्रीहित जन्म जश अष्टक, श्रीहित हरिवंश अष्टक, राधावल्लभ अष्टक, प्रिया वल्लभ अष्टक, श्री वृन्दादेवी अष्टक, ब्रजयात्रा प्रथम, ब्रजयात्रा द्वितीय, लाड़ली जू कौ जन्म अष्टक, स्फुट पदावली आदि अनेक रचनायें प्राप्त हुई।[7]

उक्त रचनाओं में श्रीहित व्यास सुवन जू श्री सेवक जू भोरी सखी जू, गोस्वामी श्री गुरूहित गुलाब लाल जू, गोंहीरालाल जू, गों गोविंद लाल जू, गो. रूपलाल जू, गो बिहारी लाल जू, संत गोरीदास जू, संत चर्तुभुज दास हरदुआ, श्री मदनगोपाल जू, फूलसखी जू, प्रियादास जू, महारानी वखतकुंवर जू (प्रिया सखी), राधा वल्लभ मंदिर वृन्दावन के पुजारी जुगलदास जी, कृपालाल जी संत नंदलाल जू मौंठ वाले आदि महानुभावों का परिचय प्राप्त होता है, जो इससे पहले पढ़ने को नहीं मिला। हित परमानंद जी ने राधा वल्लभ लाल के बसंत खेल, होरी खेल, हिंडोल विलास, फूल रचना, चंदन श्रृंगार, पावस विहार, झूलन विहार सांझी खेल, रसदास लीला, शारदीय रास, विवाह के पद, मंगल विलास, शयन विलास, ब्रज बरसाने की गारी, ब्रज लीला, कुल प्रणाली, गुरु परनाली का अद्भुत वर्णन किया है, आप अपने गुरुजी का एवं इष्ट का परिचय देते हुए कहते हैं।

श्री राधा वल्लभ ईष्ट हैं, आचारज हरिवंश।
हित गुलाब गुरु के सरन परमानंद निज अंश।।
मंगल से सुख सेन लौं सब रसरीति सिखाई।
गुरुकर सिर धरदीन कौं ललना लाल दिखाई।[8]

हित परमानंद जी ने अपनी रचनाओं में अपने आपको प्रत्येक रचना के अंत में पुष्पिका में वृन्दावनवासी लिखा है, अत: दतिया के हित परमानंद जी बने वृन्दावनवासी। आप दतिया से किशोर अवस्था में ही वृन्दावन चले गये थे, आज दतिया को लघु वृन्दावन कहा जाता है, इसका श्रेय भी संभवत: हित परमानंद जी को जाता है। डॉ. राजेश शर्मा वृन्दावन शोध संस्थान के द्वारा एक पंडों की बही प्राप्त हुई है, जिसमें हित परमानंद जी द्वारा दतिया के जानकी प्रसाद, राम प्रसाद चौधरी वैश्य को ब्रज यात्रा कराने का उल्लेख प्राप्त होता है। यह वही विक्रम संवत 1874 की है। अत: आप ब्रज वृन्दावन की साहित्यक, सांस्कृतिक और भौगोलिक परिस्थितियों से पूर्ण परिचित थे। विनोद कुमार मिश्र सुरमणि ने तो रावराजा परिक्षित बहादुर जू के मकबरा दतिया में बने हुए भिति चित्रों मे से हित परमानंद जी का चित्र भी ढूंढ लिया है।[9]

लेखक को प्राप्त रचनाएं विक्रम संवत् 2070 में श्रीहित परमानंद दास जी की वाणी प्रकाशित भी हो चुकी हैं जो 250 पृष्ठों में है, जिसका संपादन डॉ. श्याम बिहारी लाल खंडेलवाल ने किया है और प्रकाशन श्री प्रिया वल्लभ कुंज छीपी गली वृन्दावन ने करवाया है, लेखक को हित परमानंद जी की वाणी प्रकाशन के बाद अभी-अभी जून 2016 में अपने ही परिवार के श्री जगदीश प्रसाद नागार्च धमतालपुरा दतिया के निजी संग्रह से हित परमानंद की एक पांडुलिपि और भी प्राप्त हुई है जिसमें स्फुट पद एवं हितमंडल यात्रा और सेवाकुंज परिक्रमा नामक रचनाऐं मिली हैं, जिसमें वृन्दावन के लगभग 250 वर्ष पूर्व के मंदिर, महंत, भंडारी, पुजारी, रसोईयां, भजन करने वाले संत, बाईयां, गोस्वामी, लेखक, बजाज, सर्राफ, सुनार, दर्जी, लोहार आदि तक उल्लेख मिलता है। वृन्दावन के बाजारों के नाम भी बदले हुए है जैसे बनखण्डी बाजार का नाम व्यास बाजार, पुराने शहर का नाम राधा वल्लभ रस बाजार, राधावल्लभ प्रेम बाजार, बिहारी लाल बाजार आदि उल्लेख मिलते है, अपने वृन्दावन स्थित अपने निवास के संदर्भ में भी संकेत किया है।

प्रेम कुंज डेरा दियो व्यास दास के पास

इससे प्रतीत होता है कि आपका प्रथम निवास व्यास घेरा स्थित प्रेमकुंज में रहा था। आज प्रेमकुंज की जगह समथरवाली कुंज बन गयी है, यद्यपि दतिया की वृन्दावन में दरा कुंज है, लेकिन उस समय तक किसी भी कुंज का वर्णन नहीं मिलता, अत: निर्माण ही नहीं हुआ था, हो सकता है कि दतिया की वृन्दावन स्थित इन सभी कुंजों के निर्माण में हित परमानंद जी ही प्रेरक रहे हों। बखत कुंवरि और सोन कुंवरि तो इनकी शिष्या थी ही। सोन कुंवरि पृथीसिंह (रस निधि) सेवढ़ा की द्वितीय महारानी थी। हरिसिंह परमार की बेटी थी, इनके भाई का नाम सुरजन परमार था।

प्रिया सखी सेवक भयी परमानंद की आय।[10]
राधा वल्लभ वश किये अद्‌भुत भाँति लड़ाय।।

अत: हित परमानंद जी के सम्पर्क में महारानियां थी ही, हां दतिया की एक बाई का उल्लेख अवश्य प्राप्त हो रहा है। जिनका नाम प्रगास कुंवर उल्लेखित है, इनको राजा मधुकर शाह की पंतनी बताया है, ये बड़ी प्रतापी भजनानंदो संत थी, इनके अनेक शिष्य भी थे, जिनको हित परमानंद जी ने महंत कहा है।

सवैया :- *मधुसाहि की पंतिनी बेटी प्रगास*
करौ श्री वृन्दावन वास रसीलौ
कुंज बनाई नवीन विराजे
बिहारी विजै जहां रंग रंगीलौ
साधुनि की करे सेवा समाज,
सुदेखिवे को सवै लाग रही लौ।
जाहर दतिया भई जग में,
यह भक्ति प्रताप सु दैखौ रमीलौ।।
हीरन की कुंज में जजीरा बहु भातिन के,
चौज चतुराई भली चित्रत लग निसौ।
नवल बिहारिन के नगन में चन्द्रिका
ज्यौं लौं मंजु शोभा पुंज भाव जग मुनिसे।।
दिन दूलहू विजै बिहारी लाल रिझै लयौ,
भयो मन भायौ वृन्दावन उमग निसौ।
सखि को स्वरूप धरै सेवति प्रगास वहाँ,
देखत परमानंद प्यारे प्रेम के द्रगनि सौं।।

दोहा :- *वाई के चेला सुहद भावा दास महंत*
मोहनदास भागीरथी दास बिहारी संत
मधुवन दास टहल करै तनमन सौं अति हेतु
रहयौ अग्यान में, चलै माजी के हित चेत
प्रियादास सत संग के, भगत कुंज में वास
दूल्हादास रहत तहाँ प्यारो तिन्हे सु रास
गौआनि की सेवा करे, रूपो का सीराम।
जुगलदासी भगवानदास आवै सुरसकाम।।

वैसे प्रगास कुंवरि का नाम दतिया के इतिहास में प्रकाश कुंवरि के रूप में प्राप्त होता है। जो कि दतिया नरेश महाराजा इन्द्रजीत जी जू देव की बहन का नाम था, अत: प्रकाश कुंवरि एवं प्रगास कुंवरि एक ही है, दो नहीं।

हित परमानंद जी ने वृन्दावन के व्यास घेरा में इनके द्वारा एक विशाल कुंज के निर्माण की बात कही है। उक्त मंदिर में विराजमान ठाकुर जी का नाम विजय बिहारी बताया है। विजय बिहारी को प्रकाश कुंवर दतिया लेकर आ गयी थी, उस मंदिर में संत रतनदास और गंगा दास का उल्लेख गोपाल कवि ने वृन्दावन धामानुरागावली में किया है। दोनों संत राधावल्लभीय पद्धति से सांझी, समाज, कथा, रास लीला, भंडारा करवाते थे। सन् 1947 में धार्मिक भवन की सुरक्षा की दृष्टि से म.प्र. शासन को सौंप दिया गया था, इस ऐतिहासिक एवं धार्मिक सांस्कृतिक मंदिर को शासन ने नौहरा नाम देकर भाग-1 एवं भाग-2 में विभाजित करवा दिया म.प्र. शासन संरक्षण नहीं कर सकीं और भू-माफियाओं ने मंदिर का मुख्य दरवाजा तोड़कर एक विशाल कपड़े का शोरूम बना दिया, यह दुर्भाग्य का विषय है।

हित परमानंद जी एक कुशल रचनाकार एवं प्रतिलिपिकार थे अभी बहुत बड़ी मात्रा में इनका साहित्य किसी संग्रहालय के वसनों में बंधे हुए शोधार्थियों की प्रतीक्षा कर रहे हैं। हित परमानंद जी की रचनाओं की कुछ पुष्पिकाओं को उद्‌घृत कर रहें है।

।।इति श्रीमत चतुरासी की फलस्तुति संपूर्ण।। शुभमस्तु

संवत 1826 पौषे मास शुक्ल पक्ष तिथौ चतुर्दस्यां मुकाम नित्य हित मंदिरे पोथी श्रीसखी सुबरन बेली जू की।।

।।इति श्रीरस विवाह भोजन संपूर्ण।। संवत 1826

।।इति श्री राधा वल्लभजू की व्यारी संपूर्ण।। श्री महारानी सौन कुंवरिजू कृत।। संवत 1834।। आषाढ़ सुदि सप्तम्यां शुक बासरे।।

।। इति श्री हित हरिवंश जू की जनम बधाई संपूरन।।

संवत 1833 वैशाख शुकल एकादश्यां लिखितं स्वहस्तं तत्समये प्रकाशितं मुकाम फतेपुर।।

।। इति श्रीमत चतुरासी की फलस्तुति संपूर्ण।। शुभमस्तु।।

संवत 1826 पौषे मास शुक्ल पक्षं तिथौ चतुर्दस्यां मुकाम नित्य हित मंदिरे पोथी श्रीसखी सुबरन बेली जू की।

।।इतिश्री आनंद मंगल संपूर्ण।। यह कथा श्री भागवत में दसम स्कंध की है। थोरे में बहुत कही है। साधुनि के गाइवे के हेत।। पोथी श्री महाराज कौमारि श्री महारानी बखत कुंवरि जू देव्य की।।जे बॉचै तिनिकौ जै जै श्री राधा वल्लभ।। लिखितं परमानंद वृदावन वासी।

संवत 1860 कार्तिक कृष्ण 7 पोथी श्री महाराजाधिराज श्री राजा राउ पारीछत बाहुदर जू देव की।। जै बॉचै तिनिकौं जै राधा वल्लभ।।लिखितं परमानंद वृन्दावन वासी दलीप नगरे।। श्री।।

टिप्पणी :-

क्र. 01 : हितोत्सव पत्रिका अंक 5 मई जून 2013 परमानंद रस पुंज विनोद कुमार मिश्र

क्र. 02 : दतिया प्रकाश समाचार पत्र दतिया का सांगीतिक इतिहास। सन् 1980 श्री महेश मिश्र मधुकर।

क्र. 03 : हित परमानंद दास जी की वाणी गुरु भक्ति विलास सम्पादक डॉ. श्याम बिहारी लाल खंडेलवाल।

क्र. 04 : हित परमानंद दास की वाणी भक्तमाल कौ गुरिया महारानी बख्त कुवरि को हित परमानंद जी।

क्र. 05 : दतिया प्रकाश समाचार पत्र दतिया का सांगीतिक इतिहास। महेश मिश्रा मधुकर

क्र. 06 : हित परमानंद दास की वाणी भूमिका। डॉ. श्याम बिहारी लाल खंडेलवाल एवम् रस भक्ति धारा के कवि श्रीहित परमानंद दास और उनका काव्य शोधप्रबंध। जीवाजीराव विश्वविद्यालय ग्वालियर डॉ. वसुंधरा गुप्ता। वर्ष 2016

क्र. 07 : हितोत्सव अंक 12 जनवरी मार्च 2015 हित परमानंद वाणी पर शोध समीक्षा। डॉ. राजेश शर्मा

क्र. 08 : राध रस सहस्त्र नाम कृत हित परमानंद जी।

क्र.09 : हितोत्सव अंक 5 मई जून 2013 परमानंद रसपुंज श्री विनोद मिश्र जी सुरमणि।

क्र.10 अ : दैनिक दतिया प्रकाश वर्ष 45 अंक 76 29 नवम्बर 2015 ओरछा एवं बुंदेला राजाओं की वंशावजी पृथ्वीसिंह को रनिवास (रसनिधि) 14 पृष्ठ की पांडुलिपि - हरिराम साहू दतिया।

क्र. 10 ब : सम्मेलन पत्रिका भाग 101, संख्या 2 संवत 2073 शीर्षक - रानी बखत कुंवरि प्रिया सखी रचित पॉच अर्थ हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, लेखक-उदयशंकर दुबे

क्र. 11 : हित परमानंद वाणी अप्रकाशित जगदीश प्रसाद नागार्च का निजी संग्रह (मूलप्रति) छायाप्रति हित परमानंद शोध संस्थान।

क्र. 12 : वृन्दावन धामानुरागावली अप्रकाशित गोपाल कवि मूल प्रति सूकर क्षेत्र शोध संस्थान कासगंज। संस्थापक डॉ. नरेश चंद बंसल।

-हित परमानंद शोध संस्थान

श्री प्रिया वल्लभ कुंज

छीपा गली, वृन्दावन (उ.प्र.) मथुरा

मो.नं. 9406970611

*****

बुन्देली दोहे

-रामरूप स्वर्णकार 'पंकज'

पंकज निरगुन ज्ञान को कितहुँ ओर न छोर।
बोल बोल चोखो लिखो तामें भारो निचोर।।
कबिरा के हर बोल में भरो ज्ञान भंडार।
पंकज मन खोजे जगत भ्रमना को संसार।।

पंकज पीर पराई कों जो लखकें हंस देत।
वे जीवन भू भार हैं जैसे ऊसर खेत।।
निरगुन को जाखों मिलो मन में नेकऊ ज्ञान।
पंकज बेतरनी तरो जुगन जुगन तक नाम।।

मन कारो तन ऊजरो इनको का विश्वास।
दाँव परे चूकें नहीं पंकज करो न आस।।
मन भीतर मैल घरे ऊपर सें हैं मीत।
पंकज कैसे मान ले प्रीत भरी परतीत।।

बने किरकिरी आँख की साँची के दई बात।
भाँत भाँत सें लगा रये ऊ के ऊपर घात।।
अपनों-अपनों सब कहें अपनों इते न कोय।
सपने को अपनों कहें अपनें को रये खोय।।

डूबे रत निज स्वार्थ में करे नींत की बात।
मन कारो तन ऊजरों कर दे हैं जे घात।।
प्रेम पसारें जे फिरें मन में राखें ठेस।
मछली कैसें मान ले बगुला नेह संदेश।।

स्नेही नेह बिछोय की पीर न मन से जात।
नैन-नैन से मिलत ही दोऊ हिये सिरात।।
कैसें इन सें निभ सकें आगी ईधन साथ।
तनक हवा झोंका लगें छूतन जर जै हाँथ।।

जासें जाकी प्रीत है सो दाबें का दब पात।
नैन-नैन से मिलत ही नैन ऐन कह जात।।
मन कारो तन ऊजरो मिल के कर दे घात।
पंकज तुम दूरइ रहो जिनकी दुहरी बात।।

आसा उगबे की हती इत गुलाब के फूल।
नागफनी फैली इते डगर डगर में शूल।।

-भगत सिंह नगर कोंच, जिला-जालौन (उ.प्र.)

पिन- 285205, मोबा. 09936505493

*****

बुन्देलखण्ड का सैर काव्य : कुछ प्रसंग

-के.बी.एल. पाण्डेय

बुन्देलखण्ड में परिनिष्ठित साहित्य रचना के साथ ही लोक साहित्य की भी समृद्ध परम्परा रही है। साहित्य के ये दोनों रूप यहाँ समानान्तरता की स्थिति में ही सहवर्ती नहीं रहे हैं बल्कि कथ्य और भाषा के अनेक प्रयोगों में उनमें परस्पर अन्तर्भुक्ति है। काव्य विषय की चेतना चाहे वह शास्त्रीय परंपरा से ग्रहण की गई हो अथवा समकालीन समाज से उसकी अभिव्यक्ति बुन्देलखण्ड में साहित्य के इन दोनों रूपों में हुई है। लोक रचनाकार भी उसे अपने माध्यम से व्यक्त करते रहे हैं और परिनिष्ठित रचनाकार भी। प्राय: यह मान लिया जाता है कि लोक रचनाकारों की संवेदना का परिदृश्य और उनकी अभिव्यक्ति के उपकरण सीमित होते हैं। अत: उसमें समय के संदर्भ प्राय: अनुपस्थित होते हैं। यह धारणा किस तरह गलत है इसका प्रमाण हमें व्यापक साहित्य पढ़ने से तो मिल ही जाता है, बीसवीं शताब्दी के प्रथमार्द्ध में रचे गये बुन्देलखण्ड के साहित्य से अधिक प्रत्यक्ष रूप से उपलब्ध हो जाता है। इस अवधि में ऐसे अनेक कवि हुए हैं जिन्होंने परिनिष्ठित साहित्य के साथ ही लोकरूपों में भी काव्य-रचना की है।

पर्वों, शिशु जन्म, देव-पूजन और विवाहादि उपलक्ष्यों से जुड़े पारंपरिक लोक गीतों के अतिरिक्त लोक से जुड़ा बहुत सा काव्य ऐसा है जो अपने समय के प्रख्यात कवियों द्वारा रचित है। लोकास्वादन और लोक गायन से जुड़ी इन काव्य विधाओं में ख्याल, लावनी, फाग और सैर अधिक प्रचलित रही हैं। प्रस्तुत लेख में बुन्देलखण्ड के छतरपुर, झाँसी, मऊरानीपुर, गुरसराय आदि स्थानों में सैर काव्य की प्रभूत रचना और उसकी प्रतियोगिताओं के कुछ प्रसंगों का परिचय दिया जा रहा है। सैर काव्य की रचना बुन्देलखण्ड के अन्य स्थानों पर भी होती रही है किन्तु झाँसी, मऊरानीपुर और छतरपुर इसकी प्रतियोगिताओं के प्रमुख केन्द्र रहे हैं। इन प्रतियोगिताओं को दंगल और फड़ भी कहा गया है और डॉ. गनेशीलाल बुधौलिया ने इसे फड़ साहित्य कहा भी है और फड़ साहित्य की अन्य विधाओं के साथ सैर काव्य की प्रतियोगितात्मक परम्परा का विस्तार से वर्णन भी किया है।[1]

हिन्दी कविता का प्रसार और संवर्द्धन फड़ साहित्य के रूप में भी बहुत हुआ है। फड़ साहित्य का अर्थ है विभिन्न काव्य दलों के द्वारा प्रतियोगिता के रूप में प्रस्तुत साहित्य। इन प्रतियोगिताओं में सैर, ख्याल, फाग, मंज, तड़ाका आदि लोक काव्य विधाओं के दंगल हुआ करते थे। इस क्षेत्र के झाँसी, मऊरानीपुर, छतरपुर और गुरसरायं नगरों में ख्याल और सैर सम्मेलन नियमित रूप से आयोजित होते रहे हैं। कालान्तर में प्रसिद्ध कवियों के आश्रय से यहाँ सैर-काव्य को ही प्रमुखता मिली।

प्रारंभ में छतरपुर में गंगाधर व्यास तथा परमानन्द पाण्डेय के और मऊरानीपुर में दुर्गा पुरोहित के काव्य मण्डल थे। उनकी मृत्यु के पश्चात् मऊरानीपुर के घासीराम व्यास छतरपुर के दल के लिये सैर काव्य लिखने लगे और दुर्गा पुरोहित के दल को पं. घनश्याम दास पाण्डेय का आश्रय मिला। इसी समय झांसी में श्री नाथूराम माहौर के आश्रय से माहौर मण्डल चलने लगा। पहले विभिन्न काव्य दलों में प्रतियोगिता के रूप में पद्माकर, पजनेस आदि कवियों के छन्द सुनाये जाते थे। इनमें प्रमुख्यतया नायिका वर्णन, ऋतु वर्णन और विभिन्न पर्वोत्सवों से संबंधित विषयों का समावेश होता था। जब इन काव्य दलों को गंगाधर व्यास, घनश्यामदास पाण्डेय, नाथूराम माहौर और घासीराम व्यास का संरक्षण प्राप्त हुआ तो अन्य कवियों के स्थान पर स्वयंइन्हीं कवियों के छन्द पढ़े जाने लगे। मऊरानीपुर में वर्षाकाल में पाँवस-गोष्ठियां हुआ करती थीं जिनमें विभिन्न सन्दर्भों में वर्षा, झूला और जलविहार पर काव्य पाठ होता था। इन प्रतियोगिताओं में एक दल जिस विषय का छन्द सुनाना था दूसरे दल को उसका उत्तर उसी विषय पर देना पड़ता था। छन्दों के भाव और कला-सौष्ठव के आधार पर जय-पराजय का निर्णय होता था। कवित्त-सवैया छन्दों की यह काव्य-प्रतियोगिता परम्परा बहुत समय तक चलती रही। बाद में इन प्रयोगिताओं का रूप सैर सम्मेलनों ने ले लिया।

सैर लोकनायकी का रूप है, परन्तु बुन्देलखण्ड के इन अंचल में व्याप्त राजनीतिक चेतना से और श्रेष्ठ कवियों के सम्पर्क से उसे भाव और कला दोनों स्तरों पर साहित्यिक रूप प्राप्त हुआ। सन् 1930-31 में स्वाधीनता आन्दोलन की उत्कटता के समय से सैर सम्मेलनों में राष्ट्रीय विषयों पर सैरें गायी जाने लगीं। उस समय में जलियाँवाला बाग, वारडोली सत्याग्रह, भगतसिंह, चन्द्रशेखर आजाद और सुभाषचन्द्र बोस, लाला लाजपत राय, तिलक, गांधी जी, जवाहरलाल नेहरु और सरदार पटैल तथा छत्रसाल, गुरु गोविन्दसिंह, शिवाजी और झांसी की रानी पर राष्ट्रीय सैरें लिखी जाने लगीं। वर्षा, शरद, जलविहार, विजय दशमी, रामनवमी आदि विभिन्न पर्वो का वर्णन भी राष्ट्रीय संदर्भ में किया जाने लगा। इनके अतिरिक्त पारम्परिक विषयों में नायिका-वर्णन, प्रकृति चित्रण तथा अन्य स्वतंत्र विषयों पर भी सैरें लिखी जाती रहीं।

सैर का रचना-विधान बिहारी छन्द पर आधारित है। इस मात्रिक छन्द में 21 मात्राएँ होती हैं। सैर को स्वयं ही छन्द कहा जाने लगा। मदनमोहन द्विवेदी मदनेश ने लक्ष्मीबाई रासो के छठवें भाग में इसे सैर छन्द ही कहा है – इति श्री बाई लक्ष्मी राय छै विरचित सिहर छन्दानुसारेण पत्रगमनागमन नाम षष्ठ भाग सम्पूर्ण शुभं भवतु मि.पा.कृ. 30 मृगो सं. 1961[2] उन्होंने सैर की एक इकाई में एक दोहा, बिहारी छन्द में दो चरणों की टेक और फिर उसी छन्द में आठ आठ पंक्तियों के चार सम्पद रखे हैं। आठवीं, सोलहवीं, चौबीसबी और बत्तीसवीं पंक्ति टेक की है। सैर के अनेक रूप प्रचलित रहे हैं, परन्तु बाद में प्राय: सर्वमान्य रूप में एक दोहा और सैर के सोलह चरण रखे जाने लगे। ये सोलह चरण चार इकाईयों में विभजित रहते हैं। हर इकाई का अन्तिम चरण वही रहता है जो टेक का काम देता है। कभी-कभी सैर में एक दोहा, एक सोरठा, चार चरणों का एक छन्द और फिर सोलह चरण भी रखे जाते हैं। सैर को राधिका छन्द भी कहा गया है।

पहले छतरपुर में गंगाधर व्यास और परमानन्द पाण्डेय के सैर मण्डल थे। इनमें प्राय: प्रतियोगिता होती रहती थी। कभी-कभी तो काव्य प्रतियोगिता फौजदारी का रूप ले लेती थी। इसलिये तत्कालीन छतरपुर नरेश विश्वनाथ सिंह ने लिखित आदेश दिया था कि ये दोनों दल कभी एक साथ नहीं बैठेंगे। उसी समय मऊरानीपुर में दुर्गा पुरोहित का मण्डल था। झाँसी में भग्गी दाऊजी श्याम बड़े अखाड़िया कवि थे। बाद में मऊरानीपुर में घनश्याम पाण्डेय और घासीराम व्यास तथा झाँसी में नाथूराम माहौर के अगल-अलग मण्डल हो गये। सैर सम्मेलनों का रूप बहुत रोचक होता था। प्राय: आठ नौ बजे रात से प्रारंभ होकर ये सम्मेलन दूसरे दिन नौ दस बजे तक चलते रहते थे। विभिन्न दलों में प्रतियोगिता के कारण श्रोताओं

को विशेष आनन्द मिलता था। सैर-सम्मेलनों के लिये विषय प्राय: पूर्वनिश्चत होते थे। सामान्यत: प्रचलित विषयों पर प्रत्येक मण्डल के पास पहले से ही रचनाएँ तैयार रहती थीं। कभी-कभी किसी विषय पर उत्तर देने के लिये यदि सैर तैयार नहीं होती थी तो उसी समय उसकी रचना कर ली जाती थी। एक दल एक बार में लगातार चार सैरें पढ़ता था। इस अन्तराल में अन्य पार्टी को तत्काल रचना करने का अवसर मिल जाता था।

एक अवसर पर मऊरानीपुर में गंगाधर व्यास की पार्टी की ओर से सैर में प्रश्न किया गया-अम्बा को मिली चूड़ामणि किससे बताना, इस पै ही हार जीत मीत आज मनाना मनाना।[3]

दुर्गा पुरोहित का उस समय तक स्वर्गवास हो चुका था। उनके शिष्य बोधन सुनार के पास उत्तर तैयार नहीं था। वह अविलम्ब प्रसिद्ध संस्कृतज्ञ पं. गणपति चौबे के पास गये और चूड़ामणि की उत्पत्ति पूछ आये। चौबे जी ने बताया कि उसकी उत्पत्ति क्षीरसागर से हुई है। बोधन सुनार ने लौटकर तुरन्त एक सैर लिख डाली। जब पुरोहित जी के दल की ओर से वह सैर पढ़ी गयी तो गंगाधर व्यास के दल के रामदास दर्जी खड़े होकर बोले-यदि चूड़ामणि की उत्पत्ति क्षीरसागर से हुई हो तो हम दंगल में अपनी पराजय स्वीकार कर लेगें। बोधन सुनार को चौबे जी की विद्वता का बल था। उन्होंने भी चुनौती स्वीकार करते हुए कहा कि अगर यह सत्य न हो तो हम हार मान लेगें। वास्तव में दोनों ही पक्ष अपने अपने अभिप्राय में सही थे। रामदास दर्जी का प्रश्न था कि सीता को चूड़ामणि कहां से मिली। तो वह उन्हें अनसूयासे प्राप्त हुई थी। बोधन सुनार ने हड़बड़ाहट में सीताजी का संदर्भ छोड़कर चूडामणि की मूल उत्पत्ति का स्त्रोत ढूँढ लिया था। वहाँ तक रामदास दर्जी के ज्ञान की पहुँच नहीं थी। गंगाधर व्यास दोनों का आशय समझ रहे थे। उन्होंने रामदास दर्जी को शान्त किया, परन्तु फिर उस दिन आवेश बढ़ जाने के कारण सम्मेलन आगे नहीं चला। दूसरे दिन पण्डितों ने लिखित प्रमाण दिये कि चूड़ामणि की उत्पत्ति क्षीरसागर से ही हुई है।

इन सैर सम्मेलनों में सिद्ध कवियों की प्रतिभा के द्वारा उत्कृष्ट साहित्य की रचना हुई है। कुछ स्वाभाविक रूप से भी और प्रतियोगिता की भावना के कारण सैरों में इन कवियों की कल्पनाशीलता, सूझबूझ उक्ति-चातुर्य और कलात्मकता का श्रेष्ठ रूप प्रकट हुआ है। प्रतियोगिता की भावना के कारण प्राय: ऐसी रचनाएँ की जाती थीं। जिनसे बढ़कर भाव की दृष्टि से विरोधी दल सैर न पढ़ सके। कभी कभी सैरों में प्रहेलिका का प्रयोग भी किया जाता था। अनुत्तर की स्थिति में उस दल की पराजय मान ली जाती थी।

घनश्यामदास पाण्डेय और नाथूराम माहौर के मण्डलों में सैर प्रतियोगिताएँ बहुत हुई हैं। नरोत्तमदास पाण्डेय 'मधु' भी पाण्डेय मण्डल के लिये सैरें लिखा करते थे। घासीराम व्यास का भी मऊरानीपुर में दल था, परन्तु पाण्डेय मण्डल के साथ प्रतियोगिता होने पर व्यास जी का दल और माहौर मण्डल प्राय: सम्मिलित रहते थे। सैर-सम्मेलन मऊरानीपुर में जल विहार के अवसर पर और झाँसी में तुलसी जयंती पर तो होती ही थे। वर्ष में अनेक बार अन्य उपलक्ष्यों में भी आयोजित किये जाते थे। यह साहित्यिक प्रतियोगिता कभी कभी साहित्यकला से च्युत होकर व्यक्तिगत आरोपों और प्रत्यारोपों में बदल जाती थी। तब माहौर के विष और महावर तथा घनश्याम के बादल और कृष्ण अर्थ लेकर एक दूसरे पर कटु व्यंग्य किये जाते थे। ऐसी सैरों में प्राय: अपने नाम की छाप न देकर मण्डल के अन्य लोगों का नाम दे दिया जाता था। पाण्डेय जी ने ऐसी सैरों में शत्रुधन पुजारी तथा प्रागदास के नाम दिये हैं। इस काव्य स्पर्धा से कवियों के पारस्परिक व्यवहार में कटुता नहीं आती थी। माहौर जी जब भी मऊरानीपुर आते थे घनश्यामदास पाण्डेय के घर अवश्य जाते थे तथा उनके प्रति आदर प्रकट करते थे।

इन प्रतियोगिताओं के संदर्भ में डॉ. भगवानदास माहौर ने श्री नाथूराम माहौर अभिनन्दन ग्रंथ में जो वर्णन किया है। उसका स्पष्ट आशय यह है कि कवित्त-सवैयों और सैरों की प्रतियोगिताओं में आक्रमण की पहल हमेशा पाण्डेय-मण्डल की ओर से हुआ करती थी और माहौर जी की रचनाएँ केवल उत्तर के रूप में पढ़ी जाती थीं। उन्होंने यह भी सिद्ध करने की चेष्टा की है कि माहौर जी ने सदैव सटीक उत्तर दिये। यद्यपि डा. माहौर ने बाद में यह स्वीकार किया है। कि यह कहने से पं. घनश्याम दास पाण्डेय जी पर ही पड़ता है। यहाँ डॉ. माहौर सम्बन्ध जनित पूर्वाग्रह के कारण तटस्थता से विचलित हो गये हैं। श्री नाथूराम माहौर उनके मामा थे।

उनके वर्णन से ऐसा भी प्रतीत होता है कि घासीराम व्यास और घनश्याम दास पाण्डेय के मण्डल एक साथ थे। वास्तवकिता यह है कि व्यास जी का दल और माहौर जी का दल सम्मिलित रूप से पाण्डेय मण्डल से विरुद्ध प्रतियोगिता में उतरता था। यह स्वयं स्व. नाथूराम माहौर के पत्र से स्पष्ट है। उन्होंने मऊरानीपुर के श्री हल्काई रठा को पत्र में लिखा था-आप किसी बात की चिन्ता न करना खूब अच्छी तरह से उनके साथ फड़बाजी करना है श्री व्यास जी से सैर लिखाने की कोशिश करना। मैं लश्कर से आकर सैर आपकी सेवा में जैसे आप चाहते हैं वैसे ही भेजूँगा यदि हो सका तो मैं स्वयं हाजिर होऊँगा।[5] इस पत्र में माहौर जी ने कुछ सैर भी लिखी हैं जिनें माहुर (महावर औरविष) की प्रशंसा की है। एक सैर में अन्योक्ति का व्रत लेकर घनश्याम की निन्दा की गई है -

अन्योक्ति के कहन कौ 'माहुर' ने व्रत कियो।
घनश्याम की बहिन ने घनश्याम पति कियो।।

यहाँ तथ्य की दृष्टि से कुछ स्पष्टीकरण आवश्यक है। अनेक अवसरों पर सैर सम्मेलनों का निमंत्रण लेकर झांसी से कोई व्यक्ति एक या दो दिन पहले आता था। जब पाण्डेय जी की ओर से यह कहा जाता था कि समय बहुत कम है तो तर्कपूर्ण आग्रह किया जाता था कि प्रतियोगिता की घोषणा कर दी गयी है और चन्दा भी एकत्र कर लिया गया है। इतना अल्प समय इसलिये दिया जाता था। जिससे पाण्डेय जी का दल पूरी तैयारी न कर सके। तब घनश्यामदास पाण्डेय और उनके पुत्र नरोत्तम दास पाण्डेय की रचना क्षमता निर्झरिणी की तरह प्रवाहित होने लगती थी। तब एक दिन में साठ सैरें तक लिखीं गयी।[6] चार लोग लिपिकार होते थे। जब तक वे अपनी अपनी सैरें उतारते तब तक उन्हें पिता-पुत्र दूसरी सैरें लिखकर दे देते थे।

झांसी में सैर सम्मेलन चल रहा था। 'मेंहदी' विषय पर सैरें पढ़ी जा रही थीं। इस विषय पर पाण्डेय जी की पार्टी बहुत भावपूर्ण सैरें पढ़ रही थी। माहौर जी के दल ने विषय बदला 'माहुर समक्ष मेंहदी को रंग भंग है।' यह विषय परिवर्तन भी था और पाण्डेय मण्डल पर व्यंग्य भी था। 'मधु' ने तुरन्त उत्तर लिखा-'घनश्याम भलौ माहुर को मजा बिगारो' श्रोताओं ने इस उत्तर की बहुत प्रशंसा की।

मऊरानीपुर के एक सम्मेलन में, जिसमें माहौर जी स्वयं उपस्थित थे, उनकी पार्टी ने छत्रसाल की तलवार पर एक सैर पढ़ी।

इसमें तलवार के ऊपर एक ही नायिका के लक्षणों का आरोप किया गया था। 'मधु' ने तुरन्त उत्तर तैयार किया।

मुग्धा समान बान म्यान की सुरंग में।[7]

इस सैर में छत्रसाल की तलवार पर नौ नायिकाओं के लक्षणों का भावपूर्ण आरोप किया गया है। एक अन्य सैर भी तत्काल रचित हैं –

है सैर नरोत्तम की तत्क्षण उछाल की।
कुलटा समान घूमे असि छत्रसाल की।।

इसमें 'मधु' के आशुकवित्व का परिचय मिलता है। विशेषता यह है कि उनकी सैरों में काव्य पक्ष भी बहुत समृद्ध है।

घनश्यामदास पाण्डेय की यह सैर माहौर के दल को दिया गया उत्तर है, अपनी ओर से रखा गया प्रश्न नहीं। माहौर जी की ओर से प्रश्न किया गया कि वर-पूजन (वट वृक्ष का पूजन) में नायिका संकोच क्यों कर रही है। इसका उत्तर मुग्धा नायिका के लक्षणों के आधार पर दिया गया –

मुग्धा पतिव्रता है, है वयस नदानी।

प्रतिपक्ष की ओर से समस्या प्रस्तुत की गयी कि पूर्णमासी की रात में नायक-नायिका के मुख को चन्द्र के समान कहता है तो नायिका खींझकर भीतर क्यों चली जाती है। पाण्डेय दल की ओर से उत्तर दिया गया –

हंस रही कुमोदिनि है शशि की प्रभा लखात।
चढ अटा एक दंपति छवि देखत अवदात।।
पति शशि सौ मुख तिय कौ कहै नारी रिसयात।
सुन लेहु हेतु पिय तज तिय घर में घुस जात।।[8]

उत्तर में कहा गया है कि नायिका नायक से मानपूर्वक कहती है कि मेरे मुख को चन्द्रमा के समान क्यों कहते हो। चन्द्रमा तो कलंकी है। वह घटता बढ़ता भी रहता है। इतने में ही एक सखी कहती है कि तुम्हारे निष्कलंक मुख को देखकर राहु वास्तविक चन्द्रमा को छोड़कर उसे ही ग्रस्त कर लेगा। इसलिये नायिका घर के भीतर चली जाती है।

प्रतिपक्ष की ओर से प्रश्न किया गया कि वसन्त ऋतु में गुलाब को क्यों सींचा जा रहा है। 'मधु' ने सुरत प्रिया नायिका का हेतु लेकर कवि-सिद्धि के आधार पर उत्तर दिया –

जो हो वसंत में गुलाब तरू का सिंचन।
उसमें न फूलते तो उस वर्ष पुष्प गन।।
बतलाते हैं कान लगा सुनो सभा जन।
मधुमास में गुलाब सींचने का कारन।।[9]

रतिप्रिया नायिका को आशंका है कि खिलते हुए गुलाब के फूलों की चटकन को सुनकर प्रातःकाल का आभास पाकर प्रिय जाग उठेगा और प्रिया के सदन से चला जायेगा। कवि-सिद्धि के अनुसार वसन्त ऋतु में गुलाब को सींचने पर उस वर्ष उसमें फूल नहीं लगते। जब फूल ही नहीं लगेंगे तो चटकन की ध्वनि भी नहीं होगी। प्रातहिं जगावत गुलाब चटकारी दैं में इस सूक्ष्य ध्वनि को सुना गया है। इसी प्रश्न का उत्तर मालिन के संदर्भ में भ्रम अलंकार के प्रयोग से भी दिया गया है –

भ्रम मांह भ्रमी भोरी दृग खोले मींचै।
ना छुअत तिन्हें भीति मान जिय के बीचे।।
तिनको बुझायवे फिर जलधार उलींचे।
मालिन बसंत में गुलाब या तें सींचै।।[10]

इन प्रतियोगिताओं में समस्याएँ दोनों पक्षों की ओर से प्रस्तुत की जाती थीं। इसी में सैर सम्मेलनों की रोचकता और सजीवता थी। प्रश्न उपस्थित करने और किसी प्रश्न का उत्तर देने में कवि-सिद्धियों तथा काव्यशास्त्र का ज्ञान, विविध लोकानुभव और आशुकवित्व की आवश्यकता पड़ती थी। कल्पनाशीलता और अनोखी सूझ का प्रयोग इन सैरों के प्रभाव में सहायक होता था। पाण्डेय जी के सैरकाव्य को देखने से पता चलता है कि उनकी ओर से भी प्रश्न उपस्थित किये गये हैं –

मस्तक सौ नहिं बार सिर ऋषिमुख रसना चार।
दस हजार हैं पांव सौ कहौ कौन वह नार ।।
को पानी हाथ भर कौ भेद खोलौ ज्ञानी।
है शरद पूर्णिमा में निज साज संवारा।।
यह देख दृश्य रमणी ने पति से उचारा।
तुम शशि न लखौ मैं न लखौं नभ में तारा।।
घनश्याम कहौ हेतु ज्ञान लखैं तुम्हारा।।
शारदी चन्द्र निकसो छवि छारही गगन।
तिहिं निरख रहे दंपत्ति अति प्रेम भरे मन।।
शशि में है कौन बैठो यह पति के पूतन
हातन में प्रिया ढांक लेत प्रिय को आनन।
घनश्याम कहौ कौन नायिका करौ मनन।।

आचार्य घनश्याम दास पाण्डेय हिन्दी संस्कृत के उद्भट विद्वान थे। चार पाँच भाषाओं के ज्ञान के साथ उनका काव्यशास्त्र, दर्शन ज्योतिष आदि विषयों पर असाधारण अधिकार था। उनके प्रश्नों में उनकी बहुज्ञता की झलक है। कभी कभी यह प्रतिपक्षी को निरुत्तर करने के लिये गंभीर समस्या रख देते थे –

घनश्याम भेद पूछत साहित्य प्रधानी।
ध्वनि अविवक्षित वाच्य भेद कहौ बखानी।।

अब ध्वनि का अविवक्षित वाच्य भेद तो वही बता पायेगा जिसने ध्वनि के आचार्य आनन्दवर्द्धन को पढ़ा हो। साहित्य का पाठ्यक्रमीय अध्ययन करने वाले भी वहां तक नही पहुंच पाते। यह तो इन प्रतियोगिताओं का एक रूप था। इसमें जब व्यक्तिगत आक्षेप होने लगे तो मैथिलीशरण जी गुप्त ने माहौर जी और पाण्डेय जी को अलग अलग पत्र लिखकर आग्रह किया था कि वे अपनी काव्य प्रतिभा का इस प्रकार अपव्यय न करें। गुप्त जी, पाण्डेयजी और माहौर जी समवयस्क थे। विषय की दृष्टि से सैर काव्य में पर्याप्त वैविध्य है। उसमें राष्ट्रीयतापरक सैरों की प्रधानता है। इन सम्मेलनों के उपलक्ष्य से झांसी मऊरानीपुर और छतरपुर में बहुत विशाल परिमाण में सैरें लिखी गयी हैं। अधिकांश सैर काव्य तो प्रायः अप्राप्त हो गया है। अन्य स्फुट कवियों के सैर काव्य के अलावा गंगाधार व्यास, नाथूराम माहौर, घासीराम व्यास, घनश्यामदास पाण्डेय और उनके प्रतिभाशाली पुत्र नरोत्तमदास पाण्डेय मधु ने ही हजारों सैरों की रचना की है और सैर काव्य को लोक काव्य की सीमा से निकाल कर परिनिष्ठित साहित्य का स्तर प्रदान किया है। इस काव्य का लोप हिन्दी काव्य परम्परा की अपूरणीय क्षति है। इन प्रतियोगिताओ के माध्यम से कविता के आस्वाद का रोमांच ही अद्भुत होता था।

संदर्भ :-

1. बुन्देलखण्डी फड़ साहित्य-डॉ. गनेशीलाल बुधौलिया पृ. 18-31
2. लक्ष्मीबाई रासो-सं. डॉ. भगवानदास माहौर, पृ. 86
3. बुन्देलखण्ड का फड़ साहित्य-डॉ. गनेशीलाल बुधौलिया पृ. 28
4. श्री माहौर अभिनन्दन ग्रन्थ सं. गौरीशंकर द्विवेदी शंकर आदि, लेख-माहौर जी और उनकी काव्य साधना-भगवानदास माहौर, पृ. 2,23
5. नाथूराम माहौर का स्वयं लिखित पत्र
6. पाण्डेय मंडल के प्रमुख गायक चोखेलाल ताम्रकार से संवाद
7. सैर काव्य, 45, 8.वही, 46, 9.वही, 230, 10.वही 160

-70, हाथीखाना, दतिया (म.प्र.)
मोबा. 9479570896

*****

सैयद अमीर अली 'मीर'

-डॉ. मोना जैन

नृप किरिट तरुणी कवि कहहीं।
उपजत अनत छवि लहीं।।

तुलसीदास की ये पंक्तियाँ सैयद अमीर अली 'मीर' पर एकदम सटीक बैठती हैं। मीर के पितामह जाफर अली अफगान के रहने वाले थे। दूसरे अफगानों की तरह वे भी अत्यंत साहसी और वीर थे। जीविका की तलाश में जाफर अली अफगानिस्तान से सागर आकर बस गये थे। मीर जाफर अली के पुत्र मीर रुस्तम अली पुलिस विभाग में कर्मचारी थे। सैयद अमीर अली जब दो वर्ष के हुए तो अकस्मात् उनके पिता का निधन हो गया।

सैयद अमीर अली मीर का जन्म 1873 में सागर (मध्यप्रदेश) के देवरीकलाँ ग्राम में हुआ था। देवरी एक छोटा सा ग्राम था। कलां का अर्थ बड़ा होता है। बुंदेलखंड में जब एक ही नाम के दो गाँव पास-पास हो तो अंतर प्रकट करने के लिए बड़े गांव के आगे कलाँ जोड़ दिया जाता है। और छोटे के आगे खुर्द ।

पिता की मृत्यु के पश्चात् सैयद अमीर मीर की प्रांरभिक शिक्षा अपने चाचा मीर अहमद अली के पास देवरी कलाँ में ही हुई। अमीर को बचपन से ही हिन्दी से विशेष प्रेम था। अमीर की हस्तलिपि बहुत सुंदर और कलात्मक थी। चित्रकला में उनकी प्रारंभ से ही रुचि थी। जबलपुर में अमीर एक वर्ष के लिए अंजुमन इस्लामिया हाई स्कूल में चित्रकला के अध्यापक भी रहे फिर छात्रवृत्ति मिलने पर अमीर बाम्बे स्कूल ऑफ आर्ट्स में विशेष प्रशिक्षण हेतु बम्बई चले गये। परंतु आँखें कमजोर होने के कारण अमीर वापिस देवरी लौट आये। बम्बई और जबलपुर से लौटने के बाद अमीर का अधिकांश समय देवरी में अपने चाचा की दुकान पर कविताएँ लिखते और स्वदेशी आंदोलन में भाग लेते व्यतीत हुआ। अमीर हथकरघे पर बुने कपड़े पहनते जो उनके ठिगने कद पर फबते भी खूब थे। देवरी में मीर ने काव्य चेतना संक्रमण के लिए मीर मण्डल कवि समाज की स्थापना की। उनके पास अल्प समय में ही नव विचार, नव उमंग और नव आदर्शो वाले तरुणों का एक दल तैयार हो गया और देवरी बुंदेलखण्ड के मध्यवर्ती जिलों की काव्य धानी बन गई। परंतु मीर कवि होने के बाबजूद उन कवियों में से नहीं थे जो समाज और परिवेश से कट कर कल्पना लोक में ही विचरण करते रहते हो। मीर ग्राम में रहते हुए भी अपनी दृष्टि राजनीतिक आंदोलनों पर लगाए रखते और यथाशक्ति सहयोग देने का प्रयास करते। वे अपने ग्राम देवरी में स्वदेशी वस्त्र और शक्कर का प्रचार करते। कुछ ही समय में उन्होंने कपड़ा बुनने के काम में दक्षता प्राप्त कर ली थी। वस्त्र हाथ के और शक्कर गाँव की - उस समय मीर के कर्म-जीवन के दो सिद्धांत थे। इन्हीं दोनों सिद्धातों पर अडिग रहने के कारण मीर साहिब को अपनी प्रिय देवरी छोड़नी पड़ी। इस तरह मीर का जीवन विदेशी सत्ता से असहयोग और अन्याय से संघर्ष की एक गाथा है।

जहाँ मस्तिष्क भयहीन और मस्तक ऊँचा उठा हुआ है'
जहाँ ज्ञान मुक्त है और विश्व संकुचित सीमाओं में विभाजित नहीं है।

मीर साहब स्वदेशी वस्त्र और स्वदेशी शक्कर के ही प्रेमी नहीं थे, वे स्वदेश के गौरव और समृद्धि के भी स्वप्न दृष्टा थे। मेरा स्वप्न नामक लेख में मीर ने अपनी कल्पना के स्वतंत्र भारत का खाका खींचा था। मीर का लेख स्वाधीन भारत के उन मूल्यों की कल्पना-छवियों से भरा हुआ था परंतु तत्कालीन अंग्रेज कमिश्नर ने इस लेख पर आपत्ति प्रकट की। उसे इसमें 'सेडीशन' की गंध आयी। मीर को चेतावनी दी गयी, पर मीर ने न स्वदेशी-आंदोलन से तोबा किया और न स्वदेश के सपनों से। उनसे अपने स्वदेशी और स्वदेश प्रेम की कीमत माँगी गई-मीर ने एक वीर अफगानी की तरह, एक भारतीय सैनिक की तरह, एक बुंदेलखंडी वीर की तरह हँसते हँसते वह कीमत चुका दी और स्वयं ही निर्वासित हो गये।

खंडवा पहुँचने पर मीर का परिचय माखनलाल जी से हुआ। माखनलाल जी अन्याय और असमानता से लड़ने की सहज जन्मजात प्रवृत्ति मीर के हाथों में पड़कर आकार लेने लगी। दोनों के बीच जिस आत्मीय सम्बंध की नींव खंडवा में पड़ी वह आजीवन बना रहा। सैय्यद अमीरअली मीर कहीं भी रहें, माखनलाल की गतिविधियों की पूरी सूचना रखते थे। उन्हें माखनलाल जी की अन्याय, परतन्त्रता और अत्याचारों से संघर्ष करने की शक्ति पर बड़ा नाज था। धर्मजयगढ़ पहुँचने पर मीर भले ही एक राजबाड़े में नौकर हो गये हों, परन्तु राष्ट्रीयता की आँच उनके भीतर बराबर जलती रही। राष्ट्र की स्वतंत्रता के लिए मीर कोई भी कुर्बानी करने को प्रस्तुत रहते थे। राष्ट्रीयता उनके लिए कोई आंदोलन या प्रदर्शन नहीं बल्कि उनका बाना थी।

एक बार पुनः मीर साहब खंडवा पहुँचे। खंडवा पहुँचने की खबर आग की तरह फैल गई। वहाँ उन्हें भानु जी ने नौकरी देने की बात कही। आर्थिक रूप से परेशान होने के कारण मीर ने तत्काल इसे स्वीकार कर लिया। भानुजी का मीर साहब को अपने पास रखने का एक स्वार्थ था वे अपना साहित्यिक कार्य अपने विभाग के उन व्यक्तियों से करवाते जिनकी रुचि साहित्यिक होती। मीर साहब से भी उन्होंने। काव्य प्रभाकर और छन्द प्रभाकर ग्रंथ लिखाना प्रारंभ कर दिया। पंरतु ग्रंथ पूर्ण होने पर प्रकाशित होने पर मीर का उसमें कहीं उल्लेख नहीं था। मीर को इस का दुख बराबर बना रहा।

खंडवा से दुखी मीर रियासत उदयपुर पहुँचे। वहाँ वे 15 रु. मासिक पर अध्यापक हो गये और अपनी योग्यता, कर्मठता और कुशलता से निरन्तर उन्नति करते चले गये।

जा दिन तें जिऊ जनमिया, कबहुँ न पाया सुक्ख।
डाले डाले में फिरा, पातैं पातैं दुक्ख।।

परंतु मीर दुनियादार नहीं थे, पारदर्शी थे उन्हें छल-प्रपंच, कूटनीति नहीं आती थी जिसके कारण उन्हें नौकरी से त्यागपत्र देना पड़ा। मीर को देवरी की मिट्टी फिर एक बार वापस खींच लाई मास्टरी की, एडीटरी की, पर जिसने स्वेच्छा से यायावरी का वरण किया हो, वह देवरी में टिक कर कैसे रहता?

मीर साहब को कोई संतान नहीं थी। वे अपने भतीजे मुमताज को ही पुत्रवत मानते थे। वे बड़े लाड़ प्यार से उसका पालन पोषण करते थे। उसके अस्वस्थ हो जाने पर मीर साहब बहुत चिन्तित हो जाया करते थे। गुलामी की जंजीरों में जकड़े रहने की व्यथा उन्हें

सदैव सताती रही क्योंकि पैसे का अभाव सदैव बना रहा, जीवन नय्या जैसे तैसे चलती रही।

मीर साहब साम्प्रदायिकता को विष के समान मानते थे। यह विष शासन रूपी उर्वरा भूमि पर फलता-फूलता रहा और धर्म नाम की नदियाँ सिंचाई का कार्य करती रही। मीर साहब हिन्दू मुस्लिम सौमनस्य के लिए समर्पित थे। उन्हें हिन्दू मुस्लिम वैमनस्य के सामाजिक आर्थिक कारणों के आकलन का अवसर नहीं मिला। वे राजनीतिक परतंत्रता को ही इस भेदभाव का मूल कारण मानते थे। मीर साहब धर्म को सत्य से अलग नहीं देख सकते थे। उनका मानना था कि सत्य ही ईश्वर है जो विश्व-व्यापी, सार्वभौम एवं एकदेशीय नहीं है।

हिन्दू मुसलमान हों किंवा भारत जन्मे ईसाई।
जननी जन्मभूमि के नाते हम सब हैं भाई-भाई।।

मीर साहब प्रकाशन भीरु और संकोची स्वभाव थे। सरस्वती, हिन्दुस्तानी, लीडर, विशाल भारत, कर्मवीर, रतलाम टाईम्स और हिन्दी साहित्य सम्मेलन पत्रिका जैसी विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में उनके जीवन की झांकी एवं रचनायें प्रकाशित होती रहती । उन्हें मातृभाषा के महत्व नामक लेख पर एक सौ रुपये का नकद पुरस्कार भी मिला था।

मीर साहब साम्प्रदायिकता को विष वृक्ष के समान मानते थे। वे हिन्दू-मुस्लिम सौमनस्य के प्रति समर्पित थे। वे राजनीतिक परतंत्रता को हिन्दू मुस्लिम वैमनस्य का मूल कारण मानते थे। मीर में नैसर्गिक कारणों से जातीय भावना प्रारंभ से ही नहीं थी, उनकी राष्ट्रीयता का रूप बड़ा उदार बड़ा सहज और प्रसन्न था। मीर धर्म को सत्य से अलग नहीं कर सकते थे उसका मानना था कि सत्य ही ईश्वर है। उन्होंने हिन्दू-मुस्लिम एकता पर जोर देने के लिए एक विस्तृत लेख लिखा। साहित्य के क्षेत्र में उनका प्रवेश समस्या पूर्ति के माध्यम से हुआ। मीर का मानना था कि साम्प्रदायिकता के विष-वृक्ष उस समय तक हरे भरे बने रहेंगे, जब तक उन्हें वर्तमान शासन की उर्वरा भूमि आश्रय देती रहेगी। और धर्म नाम की नदियों से पानी मिलता रहेगा।

सीताराम ब्याह को उछाह अवलोक सब
जनक समाज बलि जात सुख कन्द पै।।
वेद कुल रीति जैसी आज्ञा वशिष्ठ दीनी।
भाँवरों के सुंदर शुभ सबै निर्द्वन्द्व पै।।
ता समय दुलही माँग भरवे चलायो हाथ।
दूल्हा ने सिंदूर लै अंगूठा अमंद पै।।
उपमा तहाँ ऐसी मन आयी कवि मीर मानो।
लोभ ते अमी के अहि चढ़यौ जात चंद पे।।

मीर के इस कवि कंठ की कवि समाज में मुक्त कंठ से प्रशंसा हुई, इसके बाद मीर को काव्य का जो नशा चढ़ा वह जीवन भर नहीं उतरा। उन दिनों सरस्वती में कविता के प्रकाशन का मतलब कवि के श्रेष्ठ और स्तरीय होने का प्रमाणपत्र मिलना था। मीर की कविताओं का निरंतर प्रकाशन सरस्वती में हो रहा था। स्वदेश के प्रति अनुराग समाजसुधार की भावना, जीवन के उदात्त मूल्यों के प्रति निष्ठा, साम्प्रदायिक सौमनस्य ये सभी मीर के काव्य की विशेषतायें थीं। वे व्यंग के माध्यम से अपनी बात को प्रभावशाली बनाया करते थे। वे सच्चे पृथ्वी पुत्र थे। उनकी कविताओं में बुंदेलखंड की मिट्टी की चिकनाहट और सोधापन भरा होने के साथ-साथ बुलंदी का भाव भी था। उनकी रचनाओं में बूढ़े का ब्याह सर्वाधिक प्रसिद्ध है। मीर की खड़ी बोली साफ-सुथरी और बोलती हुई प्रतीत होती थी।

बना देखने को सब दौड़े, जहाँ मिली जब खबर जिसे।
लगे लोग आपस में कहने, बना कहें या नना इसे।
इस प्रकार जब जिसने देखा, दूलह को धिक्कार दिया।
चंपा का भवितव्य सोचकर, सबने हाहाकार किया।

मीर साहब अत्यंत उदार वृत्ति के थे। वे हिन्दू-मुसलमान दोनों का आदर करते थे। हिन्दू उन्हें व्यास गद्दी पर बिठाकर उनसे चौपाई दोहे सुना करते। उनका मानना था कि मनुष्य मन को उपकार करना चाहिये चाहे वह किसी भी जाति या समाज का हो। वे गौ-रक्षा के समर्थक थे। वे उर्दू, अरबी, फारसी के जानकार थे। वे हर तरह के शोषण के विरुद्ध थे। शोषण की पीड़ा उन्होंने पुस्तकों में पढ़ कर नहीं बल्कि भोग कर जानी थी। शोषण चाहे शारीरिक श्रम का हो, चाहे बौद्धिक क्षमता का, मीर के लिए असह्य रहा। उनके अनुसार वह साहित्यकार जिनकी रचनाओं से यश दूसरे अर्जित करते हैं वह मजदूर के समान सर्वहारा होता है। उस मजदूर के समान जो अपना पसीना बहा कर दूसरों का खेत जोतता है या दूसरों की मिल चलाता है।

सैयद अमीर अली मीर ने बहुत नहीं लिखा क्योंकि बहुत लिखने की उन्हें न तो सुविधा मिली और न हीं अवसर पर उन्होंने जो कुछ भी लिखा, जितना भी लिखा, सोद्देश्य लिखा, वे नैतिकता के, साम्प्रदायिक सद्भाव के, सामाजिक सुधार के, स्वदेश गौरव के और राष्ट्रीय अस्मिता के कवि थे। बूढ़े का ब्याह, सदाचारी बालक, उलाहना पंचक, अन्योक्ति शतक इनकी प्रमुख काव्य-कृतियाँ है। कवित्त, सवैया, दोहा मीर के प्रिय छंद रहे। भाषा सादगी से भरी हुई और साफ-सुथरी होती। काव्य के साथ साथ मीर गद्य के भी प्रभावशाली लेखक थे। उन्होंने ढाई सौ के लगभग कहानियाँ लिखी।

मीर 19 जनवरी 1937 को भाटापारा स्टेशन पर जमींदार साहब को लेने जा रहे थे, तब अचानक मालगाड़ी के नीचे आ जाने पर मीर का प्राणान्त हो गया। शाम का समय था, स्टेशन जल्दी पहुँचने के चक्कर में मीर साहब सीधे रास्ते न जाकर पटरियाँ पार करने लगे, पैसेंजर स्टेशन पर आ चुकी थी, अचानक एक मालगाड़ी कुछ पीछे सरकी और मीर साहब उसके नीचे आ गये। गंभीर चोट के कारण ज्यादा देर जीवित न रह सके।

मीर साहब को जीवन भर सुकून न मिल सका और उन्हें सुकून भरी मौत भी नसीब नहीं हुई। वे खुद जीवन भर भट्टी की तरह जलते रहे और लोगों को रोशनी दिखाते रहे। बुंदेलखंड की माटी एक ऐसे सपूत की हमेशा ऋणी रहेगी। जिसने खुद जल कर हमेशा दूसरों को रोशनी दिखाई।

-सहायक प्राध्यापक
प्रा.भा. इतिहास, सं.एवं पुरातत्व
शास. जे.योगानन्दम् छ.ग. महाविद्यालय
रायपुर, (छ.ग.) मोबा. 9826315318

*****

ओरछा के बुन्देलाकालीन स्मारक

-नरेश कुमार पाठक

ओरछा जिला मुख्यालय टीकमगढ़ से 80 कि.मी. तथा झाँसी से 16 कि.मी. की दूरी पर स्थित है। यह बेतवा नदी के किनारे स्थित है। बुन्देला शासक रुद्रप्रताप द्वारा सन् 1531 में ओरछा के प्रथम शासक के रूप में इनकों जाना जाता है। साहित्य संदर्भ में तुंग ऋषि से महाराजा रुद्रप्रताप का ओरछा में होने का उल्लेख मिलता है, जिन्होंने ओरछा का नामकरण किया। रुद्रप्रताप की मृत्यु के पश्चात् उनके ज्येष्ठ पुत्र भारतीयचन्द्र (1531-1554) ओरछा के शासक हुये। उन्होंने राजा महल के निर्माण में प्रगति एवं रानी महल का निर्माण करवाया। मधुकर शाह (1554-1592) इस वंश के सबसे प्रतापी राजा हुये जो सम्राट अकबर के समकालीन थे। मधुकर शाह कृष्ण भक्त थे तथा उनकी पत्नी गणेश कुंवरि राम की अनन्य भक्त थीं। रानी अयोध्या से भगवान राम की प्रतिमा को जब ओरछा लाई तो उस समय तक चतुर्भुज मंदिर नहीं बना था। इसलिए रानी महल में भगवान राम को स्थापित किया गया जहां आज भी रामराजा के रूप में पूजा अर्चना की जाती है। उसी समय से पूरे उत्तर भारत के श्रद्धालु दर्शनार्थ यहां आते रहते है। मधुकर शाह के द्वारा चतुर्भुज मंदिर का निमणि राजा महल का कार्यपूर्ण एवं दीवाने आम को बनवाया गया। इसके साथ ही अन्य महत्वपूर्ण भवनों का निर्माण भी करवाया गया। मधुकरशाह के पश्चात् रामशाह (1592-1605) शासक हुए परन्तु कमजोर शासक सिद्ध हुए। मधुकर शाह के तृतीय पुत्र वीरसिंह देव (1605-1627) बड़े प्रतापी एवं नीति निपुण थे। रामशाह के पश्चात वह ओरछा के शासक रहे। इनके काल में जहांगीर महल, लक्ष्मी मंदिर आदि अनेक भवनों का निर्माण हुआ, वीरसिंह देव के पश्चात् जुझार सिंह (1627-1635) शासक हुए परन्तु बुन्देलों की बढ़ती शक्ति को देखकर लोगों द्वारा उनकी पत्नी चम्पावती एवं भाई हरदौल के बीच अवैध संबंध की काल्पनिक कहानी गढ़ी एवं जुझार सिंह के शक को दूर करते हुये रानी चम्पावती द्वारा दिया गया विषयुक्त भोजन हरदौल द्वारा ग्रहण कर प्राण त्याग दिये पर अपने पवित्र रिश्ते पर आंच नहीं आने दी। बुन्देलखण्ड क्षेत्र में आज भी शादी के अवसर हरदौल की पूजा की जाती है। सन् 1635 से 1641 तक ओरछा शासक विहीन रहा, फिर जुझार सिंह के भाई पहाड़सिंह (1641-1653) को दक्षिण से बुलाकर ओरछा का शासक बनाया गया। पहाड़ सिंह के बाद सुजानसिंह (1653-1672) शासक बना परन्तु शासक सत्ता पहाड़ सिह की पत्नी हीरादेवी के हाथ में रही। सुजानसिंह के कोई संतान न होने से उनके भाई इन्द्रमणि (1672-1675) ओरछा के शासक बने उनके पश्चात् उनके पुत्र जसवन्त सिंह (1675-1684) शासक हुये परन्तु निःसंतान होने से उनके भाई भगवन्त सिंह (1684-1689) शासक बने। भगवन्त सिंह की मृत्यु के उपरान्त हरदौल के वंशज उदैत सिंह (1689-1736) ने 47 वर्ष शासन किया। इनका शासन काल ओरछा के समस्त शासकों में दीर्घतम है। उद्दैत सिंह के बाद उनके नाती पृथ्वीसिंह (1736-1752) शासक बने। पृथ्वीसिंह की मृत्यु के पश्चात् उनके पोते सामन्त सिंह (1752-65) ओरछा के शासक बने सामन्त सिंह की मृत्यु के बाद हेतुसिंह (1765-67) पजन सिंह (1767-72) मान सिंह (1772-74) भारती चन्द्र (1775-1776) तथा विक्रम सिंह ओरछा के शासक बने। विक्रमसिंह ने 1787 में ओरछा से टीकमगढ़ राजधानी स्थानान्तरित कर दी गई। इस कार्यकाल में ओरछा में महत्वपूर्ण निर्माण कार्य हुये जिनका विवरण इस प्रकार है।

पुरोहित की कोठी - यह कोठी जहाँगीर महल के दक्षिण में किला परिसर मे दाऊ जी की कोठी के दांयी ओर स्थित है, इसे पुरोहित की कोठी कहा जाता है। इस कोठी का निर्माण महाराजा वीरसिंह देव प्रथम सन् (1605-1627 ई.) द्वारा श्री मित्र मिश्र के लिये करवाया गया था। श्री मित्र मिश्र का जन्म ई. सन् 1552 में यद्यापि मिथिला में हुआ था, किन्तु वे महाकवि केशवदास के चचेरे भाई थे। महाराजा वीरसिंह के आमंत्रण पर श्री मित्र मिश्र ओरछा दरबार में आये थे और यहां उन्होंने वीर मित्रोदय नामक ग्रन्थ की रचना की थी। भवन की योजना में मुख्य प्रांगण के चारों ओर आयताकार कक्ष एवं बरामदों की संरचना थी, जो भग्न प्रायः है। आंगन के मध्य में तुलसी का विशाल गमला बना हुआ है। बाहर दांयी ओर बरामदे के बाहर वेदि बनी हुई है। बांयी ओर के बरामदे की भित्ति पर सुन्दर चित्रों का आलेखन है।

दरोगा की कोठी - यह कोठी किला परिसर में ऊंट खाना के दक्षिण में स्थित है। इस भवन में मात्र भित्तियां अवशिष्ट हैं। इनका अनुरक्षण इन्टेक के सहयोग से सम्पादित हो चुका है। यह लघु कोठी शैलीगत आधार पर 17वीं शती ई. की निर्मित प्रतीत होती है। यद्यपि इसके प्रवेश द्वार बहुकोणीय मेहरावयुक्त है, द्वार शाखा लाल बलुआ प्रस्तर की है, जिसका सिरदल अलंकृत है एवं दोनों ओर हस्ति कोष्टक बने हुए है। इसमें आंगन में तीन ओर लघुकाय बरामदे एवं कक्षों की संरचना रही है। दक्षिणी ओर के कोने में पूजाघर भी था। इसमें भग्न भित्तियाँ है। इस कोठी में ऊँट खाने का दरोगा निवास करता था। इसलिये इसे दरोगा की कोठी कहा गया है।

बकसराय प्रधान की कोठी - यह कोठी किला परिसर ओरछा दुर्ग प्राचीर के पूर्वी लघु द्वार के समीप कोठी के भग्नावशेष स्थित है, इसमें मात्र द्वितीय द्वार की भित्ति एवं उसकी पालकीनुमा छत की संरचना अवशिष्ट है। यह कोठी महाराजा वीरसिंह ई. सन् (1605-1627) के सैन्य अधिकारी बकसराय प्रधान की बतायी जाती है। बकसराय का वीरसिंह को बड़ोनी की जागीरदार के समय ही मुगलों के विरुद्ध सहयोग प्राप्त हुआ है। अपने इन्ही साथियों के सहयोग से ओरछा की गद्दी पाने के बाद वीरसिंह ने किला परिसर में अपने खास मंत्री व अधिकारियों की कोठियां बनवायी। कोठी का अवशिष्ट द्वार बहुकोणीय मेहराव युक्त है, उसके दोनों ओर विकसित पद्म की संरचना है। द्वार चौखट लाल बलुआ प्रस्तर की बनी हुई है, इसके कोष्टक अधोमुखी पद्म की संरचन है। क्षर चौखट लाल बलुआ प्रस्तर की बनी हुई है, इसके कोष्टक अधोमुखी पद्म पंखुड़ीनुमा है। पूर्वाभिमुखी कोठी के भीतर प्रांगण के चारों ओर बरामदे एवं आयताकार कक्ष थे, जो भग्न हो चुके हैं। अवशिष्ट द्वार का अलंकरण, वातायन एवं पालकीनुमा छत 17वीं शती ई. की बुन्देली शैली की महत्वपूर्ण देन है।

बारेलाल की कोठी–यह कोठी चतुर्भुज मंदिर के दक्षिण में स्थित है। बारेलाल एवं गोरेलाल नामक दो ब्राम्हण व्यासपुरा स्थित इस भवन में रहते थे। ज्येष्ठ भ्राता गोरेलाल के युद्ध में मारे जाने के कारण बारेलाल एवं उसकी भाभी की जीविका का कोई साधन न होने के कारण इसी भवन में आत्म हत्या कर ली थी। स्थानीय लोग इस भवन को देवर-भाभी की हवेली या भूतिया हवेली कहते है। उत्तराभिमुखी प्रवेश द्वार के भीतर आंगन के दोनों ओर कक्षों के भग्नावेश है, जिसमें पश्चिमी और द्विमंजिला कक्ष सुरक्षित है। प्रवेश द्वार की द्वार शाखा लाल बलुआ प्रस्तर की है। पद्म पंखुड़ीनुमा कोष्टक बने है। बाह्य ओर बहुकोणीय मेहराव है, जिसके दोनों ओर अलंकरण है। यह कोठी 17 वीं शती ई.की बुन्देली स्थापत्य की महत्वपूर्ण देन है।

रसालदार की कोठी –यह कोठी किला परिसर में श्याम दौआ की कोठी के उत्तर में स्थित है। यह कोठी रसालदार (अश्वशाला का अध्यक्ष) की कोठी कही जाती है समीप ही अश्वशाला स्थित है। शैलीगत आधार पर यह कोठी 17 वीं शती ई. की निर्मित है। इसका दक्षिणी भाग पूर्णतः भग्न है। उत्तरी भाग में बरामदा एवं आयताकार कक्ष तथा उसके नीचे तलघर है।

तामीरात की कोठी – यह कोठी किला परिसर में बारूद खाना से उत्तर पूर्व में स्थित है। यह कोठी तामीरात अर्थात राज्य की इमारतें एवं मार्गो की व्यवस्था करने वाला अधिकारी की कोठी कही जाती है। यद्यपि कोठी का पश्चिमी भाग पूर्णतः ध्वस्त हो गया है, पूर्वी भाग में मात्र प्रवेश द्वार सुरक्षित है। द्विमंजिला प्रवेश द्वार बुन्देली स्थापत्य कला में निर्मित है। बहुकोणीय मेहराव के दोनों ओर विकसित पद्म एवं आले बने हुए है। लाल बलुआ प्रस्तर की चौखट में पद्म पंखुड़ी के लटकते हुए कोष्टक बने हुए है। बाह्य प्रांगण में पूर्वी व उत्तर में दालान बने हुए थे। अंदर की बाखल भग्न प्रायः है। कोठी शैलीगत आधार पर 17 वीं शती ई. की निर्मित है।

श्याम दौआ की कोठी – यह कोठी किला परिसर में तोपखाने के उत्तर में राय प्रवीण महल के मार्ग पर स्थित है। कहा जाता है कि रायमन दाऊ के सपरिवार आत्महत्या करने पर महाराज को काफी पश्चाताप हुआ दाऊ जी की एक मात्र पुत्रवधू को ओरछा बुलवाया और उसके लिये एक नवीन कोठी का निर्माण करवाया। संभवतः यह घटना महाराजा बीरसिंह (ई. सन् 1605-1627) के समय की है। श्याम दौआ का ई. सन् 1634 में जुझारसिंह के पुत्र उद्‌यभान के साथ शाहजहां ने बध करवा दिया जो सम्भवतः दौआ के पौत्र रहे होंगे। श्याम दौआ और उदयभान ने इस्लाम धर्म स्वीकार नहीं किया था, दोनों ही मुगल सेना द्वारा युद्ध में बन्दी बनाये गये थे। कहा जाता है कि श्याम दौआ की पत्नी सती हो गयी थी। इस परिवार के सदस्य आज भी ओरछा में निवास कर रहे है। इस कोठी को श्याम दौआ की कोठी कहा जाता है। मूलतः कोठी में दो प्रांगण है। प्रवेश द्वार में पूर्वी और बहुकोणीय महराव के दोनों ओर विकसित पद्म आलेखन है। तीन मंजिला प्रवेश द्वार की छत पालकीनुमा है। ऊपर के दो तलों के वातायन महरावदार है। द्वार शाखा लाल प्रस्तर की है, जिसमें लटकती हुई पद्म पंखुड़ीनुमा कोष्टक बने हुये है। प्रवेश द्वार के दालान के भीतर आंगन के चारों ओर के कक्ष भग्न है। इसी प्रांगण से उत्तरी प्रांगण का रास्ता है, जिसमें तीन ओर के कक्ष भग्न है। इसी प्रांगण से उत्तरी प्रांगण का रास्ता है, जिसमें तीन ओर बरामदे तथा आयताकार कक्ष है। आंगन में कुआं भी बना हुआ है।

नारायण दास खरे की कोठी – यह कोठी गुदरई मार्ग पर स्थित है। नारायण दास खरे की कोठी आकार में यद्यपि छोटी है, किन्तु वर्गाकार योजना के इस भवन का प्रवेश द्वार तीन मंजिला है। अलंकृत महरावदार प्रवेश द्वार के दोनों ओर विकसित पद्म एवं आलों की ऊर्ध्व पंक्ति है। लाल बलुआ पत्थर की अलंकृत द्वार चौखट है, जिस पर हस्ति कोष्टक बने हुए है। प्रवेश द्वार के ऊपर प्रथम व द्वितीय तल पर बाह्य ओर तीन-तीन मेहरावदार वातायन है। छत पालकीनुमा है। वर्गाकार आंगन के तीन ओर आयताकार कक्ष एवं बरामदों की संरचना थीं, जो भग्न प्रायः है। शैलीगत आधार पर 17वीं शती ई. की संरचना है।

हिम्मा हमीर की कोठी – यह विशाल कोठी किला परिसर में दाऊजी की कोठी के दक्षिण में स्थित है। यह कोठी हिम्मा-हमीर अर्थात हिम्मत हमीर सिंह की कोठी कही जाती है। हिम्मतसिंह हमीरसिंह महाराज वीरसिंह (ई. सन् 1605-1627) के सामन्त चम्पतराय बड़े गूजर के पुत्र थे। महाराजा वीरसिंह ने किला परिसर में अपने प्रमुख सहयोगी सेनापति एवं मंत्री यथा बलवन्त दौआ, चम्पतराय, बकसराय प्रधान, मुकुट मणि गौड़ एवं केशवराम के लिये कोठियां बनवायी थी। यह कोठी संभवतः चम्पतराय बड़गूजर की है, जिसके पुत्र हिम्मत सिंह हमीरसिंह रहे होंगे। कोठी की योजना में एक ब्राह्य प्रांगण एवं तीन अन्तः प्रांगण है। बाह्य प्रांगण के उत्तर का अन्तः प्रांगण पूर्णतः ध्वस्त हो गया। पूर्वी ओर की बाखल में आंगन के चारों ओर आयताकार कक्षों एवं बरामदों की संरचना है। दक्षिणी ओर की बाखल में भी आंगन के चारों ओर कक्षों की संरचना है। प्रवेश बहुकोणीय महरावयुक्त एवं अलंकरण युक्त है। सम्पूर्ण कोठी 17वीं शती ई. की निर्मित बुन्देली स्थापत्य कला की देन है।

दाऊजी की कोठी – यह कोठी किला परिसर में दाऊजी की कोठी जहांगीर महल के दक्षिण में स्थित है। इसका द्विमंजिला प्रवेश द्वार कोठी के उत्तर में है भीतर दो प्रांगण है। प्रवेश द्वार का बाह्य भाग अलंकृत महराव युक्त है, इसके दोनों ओर पद्म तथा आलों की ऊर्ध्व पंक्ति बनी हुई है। प्रवेश द्वार की छत गज पृष्ठाकार है। छज्जा प्रस्तर टोड़ियों पर आधारित है एवं द्वार शाखाऐं लाल बलुआ प्रस्तर से बनी हुई है। सिरदल अलंकृत है एवं पद्म तथा हस्ति कोष्टकों से युक्त है। रायमन दाऊ बुन्देला राज्य के सैन्य अधिकारी एवं मंत्री थे। संभवतः वे बलवन्त यादव के पुत्र थे जिनके सहयोग से वीरसिंह ने अबुल फजल का बध किया था। रायमन दाऊ के उत्तराधिकारियों में श्याम दाऊ एवं दलाल दाऊ भी बुन्देला सेना के सेनापति रहे।

पं. हरीराम व्यास की हवेली – यह हवेली व्यासपुरा ओरछा में स्थित है। पण्डित हरीराम व्यास की हवेली यद्यपि पुरातत्वीय दृष्टि से इतनी महत्वपूर्ण नहीं है, किन्तु ऐतिहासिक दृष्टि से अवश्य ही महत्वपूर्ण है। पं. हरिराम व्यास का ई. सन् 1510 में इसी भवन में जन्म हुआ था, जिससे यह स्पष्ट होता है कि ई. सन् 1531 में रुद्रप्रताप द्वारा किले के निर्माण का निश्चय किये जाने के समय

व्यासपुरा बस्ती अस्तित्व में थी। इस हवेली में मात्र एक प्रवेश द्वार एवं पीछे का बरामदा व आयताकार कक्ष है। हवेली की विशाल प्राकार भित्ति थी, जिसकी नीव देखी जा सकती है। प्रवेश द्वार प्राकार भित्ति में ही था जिसकी वास्तुगत विशेषतायें यथा मेहराव आले आदि 15वीं शती ई. की प्रतीत होती है। पार्श्व में तीन नुकीली मेहराव युक्त बरामदा एवं कक्ष है। शेष भाग ध्वस्त अवस्था में है। इसी भवन में ई. सन् 1585 में पं. हरिराम व्यास कृष्ण भक्त राधा बल्लभ सम्प्रदाय के थे, वे महाराजा मधुकर शाह के राजगुरु भी थे।

फसियाने की हवेली - यह हवेली बायपास रोड फसियाना मोहल्ला ओरछा में स्थित है। इस कोठी का मात्र तीन मंजिला प्रवेश द्वार सुरक्षित है। हवेली मूलतः 17वीं शती ई. की निर्मित प्रतीत होती है। नीचे प्रवेश द्वार की आयताकार दालान है, उसके ऊपर के दोनों तलों में तीन-तीन वातायन मेहरावद्वार युक्त है। इसके छज्जे पद्म पंखुड़ी की टोड़ी पर आधारित है जिसकी प्रस्तर फर्शी टूट गई है। प्रवेश द्वार की छत गजपृष्ठाकार है दायीं ओर मेहराव युक्त द्वारों की दालान है, जो लगभग सभी हवेलियों में बनायी जाती थी। अंदर प्रांगण के चारों ओर आयताकार लम्बे बरामदे व कक्षों की संरचना थी जिसमें भित्तियाँ पूर्वी व दक्षिणी और अवशिष्ट है।

कृपाराम गौर की हवेली - यह हवेली छत्री समूह के समीप स्थित है। महाराजा वीरसिंह बुन्देला के प्रमुख सामन्त कृपाराम गौर की हवेली व्यासपुरा में मधुकर शाह की छत्री के उत्तर में स्थित है। कृपाराम गौर के सहयोग से ही वीरसिंह ने मुगलों के विरुद्ध बड़ौनी से सफल अभियान किये थे। हवेली में मात्र प्रवेश द्वार तथा अन्दर की बाखल के भग्नावशेष विद्यमान है। द्विमंजिला द्वार का बाहय भाग मेहरावदार एवं अंदर की चौखट राजपूत शैली की कोष्टक युक्त है। प्रवेश द्वार के प्रथम तल पर तीन मेहरावदार वातायन है। छत गजपृष्ठाकार है छत का वितान चैत्याकार है। प्रवेश द्वार ईट व चूने से निर्मित है। प्रवेश द्वार के भीतर लगभग 120 फीट की दूरी पर हवेली का मुख्य प्रांगण है। वर्गाकार आंगन के चारों ओर आयताकार कक्षों एवं बरामदों की संरचना रही है, जो भग्न प्राय है।

नौनेजू की हवेली - यह हवेली ओरछा बायपास रोड पर सिंचाई विभाग के विश्रामगृह के पीछे स्थित है। महाराजा वीरसिह देव बुन्देला के सामन्त नोनेशाह बड़गूजर ने इस हवेली का निर्माण स्वयं के निवास हेतु करवाया था। वर्गाकार भवन का प्रवेश द्वार उत्तरी ओर है, जो तीन मंजिला एवं पालकीनुमा छत युक्त है। प्रवेश द्वार की बहुकोणीय मेहरावे एवं ऊपर की बतायने विशुद्ध बुन्देला स्थापत्य कला में निर्मित है, ऊपर की पालकीनुमा छत अलंकृत है। प्रवेश द्वार के दायीं ओर दालान (बैठक) है। हवेली के भीतर प्रांगण के चारों ओर आयताकार कक्षों एवं बरामदों की संरचना थी, जो मात्र पश्चिमोत्तर कोने पर शेष है। कोठी का पूर्वी व दक्षिणी भाग भग्न है। केवल उत्तरी भाग अवशिष्ट है। कोठी 17 वीं शती ई. की बुन्देला स्थापत्य कला की उत्कृष्ट देन है।

महाकवि केशवदास का मकान - महाकवि केशव दास मिश्र का यह भवन व्यासपुरा बस्ती के मध्य में है, उनकी रचनाओं के विवरण में उनके मित्रों के मकानों एवं स्वयं के भवन की स्थिति का उल्लेख मिलता है, जिससे बस्ती के मध्य में रहे होने का संकेत है। यह वह भवन है, जिसने देश को प्रसिद्ध कवि दिये। स्वयं महाकवि एवं उनके पुत्र बिहारी की रचनायें रीतिकाल की प्रसिद्ध रचनायें है। यह भवन आकार में आयताकार है। जिसमें मध्य में तीन मेहराब युक्त बरामदा है दोनों ओर कक्ष है। दोनों ओर लम्बे दालान है। आगे की संरचना एवं पीछे की भाग भी भग्न हो चुका है। इसी भवन को महाकवि केशवदास का भवन कहा जाता है।

प्रवीण राय की माँ का मकान - यह मकान व्यासपुरा में स्थित है। ओरछा में व्यासपुरा बस्ती काफी प्राचीन रही है। 16-17 वीं शती में ओरछा के धनाढ्यों एवं ब्राम्हणों की बस्ती कही जाती थी। व्यासपुरा के भग्नावशेषों में यह कंचन के मकान की भित्ति मात्र अवशिष्ट है। यह वही मकान है, जहाँ कवि केशवदास को पुतरी (प्रवीण राय) से परिचय हुआ था और उसे अपनी शिष्या बनाया था प्रवीण राय की माँ कंचन इसी मकान में रहती थी। यही से केशवदास ने पुतरी को राय प्रवीण बनाकर इन्द्रजीत सिंह के दरबार में प्रस्तुत किया था। यद्यपि इस भवन में मात्र एक भित्ति है, जिससे भवन के छोटे होने का स्पष्ट प्रमाण है, किन्तु स्थापत्य शैली में द्वारों के मेहराबों की संरचना, ऊपर के वातायन की मेहराबें विशुद्ध रूप से राजपूत शैली की 16वीं शती ई. की स्पष्ट झलक प्रस्तुत करती है।

तोपची का मकान - यह मकान ओरछा थाने के पीछे स्थित है। तोपची की हवेली के नाम से जाना जाने वाली यह कोठी योजना में वर्गाकार थी, जिसमें चारों कोनों पर अष्टकोणीय कक्ष के ऊपर गुम्बदों की संरचना थी। इसमें से तीन भग्न प्राय है। केवल एक ही सुरक्षित है। कहा जाता है कि महाराजा पहाड़सिंह से यह तोपची नाराज हो गया और उसने राजा का उल्लंघन करते हुए राजमहल पर गोला दागने का दुस्साहस किया। पहाड़सिंह के आदेश से किले में लगी हुई तोप से इस महान को ध्वस्त करवाकर तोपची को मरवा दिया। यह मकान की भित्तियां भी सुरक्षित नहीं है। मात्र एक टावल ही अवशिष्ट है।

बंका उम्मेद सिंह की छत्री - यह छत्री बंका पहाड़ीके जागीरदार उमेदसिंह महाराजा उदोतसिंह (ई.सन् 1669-1736) एवं पृथ्वी सिंह के (1736-52ई.) समय ओरछा के किलेदार थे। वे हरदौल के वंशज एवं महाराजा उदोतसिंह के भाई रायसिंह के पुत्र थे। ई. सन् 1742 में निधन के पश्चात इस छत्री का निर्माण करवाया। छत्री तल योजना में वर्गाकार गर्भगृह एवं आयताकार मण्डपयुक्त है। मण्डप के तीन मेहरावदार द्वार है। गर्भगृह की पार्श्व भित्ति में बंका उमेदसिंह एवं उनकी पत्नी की प्रतिमा संलग्न है, जिसमें वि.सं. 1801 (ई.सन् 1742) का तीन पंक्ति के अभिलेख है। गर्भगृह का वितान गुम्बदनुमा है। भित्तियों में वातायन बनी हुई है। गर्भगृह के ऊपर गुम्बद बना हुआ है।

राजा भारतीचन्द्र की छत्री - यह छत्री ओरछा के प्रथम शासक राजा भारतीचन्द्र (ई.सन् 1531-1554) की मृत्यु ई. सन् 1554 में हुई। उनके छोटे भाई एवं उत्तराधिकारी राजा मधुकर शाह (ई.सन् 1554-1592) के समय इस छत्री का निर्माण हुआ। स्थापत्य कला की दृष्टि से छत्री का निर्माण दो चरणों में हुआ प्रतीत होता है। प्रथम चरण का निर्माण 16 वीं शती ई. में वर्गाकार चबूतरे पर वर्गाकार गर्भगृह एवं चारों ओर आयताकार गलियारा है, कोनों पर वर्गाकार कक्ष के रूप में विभक्त है। गर्भगृह की छत समतल है, किन्तु 17वीं

शती ई. में गुम्बदाकार शिखर जोड़े गये तथा छज्जों के नीचे दक्षिणी एवं पूर्वी भित्ति पर वि. सं. 1735, 1732, 1740 के लेख है। यह छत्री ओरछा की छत्री स्थापत्य विधा का प्राथमिक नमूना है।

पहाड़ सिंह की छत्री - यह छत्री बेतवा नदी के किनारे छत्री समूह के उत्तरी भाग के दक्षिणी पूर्वी कोने पर स्थित पहाड़सिंह की छत्री बुन्देला छत्री स्थापत्य का एक विकसित स्वरूप है। ओरछा के राज पहाड़सिंह (ई.सन् 1641-1663) महाराजा वीरसिंह के पुत्र एवं महाराजा जुझारसिंह के छोटे भाई थे। उनके निधन के पश्चात उनके पुत्र एवं उत्तराधिकारी राजा सुजानसिंह ने (ई. सन् 1663-1672) ने इस छत्री का निर्माण करवाया। छत्री तल योजना में वर्गाकार चबूतरे पर वर्गाकार गर्भगृह एवं उसके चारों ओर मेहरावदार द्वारों युक्त बरामदे हैं। गर्भगृह सर्वतोभद्र शैली का है। इसका बाह्य भाग तृतीय तल पर जंघा एवं छज्जी को प्रदर्शित करता है। इसकी त्रितलीय संरचना के ऊपर गुम्बदों की संरचना है। गुम्बद एवं नागर शिखर विविध अलंकरण युक्त है। जो समन्वित बुन्देला शैली के नमूने है।

महाराजा मधुकर शाह की छत्री - यह छत्री महाराजा मधुकर शाह (ई. सन् 1554-1592) ओरछा के द्वितीय शासक थे। वे केवल धर्मप्रेमी ही नहीं अपितु परमवीर एवं साहसी शासक थे। चतुर्भुज मंदिर, राजमहल का दीवाने आम मधुकर शाह ने ही बनवाये थे। मधुकर शाह की मृत्यु के पश्चात् इस छत्री का निर्माण राजा रामशाह (ई. सन् 1552-1605) के समय प्रारंभ हुआ, किन्तु ऊपर का भाग वीरसिंह के द्वारा पूर्ण कराया गया। छत्री का निर्माण मंदिर स्थापत्य कला में किया गया, जिसमें तल विन्यास में गर्भगृह अंतराल एवं मण्डप है, किन्तु ऊर्ध्व विन्यास में वेदिबन्ध, जंघा एवं नागर शैली का शिखर है। शिखर के चारों कोनों पर लघु शिखरनुकृतियाँ बनी हुई है। छत्री के गर्भगृह में महाराजा मधुकर शाह एवं उनकी पत्नी गणेश कुंवरि की संगमरमर की प्रतिमाएं पार्श्व भित्ति के गवाक्ष में संलग्न है।

राजा सुजानसिंह की छत्री - यह वेतवा तट कंचन घाट पर स्थित है। महाराजा सुजानसिंह (ई. सन् 1663-1672) का निधन ई. सन् 1672 में हुआ। उनके छोटे भाई एवं उत्तराधिकारी राजा इन्द्रमणि (ई. सन् 1672-1675) द्वारा इस छत्री का निर्माण प्रारम्भ कराया गया, जिसे उनके पुत्र राजा जसवंतसिंह (ई. सन् 1675-1684) द्वारा पूर्ण कराया। यह छत्री एक प्रकार से आवृत प्रांगण में उत्तर-पश्चिम के कोने में स्थित है। इस छत्री में बुन्देला स्थापत्य का विकसित स्वरूप स्पष्ट हो रहा है। छत्री तल योजना में वर्गाकार चबूतरे पर निर्मित है। इसमें मध्य में वर्गाकार गर्भगृह एवं उसके चारों ओर मेहरावदार द्वारों युक्त बरामदे है, इनके कोने पर वर्गाकार कक्षों की संरचना है। मध्य का गर्भगृह सर्वतोभद्र शैली का है, जिसमें चारों ओर प्रवेश द्वार है। इसका वितान ऊँचा है, इसकी त्रितलीय संरचना के ऊपर नागर शैली के मंदिर स्थापत्य विधा का शिखर है। कोनों पर वर्गाकार कक्षों के ऊपर गुम्बदों की संरचना है। छत्री बुन्देला स्थापत्य की महत्वपूर्ण देन है।

ऊपर अधोमुखी पद्म का आलेखन है। बाहर मेहरावद्वार के दोनों ओर विकसित पद्म एवं आलों की ऊध्व पंक्ति की संरचना है।

महाराजा इन्दमणि की छत्री - यह छत्री बेतवा नदी के तट पर कंचनघाट पर स्थित है। महाराजा सुजानसिंह के निःसंतान निधन के पश्चात् उनके छोटे भाई इन्द्रमणि ओरछा की गद्दी पर आसीन हुए। महाराजा इन्द्रमणि (ई. सन् 1672-1675) के अल्पकालिन शासन के पश्चात् उनके पुत्र जसवन्त सिंह उत्तराधिकारी हुए। महाराजा जसवंतसिंह (ई सन् 1675-84) ने इस छत्री का निर्माण करवाया प्राकार से आवृत परिसर से दक्षिण-पश्चिम कोने में स्थित यह छत्री वर्गाकार गर्भगृह एवं चारों ओर बरामदा है, इसमें तीन-तीन मेहरावदार द्वार बाह्य ओर है। गर्भगृह सर्वतोभद्र अर्थात चारों आरे प्रवेश द्वार युक्त है। इसी प्रकार की संरचना प्रथम व द्वितीय तल पर है। ऊपर गुम्बद एवं मध्य में गागर शैली का विशाल शिखर है। मध्य का विशाल शिखर एवं चारों ओर गुम्बद की संरचना पंचायत शैली की है। छत्री की संरचना में प्रयुक्त बाह्य आले, मेहरावदार द्वार, पदम कलश एवं अन्य अलंकरण बुन्देली स्थापत्य विधा के 17 वीं शताब्दी में हुए विकास का द्योतक है।

महाराजा जसवंतसिंह की छत्री - यह बेतवा नदी के तट पर कंचन घाट पर स्थित है। महाराजा जसवंतसिंह ने ई. सन् 1675 से 1684 तक ओरछा में शासन किया। मुगल बादशाह औरंगजेब से वि. सं. 1740 ई. सन् 1683 में खिल्लत प्राप्त हुई और वि. सं. 1741 ई. (सन् 1684) में उनका निधन हुआ। इस छत्री का निर्माण कराया गया। प्राकार से आवृत परिसर में उत्तर-पूर्व के कोने में स्थित यह छत्री तल योजना में वर्गाकार है। मध्य में सर्वतोभद्र गर्भगृह एवं उसके चारों ओर आयताकार बरामदें हैं, इनमें तीन तीन मेहरावदार द्वार है। ऊर्ध्व संरचना में छत्री त्रितलीय है। तृतीय तल के बाह्य विन्यास नागर शैली के शिखर का जंघा भाग है एवं चारों कोनों पर वर्गाकार कक्षों के ऊपर गुम्बद की संरचना है। नागर शिखर एवं गुम्बदों का अलंकरण पद्म कलश, आले, मेहरावदार द्वारों का अलंकरण बुन्देला शैली का है। मध्य का नागर शिखर एवं चारों कोनों के गुम्बदों की संरचना पंचायतन शैली की है।

महाराजा भगवंतसिंह की छत्री - यह छत्री बेतवा नदी तट पर कंचन घाट पर स्थित है। महाराजा जसवंत सिंह के ई. सन् 1684 से 1689 तक अपनी दादी रानी अमर कुंवरि के संरक्षण में शासन किया। भगवंत सिंह के असामयिक निधन के पश्चात् रानी अमर कुंवरि (महाराजा इंद्रमणि की पत्नि) ने उदोतसिंह को गोद लिया, जो हरदौल की चौथी पीढ़ी के बनगांव के जागीरदार थे। उदोतसिंह ने ई. सन् 1689 में इस छत्री का निर्माण करवाया। प्राकार से आवृत परिसर में पूर्वी ओर मध्य में स्थित यह छत्री तल योजना में वर्गाकार है। मध्य का सर्वतोभद्र वर्गाकार गर्भगृह एवं चारों ओर तीन-तीन मेहरावदार द्वार युक्त बरामदों की संरचना है। प्रत्येक कोने पर वर्गाकार कक्ष है, जिनके द्वार दोनों ओर के बरामदों में खुलते है त्रितलीय छत्री के ऊपरी भाग पर मध्य में नागर शैली का विशाल शिखर एवं कोनों पर वर्गाकार कक्षों के ऊपर गुम्बद पंचायतन शैली के है। मध्य के नागर शिखर के नीचे छज्जा एवं जंघा का भी भाग है। गुम्बद, शिखर, गवाक्ष, आले एवं द्वारों का अलंकरण बुन्देली शैली का है।

महाराजा सावंतसिंह की छत्री - यह छत्री बेतवा नदी के तट पर कंचनघाट पर स्थित है। महाराजा पृथ्वीसिंह (ई.सन् 1736-1752) के पुत्र पूरनसिंह के शेर के शिकार के समय मृत्यु को प्राप्त होने के कारण, उनके पुत्र सावंत सिंह अपने पितामह (महाराजा

पृथ्वीसिंह) के ई. सन् 1752 में उत्तराधिकारी हुए। सामन्तसिंह ने ई सन् 1765 तक शासन किया। मुगल बादशाह आलम ने अपने ओरछा प्रयास के समय महाराजा सावंतसिंह को महेन्द्र की उपाधि प्रदान की थी। ई. सन् 1765 में सावंतसिंह के निधन के पश्चात् उनके पुत्र हेतसिंह (ई. सन् 1765-1768) ने इस छत्री का निर्माण कराया। प्राकार से आवृत परिसर के दक्षिण-पूर्व कोने में स्थित यह छत्री आकार एवं प्रकार में अन्य छत्रियों से भिन्न है। तल योजना में छत्री वर्गाकार है मध्य का वर्गाकार गर्भगृह एवं चारों ओर का गलियारा अलंकृत है। शिखर की संरचना, गुम्बद, लघुकाय-छत्रियों एवं चित्रकारी बुन्देली कला एवं स्थापत्य का उत्कृष्ट नमूना है। यह छत्री परिसर की अन्य छत्रियों से आकार प्रकार से भिन्न है।

महाराजा पृथ्वीसिंह की छत्री - यह छत्री कंचनघाट मार्ग पर (रिसोर्ट की बाउण्ड्री के समीप) स्थित है। महाराजा पृथ्वीसिंह के ई. सन् 1752 में निधन के पश्चात् ओरछा के सिंहासन पर सामन्तसिंह आसीन हुये। महाराजा पृथ्वीसिंह ने अपने नाम से पृथ्वीपुर नामक नगर बसाया और लक्ष्मी मंदिर का परिवर्द्धन एवं चित्रण करवाया। ई. सन् 1752 में निधन के पश्चात् उनके पौत्र महाराजा सावंतसिंह ने इस छत्री का निर्माण करवाया। छत्री के भूविन्यास में वर्गाकार गर्भगृह एवं आयताकार मण्डप है। गर्भगृह में मेहरावदार गवाक्ष बने हुये है। मेहराव बहुकोणीय है, इसके ऊपर ढलवां वातायन है। मण्डप में तीन मेहरावदार द्वार है। वितान चैत्यनुमा है। पूर्वाभिमुखी छत्री के ऊर्ध्व विन्यास में द्वितलीय संरचना है। प्रथम तल के ऊपर विशाल गुम्बद है। जिसमें कोनों पर चारों ओर लघुकाय नागर शिखर युक्त छत्रियॉं बनी हुई है। गवाक्षों के ऊपर गज पृष्ठाकार छते है। परिक्रमा पथ में भित्ति के गवाक्षों की छत पालकीनुमा है। छत्री बुन्देली स्थापत्य कल में निर्मित है।

महाराजा वीरसिंह की छत्री - यह छत्री बेतवा नदी के तट पर कंचन घाट पर स्थित है। महाराजा वीरसिंह बुन्देला (ई. सन् 1605 - 1627) ओरछा के सर्वाधिक प्रतापी शासक थे, उनका कार्यकाल बुन्देला राजवंश का स्वर्ण युग कहा गया है। बड़े पैमाने पर भवनों का निर्माण हुआ और बुन्देला स्थापत्य कला विकसित हुई। इस छत्री का निर्माण महाराजा वीरसिंह के ज्येष्ठ पुत्र महाराजा जुझार सिंह (ई. सन् 1627-1634) द्वारा करवाया गया, किन्तु राजनैतिक अस्थिरता के कारण योजना में निर्मित नहीं हो पाया। इस त्रितलीय भव्य छत्री को वर्गाकार जगती पर वर्गाकार योजना में निर्मित किया गया। मध्य के वर्गाकार गर्भगृह के चारों ओर गलियारे एवं मेहरावदार द्वार है। बाह्य विन्यास में आलों की पंक्तियॉं व टोड़ियों पर आधिरित छज्जे है। यद्यपि शिखर निर्मित नहीं हुआ, किन्तु उसकी पंचायतन योजना स्पष्ट है।

राजपरिवार की छत्री - यह छत्री होटल बुन्देलखण्ड परिक्षेत्र में महाराजा मधुकर शाह की निजी भूमि में स्थित है। शैलीगत आधार पर छत्री 16वीं शती ई.की प्रतीत होती है। वर्गाकार योजना की इस छत्री में मुख्य गर्भगृह के चारों ओर पंचायतन शैली के चार वर्गाकार कक्षों के ऊपर गुम्बदों की संरचना है। मध्य का गुम्बद विशाल है। सभी गुम्बदों का आधार अष्टकोणीय है, छत्री की टोड़ी राजपूत शैली की है। संभवत: यह राज परिवार के सदस्य की छत्री है।

भाभी जी मढ़िया (रानी चम्पावती की छत्री)- कंचनघाट के पश्चिम में छत्री समूह में पश्चिम में बेतवा नदी के तट पर स्थित है। ओरछा के शासक जुझार सिंह एवं उनके पुत्र विक्रम जीत सिंह को शाहजहां ने चौरागढ़ के जंगल में मरवाकर दोनों के शीश ओरछा में टंगवाये। मुगलों के आतंक को समाप्त करने एवं बुन्देलों के आत्म सम्मान की रक्षा हेतु बुन्देला वीर चम्पतराय ने ओरछा में मुगल सेना को पराजित कर स्व. महाराजा जुझारसिंह का सिर प्राप्त किया। रानी चम्पावती उसको लेकर सती हो गयी। ओरछा में चम्पतराय के अधिपत्य में इस छत्री का निर्माण हुआ। चम्पतराय जुझारसिंह को बड़ा भाई मानते थे इसी कारण भाभी की मढ़िया (चम्पवती की छत्री)- बनवायी है। यह छत्री वर्गाकार योजना की द्विमंजिला छत्री है, जिसके ऊपर अष्टकोणीय आधार के ऊपर गुम्बद बना हुआ है। नुकीली मेहरावदार द्वार है। इसमें कोई भी अलंकरण नहीं है। इस छत्री के समीप परिवार के अन्य वीरों की लघु छत्रियाँ बनी हुई है।

बल्लभ मंदिर- यह मंदिर किला परिसर ओरछा दुर्ग प्राकार के दक्षिणी द्वार के समीप स्थित है। इसके समीप ही पुजारी पुरुषोत्तमदास का मकान था, जिसकी भित्तियाँ मात्र अविष्ठ है। मंदिर शैलीगत आधार पर 17वीं शती ई. का प्रतीत होता है। इसकी योजना में लघु वर्गाकार गर्भगृह है, जो द्वितलीय है। गर्भगृह में तीन ओर द्वार है। उत्तरी ओर के द्वार के दोनों ओर से ऊपर जाने के लिये सोपान है। ऊपर जाने के लिये सोपान है। ऊपर गुम्बदाकार वितान में चारों वातायन है, कोनों पर लघुकाय छत्रियाँ है। मध्य के गुम्बद के ऊपर अधोमुखी पद्म का आलेखन है। बाहर मेहरावद्वार के दोनों ओर विकसित पद्म एवं आलों की ऊध्व पंक्ति की संरचना है।

शिव मंदिर - यह मंदिर किला परिसर में प्रवीण राय महल के उत्तर में स्थित यह मंदिर शैलीगत आधार पर 17वीं शती ई. का निर्मित है इसके तल विन्यास में गर्भगृह एवं मण्डप की संरचना है। ऊर्ध्व विन्यास में पंचरथी, अष्टभद्र शाखाओं सहित वेदिबंध, जंघा एवं नागर शैली का शिखर है। चूने एवं ईंट से निर्मित देवायल की बाह्य भित्तियों पर चूने के प्लास्टर से घटपल्लव बने हुए है जिन पर रंगों का सुन्दर भराव था, जो निकल चुका है। पश्चिमाभिमुखी देवालय के मण्डप एवं गर्भगृह के वितान पर सुन्दर चित्र बने हुये है। मंदिर शिव को समर्पित रहा है, किन्तु वर्तमान में यहां की शिवलिंग व प्रतिमायें रामराजा परिसर में स्थानान्तरित कर दी गई है।

राम मंदिर - यह मंदिर मूलत: रानी महल है, जिसका निर्माण बुन्देला शासक भारतीचन्द्र (ई. सन् 1531-1554) द्वारा कराया गया। राजा मधुकर शाह (ई. सन् 1554-1592) के समय उनकी पत्नी महारानी गणेश कुंवरि ई. सन् 1574 में अयोध्या से भगवान की प्रतिमा लेकर ओरछा आयी यद्यपि राजा मधुकर शाह भगवान राम के लिये विशाल मंदिर बनवा रहे थे, किन्तु मुगलों के आक्रमण एवं राजकुमार होरलदेव के मारे जाने के क़ारण मंदिर (चतुर्भुज मंदिर) पूर्ण नहीं हो पाया। महारानी गणेश कुंअरि द्वारा अपने महल में ही भगवान राम को स्थापित करने पर महल मंदिर में परिवर्तित हो गया। यद्यपि यह विशाल महल मूलत: 16 वीं शती ई. में बना किन्तु शीर्ष भाग के गुम्बद प्रवेश द्वार एवं अन्त: भाग के बरामदे शैलीगत आधार पर 17वीं शती ई. में निर्मित हुए। गुम्बदों का निर्माण राजा वीरसिंह के (ई. सन् 1605-1627) के समय हुआ। प्रवेश द्वार 18 वीं शती ई. में बाद में जोड़ा गया। जिसमें दतिया की बुन्देली शैली का अलंकरण है।

शिव मंदिर – यह मंदिर चतुर्भज मंदिर के पीछे व्यासपुरा में स्थित है। ओरछा के प्राचीनतम ग्राम व्यासपुरा में स्थित यह मंदिर शैलीगत आधार पर 16 वीं शती ई. का प्रतीत होता है। पूर्वाभिमुखी मंदिर के तल विन्यास में गर्भगृह अंतराल एवं मण्डप की संरचना है। ऊर्ध्व विन्यास में वेदिबन्ध, जन्घा एवं नागर शैली का शिखर है। गर्भगृह में चारों ओर की भित्तियों में नुकीली मेहरावयुक्त गवाक्षों की संरचना है, इसके ऊपर लघु चैत्याकार गवाक्षों में ढलवा वातायन भी बनी हुई है। अंतराल आयताकार है। अंतराल एवं गर्भगृह के प्रवेश द्वारों की द्वार शाखा प्रस्तर से निर्मित है। द्वारपाल के रूप में गजारि शिव का आलेखन है। ललाट विम्ब पर गणेश का आलेखन है। विशाल मण्डप में मेहरावदार द्वारों की संरचना है। वितान चैत्यनुमा है। बाह्य विन्यास में अष्टभद्र शाखायें जंघा एवं शिखर पर बनी हुई है। शिखर नागर शैली का है, इसमें पंचरथी अष्टभद्र संरचना है। स्थानीय कुछ लोग इस मंदिर को जुगल किशोर तथा कुछ राधिका रमण मंदिर बताते है, किन्तु वास्तव में यह शिव मंदिर ही था।

लक्ष्मी मंदिर – लक्ष्मी मंदिर का निर्माण राजा वीरसिंह द्वारा ई. सन् 1622 में करवाया गया और परिवर्द्धन राजा पृथ्वीसिंह द्वारा ई. सन् 1793 में करवाया गया। मंदिर वर्गाकार प्रांगण में त्रिभुजाकर बना हुआ है। मंदिर प्राकार के प्रत्येक कोने पर बहुकोणीय तारांकित बुर्ज बने हुये है, जिसमें से एक में प्रवेश द्वार बनाया गया है। ईट और चूने से निर्मित यह मंदिर एक गढ़ी जैसा प्रतीत होता है, इसका शिखर लम्बा अष्टकोणीय है, जो मीनार जैसा प्रतीत होता है। मंदिर एवं चारों ओर के गलियारों की भित्तियों एवं वितान पर सुन्दर चित्र बने हुए है। इन चित्रों में रामायण, श्रीमद्गीता के कथानकों के दृश्य है। इन चित्रों की शैली बुन्देलखण्ड में विकसित 17वीं शती ई. से 19 वीं शती ई. की बुन्देली शैली है।

पंचमुखी महादेव मंदिर – यह मंदिर किला परिसर में उत्तरी ओर स्थित है। पंचमुखी महादेव मंदिर एक सुदृढ़ प्राकार के मध्य स्थित है। मुख्य मंदिर के अतिरिक्त दो अन्य मंदिर भी स्थित है,जो आकार व प्रकार में साम्य रखते है। देवालय के तल विन्यास में वेदिबन्ध, जंघा एवं नागर शैली का शिखर है। शैलीगत आधार पर 17 वीं शती ई. का निर्मित इस देवालय के शिखर यद्यपि नागर शैली के हैं, किन्तु इसमें भूमिज शैली की अष्टभद्र शाखायें एवं उरूश्रृंगों का मिश्रित प्रयोग है। यह मिश्रित प्रयोग ओरछा में महाराजा वीरसिंह (ई. सन् 1605–1627) के समय प्रारम्भ हुआ। क्षेत्रीय आधार पर इसे बुन्देली स्थापत्य कला का अंग माना जा सकता है। इस मंदिर समूह में विष्णु के विविध अवतारों के चित्र बनाये गये है।

वनवासी राम मंदिर – यह मंदिर किला परिसर में उत्तरी ओर द्वीप के कोने पर स्थित है। इस मंदिर का निर्माण महाराजा वीरसिंह बुन्देला (ई. सन् 1605–1627) द्वारा करवाया गया। पूर्वाभिमुखी मंदिर तल योजना में गर्भगृह एवं अंतराल युक्त है। वर्गाकार गर्भगृह की भित्तियों पर मेहरावदार गवाक्ष बने हुये है। मध्य में देव कक्षासन है, जिस पर भगवान राम की बनवासी स्वरूप की प्रतिमा थी, जो आज इसी नाम से राम राजा मंदिर परिसर में स्थापित है। अंतराल आयताकार है। बाह्य विन्यास में अष्टभद्र शैली में वेदिबन्ध, जंघा एवं नागर शैली के शिखर है। इसके ऊपर उरूश्रृंगों की संरचना है। शिखर शीर्ष आमलक एवं पद्म, कलश युक्त है।

कल्याण राय मंदिर – यह मंदिर कल्याणराय जी द्वारा बनवाया गया। इस मंदिर का निर्माण ई . सन् 1738 में महाराजा पृथ्वीसिंह के शासन काल में कल्याण राय ने करवाया था। इस मंदिर में वि.सं. 1795 में भगवान कृष्ण व राधा की प्रतिमायें स्थापित की गयी थी, जो अब इस मंदिर में नहीं है। पूर्वाभिमुखी देवायल के तल विन्यास में गर्भगृह, अंतराल एवं मण्डप है। ऊर्ध्व विन्यास में वेदिबन्ध, जंघा एवं नागर शैली का शिखर है। बाह्य विन्यास में पंचरथी संरचना के जंघा एवं शिखर है। शिखर में उरूश्रृंगों की संरचना है। गर्भगृह वर्गाकार है। जिसकी भित्तियों में गवाक्ष व आलों की संरचना है। अंतराल व गर्भगृह के प्रवेश द्वार की चौखट प्रस्तर की है। मण्डप का वितान चैत्यनुमा है। गर्भगृह व अंतराल के वितान पद्म अलंकरण से सुसज्जित है।

चतुर्भज मंदिर – ओरछा का यह चतुर्भज मंदिर ऐतिहासिक एवं पुरातत्वीय दृष्टि से महत्वपूर्ण स्मारक है। इस मंदिर के निर्माण का प्रारंभ महाराजा मधुकर शाह (ई. सन् 1554–1592) द्वारा ई. सन् 1574 में करवाया गया। महारानी गणेश कुंवरि इस मंदिर में भगवान राम की प्रतिमा स्थापित करना चाहती थी, किन्तु बुन्देलखण्ड के पश्चिमी भाग पर मुगलों के आक्रमण एवं राजकुमार होरलदेव की वीरगति के कारण मंदिर निर्माण का कार्य अवरुद्ध हो गया और महारानी ने अपने रानी महल में भगवान राम की मूर्ति स्थापित की। मंदिर का द्वितीय चरण का कार्य महाराजा वीरसिंह (ई.सन् 1605–1627) पूर्ण करया गया। ओरछा स्थित यह विशालतम देवालय ऊँचे अधिष्ठान पर निर्मित है, जिसमें गर्भगृह अंतराल, अर्द्ध मण्डप, महामण्डप की संरचना है। गर्भगृह एवं उसके कोनों के कक्षों के ऊपर नागर शैली के शिखर है। मण्डप के ऊपर गुम्बदनुमा शिखर है। ईट व चूने से निर्मित मंदिर का द्वितीय चरण का निर्माण कार्य बुन्देली स्थापत्य कला का महत्वपूर्ण उदाहरण है।

राधिका बिहारी मंदिर – यह मंदिर किला प्राकार के उत्तरी ओर स्थित है। पूर्वाभिमुखी यह देवालय ओरछा के महाराजा वीरसिंह बुन्देला (ई.सन् 1605–1627) द्वारा बनवाया गया। मंदिर की तल योजना में गर्भगृह, अंतराल एवं मण्डप की सरंचना है। ऊर्ध्व विन्यास में बेदिवन्ध जंघा नागर शैली का शिखर है। मण्डप के ऊपर शहतीरों युक्त विशाल गुम्बद है। पंचरथी गर्भगृह के शिखर पर प्रत्येक रथ अनुरथ एवं कोणक भागों पर खजुराहो मंदिर स्थापत्या शैली के उरूश्रंग बने हुये है। वर्गाकार गर्भगृह की भित्तियों पर मेहरावदार गवाक्ष एवं आले बने हुए है। प्रवेश द्वार की शाखा प्रस्तर की बनी हुयी है। अंतराल एवं गर्भगृह के प्रवेश द्वारों के ललाट विम्ब पर गणेश एवं द्वार शाखाओं में द्वारपाल अंकित है। मण्डप आयताकार है। किन्तु मध्य में वर्गाकार भाग का वितान गुम्बदनुमा है। गुम्बद के चारों कोनों पर नागर शिखर युक्त लघुकाय छत्रियों एवं मध्य में चार स्तम्भों पर आधारित गुम्बदनुमा लघु छत्रियाँ है। विशाल गुम्बद के ऊपर कलश के स्थान पर छः स्तम्भों पर आधारित लघु छत्री बनी है। यह भव्य देवालय बुन्देंली मंदिर स्थापत्य कला का सुन्दर नमूना है।

जनराय मंदिर – यह सरखइया तालाब के समीप ओरछा से 5 कि.मी. की दूरी पर स्थित है। यद्यपि यह मंदिर आकार में छोटा है। किन्तु महत्व कम नहीं है। इस मंदिर का निर्माण महाराजा वीरसिंह देव ने ई. सन् 1618 में करवाया था। इसी समय सरखइया

तालाब का निर्माण हुआ था। कहा जाता है कि कवि जनराय पंडित चन्द्रसखी व्यास के शिष्य थे। मंदिर वर्गाकार मड़ियां के रूप में है। वर्तमान में हनुमान मंदिर एवं अंजनी माता की मूर्ति है। भित्ति पर प्लास्टर व चूना होने के कारण प्राचीनता नहीं दिखाई दे रही है। किन्तु ऊपर चौकोर शिखर 17वीं शती ई. का स्पष्ट संकेत देता है। मंदिर का प्रवेश द्वार मेहरावदार है।

प्राचनी मंदिर– यह मंदिर बेतवा काटेज परिसर में स्थित है। उत्तराभिमुखी मंदिर की योजना में गर्भगृह एवं अंतराल आयताकार है। मंदिर का निर्माण प्रस्तर ईट व चूने से निर्मित है। वर्गाकार गर्भगृह के ऊपर की छत चौकोर पर्वताकार है। अंतराल की छत समतल है। अंतराल का प्रवेश द्वार पर तोड़न की संरचना है दोनों ओर विकसित पद्म है। बाह्य भित्ति सादा है, इनमें कोई भी अलंकरण नहीं है। छज्जी टूट गयी है। गर्भगृह में कोई भी मूर्ति नहीं है। म.प्र. पर्यटन विकास निगम द्वारा इसे स्टोर रूम के रूप में उपयोग किया जा रहा है।

पिसनहारी का पुल– यह पुल समूह से आधा कि.मी. पश्चिम में घुरारी नदी छत्रियों के पीछे ओरछा में स्थित है। इस पुल का निर्माण ई. सन् 1644 में इमरतिया गांव की निवासी गणेशी काछिन ने इस पुल का निर्माण करवाया था। ओरछा में कंचन घाट के पश्चिम में घरारी नदी की संगम है। यद्यपि इसमें बहुत कम पानी रहता है, किन्तु वर्षा में पानी आ जाने के कारण इमरतिया गांव का संपर्क ओरछा से टूट जाता था। कहा जाता है कि गणेशी काछिन ओरछा के व्यासपुरा में ब्राम्हणों के यहाँ प्रतिदिन अनाज पीसने आती थी। उसने अपनी प्रतिदिन की मजदूरी से बचत कर इस पुल का निर्माण करवाया। इस कारण इस पुल को पिसनहारी का पुल कहा जाता है। पुल काले बलुआ प्रस्तर से बना हुआ है। जो आज भी ठीक स्थिति में है।

सुन्दरशाह महल– यह महल लक्ष्मी मंदिर के पार्श्व भाग में अवस्थित है। ऐसी अनुश्रुति है कि औरंगजेब की शहजादी मदारून्निया इन्द्रमणि की प्रेमिका थी, जिसका पुत्र सुन्दरशाह इस महल में रहा जिसके मरने बाद उनकी मजार बनायी गई है। इस महल का निर्माण ओरछा के महाराजा पृथ्वीसिंह ने ई. सन् 1742 में बनवाया था। जिसमें बाद मे सैय्यद पीर एवं जाहर पीर की दरगाह बनवाई गयी। शैलीगत आधार महल की प्राकार भित्ति 17वीं शती ई. की प्रतीत होती है। कहा जाता है कि इन्द्रमणि की मुस्लिम प्रेमिका से पैदा पुत्र सुन्दरशाह इस महल में रहते थे। संभवत: ये मजार ही महाराजा पृथ्वीसिंह के समय बनवायी गयी। इसके ऊपर विशाल बारादारी है, जिसकी दक्षिणी भित्ति के बरामदे में मजार है। जो मजार के निर्माण के बाद बनी। इस बाराद्वारी का उद्देश्य मजार पर आने वाले श्रद्धालुओं के लिये मण्डप का कार्य करती है। महल के चारों कोनों पर बुर्ज बना हुआ है इसकी महरावें नुकीली है। आवासीय कक्ष भग्न है। केवल मजार वाली बाराद्वारी अच्छी स्थिति में है। सम्पूर्ण भवन में प्रस्तर ईंट व चूने का प्रयोग किया गया।

दीवना का महल – यह महल चतुर्भुज मंदिर के दक्षिण में सीतामढ़ी महल के पीछे स्थित है। महाराजा वीरसिंह के साले अर्जुनसिंह धंधेरा का इस महल में निवास था। अर्जुनसिंह महाराजा वीरसिंह के दीवान एवं सहरा शहाबाद के जागीरदार थे। यद्यपि यह महल क्षतिग्रस्त है, किन्तु इसकी योजना स्पष्ट है। द्वितलीय प्रवेश द्वार उत्तर की ओर है। प्रांगण में मात्र एक आयताकार संरचना है, जिसका पश्चिमी भाग भग्न हो गया है। दक्षिणी कोने की द्वितलीय संरचना के ऊपर बुन्देली शैली का विशाल गुम्बद है, शेष गुम्बद भग्न हो चुके है। पूर्वी ओर के द्वार की छत पालकीनुमा है।

सीतामढ़ी महल– यह मूलत: 16वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध का प्रतीक होता है, जिसकी संरचना अंग्रेजी के L अक्षर के समान है। मूलत: महल आयताकार था। द्विमंजिला इस महल में विशाल हाल के दोनों ओर कक्षों की संरचना है आगे बरामदा है। द्वितीय तल पर तीन द्वार एवं पालकीनुमा छत है। ऊपर का भाग 17वीं शती ई. में निर्मित हुआ। द्वारों की मेंहरावें नुकीली, छत गजपृष्ठाकार एवं द्वार कोष्ठक मयूराकृत है। नीचे का भाग राजपूत शैली का है, वहीं ऊपर का भाग बुन्देली शैली का है। 16वीं शताब्दी में इस महल का उपयोग इन्द्रजीत सिंह के फुफेरे भाई सोने शाह द्वारा किये जाने की जानकारी प्राप्त हुई। अत: इसे सोनेशाह का महल भी कह सकते है। वर्तमान में इसमें संस्कृत विद्यालय संचालित है।

शीश महल– इस महल का निर्माण ओरछा के शासक महाराजा उदोतसिंह द्वारा वि.सं. 1763 (ई. सन् 1706) में कराया था। इसके अलंकृत रंगीन कांच एवं टाइल्स लगाये जाने के कारण इसे शीशमहल कहा गया। यह द्वितलीय महल योजना में आयताकार है, जिसमें स्तम्भों पर आधारित विशाल हाल है जिसके दोनों कक्षों की संरचना है। ऊपर पश्चिमी ओर के कक्ष के ऊपर गवाक्षों की सुन्दर संरचना है जिसमें पालकीनुमान छतें बनी है। इसमें एक ओर राजपूत शैली के सुन्दर झरोखे है, वहीं बुन्देली के अंलकृत गवाक्ष शीर्ष महल की भव्यता में अभिवृद्धि करते है। वर्तमान में महल में म.प्र. पर्यटन विकास निगम का होटल है।

तीन दासियों का महल– दुर्ग प्राकार में उत्तरी ओर स्थित यह वर्गाकार महल शैलीगत आधार पर 17वीं शती ई. में निर्मित हुआ प्रतीत होता है। द्वितलीय महल की योजना वर्गाकार है, इसमें वर्गाकार आंगन के चारों ओर आयताकार बरामदों के दोनों ओर वर्गाकार कक्ष है। इनके ऊपर प्रथम तल पर भी वर्गाकार कक्षों के ऊपर गुम्बदों की संरचना है। दक्षिण पूर्व का गुम्बद एवं दक्षिण व उत्तर के बरामदे भग्न हो चुके है। इसका उपयोग ओरछा के महाराजा की दासियों द्वारा किया गया। इस कारण दासियों का महल तथा कालान्तर में दासियों की समाधि कहा गया है।

पालकी महल – फूलबाग परिसर के हरदौल बैठका के सामने स्थित इस महल का निर्माण महाराजा वीरसिंह के समय 1625-1627 ई. सन् के समय करवाया गया। यह आयताकार महल द्विमंजिला है। भूतल पर तीन मेहरावदार द्वार युक्त बरामदे के दोनों ओर आयताकार कक्ष है। इसमें लगे हुये प्रस्तर स्तम्भ एवं पालकीनुमा छत सहित कक्ष हरदौल बैठका के निर्माण (17वीं शती ई. के उत्तार्द्ध) में जोड़े गये। प्रथम तल पर बने हुए मध्य कक्ष के ऊपर विशाल पालकीनुमा छत के कारण इसे पालकी महल कहा जाता है।

फूलबाग महल– इस महल का निर्माण महाराजा वीरसिंह देव (ई. सन् 1605-1627) द्वारा फूलबाग के निर्माण के समय करवाया था। महल के नीचे के उत्तरी भाग की ओर स्तम्भों पर

आधारित मण्डप बना हुआ है, जिसमें दो स्तम्भों पर आधारित आगे मण्डपिका है, जिसके सामने प्रस्तर निर्मित अलंकरण पात्रनुमा फब्बारा एवं उद्यान के अन्य फब्बारे बने हुये है। प्रथम तल पर बने वर्गाकार कक्ष के ऊपर विशाल गुम्बद है। मयूराकृत टोड़ी, कोष्टक, स्तम्भ गवाक्ष एवं गुम्बद की संरचना बुन्देली शैली की है। समीप ही तहखाने के वातानुकूलन स्तम्भ स्थित है, इन्हें सावन भादों कहते हैं। इन स्तम्भों में बने हुए छिद्र तहखाने के वातानुकूलन हेतु बनाये गये थे। तहखाने का उपयोग अधिक गर्मी में निवास हेतु किया जाता था।

जहांगीर महल- मूलत: जहांगीर महल का निर्माण 16वीं शताब्दी में प्रारंभ हो चुका था, किन्तु ई.सन् 1606 में जहांगीर के आगमन से पूर्व वीरसिंह बुन्देला ने पूर्ण कराया तथा ऊपर का भाग एवं साज-सज्जा ई. सन् 1618 में करवाई गयी। मुगल सम्राट जहांगीर के सम्मान में महल का नामकरण जहांगीर महल किया गया। वर्गाकार महल के प्रत्येक कोने पर बुर्ज बना हुआ, जिसके ऊपर षडकोणीय छत्री बनी हुई है। प्रथम तल के छज्जे मयूराकृत टोड़ियों पर आधारित है, जिसके ऊपर हाथियों की संरचना है। हिण्डोला तोरण द्वार, अधोमुखी पद्म संरचना एक ओर राजपूत स्थापत्य विद्या के नमूने है, वहीं ऊपरी भाग के गुम्बदों एवं छत्रियों के अलंकृत अष्टकोणीय एवं पद्म संरचना बुन्देली स्थापत्य के प्राथमिक उदाहरण है। महल के कक्षों की आन्तरिक साज-सज्जा चित्रण एवं बाह्य अलंकरण में हिन्दू-मुस्लिम स्थापत्य का श्रेष्ठ मिश्रण प्रदर्शित करता है, जो मध्यकालीन वास्तुकला में एक क्षेत्रीय शैली के रूप में प्रयुक्त हुआ। महल के कुछ कक्षों में भित्ति चित्र है, जिसमें कृष्ण को गोपियों के साथ बासुरी बजाते तथा अन्य कक्ष में भगवान श्री राम, महाराजा वीरसिंह जू देव के चित्रों को अंकित किया गया है।

राजा महल- राजा महल के निर्माण की नींव बुन्देला राजा रुद्रप्रताप (ई.सन् 1501-1531) ने ई. सन् 1531 में रखी थी, किन्तु इसका मुख्य भाग उनके ज्येष्ठ पुत्र राजा भारतीचन्द्र द्वारा ई. सन् 1539 में पूर्ण करवाया। शेष महल का निर्माण कार्य राजा मधुकरशाह (ई.सन् 1554-1592) द्वारा करवाया गया। 17वीं शती ईस्वी में महल का प्लास्टर कार्य ऊपर के कख एवं चित्रण कार्य हुआ। बहुकोणीय महरावों की संरचना प्लास्टर के समय 17वीं शती ई. के उत्तरार्द्ध में की गयी। मुख्य महल दो भागों में विभक्त है, जिसमें पश्चिमी ओर का भाग आवास हेतु उपयोग में लिया जाता था, जिसमें शयन कक्ष बने हुये है। दूसरे भाग में दीवान-ए-खास एवं अन्य आयताकार कक्ष है। जो कार्यालयीन उपयोग हेतु प्रयुक्त थे। बाह्य ओर दीवान-ए-आम बना हुआ है। कक्षों के चित्रण की कथा वस्तु रामायण, महाभारत एवं पौराणिक कथानकों से संबंधित है। इनमें कृष्ण लीला, दशावतार सैनिक समारोह, मल्लयुद्ध एवं अन्य चित्र है।

प्रवीण राय महल- इस महल का निर्माण ओरछा के महाराजा रामशाह (ई. सन् 1592-1605) के अनुज एवं कार्यवाहक शासन राजा इन्द्रजीत सिंह द्वारा अपनी प्रेयसी प्रवीण राय के लिये कराया। प्रवीण राय ओरछा राजा दरबार की प्रसिद्ध नर्तकी थी, जो कवियत्री, गायिका एवं कुशल घुड़सवार भी थी, महाकवि केशवदास ने अपनी शिष्या प्रवीणराय की प्रशंसा में कविप्रिया नामक ग्रंथ की रचना की थी। मुगल सम्राट अकबर द्वारा अपने दरबार में बुलाये जाने पर प्रवीण राय ने अपनी स्वरचित कविता से मुगल सम्राट को हतप्रभ कर दिया था, जिसके कारण सम्मान सहित ओरछा वापसी हुयी थी। इस द्वितलीय भवन का निर्माण दो चरणों में हुआ। प्रथम चरण में भूतल पर दोहरे विशाल दालान एवं दोनों ओर वर्गाकार कक्ष तथा प्रथम तल पर बरामदा एवं कक्ष बनाये गये। यह निर्माण कार्य 16वीं शती ईस्वी के अन्तिम दशक का है। द्वितीय चरण का निर्माण 17वीं शती ई. का है, जिसमें महल के आगे का बरामदा, भूमिगत बारादरी, उद्यान एवं पूर्वी ओर का निर्माण कार्य हुआ। आनन्द मण्डल की उत्तरी झरोखा प्रथम चरण का है, जहां प्रवीण राय कविता लिखा करती थी। प्रथम तल पर बने प्रवीण राय एवं इंद्रजीत सिंह के चित्र बुन्देली शैली के है। महल की वास्तुगत विशेषताएं राजपूत एवं बुन्देली शैली की है। इसमें बने चित्रों में राय प्रवीण को घुड़सवारी करते आराम एवं नृत्य मुद्रा में अंकित किया गया है।

जुझार सिंह महल- यह महल का निर्माण ओरछा नरेश महाराजा वीर सिंह बुन्देला द्वारा करवाया गया। महाराजा वीरसिंह ने फूलबाग परिसर में नौ चौकी महल अर्थात नौ प्रांगण के महल बनवाये थे। इस महल में महाराजा वीरसिंह (ई. सन् 1605-1627) के ज्येष्ठ पुत्र जुझारसिंह का निवास था। जो ईस्वी सन् 1627 से 1634 तक ओरछा के शासक रहे। यह आयताकार महल तीन तलीय है, जिसमें भूतल पर विशाल हाल एवं आयताकार कक्ष है। शीर्ष भाग में तीन वर्गाकार कक्ष जिनके ऊपर गुम्बदाकार शिखर है। सहतीरों युक्त गुम्बद पर अधोमुखी पद्म का आलेखन है। इसके ऊपर पद्म कलश है। महल की स्थापत्य ओरछा में उद्भूत बुन्देली शैली का है, जो राजा वीर सिंह की कला जगत को महत्वपूर्ण देन है। 17वीं शती में विकसित बुन्देली स्थापत्य कला ओरछा से समस्त बुन्देलखण्ड में प्रसारित हुई।

सिद्ध बाबा की गुफा- यह गुफा दुर्ग प्राकार के उत्तरी कोने पर स्थित यह पूर्वाभिमुखी भवन ईंटों व चूने से निर्मित है। तहखाने सहित तीन मंजिला भवन में वर्गाकार प्रांगण के चारों ओर आयताकार कक्षों की संरचना है। इसमें उत्तरी एवं उत्तर-पश्चिम के कक्ष भग्न प्राय: है। कक्षों के लघु द्वार एवं तहखानों के कारण इसे गुफा कहा गया। यह भवन मूलत: मठ रहा है, जिसमें सिद्ध अर्थात् साधुओं का निवास रहा। भवन शैलीगत आधार पर 16वाँ शती ईस्वी का है।

मढ़िया - यह मंदिर बेतवा काटेज परिसर ओरछा में स्थित है। यह वर्गाकार मंदिर यद्यपि भग्नावस्था में है, किन्तु इसकी संरचना में प्रयुक्त ईंट, चूना, प्रस्तर के साथ चन्देल कालीन वास्तुखण्ड भी संलग्न है। ये वास्तुखण्ड ग्रेनाइट प्रस्तर के बने हुए है। ये प्रस्तर गढ़ कुड़ार क्षेत्र में प्राप्त होता है। इससे यह स्पष्ट होता है कि इस परिसर के समीप चन्देल कालीन मंदिर अथवा भवनावशेष रहे है, जिनमें यह वास्तुखण्ड प्रयुक्त हुए थे। शैलीगत आधार पर यह मंदिर 17वीं शती ईस्वी का प्रतीत होता है। इसके द्वार नुकीली मेहरावे एवं बाह्य भित्ति पर मुगल शैली की कोर्निस बनी हुई है। ऊपर गुम्बद का प्लास्टर निकल गया है। मंदिर का प्रवेश द्वार दक्षिणी ओर है। संभवत: यह हनुमान मंदिर रहा होगा।

नामदेव के बाड़े की मढ़िया- ओरछा में नामदेव के बाड़े

में प्रवेश द्वार के पास स्थित है। गणेश दरवाजे के पश्चिम में प्रताप नामदेव के खेत में मढ़िया अर्थात मंदिर स्थित है। इस वर्गाकार मंदिर का प्रवेश द्वार पूर्वी ओर था तथा दायीं ओर सीढ़ियां ऊपर की ओर थी। पूर्वी ओर एवं उत्तरी ओर के द्वार मेहरावदार है। ये द्वार चर्तुशाखा मेहरावयुक्त है। गर्भगृह में दक्षिणी ओर एवं पश्चिमी भित्ति पर गवाक्ष बने हुये है। ऊपर गुम्बद के चारों कोनों एवं मध्य में लघुकाय छत्रियां बनी हुई है। मध्य में बड़ा गुम्बद है। मंदिर का निर्माण ईट, चूना व प्रस्तर से किया गया है। शैलीगत आधार पर यह मंदिर 17वीं शती ईस्वी का है। वर्तमान में इसमें कोई भी प्रतिमा नहीं है।

गोसाई का मठ- यह भवन ओरछा में फूलबाग के सामने स्थित है। यह भवन गोसाई का मठ कहा जाता है। जिससे प्रतीत होता है कि यह साधुओं के निवास हेतु मठ था। शैलीगत आधार पर इसका निर्माण भी 17वीं शती ईस्वी का प्रतीत होता है। इसमें पृथक-पृथक कक्षों के मेहरावदार लघु द्वार बाह्य भित्ति की संरचना एवं छत की चैत्याचार बनावट आदि बुन्देला स्थापत्य कला की है, किन्तु इसमें कोई भी शैलीगत वैशिष्ट्य नहीं है। नुकीली मेहरावें ओरछा में 16वीं शती ईस्वी से प्रचलन में थी। बाह्य भित्ति सुदृढ़ है। सम्पूर्ण भवन का निर्माण प्रस्तर ईट व चूने से किया गया है।

यज्ञ शाला- यह यज्ञ शाला दुर्ग प्राकार के उत्तरी कोने पर स्थित यह एक वर्गाकार प्राकार के मध्य में वर्गाकार स्मारक है, जिसमें चारों ओर मेहरावदार द्वार है। इसमें ऊँचा गुम्बदनुमा वितान, वातायन एवं विशाल गुम्बद है। गुम्बद के चारों कोनों पर लघुकाय छत्रियाँ एवं मध्य में वातायन के बाहर स्तम्भ गवाक्षों की संरचना है। वितान पर शिल्पांकित प्रतिमाओं में गणेश, कार्तिकेय, हनुमान शिव नन्दी आदि है।

चौपाल- यह चौपाल बेतवा काटेज परिसर में स्थित यह स्मारक द्विमंजिला है। इसका स्थापत्य छत्री वास्तु शैली के अनुरूप हैं। शैलीगत आधार पर 16वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध अथवा 17वीं शती के पूर्वार्द्ध की प्रतीत होती है। स्थानीय लोग इसे केशवदास की छत्री कहते है। वर्गाकार योजना में निर्मित व इस छत्री के प्रत्येक ओर तीन-तीन मेहरावदार द्वार है। इसी प्रकार प्रथम तल की संरचना है। ऊपर चार गुम्बद बने हुये है। म.प्र. पर्यटन विकास निगम द्वारा किये अनुरक्षण कार्य के कारण गुम्बद की शैली स्पष्ट नहीं हो पा रही है। आंशिक ढलवां भित्तियों के इस स्मारक में भारतीचन्द्र की छत्री का अनुकरण स्पष्ट झलकता है। इसके उत्तर में दो कक्षों की संरचना भी रही है।

गौशाला- यह गौशाला फूलबाग के पीछे स्थित है। वर्गाकार प्रांगण में स्थित यह गौशाला शैलीगत आधार पर 17वीं शती ईस्वी की निर्मित है। यद्यपि भित्तियां जर्जर स्थिति में है, किन्तु इनकी मूल संरचना स्पष्ट है। प्रवेश द्वार द्वितलीय है, तीन वातायन प्रथम तल पर है, जिसके ऊपर पालकीनुमा छत है। भीतर प्रांगण में एक आयताकार विशाल दालान हैं जो भग्न अवस्था में है। प्रांगण के चारों ओर इसी प्रकार की संरचना थी। जो भग्न प्राय: है।

हमाम खाना- यह हमाम खाना प्रवीणराय महल के समीप स्थित है। हमामखाना का निर्माण महाराजा वीरसिंह ने ईस्वी सन् 1606 में मुगल सम्राट जहांगीर के आगमन के समय करवाया था। परसीयन अवधारणा पर निर्मित यह हमाम खाना योजना में तीन मेहरावदार द्वारों युक्त बरामदा के दोनों ओर वर्गाकार कक्ष है, इसके अन्दर मध्य में अष्टकोणीय दालान है, जिसके पूर्वी एवं दक्षिणी ओर शाही हमाम है। आयताकार विशाल कक्ष के एक ओर अलंकृत जलकुण्ड तथा दूसरी ओर चबूतरा बना हुआ है। अन्त: भाग का अलंकरण मुगल शैली का है। प्राकृतिक प्रकाश हेतु वातायन बने हुये है।

ऊंट खाना- यह ऊँट खाना जहांगीर महल के पीछे ऊँची चट्टान पर वर्गाकार योजना का यह स्मारक मूलत: 16वीं शती ईस्वी का निर्मित बारादरी था, किन्तु 17वीं शती ईस्वी के पूर्वार्द्ध में बारादरी के चारों ओर ऊँचा गलियारा जोड़ा गया। जिसमें प्रत्येक ओर पांच-पांच ऊँचे मेहरावदार द्वार है। इन गलियारों का उपयोग ऊँट खाने के रूप में किया गया। मध्य की बारहद्वारी या मण्डप अलंकृत है। इसमें लगे हुये कड़े झूला डालने के लिये प्रयोग में लाये जाते रहे होंगें।

बारूद खाना- यह बारूद खाना किला परिसर में किला प्राकार में दक्षिणी ओर स्थित यह स्मारक शैलीगत आधार पर 17वीं शती ई. में निर्मित हुआ इसकी योजना में वर्गाकार प्रांगण में चारों ओर आयताकार कक्षों की संरचना है। पश्चिमी ओर के कक्ष भग्न हो चुके है। प्रमुख प्रवेश द्वार उत्तरी ओर है, जो लम्बे दालान में खुलता है। इसके वितान चैत्याकार तथा छतें ढलवां है। इस भवन में बारूद रखी जाती थी, जिसके कारण बारूद खाना कहा जाता है।

-24, रामानुज नगर, रामबाटिका के पीछे
न्यू गोविन्द पुरी के सामने सिटी सेन्टर
ग्वालियर (म.प्र.) मो. 9826341257

*****

सियाचीन वोडर

-सरोजा शिल्पी

चारउ तरफ है बरफ चदरिया, बिरछा इक्का-दुक्का।
आँख गड़ायें हैं सीमा पै, करत देश की रक्षा।।
संगीनन की छाया में है, इन की चौड़ी छाती।
चिरई-चेनुआ लौ संग नइयाँ, न चिठिया न पाती।
संग देत कठिनाई में बस, सेना की व शिक्षा। आँख ...
कभऊँ रहें अदपेटा भूखे, कभऊँ परत हैं फांके।
जे त्यौहार-तीज नईं जानत, ना बरात के साके।
पिगला-पिगला बरफ पी रये, मौसम लेत परिक्षा। आँख ...
तुपक के घोड़ा धरी उंगरिया, तनक भई जो चूक।
पन्द्रा मिनिट सैं जादाँ हो गये, तौ निकरै बस हूक।
खून जमो जीवन संकट में, बस रक्षक दृढ़ इच्छा। आँख ...
बरफीले तूफानन सैं है, इनकी टक्कर भारी।
पै इन की हिम्मत के आंगू, खात वे मात करारी।
मौत खौं देत मनौ जै रौजऊँ, साहब बारी दिक्षा।
चारउ तरफ है बरफ चदरिया, बिरछा इक्का-दुक्का।
आँख गड़ायें हैं सीमा पै, करत देश की रक्षा।।

-F/7 गीत बंगले,
-फेस II दुर्गेश विहार
जे.के. रोड, भोपाल (म.प्र.)
मोबा. 9977825997

*****

बुन्देली मान-मर्यादा

-डॉ. आर.बी. पटेल 'अनजान'

आधुनिक भारत इक्कीसवीं सदी का भारत है। जिसमें नित नवीन प्रयोग नवीनीकृत उपकरण उपयोग में आ रहे हैं तभी तो हमारे यहाँ की युवा पीढ़ी भी उसी गति के साथ दौड़ रही है (जैसे- डिजिटल इण्डिया) जो हमें अपनी विश्व गुरु संस्कृति वाले देश के आजाद विचारों से कोसों दूर हटती जा रही हैं अर्थात हम आन, मान, सम्मान, आदर, सत्कार, लिहाज, लज्जा, स्नेह, दया आदि को भूलते जा रहे हैं और यदि इसी प्रकार हमारी संतानें इस पहलू को बिस्मृत में हम डूब जाएगे, जिससे हम एक सच्चे भारतीय न रहकर पाश्चात्य नागरिक कहलाने लगेंगे और जो सैलानी हमारी संस्कृति अनुसरण के लिए आते हैं उनका यहाँ आना बंद हो जायेगा जो यह सिद्ध करता है कि हमारा नैतिक पतन हुआ साथ ही आर्थिक हानि भी होगी। इससे बचने के लिये हमें अपनी संस्कृति व संस्कारों को कायम रखना होगा और यह तभी संभव है जब हम अपनी संस्कृति से जुड़े लोकगीत, लोककथाओं आदि का अनुसरण करना अपना धर्म समझकर उसे आने वाली पीढ़ियों की हस्तांरित करेंगे तभी हम अपने पूर्वजों के ऋण से मुक्त हो सकेगें।

एक बुन्देली नारी नवविवाहित वधू को अपनी ससुराल में मान मर्यादा, आदर सत्कार आदि किसके साथ कैसा व्यवहार करना है। वह गीत के माध्यम से कुछ इस प्रकार समझाती हुई कहती है-
पहनो पहनो री सुहागिन ज्ञान गजरा।।

1. *सास ससुर की करियो सेवा-2*
   अपने पति से ना कीजो झगड़ा..... पहनो।।
2. *देवरानी जेठानी से हिलमिल रहियो-2*
   ननदी में देखो बहिन का मुखड़ा... पहनो।।
3. *दया धर्म की ओढ़ चुनरिया-2*
   सील का अंखियों में डालो कजरा.... पहनो।।
4. *लाज करो तुम पर पुरूषों की-2*
   अपने पति का तुम देखो मुखड़ा...
   पहनो पहनो री सुहागिन ज्ञान गजरा... ।।

उक्त गीत में वर्णित कृत्यों को नवविवाहिता अपनाले तो वर्तमान में होने वाली नव वधुओं की हत्याएँ रुक सकती है साथ ही एक सामाजिक समरसता वाले समाज का निर्माण हो सकता है और यदि उसने समझदारी नहीं दिखाती तो वह घर परिवार बर्बाद भी हो जाता है। यथा-

न्यारो कराके चली गई रे, मायके में रिसा गई, हाय-हाय रे-2

1. *पिसी बिका गई, चना बिका गई-2*
   मेला में बेल बिका गई रे।। माइके में रिसा गई.. ।।
2. *दूर दूर सब नाज धरे ते - 2*
   जुण्डी में जवा मिला गई रे, मायके में रिसा गई.. ।।
3. *पाँवन में टोडर कमर करधनियाँ-2*
   मांथे में बूंदा दबा गई रे, मायके में रिसा गई.. ।।
4. *कर कर लड़ाई न्यारो करा गई-2*
   रन बन को डेरा करा गई रे, मायके में रिसा गई.. ।।
5. *सब बाखर में दोरे फुरा गई-2*
   बनी मड़ईया मिटा गई रे, मायके में रिसा गई.. ।।

इक्कीसवीं सदी की संतानें पाश्चात्य संस्कृति एवं एक दूसरे की देखा-देखी में स्वयं व अपने परिवार को अनेकानेक समस्याओं से जूझने के लिए मजबूर कर रही है साथ ही हमारे समाज के कुछ अनपढ़ या कम पढ़ लिखे लोग भी अपनी झूठी शान के लिये अपने लड़का-लड़की की शादी में अनावश्यक खर्चा कर देते है एक बुन्देली युवक खुद अपने ब्याव की व्यथा बयान करता है। यथा-

स्थाई- *ऐसो ब्याव न करियो भइया जैसो भओ हमारो।*
ओई दिना से जो तन मोरो हो गओ सूक छुहारो।।

1. *पुरा परोशी आवे जावे, दद्दा खाँ उल्टी समझावें।*
   बाई से हलुवा पूरी खावें।

टेक- *रोज रोज नई होने अवसर खिसया के कर डारो।। ऐसो।।*

2. *अब आगे की सुनलो थोड़ी, बेंच दई बैलन की जोड़ी,*
   बाँध लई है दल दल घोड़ी।

टेक- *जितनो खर्चा करहो उतनई हूहे नाम तुम्हारो ।। ऐसो।।*

3. *गाँव के कक्का जू आ ब्राजे, कर लइयो अंग्रेजी बाजे,*
   अच्छे की जब बारात है लाजे।

टेक- *नचवे को कर लइयो नचइया, देखत को हो प्यारो ।। ऐसो।।*

4. *घड़ी आई जब ऐसी नौनी, बाई की बिक गई कर धोनी,*
   ओई रकम में गई अगवानी।

टेक- *मोरकार में बखरी बिक गई, तऊ न गओ समारो।। ऐसो ।।*

5. *घरी जबई टीका की आई समदी समदी भई लराई, तबई*
   तिवारी ने समझाई।

टेक- *जितनी चादर होय पास में, उतनई पाँव पसारो।। ऐसो ।।*

ऐसी ही बुन्देली लोकगीतों का अथाह सागर बुन्देलखण्ड जनपद में भरा पड़ा है, जो हमें प्रतिपल सचेत करता है। चाहे वह सामाजिक, सांस्कृतिक, नैतिक, राष्ट्रीय, धार्मिक इतना ही नहीं वैवाहिक जीवन में आने वाली प्रत्येक कठिनाई का समाधान इनमें सुझाया गया है। आज कमी है तो यह कि हम जीवन से जुड़े प्रत्येक पहलू पर आधारित गीतों, कहानियों, कहावतों आदि को सुनने या उनका अनुसरण करने से भागते हैं।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि यदि हमें मानव पीढ़ी को अपने मानवीय गुणों, संस्कारो आदि को कायम रखना सिखाना चाहते हैं तो हमें अपनी संस्कृति से जुड़े बुन्देली लोकगीतों का अनुसरण करना पड़ेगा। बुन्देली लोकगीत एक ऐसी विधा है जिस पर अनेकानेक प्रबंध काव्य लिखे जा सकते है साथ ही इन मानव को मानव बनाये रखने की क्षमता वाली विधा है।

-बजरंग नगर, छतरपुर
मोबा. 9755155016

*****

सैर साहित्य में भरथरी चरित्र

-डॉ. श्रीमती गायत्री बाजपेयी

भारत धर्म, दर्शन एवं अध्यात्म की भूमि है। यहाँ इस विद्या के प्रसारक व प्रचारक आचार्यों, साधु-संतों एवं योगियों की एक सुदीर्घ परम्परा प्राप्त होती है। इसी परम्परा की एक सुदृढ़ कड़ी के रूप में आचार्य भर्तृहरि का नाम सम्मान के साथ लिया जाता है। गृहस्थ जीवन से योगी जीवन तक की यात्रा करने वाले उज्जयिनी नरेश भर्तृहरि ने अपने अनुभव जन ज्ञान को अपने 'नीतिशतक' 'श्रृंगार शतक' एवं 'वैराग्य शतक' में सुव्यवस्थित ढंग से पिरोया है, उनके द्वारा रचित ये ग्रंथ विश्व साहित्य में अनुपम उपदेशक ग्रंथ के रूप में परिगणित किये जाते हैं। व्याकरण शास्त्र के अप्रतिम ज्ञाता योगीन्द्र भर्तृहरि ने अपने इन शतकों के श्लोकों में प्रसाद गुण सम्पन्न प्रवाह भाव का प्रयोग करते मनुष्य जीवन के लिए अत्यंत उपयोगी ज्ञान को सूक्ति रूप में प्रस्तुत किया है। जहाँ कवि की सूक्ष्म दृष्टि, ज्ञान की गहनता एवं जीवन के विविध पक्षीय गहरे अनुभव की स्पष्ट छाप दृष्टिगत है।

हिन्दी साहित्येतिहास के आदिकाल में नाथ कवियों के रूप में भर्तृहरि एवं उनके गुरु गोरखनाथ का उल्लेख मिलता है। लोक साहित्य में राजा भर्तृहरि की अत्यंत चर्चा हुई है। लोक कवियों ने उनकी जीवन कथा को लोकगीत लोककथाओं एवं लोकगाथाओं के रूप में प्रस्तुत किया है। इनके संबंध में अनेक किवदन्तियाँ प्रचलित हैं। एक किंवदन्ती के अनुसार ''राजा भर्तृहरि की महारानी पिंगला अत्यंत रूपवती थी। भर्तृहरि जैसे रूपवान, शक्तिशाली एवं यशस्वी पति को प्राप्त कर वह अत्यंत प्रसन्न थी, किन्तु राजा भर्तृहरि राज्य कार्य में इतने तन्मय रहते थे कि कभी गृहस्थ जीवन की आवश्यकताओं को पूरा नहीं कर पाये। वे महारानी पिगंला से प्रेम तो अत्याधिक करते थे लेकिन उनके लिए समुचित समय नहीं निकाल पाते थे। फलतः महारानी पिंगला एक सैनिक के प्रति आकृष्ट हो गई। और उससे प्रेम करने लगीं। एक बार राजा भर्तृहरि को किसी साधु ने उपहार स्वरूप एक अमृतफल प्रदान किया जिसे राजा भर्तृहरि ने महारानी पिंगला को दे दिया। महारानी पिंगला ने वह फल सैनिक को दे दिया। सैनिक रानी के साथ-साथ एक वैश्या पर भी अनुरक्त था। अतः उसने वह फल वैश्या को दे दिया। वैश्या सैनिक से ज्यादा एक नगर श्रेष्ठि से प्रेम करती थी अतः वह फल उसने नगर श्रेष्ठि को दे दिया। नगर श्रेष्ठि राजा भर्तृहरि से प्रति समर्पित था अतः उसने वह अमृत फल उपहार स्वरूप राजा को दे दिया। महारानी पिंगला को दिया हुआ अमृत फल जब पुनः राजा भर्तृहरि के पास लौट आया तो इस बात को लेकर वे चिन्तित हो उठे। उनके आदेशानुसार समस्त घटनाक्रम का पता लगाया गया। वास्तविकता का ज्ञान होने पर राजा भर्तृहरि अत्यंत दुःखी हुये। अपनी प्रिय रानी द्वारा किये गये विश्वासघात से उनका हृदय अत्याधिक आहत हुआ। उनका मन ग्रहस्थ जीवन से विरक्त हो गया। तत्क्षण राजपाट एवं घर परिवार छोड़कर वे गोपीचन्द्र के साथ चल दिये। संसार से विरत उनका मन ईश्वर भक्ति की ओर उन्मुख हो गया।''

लोककथाओं एवं लोकगीतों में योगी गोपीचन्द्र और राजा भरथरी की चर्चा मिलती है। लोककथाओं में भर्तृहरि उज्जयिनी नरेश विक्रमादित्य के बड़े भाई थे। और अपनी प्रियरानी की दुश्चरित्रता का ज्ञान होने पर उन्हें वैराग्य हो गया था। ममनावती इनकी बहिन थी जिसने अपने पुत्र गोपीचन्द्र को जालन्धरनाथ का शिष्य बन जाने का उपदेश दिया था। इस प्रकार गोपीचन्द्र राजा भरथरी के भान्जे थे।

इन किंवदन्तियों के साथ-साथ अन्य किंदन्तियाँ भी भरथरी के संबंध में प्रचलित हैं। जिनको आधार बनाकर भी भरथरी विषयक साहित्य जनपदीय भाषाओं में उपलब्ध होता है। बुन्देली वृहतत्रयी के आधार स्तम्भ पं. गंगाधर व्यास ने उपर्युक्त किंवदन्तियों से अनन्तर एक अन्य किंवदन्ती को आधार बनाकर लोकरागिनी सैर में भरथरी चरित्र को लेखनी बद्ध किया है। लोकरागिनी सैर फड़ साहित्य की अभिव्यंजन शैलियों में महत्वपूर्ण स्थान रखती है। बुन्देलखण्ड में इस साहित्यिक विधा का अपना एक विशिष्ट महत्व है। कवि गंगाधर व्यास ने प्रचुर मात्रा में सैरें लिखी हैं। इस हेतु उन्होंने अठारह पुराणों तथा अन्य शास्त्रों से सामग्री एकत्रित की है। श्रीराम एवं श्रीकृष्ण लीला विषयक अनेक सैरें उन्होंने लिखी है। इसके साथ ही उन्होंने लोकाख्यानों के नायक लाला हरदौल एवं राजा भरथरी के चरित्र को भी सैरों में प्रस्तुत किया है। जिससे रस के समस्त अंग उपांगी की सुन्दर योजना हुई है। 'भरथरी चरित्र' में ब्यास जी ने जिस कथा का आधार बनाया है उसमें उन्होंने नाथपंथ के सुप्रसिद्ध गुरु गोरखनाथ और राजा भरथरी के मिलन प्रसंग को थोड़ा परिवर्तन के साथ अपनाया है। उज्जैन के राजा गन्धर्व सेन के तीन पुत्रों में भरथरी सबसे छोटे थे। इनके तीन विवाह हुये थे। पहली रानी का नाम चम्पा दे, दूसरी रानी पिंगला तथा तीसरी रानी का नाम श्याम दे था। राजा दूसरी रानी पिंगला को अत्यधिक प्रेम करते थे। एक बार उन्होंने पारधी की पत्नी को सती होते देखा जिससे वे अत्यधिक प्रभावित हुये तथा उन्होंने अपनी प्रिय रानी के सतीत्व की परीक्षा लेने का मन ही मन विचार बना लिया। इस हेतु उन्होंने रानी को पारधी की सती स्त्री की घटना सुनाई। और थोड़े दिनों बाद अपनी मृत्यु का झूठा समाचार रानी के पास भिजवा दिया। रानी ने जैसे ही राजा की मृत्यु का समाचार सुना वह अत्याधिक व्याकुल हो उठी और राजा के वियोग में तड़प कर मृत्यु को प्राप्त हो गई जब राजा को रानी के प्राण त्याग की सूचना मिली तो वह अत्यंत अधीर हो उठे। दुःख की अतिशयता ने उनके मन में वैराग्य भाव जागृत कर दिया। राजपाट के प्रति वे उदासीन हो गये। इसके साथ ही कवि ने अनेक प्रसंगो जैसे राजा द्वारा मृग का शिकार, हरिणियों द्वारा राजा को शाप देना, गोरखनाथ द्वारा हरिण को जीवित करना, राजा भरथरी का उनसे प्रभावित हो शिष्यत्व ग्रहण करना, आदि अनेक प्रसंगो को सरस शब्दावली में प्रस्तुत किया है।

कवि गंगाधर व्यास जी ने कृति के प्रारंभ में मंगलाचरण में भारतीय परम्परानुरूप विघ्न विमोचन, मंगलकरन गिरिजानंदन श्री गणेश जी एवं वाणी की अधिष्ठात्री देवी सरस्वती की स्तुति की है। तत्पश्चात कथानायक भरथरी के जन्मोत्सव, ग्रह विचार, भविष्यवाणी व उनके तीन विवाहों का उल्लेख किया है। कथा के मौलिक प्रसंग पारधी की मृत्यु पर उसकी स्त्री के सती होने की घटना

एवं राजा पर उसके प्रभाव, राजा द्वारा इस घटना का वर्णन रानी से करना, रानी की प्रतिक्रिया तथा राजा का मन ही मन रानी के पतिब्रत धर्म की परीक्षा लेने का निर्णय लेना आदि विषयों का वर्णन बुन्देली सैर में इसप्रकार किया है–

दोहा– *यह चरित्र नृप देखिके, रहे अचम्भौ मान।*
सैन आपनी टेरिके, घर को कियो पयान।।

सौरठा– *घर को किया चलान, फिर शिकार खेली नहीं।*
पिंगला के अस्थान, आये राजा भरथरी।।

सैर– *राजा ने सब हकीकत रानी से कही है।*
जिस तरह पारधी की नारी सती भई है।
रानी तौ कही जोलो वा जियत रही है।
बोटी उतार तन की पतिव्रत न सही है।
जा सही बात ताको नित पतिसों हेत है।
सो स्वामि धर्म साँचों चित लगा लेत है।
सुरधाम सुनत पति को न रहत चेत है।
कर हाय एक क्षण में प्राण त्याग देत है।।
तन त्याग देत वोही पतिव्रत बखानिये।
या में असत्य नाहीं नृप सत्य मानिये।
राजा तो कहै साँची हम कैसे जानिये।
जे वचन कहे तुमसों सो हिये आनिये।
सो आनिये हिये में फेरि कीन्ही तयारी।
खेलन गये शिकार संग लई सवारी।
रानी ने वचन कहे हते आगे भारी।
सो लैन को परिक्षा राजा ने विचारी।।
राजा विचार मन में तब करत भये हैं।
कपड़ा उतार कासिद के हाथ दये हैं।
ले जाव पास रानी के वचन कहे हैं।
जा कहियौ कै वन में नृप मारे गये हैं।।

प्रसाद गुण सम्पन्न इस सैर में तत्सम, तदभव, देशज एवं विदेशज शब्दावली की सुष्ठु योजना हुई है। सुरधाम सुनत में अनुप्रास अलंकार प्रयुक्त हुआ है। हकीकत कासिद, कपड़ा आदि विदेशी शब्दों का प्रयोग दर्शनीय है।

कवि ने आगे के घटनाक्रम का वर्णन सैर में अत्यंत मार्मिक रूप में किया है। राजा की आज्ञानुसार कासिद महाराजा भरथरी के वस्त्र लेकर महल पहुँचता है तथा राजा की मनसानुरूप रानी के समक्ष राजा की मृत्यु की खबर सुनाता है। जिसकी प्रतिक्रिया स्वरूप विरह विकल रानी अपने प्राणत्याग देती है। राजा को जब रानी की मृत्यु की सूचना मिलती है तब वे अत्यंत दु:खी होते हैं तथा अपने किये पर ग्लानि से पराभूत हो पश्चाताप करते हैं। सैरकार संपूर्ण घटनाचक्र का वर्णन इन शब्दों में किया है–

दोहा– *हुकुम पाय कासिद चलो, गयो पिंगला पास।*
कपड़ा रानी को दये, मन में भयो उदास।

सोरठा– *रानी बोली बैन, कहु कासिद राजा कहाँ।*
कासिद भरदये नैन, कहे वचन कर जोरि कैं।।

सैर– *कर जोरि तबै कासिद मुख बोलो बानी।*
वन बीच मुक्ति राजा की भई बखानी।
थे वचन सुनत रानी तन मन से ससानी।
कर हाय एक छिन में प्राण त्यागे रानी।।
रानी ने प्राण त्यागे वचन अपने निभाये।
पूरी ती पतिव्रत में, यश कवियन गाये।
राजा शिकार खेल फेरिहलन आये।
बंगला विचित्र पिंगला के सूने पाये।
सूनौ निहार बंगला ना तन सम्हारते।
हौ रहे विकल नैनन सों नीढारते।
हम सहज सब वन में खेलत शिकार ते।
कित गई हाय पिंगला राजा पुकारते।।
पिंगला के काज राज सोच मन में करते।
समझाय रहे मंत्री ना धीरज धरते।
मन में करै विलाप हाय साँसें भरते।
पिंगला समान रानी दूजी न नजरते।।
दूजी नहीं नजरते भूपत वचन कहौ।
समझाय रहे मंत्री धीरज हिये लहौ।
हम कहत बात तुमसे सो चित में गहौ।
रानी अनेक हूहैं नृप तुम खुशी रहौ।।

करुण रस का पूर्ण परिपाक इस सैर में हुआ है। करुण रस अपने समस्त अंगों–उपांगों के साथ चित्रित हुआ। भाषा भावानुकूल सरस एवं प्रसाद गुण सम्पन्न है। कासिद, हुकम, नजर, खुशी आदि अरबी फारसी के एवं बंगला आदि अंग्रेजी के शब्द प्रयुक्त हुए हैं।

होनहार की प्रबलता रोके नहीं रुकती है मनुष्य तो क्या देवगण भी भवितव्यता के समक्ष विवश हो जाते हैं। राजा भी इस सत्य को स्वीकार कर राजकाज में मन लगाने का प्रयत्न करते हैं, लेकिन रानी का बिछोह उनके मन को व्यथित कर देता है। दु:खी राजा भरथरी मन बहलाव हेतु शिकार करने जाते है जहाँ वे मृग का शिकार करते हैं। मृग के साथ वन में विचरण करने वाली सत्तर हिरिणियाँ राजा को शाप देती हैं। इस प्रसंग का वर्णन सैरकार ने इस प्रकार किया है–

दोहा – *मृगी कहैं सुनिए नृपति, तुम्हें हमारी सौंह।*
काला मृग मत मारियों, सत्तर सूनी होंह।।

सोरठा– *मृगी हनौ दो चार, नृप अरजी मेरी सुनौ।*
लेकर जाहु शिकार, जो तुमको इच्छा भई।।

सैर– *जो भई तुम्हें इच्छा सो बेग कीजिए।*
खेलो शिकार हम पै मृग बचा दीजिए।
जे कहे वचन तुम से चित लगा लीजिए।।
चित लगा तबै राजा मन हुआ गरम है।
स्त्री के वधे क्षत्री को बड़ी शरम है।
मारेंगे शूरवीर को आनंद परम है।
स्त्री से नहीं बोलत क्षत्री का धरम है।।
क्षत्री का धरम बीन बजा उस दिन खासी।
एक छिन में मृगा मोह लिया वनका वासी।
नच रहा मृगा वन में अति भई हुलासी।
तानी कमान राजा ने मारी गासी।।
गासी के लगत मृगा धरनी में परा है।
उड़ गया हंस छिन में हाय दम का भरा है।
दीन्ही सराप हिरनिन बहु रोष भरा है।
महलन में रहै किलपत नृप तेरी नारी।

हिरिणियों द्वारा दिये गये शाप को सुन राजा का मन विचलित हो उठता है पूर्व से ही रानी-वियोग में व्यथित राजा के हृदय पर इस घटना का ऐसा आंघात होता है कि वे अत्यंत दुखित हो जाते हैं करुणा का सागर उनके हृदय में हिलोरे लेने का लगता है। मृग के शिकार से विरह व्यथित हिरणी राजा से वचन लेती है कि मृग के नेत्र किसी स्त्री को दिये जायें ताकि वह मृग नयनी कही जाये। मृग घास योगी को दी जावें ताकि वह उस पर आसन लगाकर श्रीराम का ध्यान व जाप करें। हिरण के खुर किसी गाय को दिये जाये जिससे वह बस्ती में विचरण कर सके। मृगी के इन वचनों के परिपालनार्थ राजा भरथरी तत्पर हो उठते है। कासिद को आदेश दे सेना सहित नगर की ओर तत्पर हो उठते है। लेकिन तभी देवयोग से गुरू गोरखनाथ जी का आगमन करते हैं लेकिन तभी देवयोग से गुरु गोरखनाथ जी का आगमन हो जाता है। राजा उनके चरण वंदन करने हेतु उद्धृत होते हैं तभी गोरखनाथ ने अपने समक्ष विनयावत राजा से कहा-

दोहा- *गोरख ने लख से कही, तुम्हें लगो नृप दोष।*
चरण हमारे मत छुऔ, बोले वचन सरोष।।

सोरठा- *घट घट ब्रहम अनूप, नृप सब में व्यापक सदा।*
मृगा बधे को भूप, तुम्हें बहुत पातक लगो।।

सैर- *सो लगो तुम्हें पातक केहि भाँति छूट है।*
जी बधे सकल जग की मरजाद टूट है।
जो जान बूझ तुमने पिया कालकूट है।
भुगतौगे भोग बच्चा यामें न झूठ है।।
यामें न झूठ बानी यह चित लाइये।
चलिये सुचाल अपनो जो भलौ चाहिये।
राजा तौ कहैं जोगी आसन को जाइये।
पहुँचे हुए फकीर तौ इसमित बताइये।
इसमित बताव मिले होहु पूरे गुरु में।
नहिं तुम समान जोगी बहु मेरे पुर में।
गोरख ने ले विभूत ध्यान कीन्हा उर में।।
उर में तो ध्यान कीन्हों खुस हुआ हिया है।
निज नाम सुमर सतगुरु का याद किया है।
महाराज लाज राखो मैं शरन लिया है।
फेंकी विभूत सिर पर मृग जिला दिया है।
दीन्हा मृगा जिवाय नहीं देर लगी है।
तब दिल की सकल दुविधा राजा की भगी है।
पूरा फकीर ईश्वर में सुरत पगी है।
राजा के हिये आन ज्ञान जोत जगी है।।

जीव संरक्षण एवं अहिंसा परमोधर्मः सन्देश देने वाली यह सैर भाषा सौन्दर्य एवं काव्य शास्त्रीय दृष्टि से उत्कृष्ट है। घट-घट में पुनरूक्ति प्रकाश, कालकूट में अनुप्रास अलंकार का सुन्दर प्रयोग हुआ है। तत्सम शब्दों के साथ-साथ तद्भव एवं विदेशज का प्रयोग भाषा को प्रभावोत्पादकता प्रदान करने में सहायक हुआ है। भावामिव्यंजना की दृष्टि से सैर सशक्त है। गोरखनाथ के द्वारा मृगा को जीवित करने की चमत्कारिक घटना राजा भरथरी के हृदय में ज्ञान की ज्योति जगा देती है। मृग का अपने समूह में मिलना, हिरिणियों का आनंदित होना, गुरु गोरखनाथ को उनका बारम्बार आशीष देना, राजा का गुरु गोरखनाथ से शिष्यत्व ग्रहण करने का निवेदन करना, गुरु गोरखनाथ का राजा के समक्ष योग मार्ग की कठिनाइयों का बखान करना लेकिन राजा की प्रबल इच्छा को देखते हुये उनके अंतःकरण की शुचिता की परीक्षा लेने हेतु रानी पिंगला का जीवित कर प्रस्तुत करना, पिंगला का राजा को जन्म जन्मांतर के अपने संबंधों का रहस्य बताना तथा गुरु गोरखनाथ की सेवा का परामर्श देना आदि प्रसंगों का वर्णन सैरकार ने रोचक ढ़ंग से किया है। एक सैर दृष्टव्य है- जिसमें राजा भरथरी और गुरु गोरखनाथ का वार्तालाप वर्णित है-

दोहा- *पिंगला यह उपदेश कर, फिर हो गई अदृष्ट।*
मनसा वाचा करमना, कर गुरुपद में इष्ट।।

सोरठा- *राजा करत विचार, छोड़ आश सब जगत की।*
भजन धनी कौ सार, करिये चित्त लगाय के।।

सैर- *गोरख से कहै, राजा दोई हाथ जोर के।*
चेला बनाव हमको सब कपट छोड़ के।
देव पिला प्रेम प्याला अमृत सा घोर के।
हम करें जोग दुनिया से मोह टोर के।
दुनिया से मोह टोर ज्ञान गुदरी पैने।
अन्तस की बात साबित कही तुम से मैने।
गोरख तौ कहैं नृपत जाग तुमको लैने।
भिक्षा ले आव श्यामदे से माता कैने।।
तुम कहौ बेगि माता व्याही से जाय के।
बस्ती में अलख फैरौ आनन्द पाय के।
तब अमर मंत्र तुम का दैहे सुनाय के।
राजा ने हुकम मान लिया सीस नाय के।
शिर नवा लिया सतगुरु का वचन मान है।
सब सेन टेर खातिर का दिया पान है।
तुम तकौ राज काज कही जा जुबान है।
अब हमें राज करबे की खिंची आन है।
खिंच गई आन सबको फिर विदा दई है।
समझाय रहे नृप को मानत न कई है।
तुम जाव वेग इतै बड़ी देर भई है।
होकर उदास सबने फिर राह लई।।

आध्यात्मिक जगत में प्रविष्ट होने हेतु राजा भरथरी ने सांसारिक वैभव का तत्क्षण त्याग कर अंगों में भस्म रमा ली जोगी का बाना पहन लिया, कानों में मुद्रा तथा सत्य की सेलि धारण की, गुरु आज्ञा से रानी श्यामदे के पास भिक्षा लेने हेतु राजमहल के द्वार पर पहुँच गए, भिक्षा हेतु आवाज दी, रानी श्याम देने दासी को भिक्षा देने का आदेश दिया। आज्ञानुसार दासी भिक्षा ले महल के द्वार पहुँची जैसे ही राजा भिक्षा लेने हेतु आगे बढ़े दासी ने उन्हें पहचान लिया। अपने राजा को भिक्षुक के रूप में द्वार पर खड़ा देख दासी आश्चर्य चकित हो, राजा से प्रश्न करने लगी। दासी और राजा के मध्य हुये वार्तालाप का वर्णन सैर रचनाकार व्यास जी ने इन शब्दों में किया है-

दोहा- *नख से शिख लों देखि के, रही अचम्भौ खाय।*
चेरी के मन भ्रम भयो, भिक्षा दई न जाय।।

सोरठा- *चेरी लगी बतान, कहँ आसन है आप की।*
जन्म कौन अस्थान, किस गुरू को प्याला पिया।

सैर- *किस गुरु का पिया प्याला किस भूमि अवतरे।*
किस पै लगा विभूत बसन लाल रंग करे।
लओ जोग उमर बारी में भोग से डरे।
तुम हो अमीर कोऊ हमको नज़र परे।।

तुम नजर परे आप कहौ कहाँ जात है।
राजेश्वरी के लक्षण तुम में दिखात है।
तुम मत छिपाव हमको हम सत्य कात हैं।
चेरी के वचन सुन के राजा बतात है।।
जा टेक धरी रानी से कहौ जाय के।
वे भीख देयँ खासे हाथन से आपके।
ये वचन सुनै चेरी रही मन ससाय के।
तुम खड़े रहौ जौ लग मैं कहौ जाय के।।
गई तुरत धाय चेरी रावर में आई।
जोगी की सब हकीकत रानी को सुनाई।
देखो सरूप मैंने मन शंका खाई।
तसवीर कछु राजा की देत दिखाई।।

दासी जोगी के रूप में राजा के होने की सूचना रानी श्यामदे को देती है। यह सुनकर रानी क्रोधित हो उठती है। सैरकार के शब्दों में-

दोहा- बीस बिसै राजा हुएँ, मैं मन से लये चीन्ह।
उन कछु परचौ लेन को, भेष फकीरी कीन्ह।।

सोरठा- रानी उठी रिसाय, चेरी के सुनकर वचन।
कैसी आज बताय, जोगी से राजा कहै।।

सैर- जोगी से कहत राजा क्या तोरी मत है।
केहि काज जोग लैहें का परी विपत है।
ऐसी जो कहै फेर हुये तेरी गत है।
राजा समान जग में दूजौ को नृपत है।।
दूजो को नृपत हमरे पति के समान है।
तिनको तै कहत जोगी का पडी बान है।
जोगी से करो विनती जुग जोर पान है।
तुम लिवा लाव भीतर लेवे को दान है।।
लैबे को दान जोगी को भीतर ल्यावो।
सुन तुरत चली चेरी नहिं विलम लगावो।
चेरी ने जाय जोगी को शीश नवाबो।
महराज चलो भीतर रानी ने बुलावो।।
रानी ने तुम्हें टेरो मत हुकुम टारने।
कर कृपा महल भीतर को पद सिधारने।
रानी ने तुम्हें टेरो भिक्षा के कारने।
ये वचन कहे राजा से जबै नारि ने।।
ये वचन सुने जोगी बोला मुलाम है।
महल में गये जोगी का कौन काम है।
रानी से कहौ जाकर फिर होत शाम है।
दे जायँ धरम भिक्षा जिसमें आराम है।

रानी की आज्ञा प्राप्त कर दासी जोगी रूप महाराज भरथरी को महल के भीतर आने का आमंत्रण देती है, जिसे अस्वीकार करते हुए राजा कहते हैं एक योगी का महल में क्या काम है। रानी स्वयं भिक्षा आकर दे अन्यथा शाप स्वीकार करें-

दोहा- पहर दोक गत हो गए, जपत धनी को जाप।
रानी भिक्षा देयकिअब, नातर देय सराप।।

सैर- जोगी की कहत बातें तन मन ससात है।
वो भी खास हाथन से लैन कात है।
नातर शराप दे हैं जा सत्य बात है।
भिक्षा का थार सोंपो रानी के हात है।।
लै थार हाथ भिक्षा दैवे को डगरी।
सोरहु करें सिंगार रूप गुन में अगरी।
जेवर पड़े जड़ाऊ जड़े हीरा नगरी।
मुख शशि समान जोत रही पूरन नगरी।।
जग रही जोत जगर मगर बाहर आई।
थार उठाय जोगी को दई दिखाई।
राजा ने लखी रानी जब सजी सजाई।
जानै है हमें बेगि देहु भिक्षा माई।।
भिक्षा दे बेगि देर भई हमको भारी।
ये वचन सुनत रानी ने झरप उघारी।
नख शिख से सकल सूरत राजा की निहारी।
धरणी में गिरी झमा खाय हायर पुकारी।
धरणी में गिरी रानी सखियन ने उठाओ।
नैनन से गिरत नीर नही रुकत रुकायो।
धर धीर वचन बोली दुख मन में छायो।
केहि काज नाथ जोगी भये भेद बतायो।।
कह भेद कंथ जोग पंथ किनने दीनों।
पिंगला समान परचौ का हमरो तीनों।
तसवीर नहीं छिपती हम तुमको चीनों।
कफनी उतार पहिनौ सब वसन नवीनौ।।

करुण रस से आप्लावित इस सैर का काव्य पक्ष अत्यंत सबल है। उपमा, अनुप्रास एवं पुनरुक्ति प्रकाश अलंकार की सुष्ठ योजना हुइ है। भाषा भावानुकूल, सरल, सहज एवं प्रभावोत्पादक है।

रानी श्याम दे राजा भरथरी को समझाने का बहुत प्रयास करती हैं। एक राजा के दायित्व एवं गृहस्थ के कर्तव्य का बहुविध बखान करती हैं लेकिन दृढ़ प्रतिज्ञ राजा भरथरी पर उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता। वे महारानी से कहते हैं-

दोहा- राजा सुन बोले वचन, हमको भिक्षा देहु।
भीतर महलन के चलौ, मन माने सो लेहु।।

सोरठा- रानी के सुन बैन, राजा ने उत्तर दियो।
बैठी करियौ चैन, अब हम जोगी हो चुके।

सैर- हम जोगी भए प्याला सतगुरु का पिया है।
सुधरत है जनम जामें खुल जात हिया है।
लीन्हा है जोग पंथ भोग दूर किया है।
विंजन बनाय सुन्दर रूच भोजन करनै।
तुम करौ ऐश निशदिन सुख सेजन परने।
सुख सेज बिछा निशदिन आराम लीजियौ।
इक सुघर नार खिदमत में लगा लीजियौ।
ये वचन कहै तुम से सो मान लीजियौ।
दुश्मन से परै काम नहीं पीठ दीजियौ।।
दीजौ न पीठ लरियौ दुश्मन से समर कै।
ये सत्य वचन हमरे रहौ चित में धर कै।
देहो मात हमें भिक्षा निज हाथन भरकै।
हो जाय सफल जोग वेगि वन को टरकै।।
टरकौ न बेगि वन को कहु वचन समारी।

व्याही सौ कहत माता मत कौन तुमारी।
बिगरत है जनम पाप चढ़त सिर पर भारी।
महाराज सुनौ चित दै टुंक अरज हमारी।।

रानी अनेक प्रकार से राजा को अपने मोहपाश में बाँधने के उपक्रम करती हैं। पति के कर्तव्यों का बोध भी कराती है। राजा के बिना अपने जीवन की निरर्थकता का बखान भी करती है, किन्तु राजा के दृढ़ निश्चय को डिगा नहीं पाती। गुरु गोरखनाथ के वचन से बँधे राजा भरथरी रानी से शीघ्र भिक्षा देने का आग्रह करते हुये कहते हैं-

दोहा- हमको भिक्षा दीजिए, करके मन खामोस।
झेल बड़ो हमको भयो, हूहैं गुरु सरोस।।

सोरठा- रहे नृपत समझाय, रानी को बहु भाँति सों।
राज करौ सुखपाय, कहने तो सो कह दियो।

सैर- कह दिया वचन तुमसों गुरुज्ञान जगा है।
भगतन का भजन सार नहीं सार सगा है।
तुम धरौ हिये धीरज इसमें न लगा है।।
जो दिया जन्म जिसने सो पार लगा है।।
सो पार करै जग से है मानिक ऐसा।
झूठा है सब नाता और रुपया पैसा।
जेहि भाँति करे करनी फन पावै तैसा।
राजा ने वचन कहके पुन मन में वैसा।।
वैसा है बहुर मन में जो मंत्र दृढ़ाया।
पीछो न तजत अबलौ भगवत की माया।
कह कहके ज्ञान मारग बहु भाँति सिखाया।
कर जोर फेर रानी ने वचन सुनाया।
रानी ने कही जोग पंथ आप सँभारौ।
बगँला छवाय दैहों तहँ धूनी टारौ।
थिर होके नाथ भजन करौ ममता मारौ।
मैं करत रहौं सेवा अरु हुकम तुम्हारौ।।
जो करौ हुक्म आज्ञा सो सिर पर धरवी।
धूनी को टार भलीभाँति सेवा करवी।
येही से एक छिन में भव सागर से तरबी।
सूरत सदा तुम्हारी नैनन से नजरवी।।

रानी विधि नीति और रीति से समझाने के बाद राजा को रोकने हेतु अंतिम अस्त्र राजनैतिक का उपयोग करते हुये राजा से चौपर खेलने का प्रस्ताव रखती है तथा यह तय होता है कि यदि राजा की जीत होगी तो रानी उन्हें वन जाने की अनुमति देंगी यदि रानी की जीत होगी तो राजा को राजमहल में ही रहकर भगवत् भजन में रत होना होगा। रानी की आज्ञानुसार चौपर बिछाई जाती है। खेल प्रारंभ होता है जिसका वर्णन करते हुये सैरकार व्यास जी लिखते हैं-

दोहा- यदि प्रकार बाजू वदी, चौपर दई बिछाय।
होनहार होनी प्रबल, मिटै न कैहूँ जाय।।

सोरठा- धर गोटन की पाँत, सुन्दर चारहु तरफ से।
पाँसे अपने हात, रानी ने पहिले लिए।।

सैर- रानी ने लये पाँसे अरु रुचि सों पारे।
माँगे हते अठारा ये वचन उचारे।
आ गिरे पाँच सात जबै कर से डारे।
जे लिखे भाल अंक टरत नाहीं टारे।।
टारे टरत राजा जब पास झटके।
गोरख के हिये सुमरि पाँसे फटके।
तुरतहिं गिरे अठारा ना तनकु अटके।
रानी ने हाथ दोनों धरणी में पटके।।
धरणी में हाथ पटके हो गई विकल है।
रहि तलफ मनों मछरी ज्यों थोरे जल है।
हो रही मौन तनकउ न चलत अकल है।
चौपर में आज दई भयो कैसो छल है।।
छल भयो दई कीजे अब जतन किया रे।
विधना ने कछू मेरी देखी न दया रे।
लयें लेत जोग राजा बिन प्राण पिया रे।।
बिन प्राण देह जैसे कुछ काम की नहीं।
मणि बिना ज्यों फनी को आराम की नहीं।
जल बिना मीन जैसे बिसराम की नहीं।
पति बिना त्रिया कौनहु धनधाम की नहीं।

वचनबद्ध महारानी अत्यंत विकल हो नियति के समक्ष विवश हो राजा को भिक्षा देती हैं। राजा भरथरी भिक्षा प्राप्त कर गुरु गोरखनाथ के पास जाते हैं। जिसका वर्णन सैर में इस प्रकार हुआ है-

दोहा- कर विलाप बहु भाँति सों, तन मन भइ सब दीन।
कृष्णपक्ष कौ चन्द्र ज्यों, तेज ज्योति बिन हीन।।

सोरठा- जुगल जोरि के हाथ, रानी ने भिक्षादई।
खबर हमारी नाथ, मन आवै तौ लीजियो।

सैर- राजा ने लई भिक्षा गुरू पास सिधारे।
बस्ती के सकल जोग हाय हाय पुकारे।
रानी के लिए दु:ख भयो अपरम्पारे।
कोई कहै कहाँ तक लौ नहि पाव पारे।।
अब कर्म वचन अपनौ तज जान सही है।
तुम फटौ बेगि तुम सों लौ लाग रही है।।
लौ लाग रही तुम से कही ऐसी बानी।
रानी के वचन सुने देर नेक न आनी।
जग जीवन को सोच नहीं कीन्हों रानी।
राजा कौ नाम लेकर धरणी में समानी।।
रानी धरणी समानी यश कवियन गायो।
राजा ने जाय गोरख को शीश नवायो।
महाराज राज छोड़ शरण तुम्हरे आयो।
रानी से मात कहके नाथ भिक्षा ल्यायो।।
ल्यायो हौ भीख श्याम दे से मौत कही है।
अब अमर मंत्र बख्शौ जो पैल सही है।
भगवत ने लाज राखी टेक गुरु की रही है।
गोरख के लिए पूरी परतीत भई है।।

राजा को भिक्षा दे रानी धरती में समा गई। राजा भरथरी गुरुगोरखनाथ से मंत्र प्राप्त कर उनके आशीष से लोक में अमरत्व को प्राप्त हुये। कवि गंगाधर व्यास लिखते है-

दोहा- अमर मंत्र राजै दियो, गोरख ने सुखपाय।
जुग जुग जीवहु भरथरी, जोग अमर हो जाय।।

सोरठा- चरणन नायो शीश, तन पुलिकित हर्षित लियो।
धन धन गोरख ईश, कृपा करी जन जानिकै।।

सैर- जन जान कृपा करी हरी दुरमत मन की।
जिन दिया अमर मंत्र भगी दुविधा तन की।
हर सकल त्रास आस टेक राखी जन की।
चरनन को शीश माय लई रस्ता वन की।।

इस प्रकार करुणरस प्रधान इस कथा कथागीत की रचना कवि ने संवत् 1948 वि में की। इसमें 113 सैरें, 25 दोहे एवं 22 सोरठें हैं। जिसका संकेत कवि ने कृति के अंत में देते हुये लिखा है-

सैर- शत ऊपर दस तीन शैर सुगम बनाए।
दोहा विचित्र पच्चिस गिनती में गिनाए।
ग्यारा से दुगन जानो सोरठा सुहाए।
रुचि सों लिखे मनोहर के मन में भाए।
शशि ग्रहे विचार युगै वसु यह सवत् जानो।
सुर गुरु सु वार सुन्दर तिथि पूनो मानो।
मारग नक्षत्र मृगशिर तहँ लिखो प्रभानो।
भरथरी चरित्र पूरन ता दिना बखानौ।

इस सैर में कवि ने रचनाकाल एवं तिथि को कूट शब्दों में प्रकट किया है। शशि एक ग्रह नौ, युग चार एवं वसु आठ के आधार पर रचना का संवत् 1948 निकलता है। इस लोकप्रिय कृति का प्रकाशन व्यास जी के प्रिय शिष्य श्री रामदास दरजी ने करवाया था। जिसका दूसरा संस्करण भी 1952 में निकल चुका है।

-'श्रीकृपा निकेत' आदर्श नगर,
हायर सेकेण्ड्री स्कूल नं.1 के पीछे,
छतरपुर (म.प्र.)

*****

बुन्देलखण्ड के गौरव कृष्ण कविराज

-सुशील खरे ''वैभव''

पं. कृष्ण कवि, भान भट्ट जो महाराज के प्रधानमंत्री और बोधा रये उनई के बंशज हैं। कृष्ण कवि को पन्ना नरेश महाराजा यादवेन्द्र सिंह जू देव ने अपनो दरबारी राज कवि बना के ग्राम झरकुआ की बैठक दई ती और मझले महाराज राघवेन्द्र सिंह जू देव ने रजपुरा गांव दओ हतो। कृष्ण कवि ने अपनो परिचय अपनी पोथी 'बुन्देलखण्ड के कवि' में इसप्रकार दओ है-

सम्बत उनइस सो चौंसठ, त्यों माघ कृष्ण सुखदाई।
तेरह शुक्र नखत पूर्वा अरु, को लव करन सुहाई।।
योग नाम हत कुम्भ लगन सुठि, त्यों धन राश प्रमाना।
नामदास भगवान रास को, भरत दास मुदि माना।।
कवि मणि राम दूत जन सरनहि, गुरु अस नाम धरायो।
पन्ना नृपति कृष्ण कवि कहके, राज्य कवीन्द्र बनायो।।
खण्ड बुन्देली जन्म दयो बिधि, वंश सुकवि सुखकारी।
धरा प्रमाऊ सकल को गौरव, रक्षक अवध बिहारी।।
राधेश्याम पथरिया छाये, भक्त राज खुश ख्याली।
हों पायो इत ग्राम झरकुआ, ईश्वर कृपा निराली।।

पं. कृष्ण दास गुरु चरणानुरागी कवि रये अपने अयोध्या के गुरु परमानंद के लाने उनकी भावना इ पंक्तियन में मिलत है।

परमानंद पर भक्ति रस, लसत हृदय सिय कंथ।
श्री गुरु परमानंद ये, करन अभय युग पंथ।।

कृष्ण कवि को ''बुन्देलखण्ड के कवि'' नामक ग्रंथ की रचना उद्देश्य जानके महाराज यादवेन्द्र सिंह भौतई खुश भये और जा आज्ञा दे दई कि इ ग्रंथ खां कौनऊं भी स्थिति में पूरो करो जावे। जोन समय भारत के राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्र प्रसाद महाराज छत्रसाल की मूर्ति अनावरण कर वे के लाने पन्ना आये ऊ समय महाराजा साहब ने कृशण कवि खां राष्ट्रपति के सामने ठांडो कर दओ। राष्ट्रपति जू ने कवि के ई काम की बहुतई सराहना करी हती मगर वो ग्रंथ पूरो भी नइं हो पाओ तो के पन्ना ने अपनो नरेश खो दओ। महाराज यादवेन्द्र सिंह को देहावसान हो गओ।

कृष्ण कवि खां सदमा सो लगो ऊ समय उनने लिखो-
अब तो हमें कछु नईं करने, जीवन के दिन भरने।
दयो बियोग बिधाता जिनते, तिनकें सदा सुमरने।।
भवन बैठ गुरु कृपा रांम की, अनतन पग नईं धरने।
करें उपाय अनेकन कोई, लिखी न टारी टरने।
यादवेन्द्र की याद कृष्ण कवि जीवित नहीं बिसरने।।

''बुन्देलखण्ड के कवि नामक'' ग्रंथ छपवा के वे महाराज यादवेन्द्र सिंह जू देव खां भैंट कर वो चाहत ते ग्रंथ की पूर्णत: के बाद उनने लिखो।

आज धन्य मैं धन्य अति, यद्यपि सब बिधि हीन।
निज जन जान राम मोहि, सन्त समागम दीन।।
राम नाम कलिकाम तरु, राम भक्ति सुर धेनु।
सकल सुमंगल मूल जग, गुरु पद पंकज रेणु।।
खण्ड बुन्देली को चरित, पावन परम प्रवीण।
सब बिधि सेवा देश की, कृष्णा अर्पण कीन।।

बुन्देलखण्ड के कवि नामक ग्रंथ के प्रारंभ में उनने लिखो है-

यह इतिहास बुन्देलि को, लिख्यो बृहद बिस्तार।
खण्ड बुन्देली के सुकवि, बिलग होत यह बार।।
युत प्रमाण निज मति यथा, करिय सुबुध पुनि छान।
भूल चूक कवि कृष्ण की, छमिहें चतुर सुजान।।

हमाये पन्ना के महान दरबारी कवि जिनने बुन्देलखण्ड के कवियन खां ढूंड़ ढूंड़ के बहुतई मेहनत करके एक उम्दा ग्रंथ तैयार करो और गरीबी में रहके अपनी घरबारी के गहने जेबर लो बेच के साहित्य की सेवा करी और 107 अन्य ग्रन्थन के अलावा 24 हजार छन्दन को ''बुन्देल भास्कर'' नामक ग्रंथ हमें दओ। उनकी काव्य प्रतिभा पै अपनी उक्त काव्य पंक्तियाँ उन पै न्यौछावर करत हैं।

चम्पत को लाल छत्रसाल जू महान भये,
बुन्देलन यश कीर्ति की, पताका फहराई है।
मुगलन के छक्के छुड़ा भये हैं महान आप,
बीरता दयालुता की थांह कीने पाई है।
वंशज नरेश पन्ना यादवेन्द्र महाराज
दरबारी कृष्ण कवि काव्य मधुराई है।
पन्ना के कवि ''सुशील वैभव'' बखान करें
धन्य कवि कृष्ण गंग प्रेम की बहाई है।

-डॉ. बाला प्रसाद होम्यो क्लीनिक,
119 बेनी सागर, पन्ना (म.प्र.)

*****

बुन्देलखण्ड की मूर्तिकला के कुछ उदाहरण

-हरगोविन्द तिवारी 'कविहृदय'

हमारे यहाँ का इतिहास इस बात का साक्षी है कि प्राचीन काल से ही हमारे बुन्देलखण्ड का अत्यधिक महत्व रहा है। चूंकि पौराणिक ग्रन्थों में जहां एक ओर बुन्देलखण्ड के विभिन्न स्थानों का महत्व प्रदर्शित होता है, तो वहीं दूसरी ओर बुन्देलखण्ड के चित्रकूट नामक स्थान पर मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्रीराम का वनवास व्यतीत किया जाना भी प्रदर्शित होता है। इतना ही नहीं बल्कि हिरण्यकश्यप बुन्देलखण्ड के एरच नामक स्थान का राजा और वाणासुर बानपुर नामक स्थान का राजा था। इसके अलावा महाभारत कालीन राजा विराट की नगरी राठ, जहां पाण्डवों ने एक वर्ष का अज्ञातवास व्यतीत किया था। तथा भगवान श्री कृष्ण के समकालीन राजा शिशुपाल भी वर्तमान बुन्देलखण्ड के चन्देरी नामक स्थान के राजा थे। और उस काल में यह क्षेत्र चेदि प्रदेश के नाम से जाना जाता था इन्हीं शिशुपाल के वंशज ही चेदि, चन्देल और कलचुरी कहलाये। इस वंश के चन्देल राजाओं में जयशक्ति सबसे शक्तिशाली राजा हुआ। इतना ही नहीं बल्कि ऐतिहासिक तथ्यों के अनुसार बुन्देलखण्ड में कुछ काल तक दशार्ण, चेदि, जैजाकभुक्ति जुझारखण्ड तथा विंध्येलखण्ड इत्यादि नामों से जाना जाता रहा। और फिर संवत् 1304 में यह बुन्देलखण्ड क्षेत्र बुन्देलों के अधिपत्य में आने से पूरे विश्व में यह बुन्देलखण्ड के नाम से विख्यात हो गया, जिसमें बुन्देलखण्ड की मूर्तिकला ने भी ख्याति अर्जित की।

चूंकि पूरे विश्व में भारतवर्ष की मूर्तिकला का बहुत महत्व है जिसमें हमारे बुन्देलखण्ड की मूर्तिकला का स्थान सर्वोपरि है। इसीलिये पूरे विश्व में बुन्देलखण्ड के ऐतिहासिक एवं दर्शनीय स्थल आज भी सभी पर्यटकों के लिए आकर्षण के प्रमुख केन्द्र बने हुये हैं। क्योंकि सभी पर्यटकों के लिये बुन्देलखण्ड की मूर्तिकला अत्यंत प्रभावित करती है। इसका मुख्य कारण यह है कि बुन्देलखण्ड की मूर्तिकला का स्थान ललित कलाओं में अत्याधिक महत्वपूर्ण है। चूंकि वास्तुकला में बाह्य सामग्री का बाहुल्य रहता है व भावनाओं की अभिव्यक्ति कम रहती है। जबकि मूर्तिकला में स्थापत्य कला की अपेक्षा सामग्री कम लगती है और भावनाओं की व्यंजकता अधिक रहती है। इतना ही नहीं बल्कि मूर्तिकला मानव आत्मा की अभिव्यक्ति होती है एवं उसमें मानव के मनोभावों का सुन्दर स्पष्टीकरण होने के साथ-साथ उसमें सौन्दर्य का समावेश रहता है। इसलिये हमारे बुन्देलखण्ड की मूर्तिकला पर्यटकों को सदैव लुभाती रहती है। पर्यटकों को लुभाने वाली बुन्देलखण्ड की मूर्तिकला के कुछ प्राचीन उदाहरण इस प्रकार हैं।

पर्यटकों को लुभाने वाली बुन्देलखण्ड की मूर्तिकला की श्रृंखला में दृष्टिपात करने से हम सर्वप्रथम यह पाते हैं कि भेड़ाघाट के मंदिर में निर्मित मूर्तियां कुशाण कालीन प्रतीत होती हैं। यहां की मूर्तियां अनेक वेशों में हैं जिन्हें देखने से यही प्रतीत होता है कि इन मूर्तियों में वास्तव में मूर्तिकार ने अपनी छैनी का प्रयोग मानसिक भावनाओं को चित्रित करने के लिये ही किया है। चौंसठ योगिनियों में गणेश जी की मूर्ति स्त्री रूप में अंकित की गई है। तथा गौरीशंकर की मूर्ति जिसमें शिव और दुर्गा नन्दी पर बैठे हुये हैं, वह बहुत अद्भुत एवं अलौकिक है। इतना ही नहीं बल्कि मूर्ति के ऊपर दोनों तरफ खम्भों पर ब्रहमा और विष्णु की मूर्तियां हैं, जो त्रिमूर्ति की एकता की प्रतीक है।

इसी श्रृंखला में हम और आगे बढ़ते हैं जहां बुन्देली राजाओं के द्वारा झांसी में किलों, इमारतों, मन्दिरो, तथा मूर्तियों का निर्माण करवाया गया है। मूर्तिकारों ने यहां के मन्दिरों की मूर्तियों में कला का सच्चा स्वरूप अंकित किया है। इन मूर्तियों के निर्माण में मूर्तिकारों की मूर्तिकला का मुख्य उद्देश्य शारीरिक एवं प्राकृतिक सौन्दर्य को प्रदर्शित करना रहा है। तथा भक्ति भावना की प्रधानता भी इन मूर्तियों में स्पष्ट रूप से झलकती है। महाराज वीर सिंह जू देव के राज काल में किलों, मंदिरों और मंदिरों की मूर्तियों का निर्माण हुआ। इनके अवलोकन से उस काल की प्राचीन मूर्तिकला का आभास प्रतीत होता है। महाराज शिवहरि ने भी बुन्देलखण्ड के झांसी जनपद में नवग्रहों की नौं मड़ियां भिन्न-भिन्न चुने हुये नौ स्थानों पर निर्मित करवाई। तथा महाराज रघुनाथ राव एवं महारानी लक्ष्मीबाई के काल में भी कुछ मंदिरों का निर्माण हुआ। जिनकी मूर्तियां विशाल है और वे कला एवं सौन्दर्य की साक्षात प्रतिमा है। यहां पर स्थित मुरली मनोहर मंदिर की विशाल मूर्तिऐसी दुर्लभ काली मिट्टी की निर्मित है कि जो संसार में अन्यत्र कहीं दूसरी जगह उपलब्ध नहीं है। इसी के साथ सौन्दर्य को प्रदर्शित करते हुये भगवान श्रीकृष्ण की इस विशाल मूर्ति में मूर्तिकार ने सौम्यता एवं सजीवता को भी कूट-कूट कर भर दिया है।

इसी श्रृंखला में हम और आगे देखें तो झांसी में ही सैयद दरवाजे के बाहर स्थित प्राचीन मूर्तिकला के नमूने, गुसाईयों के मठ और मंदिरों में भी मिलते हैं। इनमें शिवजी की कलात्मक मूर्तियां विद्यमान हैं, तथा यहां की मूर्तियों में एक अलौकिक सौन्दर्य का आभास भी प्रतीत होता है। यहां ऐसा प्रतीत होता है मानों कि इन प्राचीन मूर्तियों के मूर्तिकार आध्यात्मिक भावना से ओत-प्रोत रहे हैं। इसीलिये मूर्तिकारों ने अपने आराध्य देवताओं की इन मूर्तियों में देवताओं की छवि के होने वाले सभी गुणों का समावेश किया है। तथा झांसी जनपद के ही माधौ बेड़िया के बाग में एक अत्यंत प्राचीन मंदिर है, जिसमें मूर्तिकार ने एक नये ढंग से मूर्तियों की कला का स्वरूप अंकित किया है। यह मंदिर नवग्रहों के मंदिर के नाम से जाना जाता है। इसमें मूर्तिकार ने अपनी छैनी की चमत्कार पूर्ण कला द्वारा मीन, मिथुन, कर्क, तुला, वृषभ, राहु, केतु इत्यादि नक्षत्रों की मूर्तियों का निर्माण किया है। यहां पर मूर्तिकार ने ज्योतिष शास्त्र के नवग्रहों की मूर्तियों का निर्माण करके ज्योतिष शास्त्र के वातावरण का निर्माण किया है। इन नक्षत्रों की मूर्तियों का निर्माण कर नवग्रहों के अनुरूप भावों के प्रकाशन में मूर्तिकार अधिकाधिक सफल हुआ है। इतना ही नहीं बल्कि यहाँ के करगवां तथा पावागिरि क्षेत्र में जैन धर्म के महावीर आदि तीर्थकरों की मूर्तियों से जैन धर्म के काल की प्राचीन काल का वास्तविक आभास मिलता है। झांसी-बरूवासागर के मध्य नौटघाट के बाद जैन धर्म की कुछ प्राचीन मूर्तियां प्रतिष्ठित हैं जो प्राचीन मूर्तिकला के सर्वोत्कृष्ट उदाहरण हैं।

इस तरह बुन्देलखण्ड की वसुन्धरा पर समय-समय पर मूर्तिकला का विकास होता रहा, और यहां प्राचीन काल से आधुनिक काल तक मूर्तिकला सदैव अंगड़ाईयां लेती रही तथा एक नया मोड़ लेकर पूरे विश्व का मार्गदर्शन करती रही है। बुन्देलखण्ड की मूर्तिकला के कुशल मूर्तिकारों की प्रमुख विशेषता यह रही है कि उन्होंने अपनी प्रबल एवं पैनी छैनियों के द्वारा एक ही चट्टान के टुकड़े में से, विभिन्न मूर्तियों व मूर्तियों के विभिन्न अंगों का निर्माण किया तथा मानसिक भावों का प्रदर्शन कर उनमें सजीवता भर दी। मूर्तिकला के कलाकारों ने बुन्देलखण्ड की वसुन्धरा पर जन्म लेकर बुन्देलखण्ड की कला के गौरव का प्रदर्शन किया। इतना ही नहीं बल्कि बुन्देलखण्ड में स्थित मंदिरों की शिल्पकला तथा मूर्तिकला अत्यन्त भावोत्पादक तथा बौद्धिक है, जो भारतवर्ष के अन्य क्षेत्रों में स्थित मंदिरों की कला की अपेक्षा अत्यधिक आकर्षक है। यहां के मंदिर तथा मूर्तियों में कला चातुर्य का समावेश तो है ही साथ ही साथ उनमें बुन्देलखण्ड के जन-जीवन और वैभव दर्शन रूपी उच्च गाथायें भी अंकित हैं, जिन्हें एक कुशल मूर्तिकार की पैनी छैनी के द्वारा अंकित किया गया है।

पर्यटकों को लुभाने वाली बुन्देलखण्ड की मूर्तिकला की श्रृंखला में और आगे बढ़कर देखा जाय तो हम पाते हैं कि बुन्देलखण्ड की मूर्तिकला के विकास में चन्देल एवं कलचुरी कालीन मूर्तियों का बहुत ही महत्वपूर्ण योगदान रहा है। शिशुपाल, चेदि प्रदेश यानि वर्तमान बुन्देलखण्ड के राजा थे, और इन्हीं शिशुपाल के वंशज चेदि, चन्देल और कलचुरी कहलाये। जिन्होंने अपने राजकाल में अनेक मूर्तियों सहित विभिन्न प्रकार के निर्माण कार्य करवाये जिससे चन्देल एवं कलचुरी काल में यहाँ मूर्तिकला का महत्वपूर्ण विकास हुआ। हमारे यहां झांसी जनपद में ही कलचुरी कालीन मूर्तियों में गांगेय देव, कर्ण देव के काल की मूर्तियाँ हैं, जिनमें पत्थरों में निर्मित सामूहिक चित्र अधिकांश मात्रा में मिलते हैं। यहीं झांसी में कोतवाली के समीप स्थित खेरमाई के मन्दिर के पास वाली मूर्तियां प्राचीन मूर्तिकला के सर्वोत्तम उदाहरण हैं। इन मूर्तियों में कार्तिकेय की मूर्ति, शिव की लीलायें प्रदर्शित करने वाली मूर्ति, गणेश जी की मूर्ति इत्यादि प्रमुख मूर्तियाँ हैं।

इतना ही नहीं बल्कि चांदपुर, दूधई व चन्देरी भी मूर्तिकला के प्रसिद्ध स्थान हैं। साथ ही ललितपुर जनपद का देवगढ़ भी मूर्तिकला और वास्तुकला का मनोरम, कमनीय तथा महत्वपूर्ण केन्द्र है। देवगढ़ कला तीर्थ की मूर्तिकला का विकास चन्देलों के काल में हुआ था। यहां का दशावतार मन्दिर शिल्पकारों की सर्वोत्कृष्ट देन है। इस मंदिर की मूर्तियों में नर-नारायण, गजेन्द्रमोक्ष, शेषशायी विष्णु, इत्यादि की मूर्तियों की मूर्तिकला शिल्पांकन की दृष्टि से सर्वोत्कृष्ट है। देवगढ़ में मुख्यतः दशावतार मंदिर, वाराह मदिर तथा जैन मंदिर इत्यादि को एक कुशल मूर्तिकार की पैनी छैनी के द्वारा अंकित किया गया है। एक कुशल मूर्तिकार अपनी पैनी छैनी के द्वारा पत्थरों को काट-छांट कर उसमें रंग, रूप, आकार इत्यादि प्रदर्शित करता है। उसकी छैनी में सभी गुण विद्यमान रहते हैं जिनके बलबूते पर वह मूर्ति में सजीवता को प्रदर्शित करता है। और ऐसे ही कुशल मूर्तिकारों के अनेक अथक प्रयासों का परिणाम है बुन्देलखण्ड की विश्व विश्यात दर्शनीय स्थली खजुराहो की मूर्तिकला।

खजुराहो, बुन्देलखण्ड की अनुपम वसुन्धरा पर छतरपुर जिले में छतरपुर से करीब 27 मील की दूरी पर स्थित है। यह विश्व विख्यात दर्शनीय स्थली प्राचीन काल में चन्देलों की राजधानी थी। बुन्देलखण्ड पर नवमीं शताब्दी से लेकर तेरहवीं शताब्दी तक चन्देलों का शासन रहा है। और इन्हीं चन्देलों के शासन काल में खजुराहो में अनेक मन्दिरों का निर्माण हुआ। तत्कालीन चन्देल शासक हर्ष देव के शासनकाल में चन्देलों की शक्ति का अत्याधिक वर्चस्व रहा। इसी दरम्यान राजा यशोवर्मन, धंग, विद्याधर इत्यादि चन्देल राजाओं ने खजुराहो में अनेक मन्दिरों का निर्माण करवाया।

यहाँ के कन्दरिया महादेव मंदिर में विभिन्न प्रकार की मूर्तियाँ अंकित हैं। जिनमें अप्सरा, मृदुला, मिठुना, सुरसुन्दरी, नागा, नागी इत्यादि प्रमुख हैं। इन मूर्तियों में स्त्रियों के व्यक्तित्व अंकित किये गये हैं, जिनमें प्रेम स्पष्ट रूप से झलकता दिखाई देता है। और उनके चेहरे की मुद्राओं से भाव-भंगिमा भी स्पष्ट रूप से प्रतीत होती है। यहां विद्यमान मूर्तियों में कुशल मूर्तिकारों की पैनी छैनियां, कला चातुर्य को प्रदर्शित करने में बेहद सफल हुई हैं। यहां पर एक मुग्धा युवती का कला पूर्ण चित्र भी है जिसके सिर के बाल लावण्य पूर्ण ढंग से बिखरे हुयेहैं। मंदिर की दीवार, खम्भे, छत तथा शिखर इस प्रकार कला पूर्ण ढंग से निर्मित किये गये हैं कि पत्थरों में कहीं भी जोड़ दिखाई नहीं देता है। मन्दिर के गर्भ गृह के चौकोर प्रकोष्ठ में भगवान श्री महादेव जी की संगमरमर की मूर्ति लिंग रूप में प्रतिष्ठित की गई है जो कला की साक्षात प्रतिमा है। इसी प्रकार यहां काम कला पूर्ण युवतियों की नग्न मूर्तियां भी कुशल मूर्तिकारों द्वारा बनाई गईं हैं तथा इन्हीं मूर्तियों के समीप ही तपस्वियों की मूर्तियाँ भी स्थापित की गई हैं। जो सभी को आश्चर्य चकित कर देने वाली साबित होती हैं इस मंदिर को राजा धंग ने संवत् 1161 में निर्मित करवाया था।

खजुराहो की वास्तुकला एवं मूर्तिकला का अत्यधिक विकास चंदेलों के शासन काल में ही हुआ। चन्देलों के शासन काल में ही यहां मूर्तिकला समस्त ललित कलाओं में उन्नति के साथ सर्वोच्च शिखर पर पहुंच गई, और धीरे-धीरे इसकी ख्याति दूर-दूर तक फैल गई।

इस प्रकार उपरोक्त तत्थ्यों का अवलोकन करने के उपरांत हम यह पाते हैं कि हमारे यहां आज भी बुन्देलखण्ड की मूर्तिकला के कुछ प्राचीन उदाहरण मौजूद हैं, जो सभी पर्यटकों को सदैव लुभाते रहते हैं।

संदर्भ-

1. बुन्देलखण्ड दर्शन - मोतीलाल त्रिपाठी ''अशान्त''
2. बुन्देलखण्ड का इतिहास - मोतीलाल त्रिपाठी ''अशान्त''

-इंदिरा प्रियदर्शिनी वार्ड, तिवारी मुहल्ला
शाहगढ़, जिला-सागर, (म.प्र.)- 470339
मोबा. 9993370274, 9981966788

******

देवताओं के सानिध्य में : एक यात्रा कोटरा के मंदिर की

-वीरेन्द्र बहादुर खरे

इतिहास मेरी जीविका भी रही और मेरे मन के रमण का नन्दन कानन भी रहा है। मैं इतिहास का पण्डित नहीं जिज्ञासू हूँ। मुझे खण्डहरो का वैभव भाता है। तराशा हुआ पत्थर का टुकड़ा मुझे हीरासा कीमती लगता है।

जब दिनांक 25/07/87 को श्री हरिविष्णु अवस्थी ने मेरे दरवाजे में दस्तक दी और मुझे पचेर के दुर्ग को देखने का आमंत्रण दिया, मैं ना न कर सका। मैंने एकदम हाँ कर दी। जीप साथ थी। हम जीप में सवार हो गये। जीप की अग्रिम पंक्ति में पहले थे जिले में पत्रिकारिता की टूटी परम्परा को फिर से जोड़ने एवं विकसित करने वाले ओरछा टाइम्स के संपादक श्री हरगोविन्द त्रिपाठी 'पुष्प' उनके बगल में बैठे थे, टीकम जिले के पहले इतिहास के डाक्टर श्री काशी प्रसाद त्रिपाठी। पीछे बैठे थे कुशल पर शौकिया फोटोग्राफर श्री जैन साहब उनकी बगल में कवि एवं नाटककार (अब स्वर्गीय) श्री वीरेन्द्र शर्मा और उनके बाद श्री विष्णु मिश्र और उनके बीच में मैं बैठ गया। मेरे बाद ओरछा और बुन्देलखण्ड के पुरातत्व इतिहास और साहित्य के विश्वकोश एवं अधिकारी विद्वान पंडित हरिविष्णु अवस्थी थे। जीप के चालक थे श्री रफीक।

जीप आनन फानन बल्देवगढ़ से चल देवरदा ग्राम पहुँच गई। देवरदा टीकमगढ़ छतरपुर मार्ग पर बल्देवगढ़ से 9-10 किलोमीटर है। गाँव में जाने से पहले सड़क की बाँई ओर एक ऊँची टौरिया पर समतल स्थान में एक शिवालय है, नीचे भी चार मंदिर बने हैं।

यह प्राचीन गाँव है। यहाँ विभिन्न धर्मो की प्रतिमाएँ मिलती रहती हैं। यहाँ मूर्तियों का जखीरा प्रतीत होता है। खेतों में खुदाई के समय अक्सर जमीन से मूर्तियाँ प्राप्त हो जाती है। हम लोग सीढ़ी से टौरिया पर आए। बगल में कुछ बरामदे बने हैं। सामने ही प्राचीर से घिरा मंदिर है।

मंदिर की प्राचीर के बाहर कुछ भग्न प्रतिमायें रखी हैं इनमें समाधिस्थ जैन तीर्थाकार की प्रतिमा है। प्राचीर के अंदर प्रवेश करते ही बीच में एक छोटासा चारों ओर से घिरा मंदिर है। उसके अंदर बीच में स्लेटी रंग का कुछ-कुछ नीला दो फीट ऊँचा शिवलिंग है। उसके नीचे का भाग हल्के भूरे रंग के पत्थर का है। ऐसा लगता है ये ऊपरी भाग में पोलिस की गई है। शिवलिंग के सामने वाले भाग में एक मुख उभारा गया है। मैंने मित्रों से शंका प्रकट की यह शिव मुख न होकर गौरी का है। हममें से कोई मूर्ति विशेषज्ञ न होने के कारण इसका समाधान नहीं किया जा सका। शिवलिंगों में एक मुख से पाँच मुख बनाने की परम्परा नाग वाकाटक युग से प्रारंभ हो गई थी। ऐसे शिवलिंग उसी युग के हैं। चंदेल और कल्चुरियों ने शायद ही ऐसे शिवलिंग बनायें हों। टीकमगढ़ जिले में कुण्डेश्वर मंदिर के आगन में, टीकमगढ़ के जानकीबाग मंदिर में तीन मुख के शिवलिंग हैं। वे आकार में बहुत छोटे हैं, छतरपुर जिले के घुवारा के तालाब के ऊपर चतुर्मुखी शिवलिंग हैं। स्वयं देवरदा के नीचे वाले मंदिर के बाहर चतुर्मुखी शिवलिंग रखे हैं। देवरदा का एक मुखी शिवलिंग इने सबसे बड़ा है और आकृति में भी बहत सुन्दर एवं सौम्य है। कभी-कभी पत्थरों में पंचमुखी शिवलिंग बनाते समय सामने तीन मुख सद्योजात अघोर एवं वामदेव ही बनाते हैं। वामदेव का मुख नारी जैसा होता है इसे उमा का रूप माना जाता है (कला के प्राण बुद्ध लेखक श्री जगदीश चन्द्र माथुर एवं कतिपय दुर्लभ एवं अद्वितीय मुखलिंग-डॉ. ए.एल. श्रीवास्तव मीरायन वर्ष 10 अंक 3 सितम्बर-नवम्बर 2016) देवरदा के शिवलिंग के निर्माता ने यह एक मुख बामदेव का ही अंकित किया है। मंदिर के पीछे के द्वार की देहरी में दीवाल से टिकी नृत्य करती हुई गणेश की मोहक प्रतिमा है। नृत्य करते हुये गणेश एक दो फुट से अधिक चौड़े हल्के भूरे रंग के शिलापट्ट पर उकेरे गये हैं। शिलापट्ट के किनारे फोटू के फ्रेम की तरह चारों ओर उभारे गये हैं। लम्बोदर के बड़े-बड़े कान हैं, मुख में मुस्कान है। वे कमर में हाथ रखे सूंड उठाये नृत्य कर रहे हैं। जैन साहब का केमरा क्लिक उठा। इस प्रतिमा को देख डॉ. त्रिपाठी तो स्वयं भाव विभोर हो उसी भाव भंगिमा से था ऽऽ थईया कहकर थिरकने लगे। इसी प्रांगण में हर-गौरी की युगल प्रतिमा एक फुट के शिलापट्ट पर उकेरी गई है। पत्थर लाल भूरे रंग का है। हर का चेहरा लम्बा एवं नाक लम्बी है उनकी चार भुजाएँ है। एक भुजा गौरी के पीठ पर है और एक उनके वक्ष पर। गौरी हर की गोदी में बैठी हैं। दीवाल से टिकी एक फुट लम्बी शिलापट्ट पर आठ खड़ी आकृतियाँ एक पंक्ति में उकेरी गई हैं। अंतिम आकृति के नीचे एक आकृति बैठी है। अवस्थी जी ने इन्हें मातृकायें कहा, पर इन मूर्तियों में किसी में नारी उभार नहीं यह आश्चर्य की बात है।

त्रिपाठी जी ने चलते चलते देवरदा के नामकरण का भी कारण बतलाया। उनके अनुसार इस एकमुखी शिवलिंग और नंदी के कारण ही गाँव का नाम वरदा के देव यानी देवरदा पड़ा।

देवरदा से हमारी टोली आगे मंजिल की ओर बढ़ी। आकाश में बादल घिर आए थे। पानी बरसने की संभावना बढ़ गई। हमारे पथ प्रदर्शक श्री त्रिपाठी जी यह तो जानते थे कि कोटरा, देरी और पचेर के पास है, पर वहाँ तक पहुँचने के सही मार्ग से वाकिफ नहीं थे। हम लोग कोटरा को खोजते हुये सीधे धसान नदी के किनारे पहुँच गये। अब और रास्ता नहीं था। नदी गर्मी में भी अपनी गरिमा बनाये थी। पानी गंभीरता और शालीनता से बह रहा था। नदी में पानी कम नहीं था। टीकमगढ़ जिले की सीमा समाप्त थी। राहत की सड़क थी। लोक निर्माण विभाग का दिशा सूचक पट्ट भी नहीं था। रास्ता बतलाने वाला भी कोई नहीं दिखाई पड़ रहा था। वर्षा का डर बढ़ रहा था कह नहीं सकते कब मूसलाधार पानी बरसने लगे और सूखे पेड़ बरसाती नाले हमारा रास्ता रोक दें। भाग्य से हमें दो प्राणी दिखाई पड़े जो झक यानी मछली मारने आये थे, हमने उनसे दूवदेई का मार्ग पूँछा और त्रिपाठी जी ने कोटरा की। उन्होंने हमें पीछे लौटने को कहा क्योंकि हम कोटरा का मार्ग पीछे छोड़ आये थे।

यह उचित समझा गया कि उन्हें जीप में साथ ले लिया जाये। उन्हें क्या एतराज था। वे भी कुशल पथ प्रदर्शक नहीं थे। एक मार्ग भूलने के बाद सही रास्ते पर आये।

अब हम चंदेरी के पास आ गये थे। त्रिपाठी जी को एक चंदेलकालीन मठ दिखलाई पड़ा। वे बोले अरे भाई इस मठ का तो ज्ञान ही नहीं था। सबसे पहले इसी को देखें। मठ एक खेत में है और एक ऊँचे चबूतरे पर बना हैं। इसमें मात्र गर्भगृह है एवं ऊपर सुन्डाकार शिखर है। इसमें परिक्रमा-पथ, अर्ध मण्डप एवं मण्डप

नहीं हैं। मंदिर पत्थरों को एक दूसरे के ऊपर रखकर बनाया गया है। यह चंदेलकालीन मंदिरों की तरह है। इस पर बड़े पत्थरों में नागदेवता बने हैं। मंदिर में मूर्ति नहीं है। तब तक हमें देख गाँव के दो चार बड़े बूढ़े आ गये, उनसे भी मंदिर के बारे में कोई जानकारी नहीं मिल सकी। हमने उनसे दूबदेई का पता पूछा, उन्होंने हमें पीछे लौटने को कहा। हम अब जहाँ से आये थे उसी मार्ग पर चले। जंगली मार्ग पर जीप लहराती चली जा रही थी। रफीक भाई उसे कुशल नट की तरह फिरकी सा नचाते घुमाते रास्ता बनाते आगे बढ़ रहे थे। दोनों ओर लगी बेशर्म की डालें जीप के शीशे से टकराती थीं। हिचकोले खाते हुये हम दूबदेई पहुँचे। जीप ठीक मंदिर के नीचे रूकी।

टीकमगढ़ जिले में विन्ध्यवासिनी देवी बल्देवगढ़, कालिका देवी देरी अछरू माता मड़िया एवं दूबदेई की विशेष मान्यता है। देवी एक ऊँचे पहाड़ी स्थल पर विराजमान हैं। यहाँ देवी की प्रतिमा नहीं है केवल एकचमकीले क्रिस्टलों की विशाला शिला है। इसे ही देवी का प्रतीक मानकर पूजा की जाती है। इस शिला में पत्थरों के छोटे छोटे चमकीले रवे हैं जो विभिन्न आकृतियाँ से बनाते प्रतीत होते हैं। इन रवें के चमकने से देवी विभिन्न रंगों की प्रतीत होती है। मंदिर के प्रांगण में एक स्थान में विभिन्न प्रकार की खण्डित मूर्तियाँ हैं जो ये बताती हैं कि वे भी कभी सुन्दर और मोहक रही होंगी। इनमें से एक छः इंच की तेलिया पत्थर की तराशी एक पुरूष मूर्ति है। इसके मस्तक पर नागफनी का मुकुट है। मूर्ति का चेहरा गोल हैं उसमें गोल आखों एवं अधरों को उकेरा गया है। मूर्ति शिल्प की दृष्टि से उच्चकोटि की नहीं है उसमें कोमलता एवं कमनीयता का अभाव है। यह दोनों हाथों को मोड़े है। मूर्ति या तो कुषाणकाल के पूर्व की है या फिर आदिवासी कला का उदाहरण है।

दूबदेई का वातावरण बड़ा शान्त एवं रम्य है। देवी से संबंधित विभिन्न अलौकिक कथायें प्रचलित हैं। थकान का आभास नहीं हो रहा था। हर एक के मन में एक ही बात उठ रही थी कि इस महत्वपूर्ण स्थल तक एक सहज सुगम मार्ग क्यों नहीं बनाया जा सका। धन्य है ग्रामवासियों की सहनशीलता को कि वे बड़े गर्व से इस वन पथ को भी ठीक रास्ता कह देते हैं।

खैर हम वहाँ से चंदेरी लौटे। हम जंगली गौ-पथ पर चलते झाड़ -झकड़ों से टकराते टीला पहुँचे। हम अवाक थे सामने अगल बगल में बने दो छोटे मंदिर देख कर। पहला मंदिर छोटा है, एक विशाल और ऊँचे चबूतरे पर पत्थरों से बना है। इस मंदिर में दो गर्भगृह है और उसके ऊपर एक शिखर है। शिखर भी ऊँचा नहीं है। शिखर में कोई नकाशी नहीं है फिर भी पूरा मंदिर सुडौल और सुकगार है। इस मंदिर में मण्डप एवं अर्ध मण्डप नहीं बने हैं। जगती पीठ के चारों ओर मंदिर बने हैं उनमें से दो टूट चुके हैं। इस मंदिर के बगल में कोई दस फुट की दूरी पर दूसरा मंदिर है, वह भी पत्थरो का बना है, पर इसमें बाद में चूने का प्लास्टर किया गया है। इसमें भी दो गर्भगृह है। दो गर्भगृह वाला यह मंदिर इस इलाके में अकेला मंदिर है। दोनों गर्भगृह का एक ही शिखर है, यह ऊपर की ओर त्रिभुजाकार पिरामिड की आकृति का है। इसके एक कक्ष में पाषाण का कलश रखा है कहते हैं इसमें लक्ष्मी की प्रतिमा थी पर अब नहीं हैं। दूसरे कक्ष ये विष्णु भगवान की बड़ी सुन्दर प्रतिमा है। प्रतिमा काले पत्थर के शिलाखण्ड में उकेरी गई है। प्रतिमा दो फुट से अधिक ऊँची है। चेहरे एवं आकृति से यह कल्चुरिकालीन लगती है, और निर्धारित लक्षणों के अनुसार बनाई गई है। मूर्ति चतुर्भुजी है इसके एक हाथ में गदा एक हाथ में शंख है। एक हथेली में चक्र दूसरी में पद्म के चिन्ह अंकित हैं। मूर्ति (स्थानिक मुद्रा में) खड़ी है। गले में जनेऊ भी पड़ा है। मूर्ति का मुकुट स्तूपाकार है।

पहला मंदिर तो अमरकटंक के कर्णन्तपति के मंदिर की भाँति है। विष्णु की प्रतिमा में तो कल्चुरिकालीन मूर्तियों की विशेषताएँ जैसे अण्डाकार मुखाकृति कुछ उभरी हुई नुकीली, ठुड्डी, नुकीली भौहें पाई जाती हैं।

हम प्रसन्न चित्त कोटरा की ओर बढ़े। लगभग बीस मिनिट में कोटरा पहुँच गये। गाँव में प्रवेश करते ही कुछ छात्रों से संपर्क हो गया। हम लोग पहले बस्ती में बनी देवी की मड़िया में गये। मड़िया छोटी थी। अन्दर देवी की प्रतिमा है, प्रतिमा प्रभावशाली है, मुखाकृति को भावभिव्यक्ति अनुपम है। मडिया के बाहर और अन्दर बहुत सी खंडित प्रतिमाएँ संग्रहित हैं। उन्हीं में से एक सुन्दर सजी -संवरी नारी प्रतिमा है जो चेहरे और वक्ष तक ही है। इसका मुख बड़ा भोला और सजीला है। मुखाकृति अण्डाकार एवं नुकीली है। बड़ी-बड़ी आँखे नीचे की ओर झुकी हैं। ऐसा लगता है जैसे अपने रूप पर वह स्वयं रीझ कर शरमा रही हो और लाज से दुहरी हुई जा रही हो। पास हो एक सुन्दर सिंहमुख रखा था। हम लोग तालाब के किनारे बने मठ को देखना चाहते थे पर हम लोग उस सुन्दरी की माया में उलझ गये थे। मैं मन मारकर तालाब की ओर बढ़ा तालाब के बाँध पर पहुँचते ही आँखे खुली की खुली रह गईं।

तालाब के बांध पर एक सुन्दर सुगढ़ खिलौनेसा सुडौल सामानुपातिक कटे पत्थरों का मंदिर खड़ा था। ऐसे सुन्दर भव्य विशाल मंदिर की हम कल्पना नहीं कर रहे थे। यह मंदिर जिले का चर्चित मंदिर नहीं है। कोटरा का मंदिर भव्यता, मनोहर पृष्ठभूमि एवं सुन्दर परिवेश की दृष्टि से बहुत श्रेष्ठ है। मंदिर तालाब के किनारे बाँध पर निर्मित है, सामने साफ-सुथरा मझोले आकार का सरोवर है। यह तीन ओर से बँधा है। बस्ती की ओर का बांध चौकोर एकसी नाप के तरासे बड़े-बड़े पत्थरों से बना है। सीढ़ियाँ भी पत्थर की हैं। इस कला में प्राचीन गहरवार, कल्चुरि एवं चन्देल शासकों के काल के कारीगर बड़े कुशल थे।

बाँध के ऊपर विस्तीर्ण मैदान में मंदिरों का लोक बसा है। तालाब के बाँध के ऊपर कमलदल की आकृति का अठपहलू जगतीपीठ (चबूतरा) है। भारतीय शिल्प साहित्य में कमल पृथ्वी का प्रतीक माना गया है, उसके आठ दल पृथ्वी की आठ दिशाएँ मानी गई हैं। मंदिर की सीमा बनाती हुई चारों ओर प्राचीर है। चारों ओर प्राचीर का ऊपरी भाग डेढ़ फिट के लगभग चौडा है। प्राचीर में तीन फुट की दूरी पर पत्थरो के खम्बे बने हैं, इससे लम्बे ताक बन गये, हो सकता है इनमें मूर्तियाँ लगाई गई हों। पूरा मंदिर पंचायतन शैली का है, इसके चारों ओर चार मंदिर बने थे। पर अब दो शेष हैं। तालाब की ओर दाई प्रकोष्ट में चार फुट ऊँची 2 फुट चौड़ी तेलिया चट्टान में हनुमान जी की खड़ी मूर्ति उकेरी गई है। मूर्ति में दरार आ गई है। वाईं ओर तालाब के किनारे पत्थरों से बना कक्ष है जो रानियों के वस्त्र बदलने के लिये बना होगा। मैदान के बीच में प्रधान मंदिर है। मंदिर आर्यशैली का है पर शिखर में द्रविड़ शैली का प्रभाव है। मंदिर की आकृति षटकोणीय है, इसमें सामान्यतया मंदिर में पाये जाने वाले सभी भाग हैं। उत्तर की ओर गर्भगृह है। गर्भगृह में शिवलिंग प्रतिष्ठित है, एक जरारु में मुख्य शिवलिंग के साथ पंच शिवलिंग स्थापित हैं। प्रवेश द्वार को चौखट पत्थरों की बनी है, इसमें सुन्दर नक्काशी है और देवी-देवताओं की

मूर्तियाँ बनी है। गर्भगृह की बाहरी दीवाल पर भी देवताओं की आकृतियाँ उकेरी गई हैं, इनमें मैथुन मूर्तियाँ नहीं हैं। बाहर पाषाण के लम्बे-लम्बे स्तंम्भ है। डाट और पार्श्व भाग प्रतीकों द्वारा अलंकृत हैं, इनमें ऊपरी भाग में आगे को निकले कुछ मुख तराशे गये हैं, ये मुख हनुमान जी के मुख से लगे थे । स्वर्गीय श्री वीरेन्द्र शर्मा ने इन्हें सिंह मुख बतलाया। गर्भगृह और मण्डप के बीच अर्द्ध मण्डप है जो पाषाण स्तम्भों से सुसजित हैं। इन दोहरे पत्थर के स्तम्भो द्वारा कक्ष बन गये। मण्डप में झरोखे एवं ग्वाक्ष भी हैं। मण्डप की छत अंदर से गोलाकार है। यह हमें आबू के जैन मंदिरों की कला का स्मरण कराते हैं। मंदिर के अन्दर के ऊपरी भाग में पच्चीकारी की गई है। मंदिर में गर्भगृह और मण्डप को जोड़ने वाला अन्तराल कक्ष नहीं है। मण्डप के सामने एक कक्ष है। इस मंदिर में मण्डप के आगे सामने और पीछे भी अर्धमण्डप बने हैं। इनके दोनों ओर बड़े-बड़े एक ही शिलाखण्ड के स्तम्भ खड़े हैं। पूरे मंदिर में सुंदर बेल बूटे से उत्क्रीण पाषाणखण्ड लगे हैं।

मंदिर का शिखर त्रिभुजाकार पहाड़ी आकृति का है। इसमें गर्भगृह एवं मण्डप को मिलाकर एक ही शिखर बनाया गया है। शिखर सुन्डाकार नहीं है, ना ही शिखरों के ऊपर छोटे-छोटे शिखर हैं। इस मंदिर का शिखर खजुराहों के कन्दरिया एवं चतुर्भुज मंदिर से भिन्न है।

हमने मंजिल की चरम सीमा पा ली थी। श्री जय कुमार जी जैन मंदिर को हर कोण से कैमरे में बंद कर रहे थे। हम बेहद प्रसन्न एवं अपनी यात्रा सफल मान रहे थे। गुदड़ी में लाल इसी को कहते हैं। आज भी यह यात्रा और मंदिर हमारी आँखों में झूलते हैं। देवताओं के सानिध्य की यात्रा मेरे जीवन की स्मरणीय यात्रा बन गई है।

-कटरा बाजार, टीकमगढ़ (म.प्र.)
मोबा. 9753442700

*****

चिट्टी मिली अपुन की

-बुन्देली बसंत

बुंदेली बसंत तौ न्यारौ बसंत है।
हम सब खों प्रानन सें प्यारौ बसंत है।।
बन्न बन्न के खिलत हैं, नए गीतन के फूल।
कवितन क्यारी किलकतीं मन भँवरा रए भूल।।
बुंदेलन की आँखन कौ तारौ बसंत है
मूरत शिल्प वास्तकला सब जामें दरसात
संस्कृती साहित्य कौ सूरज उगत दिखात
पूनौ की जुँदैया भुन्सारौ बसंत है।
चायें आँधी आउत रए चाएँ उठै तूफान
मुरझाबे बारौ नहीं जौ बसंत उद्यान
अबै नौं न एसौ निहारौ बसंत है।
सबई भांत की सम्पदा जामें धरी समेट
करत रहत परमार जू सब खों सादर भेंट
खिलत बारऊ मइना दुलारौ बसंत है।

-लेखक-डॉ. शिवाजी चौहान
पूर्व उपप्राचार्य-गुरसराय-झाँसी उ.प्र.
दूरवाणी - 9005320134

*****

दुलैया चली काटबे खेत

पेट घर भर कौ भरबे हेत, दुलैया चली काटबे खेत

-जगत मोहन ''हरि''

(1)

कि बाँधो कर्‌रौ एन कछोट, करी है कछू घुंघट की ओट
हुमक कें करै चोट पै चोट, काटबै फसल लगा वै कोट
कि हँसिया हातन में यों लगै, कि जैसे चंद कलइयां लेत
पेट घर भर कौ भरबे हेत दुलैया चली काटबे खेत

(2)

नथुनिया लेत होठ दुइ चूम, गाल पै ढुरकै लुरकी घूम
कि चुटिया ऐसें छूबै भूम, रही है जैसें नागिन झूम
गड़ा कें दाँत मंद यों हँसै, बिजुरिया चमकै जैसें सेत
पेट घर भर कौ भरबे हेतु दुलैया चली काटबे खेत

(3)

झौंर छतियन सें लग लग जाय, भाग पत्तन कौ जग-जग जाय
डरइया चोली सें सट जाय, बाजरा हँस-हँस के कट जाय
लांक खौं उठा अकौरीं भरै, बाँधबे लम्बी रस्सी लेत
पेट घर भर कौ भरबे हेत, दुलैया चली काटवे खेत

(4)

मूड पै बीसौरीं दो धरें, गुडीं कम्मर पै कैउ परें
हातभर घूंघट लम्बौ करें, लौट घर आयी झुलपट परें
कि हिरनी जैसी भरत उड़ान, छमाके परत पाँव धर देत
पेट घर भर कौ भरबे हेतु, दुलैया चली काटबे खेत

(5)

झूम कें आओ बाग बसंत, काम ने मारो पढ़कें मंत
सेज सूनी कछु कहत न बंत, अबै नौ आय न मोरे कंत
चुलक कें मैना सें बतयाय पिया कौ रोज उरानौ देत
पेट घर भर कौ भरबे हेत, दुलैया चली काटबे खेत

(6)

भोर सें अथर अथर सें रात, काम करबे खों मानत नाहिं
कि सेवा सास ससुर की करत, हारबौ थकबौ जानत नाहिं
जिनन घर ऐसी बहुरी होय, बढत नित सुख सम्पत्ति सोय
सुखी सब घर है तौ सुख होय, दुखी सब घर है तौ दुख होय
कि बहुरी दोउ कुलन की शान, बलइयां दोउ कुलन के लेत
पेट घर भर कौ भरबे हेत दुलैया चली काटवे खेत

-(अध्यापक) राजर्षि पुरुषोत्तम दास
टण्डन हा.से.स्कूल,
आशिक चौराहा, झाँसी
मोबा. 9956546032

*****

"किसा-आल्हा ऊदल कौ" उर्फ अथाई पै किसाबाजी

-अजीत श्रीवास्तव

ठंड की रात में बरिया के पेड़े के लिंगा अलाव पै भीर हती, कछु ताप रय ते। कछु बताया रयते। पै आज मौड़ा-मौड़ियन कौ जमावड़ौ ज्यादई हतो। काय सें के बे आज रतू उर्फ रतभान माते सें कौनऊ किस्सा सुनन चात ते। तबई माते पधारे, औ चौंतरा पै विराज गय। कल्लू ने कई ''दद्दा, आज हम सबखों किसा सुनने।'' माते हसकें कन लगे- ''हओ, कौन की सुननें?'' आठ दर्जा में पढ़ रई सुशीला नें कई - ''कौनऊँ वीर की सुनाव।'' रतू माते बोले- ''तो आज अपने बुन्देलखण्ड की धरती के आल्हा-ऊदल की किसा सुना दें।'' सो बल्ली बोल परो- ''दद्दा, बौ पैलें किसा के जौन पहाड़ो कत, बौ भी सुन्नें।'' दद्दा हंस परे'' बौ पहाड़ो नोंई। बौ तौ किसा कौ महौल बनावे आ कओ जात।'''' तौ शुरू बौई सें करो।'' सो रतू माते सुर में बोल परे-

'किसा सी झूठी न बातन सी मीठी। घरी-घरी कौ बिसराम। को जाने सीताराम। न कैबे वारे कौ दोष, न सुनबे वारे कौ दोष। दोष तौ ऊ कौ, जी नै किसा बनाई। काय सें कि ऊ नें रैन काटबे बना कें खड़ी करी। शकर कौ घोरा, शकरपारे कौ लगाम। छोड़ दो दरिया बीच। चलौ जाय-छमाछम-छमाछम। जो कोउ इन बातन खों झूठी मानै, तौ राजा कौ डाँढ़। औ जात खों रोटी दे। कत में किसा, पै सुनबे वारन की सावधानी चानै।''

मौड़ा मौड़ियन ने खुशी सें तालियाँ बजाई, फिर रतू माते ने किसा कैबो शुरू करो।

''ऐंसे- ऐसें बघेलखण्ड में एक राज हतो, मांडोगढ़। उतै के राजा जंबे हते। एक दार उन्नै महोबा पै चढ़ाई कर दई औ उतै के दो वीर दक्षराज और वत्सराज खों कैद कर लओ। महोबा राज सें बौ जंबे राजा (करिंगा) नें लूट करी और महोबा कौ प्रसिद्ध लड़ाका हाथी 'पंचशावढ़' लूट लऔ माल्हनदे कौ नौलखा हार, भौतई प्रसिद्ध हतो, सो बौ लूटो। औ ऊ राज की 'लाखा' नाम की नर्तकी खों लै गओ। ''मौड़ा मौड़ियन ने हूंका भरो ''हू''

फिर ऊ जंबे नें दक्षराज औ वत्सराज के सिर काट कें मार डारो औ उन दोई के सिर पेड़ पै लटका दये। दक्षराज तौ मर गये पै उनकी पत्नी 'देवल दे' गर्भ सें हतीं, सो दक्षराज के मरबे के छह मईना बाद मौड़ा कौ जनम भओ, बड़ौ लरका आला हतो, ऊ कौ नाव ऊदल रखो गओ। ऊदल के जनम सें ऊ की मां खुश नई भई, काय सें उनके पति दक्षराज मार डारे गये ते। सो उनकी बहन रानीं 'माल्हनदे' नैं ऊदल खों लै लओ औ पालन पोषण करौ, उनकौ भी एक लरका हतो 'ब्रह्मा'। सो वे दोई राजा परमाल के इतै पलन लगे। राजा परमाल के ई तरा सें पांच बालक हो गये, आल्हा-ऊदल, ब्रह्मा, मलखान और ढ़ेवा।''

तबई बल्लू नें पूँछो ''दद्दा, जे कैसे-कैसे नाम हैं इननके।'' रतू माते ने कई ''बेटा जा बात जा घटना खों आठ सौ नौ सौ साल हो गये तब ऐंसई नाम रखत हुइयें। आगे किसा सुनौ, वे पाँचई पढ़त रये, हथियार चलाबौ सीख कें वीर बन गये। एक दिना रानी 'माल्हनदे' ने पाँचई की परीक्षा लई, और कई कि जो शेर मार लाय, बौई वीर कहाये। वे पाँचऊ साँसऊँ में डाँग में शेर मारबे कड़ गये। संजा तक आल्हा, ब्रह्मा, ढ़ेवा और मलखान लौट आये पै ऊदल जब लौट कें आये सो बे शेर मार लाये ते। पूरे राज में हल्ला मच गओ, लोग शेर देखबे आये, ऊदल की शूर-वीरता की सबनें भौतई प्रशंसा करी। सो राजा नें अपनौ 'बेदुला' नामकौ सबसें अच्छो घोरा ऊदल खों इनाम में दओ। जा सबसें एक आदमी जर गऔ वौ हतो उसकौ मामा-ऊ कौ नाम हतो - माहिल।''

टिल्लू नें कई - ''दद्दा जौ कंस मामा जैसो हतो का?'' रतू नें कई - ''ठीक कई तुमनें, बौ बिल्कुल ऐसौई हतो। एक दिना मामा माहिल नें ऊदल सें अकेले में कई, 'तुम अगर वीर हौ, सो जाकें मांडोगढ़ में पेड़ पै टंगे अपने पिता औ चाचा के सिर उतार लाव तौ जानै।'' जा बात उनैं पतौ न हती, सो ऊदल नें अपनी माँ से पूँछी। बात तौ साँसी हती, जिद करकें ऊदल ने अपनी माँ से मांडोगढ़ जाबे की आज्ञा लै लई। ऊदल की माँ ने सीख दई- ''देखो शरणागत की सदा रक्षा करियो औ बालक-बूढ़े व लुगाईयन पै, निहत्थे लोगन पै, औ भागते शत्रुअन पै हाथ न उठईयो, जौ धर्म नईं होत।''

ऊदल के संगै चारउ भइया वेश बदल कें साधू बने, ऐसें भेष बदलें ते, कि उनकी माँ तक नई पैचान पाई। सो वे पाँचऊ मांडोगढ़ के बबूल-बबूरीवन में जोगियन कें भेष में पौंचे। फिर ठैर कें उतै की रानी 'कुशला' के रनवास में भजन गात भये गय सो रानी नें उनको सुआगत करो एक मोतियन कौ हार ऊदल खौ पैरा दओ। पर ऊदल नें बौ हार लौटा दओ कई-दैनें होय तौ नौलखा हार देओ। रानी नें सिद्ध साधू जान कें नौलखा हार दै दओ।''

तबई धनीराम बोल परो- ''दद्दा जौ नौल्खा हार का होत?'' रतू माते नें कई- ''नौ लाख रूपइया कौ कीमती हार होत, हीरे मोती जड़ो।'' फिर का भऔ कि उनन नें महल घूमबे की इच्छा करी सो रानी कुशला ने अपनी बिटिया राजकुमारी विजय सेना सें किला दिखाबे खों कै दई। वे आल्हा, ऊदल हरें किले की जांच करत रय एक सुरंग पूंछी सो राजकुमारी खों शक भऔ, ऊ नें ऊदल खों नकली साधू होबो जान लओ। सो ऊदल ने राजकुमारी सें कई 'अपने पिता को बुला लो, हम उन्सें लडेंगे।'' राजकुमारी कौन कम वीर हती, बा बोली- पैलें हमई सें लड़ लो। फिर तलवार, गदा, भाला से राजकुमारी लड़ी औ ऊदल केवल ढाल लेंकें वार बचात रय। लड़ाई में थक कें राजकुमारी बेहोश हो गई। सो उनन नें पानी छिड़क कें होश में लाये। राजकुमारी खों ऊदल सें प्यार हो गओ तो, वा उनसें ब्याह करन चात ती, सो ऊनें किले के सबरे रहस्य उनै बता दये।

फिर वे पाँचऊ नकली साधू राजा जंबे के दरबार में पौंचे, उतै लाखा नर्तकी कौ नाच चल रवो तो, नाच खतम भऔ सौ ऊदल ने नौलखा हार ऊ नर्तकी खौं दे दऔ।

इतायें का भओ, महोबा बारन खौं जब पाँचऊ के माड़ौगढ़ जाबे की बात कौ पतौ चलो सो सेना माड़ोगढ़ पै चढ़ाई करबे भेज दई, दूसरे दिन सेना ने माड़ोगढ़ में युद्ध छेड़ दओ। युद्ध में राजकुमार रायकरिंगा पैलें आओ औ घायल हो कें भागो सो राजकुमार सूरज ने रोककें ऊदल से युद्ध करबे कई। दोई कत हैं शाम तक लड़त रये, सेना नें युद्ध बंद कर दओ। दूसरे दिना फिर युद्ध शुरू भओ तौ ऊ में रायकरिंगा मारे गये। तीसरे दिना के युद्ध में राजकुमार सूरज मारे गये। चौथे दिना के युद्ध में राजा जंबे आये लड़बे, पै आल्हा नें उन्कौ सिर काट डालो। जीत महोबा वारन की भई, वे उतै नर्तकी लाखा, नौलखाहांर औ राजा जंबे कौ सिर लै कें महोबा आ गये। राज में खुशी मनाई गई पै राजा परमाल ने जंबे राजा को दाह संस्कार कराओ। पाँचउ लरकन की वीरता कौ डंका बज गओ सो मामा माहिल इकाऊ जर-भुन

गओ, ऊ ने एक दिना मलखान खों भड़काओ किं तुम सिरसा के अपमान खों जानत हौ।'' फिर ऊ नें बताओ कि कैसें पृथ्वीराज नें अपनौ सिरसागढ़ इलाकौ हड़प लओ।

कछु दिनन में मलखान नें राजा-रानी सें सिरसागढ़ में युद्ध की आज्ञा लई, ई बार सेनापति 'आल्हा'बनाये गये उतै राजा पारथ राज कर रय ते, आल्हा के दूत नें उन्सें जाकें कई ''सिरसागढ़ छोड़ो या तौ युद्ध करौ।'' फिर सात दिना युद्ध चलो, सातें रोज ऊदल ने पारथ खों घायल कर दओ बौ भगो फिर पारथ ने अपने पिता पृथ्वीराज को संदेश भेजो सो उतें सें ब्राह्मण सेनापति चामुंदराज दस हजार सैनिक ले कें आओ पर जीत पाँचऊ भइयन की भई, सिरसागढ़ कौ राज इनाम में मलखान खों मिलो। मामा माहिल फिर सें जर-भुन गय, उन्नै ई बार रानी माहल्नदे के कान भरे कि ''बहन आल्हा ने पाँच काबुली घोड़ा खरीदे हैं, बौ महोबा पै कब्जा करन चाउत है।'' रानी में राजा परमाल सें कई, राजा ने जाँच परीक्षा करबे आल्हा-ऊदल सें बे घोड़ा माँगे पर उन्नै नईं दय सो राजा परमाल ने उने उनकी मताई 'देवलदें' के सँगै देश निकाला दै दओ। वे तीनऊँ कन्नोज के राजा जयचंद के यहाँ पहुँच गये। ओई राज में रन लगे।

इतेक कैं कें रतू माते मोंग (चुप) गये, बाल-बच्चे किसा कैबे कौ बांट देखत रय। सो रामू नै कई-''फिर का भऔ?'' रतू माते हंस के बोले-''तुमन सें गलती हो रई।'' फूली नें पूंछो का ऽऽ'' रतू ने कई- ''अपने बुन्देलखण्ड में किसा सुनी जात तौ हूंका' दय जात, तुमन नें हूंका तौ दऔ नइयाँ। अब हूंका देत रइयो।''

''फिर का भऔ, ऊ दुष्ट माहिल मामा ने जाकें दुश्मन राजा पृथ्वीराज के कान भरे कि महोबा में आल्हा-ऊदल नईयां, चढ़ाई कर दो। माहिल अपने बैन-और जीजा जू पै आ चढ़ाई करा रऔ तो। सो पृथ्वीराज ने अपने सेनापति चामुंड राय खों पचास हजार सिपाइयन के संगे लड़ाई खों भेजो। जा बात राजा परमाल खों पतौ चली सो उन्नैं ब्रह्मा सें कई कि जाकें आल्हा ऊदल खों टेरबे 'जगनिक' खों दूत बनाकें भेजो। पै जगनिक जब आल्हा ऊदल खों टेरबे गये सो उन्नें मना कर दवो। बड़ी मुसकिल सें बे माने, कन्नौज के राजा ने आल्हा ऊदल खाँ पचास हजार सैनिक लड़बे संग दये। सेना कौ 'कीर्ति सरोवर' के पास चामुंडराय से युद्ध कौ मैदान बनौ। चामुंडराय ने कई ''सैनिक मरें, ई से नौनों है कि जोद्धा से जोद्धा मल्लजुद्ध कर लें। सो आल्हा औ चामुंडराय भिड़ गये, मांयें कन्ह (पृथ्वीराज कौ जौद्धा) लाखन सें भिड़ गऔ पै लाखन मारे गये, सो ऊदल नें कन्ह खों पटक पटक कें घायल कर दओ। जीत महोवा वारन की भई। रामसखी ने हूंका भरो ''हूँ फिर का भओ दद्दा'' रतू माते ने कई ''देखो आल्हा ऊदल पै तौ बुन्देलखण्ड को पैलो ग्रंथ रचो गओ उन्कौ भारी इतहास है, पै एक घटना और सुनाँय देत।

कन्नौज के राजा जैचंद्र हते, उनकी राजकुमारी हती, नाम हतो 'संयोगिता' बे ऐसी हती कि का कयें 'सोने कैसी मूरत', चंपा कैसो रंग, पूनो जैसो चंदा, दिवाई कैसो दिया, कनेर सी डार कि लफ-लफ कें दूनर हो जाय, पान खायें तौ गरे में पीक दिखात ती, उनें फूल ककरी मारौ तौ रकत झलक जाय, फूंक मारौ तौ हवा में उड़ जायें, कजन बीच सें उमेठ दो तो, सो गांठ पर जायें, हम तौ कत पलंग हिरा जायें सो बारा बरस ढूंढ़े न मिलें, ऐसी हती राजकुमारी ''संजोगिता''।

''हूँ'' फिर का भओ'' मौड़ा मौड़ियन नें हूंका भरो सो रतूमाते नें अँगाऊ किसा कई ''ऊँ राजकुमारी कौ हरण पृथ्वीराज नै कर लओ सो बदले में आल्हा-ऊदल और परमाल ने पृथ्वीराज की बेटी 'बेला' को हरण करकें ब्रह्मा से ब्याह करा दओ। एक दार पृथ्वीराज नें बेला खों, दिल्ली बुला कें वापस नईं भेजो फिर का हतो, आल्हा ऊदल, राजा जैचंद की सेना लैकें बेला खों छुड़ाबे दिल्ली में चढ़ बैठे, संदेशो दओ 'बेला की डोली महोबा भेजो नईं तौ युद्ध करौ।''

''हूँ फिर का भऔ'' रतू ने कई-दोऊ मानबे वारे न हते सो युद्ध के नगाड़े बज उठे, चामुंडराय ने ऊदल खौं मार डारो, सो आल्हा ने पृथ्वीराज पै भयंकर हमला करौ दोई घायल भये पृथ्वीराज बच गये पै कई जात कि आल्हा-ऊदल दोनों खाँ देवतन कौ जौ वरदान हतो कि एक अमरता पा सकत, सो आल्हा अमर हो गये, वे मैहर की शारदा के भक्त हते, सो रोज दर्शन खौं बड़े भुनसारे आ जात। उनके गुरू हते 'गोरखनाथ जू' सो वे आल्हा खों हिमालय अपने सँगै लिवा लै गये। सोई कत है - ''बड़े लड़ैइया गढ़महबे के, जिनकी मार सही न जाय।'' सो अब हमाई किसा निपटी, बाढ़ई नें बनाई टिकटी चूल्हे ऊपर चकटी, इत्ती कहानी बोदां रानी, बोद बुदक्कड़ जाकें खाव गक्कड़।'' 'राम-राम'' मौड़ा मौंड़ी घरन खौं चल दये।

-'राजीव सदन' नायक मुहल्ला,
टीकमगढ़- 472001, मोबा. 8827192845

*****

मिटो हजारी और पाँच सौ

-जगदीश प्रसाद कुशवाहा 'प्रबोध'

नोट बंद सें मिलो जानबे, खुशी कष्ट जा बेरा।
कमर कसें सरकार बतावे, खुलहें दबे गठेरा।।
हो गओ जो बड़ो फैसला, रच दई बड़ी मिसाल।
लूट-लूट जे धरीं गठरियाँ उनके भये बेहाल।।
पटकत मूड़ लुटेरा पाये, जीने लूट भरे बोरा।।
धोका कर मनमानो जोरो, जावें न भीतर कौरा।।
जमा करावें जा-जा दोरें, नेता सेठ करें चेरा।
नोट बंद सें मिलो जानबे, खुशी कष्ट जा बेरा।।

पहले फुटकर गला बजारन , जीने बड़ो नोट लपको।
थप्पी बना-बना गुरमेंटीं, उनकी छाती में गतको।।
आतंकी करिहाई टूट गई, आस असलहा टूटो।
नकली असली नोट जानबो, नोट बंद में छूटो।।
करकें ठेका नोट बदलबे, लगत कतारें जानीं।
हते न जिनके पाँच रूपैया, गड्डी हाँत दिखानी।।
जग गई आम आदमी आशा, पावी किस्मत फेरा।
नोट बंद सें मिलो जानबे, खुशी कष्ट जा बेरा।।

खाता बीस रूपैया वाले, कहत जमा भये लाखन।
करिया धन आ रहो सामने, नौनी नीति के कारन।।
खाता सीमा बनी रूपैया, जमा निकासी वाले।
खुराफात की रचना ढारें, जीके भरे अटाले।।
कर की चोरी कर करतूतन, कर-कर जाल रचावें।
नजर गड़ा सरकार निहारें, जुगत काम न आवें।।
आय बता कें टैक्स चुकावे, सोचत होत सबेरा।
नोट बंद सें मिलो जानबे, खुशी कष्ट जा बेरा।।

-प्रधानाध्यापक, शास. मा.शा. लक्ष्मीपुर
मो. आगरा, रानीबाग रोड, पन्ना (म.प्र.)
मोबा. 9589904900

*****

छतरपुर सें ...... अँगारूँ बसारी है

-डॉ कन्हैया लाल वर्मा

बुन्देली बसंत का 17 अंक मिला। आवरण पृष्ठ पर रानी झाँसी के घोड़े का अंकित चित्र मन को भाकर चेतक की याद तरोताजा कर गया। संपादकीय पढ़ा, बुन्देलखण्ड में जंगलों का कटना, सामंतवाद का आतंक, दबंगो की दबंगई, ऊँचनीच का भेद, जाति-पाँति की समस्या, छुआछूत कौ रोग, अमीर-गरीब की खाई, कन्या-भ्रूण हत्या, लिंग अनुपात का बिगड़ता रूप शोचनीय चिन्ता का भयावह चित्र चित्त में हलचल मचाता रहा। बुन्देली बेटो को बहुओं का अभाव, खरीद-फरोक की वेदना जन-जन की चिन्ता बन गई है। पत्रिका में निहित अनेकानेक रचनाओं ने इन विषयों पर करारी चोट की है। यथा बुन्देली कहानी 'अंत काल पछताने' (शकूर अहमद) ने शराबखोरी पै, दिन डूबै लौं (ओ.पी. रिछारिया जी) ने लिंग परीक्षण पर करारी चोट की है। यह बुन्देली कहानी यात्रा के अच्छे लक्षण है।

आचार्य श्री दुर्गेश शुक्ल, डॉ. कैलाश बिहारी द्विवेदी, श्री हरिविष्णु अवस्थी, श्री कन्हैयालाल अग्रवाल, डॉ. लखन लाल खरे, श्री श्याम बहादुर श्याम, डॉ. वीरेन्द्र निर्झर, डॉ. कामिनी, डॉ. दुर्गेश दीक्षित, डॉ. डी.आर. वर्मा वेचैन, डॉ. रामनारायण शर्मा आदि विद्वानो के आलेख पत्रिका के आधार स्तम्भ बन गये हैं जो अपने आप में शोध पत्र हैं। पोथी परखाव में बरसैंया जू - जो वर (श्रेष्ठ) सइयाँ (पति) दौनौ है अपनी लेखकी के चुटीले व्यंग के धनी ...सरसैयाँ भर नहीं रहते बल्कि गरज तरज के साथ जमकर बरसते है सो पोथीपरखाव में खूब बरसे हैं पाठक सरवोर हो गया है। गुणसागर - हिलोर लेत- भरे-भराये बुन्देली सागर हैं। सो हिलुट विलुट कें खूब हिलुरे हैं। बे जो कहते है दरेरा देकर कहते है। नीके बोल बुन्देली पर जो उन्होंने कहा, ईसुरी 1909 ई . पूर्व के हैं नये नहीं हो सकते'' उनका कथन अक्षरत: सत्य है उनके तीर नुकीले चुटीले होते हैं जो चुभते ही नही, सालते भी है। पर सही कहे जा सकते है क्योंकि वे सत्य के पक्षधर बुन्देली के सच्चे उपासक है, किन्तु कड़क .... समझौता वादी नहीं ... ।

डॉ. बहादुर सिंह परमार जी का आलेख पढ़ा श्री राघवेन्द्र उदेनियां द्वारा रचित दोहे एवं रचना मन विलुरित कर गई। होनहार विरवान के होत चीकने पात पिता पुत्र गुण यो मिले, सने दूध औ भात। उनके पिताश्री स्व. श्री शारदा प्रसाद उरैनिया जी की याद तरोताजा हो गई जिन्होंने बुन्देली की पताका उस समय फहराई जब कोई बुन्देली में लिखने से ठिठकता था, झिझकता था। मैं 1970 से 1977 तक बुन्देली लोक साहित्य विषय पर शोध कार्य कर रहा था। उसका श्रेय स्व. श्री नर्मदा प्रसाद गुप्त एवं स्व. श्री शारदा प्रसाद उदैनिया जी को जाता है जो मुझे बुन्देली व्याकरण ऐसे पढ़ाते थे जैसे सच्चा गुरू प्रिय शिष्य को पढ़ाता है। बुन्देली की समृद्धि हेतु बधाई। शिरीष जी का क्या कहना, उन्हें सुकुमार भावनाओं सुकोमल कल्पनाओं के सुघड सलौने सुन्दर नौने राजकुमार कवि के रूप में- छतरपुर कवि गोष्ठियों में जाना जाता था। उनकी रचनायें शिल्प सौन्दर्य भावाभिव्यंजना और गायिकी की त्रिवेजी बन कर श्रोताओं को सरोवोर कर मंच लूट लेती थीं। आज नया रूप बुन्देली के शब्दों का विवरण पढ़कर ठिठक जाता हूँ, काश यह रूप शोध के समझ दिख जाता। उनका आलेख अनमोल है।

डॉ. अवध किशोर जड़िया जड़ने में माहिर हैं। सतसइया के .... घाव करें गंभीर ''उक्ति को - बिना टाँके कौ टाँकौ-बाँकौ'' अर्द्धाली में चरितार्थ होती है। अत: कहा जा सकता है -

जड़िया जू तौ जड़तई छक्का सवई होत भौचक्का उपमा, रूपक, ठूस ठूस भर, करतई हक्का बक्का। नई नवेली, पन्छीली धन, मोहित काकी-कक्का बुन्देली कौ 'बिन्दु ''जड़िया-बढ़िया वढिया पक्का

श्री महेश कटारे जी ने उपनाम 'सुगम' को अपनी गजलों में खूब सार्थक किया है,

''-लरम लरम सी सुधर देह, लचक पाला पोनी सी-'' के ठेलम ठेल से लदी फरी मन में उथल पुथल करती है। इतना ही नहीं .... पत्थरन खीर चढ़ारये, दद्दा भूके तीरथ जार है, धन नइयाँ मंदिर बनवा रये, पीवे नइया दूद, पत्थरा सपरा रये नोटन बिटा लगा रये, बिना दवाई मरी मताई, ते रईं खा रये'' शरम करौ। आदि भावों को व्यंजित कर कवि ने जन जन के मन को लूट लिया है, कम से कम मुझे तौ निश्चित ही। श्री प्रेम प्रकाश चौबे जी की गजल नेक में भौत कै गई, प्रेम सवई वरसाती मेढ़क कवै दिखात बिना बरसा रे, नेताओं पर नुकीला व्यंग सुई सौ छिद छेद कर जात, अरई सौ गुच्चा गुच्चत दुच्चन खों, । अच्छा व्यंग हैं। सटीक, सार्थक।

बुन्देली कहानी, नई पहल में डॉ. सुरेश पराग जी का अनूठा योगदान है ''सगुनियाँ'' बुन्देली कहानी, नई पीढ़ी कौ संघर्षो से जुझने की शक्ति प्रदान कर, नये आयाम छूने की प्रेरणा श्रोत बन गई है। मौलिक सूझ-बूझ और रचना धर्मिता को हार्दिक बधाई। ''लागे न जियरा हमार'' बुन्देली कहानी में बुन्देली का मिठास, मुहावरों का सटीक, सजीव, प्रयोग आधुनिक शिक्षा प्रणाली की बधिया उधेड़ कर धर गई। कम से कम हमाव जियरा तौ लग गओ ईखों बेर बेर पढ़वें में।

डॉ. दया दीक्षित द्वारा सृजित ''गुन-अवगुन की गली में जिद्द ''उपन्यास'' एक बार नईं कई - बार पढ़ा। भौत मजा आया। मन चुलबुला गया, कुलबिला गया, हुलहुला गया। अच्छा लगा, भौत अच्छा लगा। उपन्यास की नायिका - उर्मिला की झलक कहीं कहीं, कद काठी की सुघड़ता से, गदराने गठीले यौवन एवं फटते लावण्य से डॉ. वृन्दावन वर्मा की मृगनयनी दिखाई देती है। कहीं संघर्षो से जूझती झाँसी की रानी, कहीं तपश्वनी बेष में, मौन मूक, कर्म की आराधना करती जुझारू बुन्देली वाला दृष्टिगोचर होती है। भाषा शैली अनूठी है, मौलिक है, प्रभावशालिनी है। सम्प्रेषणीयता सशक्त है। कथानक का घटना क्रम मन बाँधे रहता है। संवाद योजना पात्रानुकूल भावानुकूल है। आधुनिक निकम्पा पति-उपेन्द्र, वर्तमान की जुझारू नारी - उर्मिला, दकियानूस माँ, रूढ़िवादी पिता, कर्मठ वलिष्ठ सेवक ऐसे लगते है जैसे बुन्देलखण्ड के अपने सजीव जीवन्त पात्र है जो मेरे अड़ोस-पड़ोस, मेरे इर्द-गिर्द मड़राते रहते है। डॉ. वर्मा की नायिका विराटा की पद्मनी- कुमुद-सा सौम्य रूप - उर्मिला में जीवन्त कर नई दिशा देने का संदेश बड़ा ही सार्थक बन पड़ा है। बिगड़े पति को कुपथ से सुपथ पर लाकर उपन्यास का सुखद अन्त आशावादी ही नही समाज सुधारक बन गया है। जो कल्पना पर नहीं यथार्थ के धरातल पर खड़ा है। ''जो विश्राम की कामना नहीं करते विजय श्री उनके चरण चूमती है'' इस उक्ति को बुन्देली नारी-उर्मिला-पूर्ण रूपेण चरितार्थ करती है। हार्दिक बधाई।

जब दाँत हत सो चना नई हते, अब चना है सो दाँत नइयाँ .... शोध कार्य करते वक्त बुन्देली सामग्री का विखराव था, अभाव था, घर-घर जाकर इकट्ठा किया। अब बुन्देली बसंत जैसी पत्रिकायें बुन्देली सामग्री से भरी पड़ी हैं। पै अब लिखवे की दम नइयाँ - सम्पादक मण्डल ने श्रम कर पत्रिका को षोड़सी बना दिया है।

इस सबका श्रेय संरक्षक श्री शंकर प्रताप सिंह बुन्देला मुन्नाराजा जू को जाता है। बुन्देला जू में बुन्देली के प्रति अनूठी लगन है। जैसे बेटे को माँ सेवा कर वलिष्ठ बनाती है उसी प्रकार ग्राम-बसारी-माँ सदृश्य बुन्देली सेवारत है। बुन्देला जू प्राण प्रण ने निष्ठापूर्वक इसकी समृद्धि में जुटे हैं। बुन्देली की अनेकानेक विस्मृत कलाओं, विधाओं को पुनः जीवित करने में तन-मन-धन से सेवारत हैं। कभी टीकमगढ़ नरेश ने मधुकर पत्रिका द्वारा ईसुरी को जीवन्त किया था। वर्तमान श्री बुन्देला जू 'बुन्देली बसंत' का प्रकाशन तथा विभिन्न आयोजनों द्वारा बुन्देली को पूर्ण वैभव पर पहुँचाने के लिए कटिबद्ध है। बुन्देली के विद्वान साहित्यकारों, विभिन्न कलाओं के कलाकारों का सम्मान कर उन्हें आगे बढ़ाने को प्रोत्साहित करते रहते हैं- प्रति वर्ष। क्योंकि वह हृदय से बुन्देली के सच्चे संरक्षक है, पोषक है। बार-बार हार्दिक बधाई।

पालवे पोसबे में, पिरान पियारी मतारी है
मान्सन खां मान्स बनावे में घर घर घरवारी है।
धूरा से हीरा बनावे छतरपुर नगरी पियारी है।
बुन्देली कवियन उठाबे, बिन्दु आगूँ बसारी है।

-163 कला निकेतन
नीरजा नगर केसरी जे के रोड, भोपाल-462021
मोबा. 9425079493

*****

मन में अगन लगारइ

-प्रभु श्रीवास्तव 'पीयूष'

हरी भरी धरती खों हिमरित साल सुपेत उड़ाई।
जा सरदीली रैन अगन की, मन में अगन लगारइ।।
जाड़े जू जड़याउन लगे सो जल में जलज हिराए
आइ काँवनी पत्ता ऐसे, पीरे परे दिखाए
जैसें परदेसी पिय बिन, बिरहिन दिन दिन पियराइ। जा सरदीली
रैन अगन की, मन में अगन लगारइ।।
अंबर के आँगन में, शशि के सजे सरूप सुहाए
रै रै कें अपनी किरनन सें बे हिमकन बरसाएं
हरी हरी दूबा पै हीरन की लर-सी लहराइ। जा सरदीली रैन
अगन की, मन में अगन लगारइ।।
तन तन से दिन होन लगे अब, बड़ी होत हैं रातें
बेइ कोउ खो लगत राइ सीं, नइँ बड़ात हैं बातें
अखियन की पखियन में निंदिया आबे में सकुचाइ। जा सरदीली
रैन अगन की, मन में अगन लगारइ।।
रस से भरीं ऊख की पोरें, बेर पकें जरियन के
बैठ बियन पै पंगत जैरए, भाग खुले हरियन के
गरबीली गुइँया की टुइँया सी मुइँयाँ मुसकाइ। जा सरदीली रैन
अगन की, मन में अगन लगारइ।।
खेतन में हरयारी फैली, लगन लगे गुरयाने
देव उठे सारंग सुरू भई नए नए मन गुरयाने
राम जानकी के ब्याव की पाँचे रस बरसारई
जा सरदी की रैन अगन की मन में अगन लगारइ

-चित्रांश कॉलोनी, वर्मा शैल पेट्रोल पंप के पास
मऊ रोड, टीकमगढ़ (म.प्र.)
पिन- 472001
संपर्क- 9179982221

*****

मेरा गाँव

-लखन लाल पाल

जौ गाँव-देहात
गाँव के बाहर
गोहूँ चना मटर, अरसी के खरयान
दाँयें हाँकते डुकर
अपनी सोच में मगन
किते चक्कर काटे
पता नईं
टटवा पै बैठो सुघर
तमाखू थूकते डुकर
गुजरे जमाने की बात
गाड़ियन कौ जुग
मोटर, बस, ट्रेक्टर
चारऊ कोद वाहनों की भर्राहट
खेतन पै ट्रेक्टर, थ्रेसर
सब काम फटाफट
समै की बचत
सब नीके- नौने लगत
पै सूँटा भगे की धकापेल से
बाहर हो गए
या कर दए गए
समझ से परे है
स्यात सुधरै जमानौ

दोहे

1. छात्रन की अब न कहो, ऐसे हैं अज्ञान।
पढ़ाउत इतै ग्रामर हते, काम करत विज्ञान।।

2. भइया-भइया कहौ तुम, भैया है बेमूल।
गैरहाजिरी करत हैं, पइसा भरें फिजूल।।

3. दिना तीन की को कहे, महीनन नईं दिखात।
अभिभावक फुनया रहो, बहुतई लटौ बतात।।

4. खुरदाएं सी कर रहे, सुनी परीक्षा काल।
धरें मिठाई हाथ पै, सर बिगड़ै न या साल।।

5. बापू जूता मार है, बचा न पाहै माई।
लाज तुम्हारइ हाथ है, बज है दिन भर घाइ।।

6. सीधे-सादे छात्र ये, कैसे भले- सुहात।
पास होय के बाद फिर, सालन नईं दिखात।।

-कृष्णाधाम के आगे अजनारी रोड
नया रामनगर, उरई जिला-जालौन
उ.प्र.- 285001

*****

कुण्डेश्वर का कण-कण सँजोये है पं. बनारसी दास चतुर्वेदी की स्मृतियाँ

-हरि विष्णु अवस्थी

जिस प्रकार सेवा ग्राम का उल्लेख महात्मा गाँधी तथा शाँति-निकेतन का उल्लेख रवीन्द्रनाथ जी के नाम लिए बिना अपूर्णसा लगता है ठीक उसी प्रकार कुण्डेश्वर (टीकमगढ़) के नाम का उल्लेख पं. बनारसीदास जी चतुर्वेदी के नाम लिये बिना अपूर्ण सा लगता है। सन् 1937 से सन् 1952 ई. तक चतुर्वेदी जी कुण्डेश्वर में साढ़े चौदह वर्ष रहे। सन् 1952 ई. में राजसभा का सदस्य मनोनीत होने पर उन्हें कुण्डेश्वर छोड़ना पड़ा था। अन्ठावन वर्ष बीत गए किन्तु उनकी पावन स्मृतियों को कुण्डेश्वर का कण-कण आज भी सँजोये हुये है।

बुन्देलखण्ड का सर्व प्राचीन पूर्व ओरछा राज्य एवं वर्तमान मध्यप्रदेश के टीकमगढ़ जिला मुख्यालय से मात्र 6 कि.मी. की दूरी पर जमड़ार नदी के सुरम्य तट पर स्थित कुण्डेश्वर एक अति प्राचीन शैव्य तीर्थ स्वंयभू शिवलिंग के रूप जाना जाता है। ऐसा माना जाता है कि यह स्वंयभू लिंग प्रतिवर्ष एक तिल के बराबर बढ़ता है। जनश्रुति के अनुसार वाणासुर की पुत्री ऊषा नित्य प्रति यहाँ आकर साधना किया करती थी।

पं. बनारसी दास जी को कुण्डेश्वर लाने का पूरा श्रेय तत्कालीन ओरछेश वीरसिंह जू देव 'द्वितीय' (1930-56 ई.) को है। ओरछेश सन् 1914-1918 ई. तक राजकुमार कालेज (डेली कालेज) इंदौर के क्षात्र रहे। इस अवधि में चतुर्वेदी जी ने उन्हें हिन्दी विषय पढ़ाया था।

चतुर्वेदी जी ने स्वयं लिखा है कि- "सन् 1914 से 1918 तक चार वर्ष उन्हें हिन्दी पढ़ाने का सौभाग्य मुझे प्रात हुआ था। वे इंदौर के राजकुमार कॉलेज के छात्र थे और मैं वहाँ हिन्दी शिक्षक बन कर गया था। ग्यारह वर्ष तक अध्यात्मक रहकर सैकड़ों ही विद्यार्थियों को मैंने पढ़ाया होगा, पर अपने जीवन में महाराज वीर सिंह जू देव जैसा दूसरा शिष्य मुझे नहीं मिला - उन जैसा सहृदय, उदार, सुसंस्कृत और गुरूभक्त।

सन् 1920 में चतुर्वेदी जी इंदौर से त्याग-पत्र देकर फीरोजाबाद आ गए। डेलीकॉलेज इंदौर में रहते हुए चतुर्वेदी जी का संपर्क देश के मूर्धन्य साहित्य मनीषियों, महापुरूषों यथा- डॉ . सम्पूर्णानंद राजर्षि पुरूषोत्तम दास टण्डन आचार्य पं. महावीर प्रसाद द्विवेदी, श्री किशोरी लाल जी गोस्वामी आदि से स्थापित हो गया था। इस संपर्क से चतुर्वेदी जी की प्रतिभा पंख लगाकर उड़ने की क्षमता अर्जित करने में सफल हुई। पं. बनारसी दास जी अध्यापकी छोड़कर स्वतंत्र लेखन-कार्य में प्रवृत्त हो गए।

इसके पश्चात् चतुर्वेदी श्री सी.एफ. एण्डूज के आमंत्रण पर शाँति निकेतन पहुँच गए। 'भारत-भक्त एन्ड्ज' नामक जीवनी का लेखन सवा साल शाँति निकेतन प्रवास के समय ही उन्होंने किया था। वहाँ से वह महात्मा गाँधी के साथ चले गए। गुजरात विद्यापीठ से सन् 1925 ई. में त्याग-पत्र देकर वे पुन: अपने घर फीरोजाबाद लौट आये।

सन् 1927 में कलकत्ता जाने से पूर्व चतुर्वेदी जी ने 'आर्य मित्र' पत्र के सहकारी सम्पादक के रूप में कार्य किया। सन् 1928 में विशाल भारत का कलकत्ता से प्रकाशन आरंभ हआ और वे उसके सम्पादक नियुक्त हुए। सन् 1937 के सितम्बर माह तक वे कलकत्ता में रहकर विशाल भारत का सम्पादन करते रहे।

ओरछेश वीर सिंह जू देव का असम के जंगलों में शिकार खेलने जाने हेतु कलकत्ता आना-जाना बना रहता था। कलकत्ता जाने पर वे अपने गुरूवर चतुर्वेदी जी से मिलना नहीं भूलते थे। इस कारण गुरू-शिष्य के पुराने संबंधों का पुनर्नवीनीकरण तो हुआ ही उनके संबंधों में प्रगाढ़ता भी आग गई। और उनके मध्य निरंतर पत्राचार भी होता रहा। पत्राचार के कुछ अंश दृष्टव्य है-

दिनांक 6 सितम्बर 1933 को टीकमगढ़ से ओरछेश ने चतुर्वेदी को लिखा था- भूतपूर्व क्या आज भी आप मेरे शिक्षक हैं पर क्षमा करियेगा फक्कड़पन में आप मुझसे बाजी नहीं ले जा सकते।"... दिनांक 11 सितम्बर 1934 को टीकमगढ़ से ओरछेश ने लिखा "मुझे आपके कार्यालय में 50 रू. मासिक पर अनुवादक का स्थान स्वीकार है, पर वह 6 पी.एम. बाली शर्त मुझे स्वीकार नहीं, क्योंकि 6 बजे के बाद ही तो Inspiration प्राप्त करने का समय होता है और उसी समय आप मुझे कमरे में बन्द कर लेना चाहते हैं। तो फिर मैं अनुवाद क्या करूँगा अपना सर।"

बम्बई से दिनांक 20 मई 1937 को लिखे गए पत्र में गुरू और शिष्य के मध्य हास-परिहास की सुन्दर बानगी प्राप्त होती है। ओरछेश ने लिखा था कि - "जब तक आप उस गन्दी गली में मारवाड़िनों के जूँ भरे लहगों के साये में निवास करेंगे तब तक भला चित्त कैसे ठिकाने रह सकता है? मुझे तो यह आश्चर्य है कि अब तक आप जीवित कैसे हैं।"

ओरछेश वीर सिंह जू देव 'द्वितीय' को साहित्यानुराग तो विरासत में प्राप्त हुआ था। ज्ञातव्य है कि हिन्दी भाषा के प्रथमाचार्य महाकवि केशवदास जी मिश्र ओरछेश वीरसिंह जू देव 'प्रथम' (1605-27 ई.) के आश्रित राज कवि थे। वीर सिंह जू देव 'द्वितीय' ने 4 मार्च 1930 को अपने राज्याभिषेक के बाद ओरछा राज्य के तत्कालीन प्रधानमंत्री राय बहादुर, राव राजा डॉ. श्याम बिहारी मिश्र 'मिश्रबन्धु' को श्री वीरेन्द्र केशव साहित्य परिषद् की स्थापना करने का निर्देश दिया था। 15 अप्रैल 1930 को परिषद की स्थापना पश्चात्, देवेन्द्र साहित्य विद्यालय (जिसमें हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग की परीक्षाओं के पाठ्यक्रमानुसार शिक्षण की व्यवस्था की गई थी) देवेन्द्र साहित्य पुस्तकालय एवं सुधा वाचनालय की स्थापना टीकमगढ़ में वर्षान्त तक की गई।

स्थानीय राजकीय सवाई महेन्द्र हाई स्कूल टीकमगढ़ में वीरेन्द्र 'लिटरेटी क्लब' का गठन कर उसके माध्यम से माह नवम्बर 1932 से 'वीर बुन्देल' नामक मासिक पत्रिका का प्रकाशन प्रारंभ कराया। 'वीर बुन्देल' का प्रकाशन माह अप्रैल 1936 तक होता रहा। सुयोग्य सम्पादक के अभाव में पत्रिका बंद हो गई। पत्रिका बंद होने की पीड़ा ओरछेश को बनी रही और वे किसी सुयोग्य संपादक की तलाश में लगे रहे। पं. बनारसीदास से जीवंत संपर्क स्थापित हो जाने पर वह ऐन-केन प्रकारेण उन्हें टीकमगढ़ लाने हेतु भूमिका तैयार

करते रहे और उन्होंने अपनी बाक्पटुता, विनम्रता और गुरू भक्ति के बल पर उन्हें टीकमगढ़ आने हेतु तैयार कर लिया।

13 अक्टूबर 1937 को चतुर्वेदी जी टीकमगढ़ पधारे। राज्य की ओर से कुण्डेश्वर में जमडार नदी तट पर बने 'कुण्ड कोठी' नामक भवन में उनकी आवास व्यवस्था कर दी गई। कुण्डेश्वर निवास के आरंभिक दिनों में अपनी मनोदशा का वर्णन करते हुए चतुर्वेदी जी ने लिखा है कि- ''जब 18 अक्टूबर 1936 को मैं कुण्डेश्वर पहुँचा था, उस समय मुझे वहाँ अकेला ही रहना पड़ा। उस विशाल महल में एकाकी रहते-रहते मैं तंग आ गया और तब मुझे उस उक्ति के सत्य होने का पता लगा 'तनहाई नीम पागलपन है' एकाकीपन कितना उद्विग्नकारी हो सकता है, इसका अनुमान मुझे नहीं था। टीकमगढ़ चार मील द्वारा था और आसपास के ग्रामीण निवासियों से तब तक मेरा कोई परिचय नहीं था। कभी-कभी तो मन में यह भी आया कि बुर्ज पर से कुण्ड में कूँद पड़ूँ। निःसंदेह यह कृत्य आत्मघातक होता, क्योंकि मैं तैरना बिल्कुल नहीं जानता था।''

जब तक चतुर्वेदी जी का उस स्थान के निवासियों से संबंध नहीं जुड सका वे अपने आपको एक जेल का जेलर मानते रहे। उन्होंने टीकमगढ़ जेल के तत्कालीन जेलर श्री दुर्गा प्रसाद समाधियाँ को लिखा-

प्रिय समाधिया जी

thanks a thousand for your very king gift of vegetables.

B.Das chaturvedi
failar
New Central
Jail
Kundeshwar

धीरे-धीरे जब चतुर्वेदी जी का मन कुण्डेश्वर में रम गया। ओरछेश ने श्री वीरेन्द्र केशव साहित्य परिषद् के माध्यम से 'मधुकर' पाक्षिक पत्र निकालने और उसका संपादन करने हेतु चतुर्वेदी जी को मना लिया। 1 अक्टूबर 1940 ई. से मधुकर का प्रकाशन आरंभ हुआ। 'मधुकर' के प्रवेशांक के संपादकीय में चतुर्वेदी जी ने लिखा था-

''यद्यपि 'मधुकर' का क्षेत्र जान-बूझ कर परिसीमित रखा गया है क्योंकि परिमित क्षेत्र में ठोस काम करने की अधिक सुविधा तथा संभावना है, तथापि इसका दृष्टिकोण व्यापक होगा। 'मधुकर' देश-विदेश के सांस्कृतिक उपवनों से जीवनप्रद रस ग्रहण करके जनता के सम्मुख रखेगा। उसका किसी सम्प्रदाय या वादविशेष से संबंध न होगा और क्षुद्र प्रान्तीयता, विनाशकारी साम्प्रदायिकता तथ जातीय विद्वेष का वह घोर विरोधी होगा।''

इसमें जनता तथा शासकवर्ग के पारस्परिक सौहार्द्र को बढ़ाने, जनता की कठिनाइयों और अभावों को शासकों तक पहुँचाने की प्रतिबद्धता भी स्पष्ट की गई थी। जनता के प्रतिनिधियों और शिक्षित वर्ग को निःसंकोच और निर्भय होकर 'मधुकर' में लिखने के लिए आश्वासन के साथ प्रेरित किया गया था। दिनांक 23-23-1940 को उन्होंने प्रिय स्वागताध्यक्ष जी (श्री समाधिया जी) को लिखा था।

Please Keep three of your articles ready in my stock for the 'मधुकर'

I am requesting H.H. & Thakur saheb also to do the same, otherwise I cannot guarantee,punctuality of the numbers.
I hope you will not mind my carrections.

Very sincerly yours
B. Das

The Sixth number will
come with five days.

बुन्देलखण्ड के अज्ञात साहित्यकारों को प्रकाश में लाने, नए-नए लेखक तैयार करने उन्हें प्रोत्साहन देकर उनके कृतित्व को निखारने का कार्य चतुर्वेदी ने प्राथमिकता के आधार पर किया। इस संबंध में चतुर्वेदी जी द्वारा लिखे गए एक पत्र का अंश अवलोकनीय है-

''आप अपना सब मसाला ले आइये। उस पर से लेख लिख कर भिन्न-भिन्न पत्रों में भेजिये, Suggestion मैं दे दूँगा कि कितने लेख बन सकते हैं। टाइप भी मैं करा दूँगा। अपने परिश्रम का फल आपको ही मिलना चाहिये।''

'मधुकर' के माध्यम से बुन्देली लोक साहित्य के अंतर्गत लोकगीत, लोकोत्तियाँ, मुहावरे, बुझउअल, लोक कथाएँ, लोक गाथाएँ, आदि लोक संस्कृति, बुंदेलखण्ड का इतिहास पुरातत्व आदि-आदि ऐसा कोई विषय अछूता नहीं था जिसे मधुकर में स्थान प्राप्त न हुआ हो। बुन्देलखण्ड के प्राचीन विस्मृत कवियों के व्यक्तित्व एवं कृतित्व की खोज कराकर उनके साहित्य को प्रकाश में लाने का स्तुत्य कार्य चतुर्वेदी जी द्वारा किया जाता रहा। बुन्देलखण्ड के प्रति उनका समर्पण अद्वितीय था। इस संबंध में उनके एक पत्र की पंक्तियाँ दृश्टब्य हैं-

'' बुन्देलखण्ड के विज्ञापन का कोई भी अवसर हमें हाथ से न जाने देना चाहिये। (बनारसी दास चतुर्वेदी)

महत्वपूर्ण विषयों पर केन्द्रिय 'मधुकर' के निम्नलिखित विवरण अनुसार छैः विशेषांक प्रकाशित हुए-

1. *बुन्देलखण्ड प्रान्त निर्माण विशेषांक वर्ष 3 अंक - 7-16 (1 मई से 16 सितम्बर 43 ई.)*
2. *बुन्देलखण्ड परिषद् विशेषांक वर्ष 3 अंक 19-20 (जनवरी 1944)*
3. *जनपद आन्दोलन विशेषांक वर्ष 4 अंक 1-10 (अप्रैल से अगस्त 1944)*
4. *बुन्देलखण्ड साहित्य सम्मेलनांक वर्ष 4 अंक 17-20 (दिसम्बर 44 से जून 45)*
5. *पत्रकार कला विशेषांक वर्ष 5 अंक 13-14 (फरवरी 46)*
6. *रेखा चित्रांक वर्ष 6 अंक 2 (दिसम्बर 46)*

'मधुकर' का रेखाचित्रांक ही अंतिम अंक के रूप में उपलब्ध होता है। श्री चतुर्वेदी जी ने टीकमगढ़ से दिनांक 10/12/1946 को श्री जगदीश प्रसाद चतुर्वेदी को पत्र में लिखा था-'' (८) मधुकर के फरवरी के बाद बन्द कर देने का आर्डर ओरछा दरबार से आ गया है। 1 वर्ष और अवधि बढ़ जाती तो शायद पत्र चल निकलता। आर्डर की प्रतिलिपि साथ में नत्थी है।'' ...... ।

इस पत्र से तो ऐसा आभास होता है कि 'मधुकर' की अंतिम अंक फरवरी 1947 में प्रकाशित हुआ होगा किंतु तत्कालीन जीवित साहित्यकारों 'मधुकर' के पुराने ग्राहकों से पत्राचार करने, संपर्क स्थापित करने पर भी 'रेखा चित्रांक' के बाद का 'मधुकर' का

कोई अंक उपलब्ध नहीं हुआ।

'मधुकर' के बंद होने संबंधी आदेश से आहत होकर चतुर्वदी जी ने अपना त्याग-पत्र दे दिया था। इसका उल्लेख उन्होंने दिनांक 20/11/1946 को राजेन्द्र कुमार जैन को लिखे गये पत्र में किया है-'' राजाश्रय में अराजकतावादी का रहना ही घोर विडम्बना है, यद्यपि यह बात ईमानदारी के साथ मुझे स्वीकार करनी होगी कि श्रीमान् ओरछेश ने मुझ पर किसी भी प्रकार का नियंत्रण नहीं रखा।

फिर भी यहाँ से मैंने इस्तीफा दे दिया है।''
मिले रूखी रोटी जो आजाद रहकर
तो है खौफे जिल्लत के हलवे से बेहतर।''

देश की स्वतंत्रता के लिए दीवानों, बलिदानियों और क्रांतिकारियों के अगणित जीवन चरित्र प्रकाशित कर चतुर्वेदी जी ने जहाँ एक ओर उनके पौरूष, वीरता, साहस का शंखनाद किया वहीं उनके यश की धरोहर को ससम्मान बड़ी सावधानी से सुरक्षित कर देश प्रेम की अलख जगाते हुये, असंख्य बलिदानियों के रक्त के मूल्य पर प्राप्त स्वतंत्रता को हर कीमत पर बचाये रखने हेतु जन-जागरण कर मानस तैयार करने में अद्वितीय योगदान किया।

'मधुकर' के बंद हो जाने पर चतुर्वेदी जी ने 'विन्ध्यवाणी' साप्ताहिक के प्रकाशन की योजना बनाई। उसके वे स्वयं संस्थापक बने और बाबू श्री प्रेमनारायण खरे को पत्र का संपादक बनाया। विन्ध्यवाणी का प्रथम अंक 'शहीदांक' के रूप में 2 अक्टूबर गाँधी जयंती 1948 ई. को प्रकाशित हुआ। बाबू प्रेम नारायण खरे ने एक तीखा सम्पादकीय लिख दिया। फलस्वरूप वह पत्रिका जप्त हो गई और विन्ध्यवाणी का प्रेस शील्ड कर दिया गया।

चतुर्वेदी जी के लाख कोशिशों के बाद विन्ध्य प्रदेश शासन उसके पुन: प्रकाशन की अनुमति इस शर्त पर देने को तैयार हुआ कि संपादक बाबू प्रेम नारायण एक अग्रलेख लिखकर सखेद माफी माँगे। किन्तु इस शर्त को मानने हेतु न तो चतुर्वेदी जी तैयार हुए और ना ही संपादक श्री खरे। फस्वरूप विन्ध्यवाणी का पुनर्प्रकाशन संभव नहीं हो सका और पत्रिका बंद हो गई।

गाँधी जी के सानिध्य में रहे चतुर्वेदी जी ने गाँधीवादी प्रवृत्ति के रूप में कुण्डेश्वर में बुनियादी प्रशिक्षण संस्था स्थापित कराने हेतु तत्कालीन महामहिम राष्ट्रपति महोदय श्री राजेन्द्र प्रसाद जी को पत्र लिखा। इसी पत्र के आधार पर कुण्डेश्वर में बुनियादी प्रशिक्षण संस्था की स्थापना हो गई। चतुर्वेदी जी को इसका प्राचार्य नियुक्त किया गया। उन्होंने प्राचार्य का प्रभार ग्रहण कर संस्था संचालित हो जाने पर प्राचार्य पद पर किसी अन्य व्यक्ति की नियुक्ति करने तथा उन्हें पद मुक्त करने हेतु पत्र लिखकर मुक्ति पा ली।

चतुर्वेदी जी के कारण देश के प्रथम राष्ट्रपति श्रद्धेय राजेन्द्र प्रसाद जी, विनोवा भावे, देश के मूर्धन्य साहित्यिकार कुण्डेश्वर आते रहे। उन्होंने स्वयं लिखा है कि-'' आचार्य विनोवा जी अपनी पार्टी सहित ललितपुर से 36 मील पैदल चलकर कुण्डेश्वर पधारे थे और राष्ट्रपति बाबू राजेन्द्र प्रसाद जी ने भी यहाँ की यात्रा कर गौरवान्वित किया था। अमर शहीद आजाद की माता जी ने भी चौदह दिनों तक उस आश्रम को पवित्र किया और माहौर जी, सदा शिवजी तथा मास्टर रूद्रनारायण जी वहाँ पधारे। स्वर्गीय किदवई साहब आये थे और डाक्टर राम मनोहर लोहिया तथा हर्ष देव मालवीय भी। मिस मार्जोरी साइका तो यहाँ महीने भर रही थीं।

हिन्दी के अनेक प्रतिष्ठित लेखक तथा कवि यहाँ आते रहे। स्व. वृंदावन लाल वर्मा, स्व. घासीराम व्यास, स्व. शील चतुर्वेदी कई बार पधारे थे। पं. परमानंद जी स्वामी ब्रह्मानंद जी ने भी आने की कृपा की थी। आचार्य क्षिति मोहन सेन तथा हजारी प्रसाद जी द्विवेदी ने यहाँ की यात्रा की थी।''

सन् 1952 ई. में चतुर्वेदी जी राज्य सभा के सदस्य मनोनीत हुए। उस कारण उन्हें कुण्डेश्वर छोड़ना पड़ा किन्तु उनकी आत्मा कुण्डेश्वर में ही बसी रही। फीरोजाबाद से दिनांक 7/12/69 को उन्होंने डॉ. दुर्गेश दीक्षित को लिखा था कि-'' मेरी आत्मा तो वहीं कुण्डेश्वर में विद्यमान है। शरीर भर यहाँ हैं। इस पत्र में उन्होंने यह भी लिखा था कि- '' कुण्डेश्वर का मैं अत्यंत ऋणी हूँ। वहाँ मेरे क्षुद्र जीवन के साढ़े चौदह वर्ष बीते और आज भी मैं कुण्डेश्वर की दी हुई रोटी खा रहा हूँ। यदि आप लोगों की मुझसे कुछ सेवा बन पड़ी तो वह ऋण का आंशिक परिशोध ही मानी जानी चाहिए''

अप्रैल 1966 में एक बार जब चतुर्वेदी जी कुण्डेश्वर पधारे थे तब अपनी स्मृतियों का ताजा कर जब वह आम्र निकुँज का अवलोकन कर लौट रहे थे। तब आगे पलाश निकुँज के समीप स्थित विशाल पीपल के वृक्ष की ओर संकेत करते हुए उन्होंने कहा था- ''कहते हैं मृत्यु उपरान्त जीवात्मा पीपल के वृक्ष पर निवास करती है तो मेरी एक ही आकांक्षा है कि मैं मृत्यु को कहीं भी वरण करू मेरी आत्मा इस पीपल पर आकर ही रहे।''

90 वर्ष की आयु में दिनांक 27/04/82 को चतुर्वेदी जी ने स्वर्गीय पं. परमानंद जी पस्तोर स्वतंत्रता संग्राम सेनानी टीकमगढ़ (जो 'विन्ध्यवाणी' के प्रकाशन काल में उनके सहकर्मी रहे) को लिखा था- प्रिय भाई पस्तोर जी, आपके श्रद्धापूर्ण कृपा-पत्र के लिए बहुत-बहुत कृतज्ञ हूँ। 90वीं वर्ष में लिखना-पढ़ना कठिन हो गया है। क्षमा प्रार्थी हूँ। अवश्यमेव आप लोगों के दर्शनार्थ कुण्डेश्वर पहुँचना चाहता हूँ। नाती राजा का भी विशेष आग्रह है। मेरे जीवन के साढे चौदह वर्ष वहीं बीते थे। जिन्हें में कदापि नहीं भूल सकता हूँ। विन्ध्यवाणी के दिन याद आते रहते हैं''

पं. बनारसी दास जी चतुर्वेदी जिन्हें हम टीकमगढ़ वासी श्रद्धापूर्वक 'दद्दा जी' कहा करते थे कि स्मृतियाँ कुण्डेश्वर (टीकमगढ़) और बुन्देलखण्ड के जन-मन में विद्यमान है। बुन्देलखण्ड नामक भू-भाग उनके अवदान को कभी विस्मृत नहीं कर सकता।

24 दिसम्बर को दादा जी की जयंती के अवसर पर प्रति वर्ष क्षेत्र के सभी साहित्यकार उनके प्रशंसक उसी पीपल वृक्ष के तले बैठकर कुण्डेश्वर में अपने श्रद्धा सुमन अर्पित करते हैं। श्रद्धेय दादा जी की एक एक सौ सत्रहवी जयंती पर शत-शत वन्दन, शत-शत नमन।

-अध्यक्ष

श्री वीरेन्द्र केशव साहित्य परिषद्

परिषद चौक, किले का मैदान

टीकमगढ़ (म.प्र.) पिन- 472001

*****

छतरपुर के बुंदेली कवि और सामाजिक चेतना

-डॉ. अजय कुमार खरे

छतरपुर अपनी साहित्यिक परम्परा, सांस्कृतिक विधिधता, धार्मिक समता, लोक रागनियों की सरलता वनाच्छादित पहाड़ियों की मनोरमता, तीज त्योहारों की साकारता खान पान की मौलिकता लोक गाथाओं की ऐतिहासिकता, आवभगत की आतुरता, बोलचाल की उदारता जैसी अनगिनत प्रवृत्तियाँ इसके अतीत को आज भी अक्षुण्य बनाये हुए है। यहाँ के गाँव और नगर सभी साहित्य और संस्कृति के संवाहक हैं। इस पावन भूमि पर ईसुरी, गंगाधर और ख्यालीराम जैसे सिद्धहस्त कवि अवतरित हुए हैं जिनकी चौकडियाँ बुंदेलखण्ड के जनमानस में वसीं हैं। इस जिले में बाबू गुलाब राय, वियोगि हरि और बिजावर के बिहारी जैसे कवियों ने सारे देश में अपनी यश पताका फहराई है। महाराज विश्वनाथ सिंह जू देव के शासन काल में इस क्षेत्र का विकास हुआ था।

प्रो. ज्योति प्रकाश सक्सेना ने लिखा है– ''छतरपुर नगर में सदा से ही साहित्यिक अलख जगती रही है। बुंदेली लोक साहित्य के सिरमौर ईसुरी की फाग परम्परा तथा गंगाधर व्यास की सैर परम्परा से आज भी यह स्थल स्फूर्ति युक्त है। लोकगीत और लोकनृत्य उसके जीवन में स्पंदित हैं। महारानी युगलप्रिया का कवि इसी नगर के राज प्रासाद में मुखरित हुआ था। लाला भगवान दीन, रविराजा श्यामबिहारी मिश्र एवं सुकदेव बिहारी मिश्र जैसे मनीषियों ने यहाँ साहित्य सेवा की। दीवान श्री प्रतिपाल सिंह का इतिहास इसी भूमि में पल्लवित और पुष्पित हुआ। बाबू गुलाब राय जैसे विख्यात समालोचक ने अपने जीवन का अधिकांश समय इसी भूमि पर व्यतीत किया। वियोगी हरि के जन्म स्थल का सौभाग्य इसी धरती को प्राप्त है।''[1]

बुंदेली साहित्य परम्परा स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व से आज तक इस नगर में चली आ रही है। बुंदेली के मधुर गायक कवि संतोष सिंह बुंदेला ने सारे देश में बुंदेली काव्य की कीर्ति पताका फहराई थी। विंध्य कोकिल भैयालाल व्यास बुंदेली साहित्यकारों में अपना अलग स्थान रखते हैं। कविवर अवध किशोर जड़िया के छंदों की सुगंध आज सारे भारत में महक रही है।

नवल किशोर सोनी 'मायूस' की व्यंग्य रचनाएँ, गोपालदास रूसिया की चौकडियाँ, शंकर दयाल खरे की बुंदेली रचनाएँ, राघवेन्द्र उदेनिया की बुंदेली रचनाएँ आदि आज भी छतरपुर जिले में सामाजिक चेतना के स्वर जाग्रत कर रही है। आकाशवाणी के माध्यम से भी यदा कदा इनके जन जाग्रति के स्वर मुखरित होते रहते हैं। डॉ. बहादुर सिंह परमार, सुरेन्द्र शर्मा 'शिरीष' एवं कुंजीलाल पटेल बुंदेली के विकास में निरंतर तत्पर है एवं बुंदेली काव्य परम्परा को जीवन्त बनाये रखने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते हैं।

वर्तमान में समाज में तमाम विसंगतियाँ फन फैलाये खड़ी हैं। जो धीरे-धीरे समाज से संस्कार, सामाजिकता, ईमानदारी, परोपकार की भावना आदि निगल रही हैं। छतरपुर जिले के साहित्यकार समाज में व्याप्त बुराईयों को देखते हुए इसके विरूद्ध कमर कसे हुए दिखाई देते है। जहाँ एक ओर इनकी रचनायें श्रृंगार में डूबकर लोगें को रसपान कराती दिखाई देती है तो वहीं दूसरी ओर समाज की बुराईयों को उजागर करती हुई जनचेतना के स्वर मुखरित करती है। यही तो कवि कर्म है जो अपनी कविता से न्याय करे।

छतरपुर जिले के साहित्यकार समाज में व्याप्त बुराईयों को देखते हुए इसके विरूद्ध कमर कसे हुए दिखाई देते है। जहाँ एक ओर इनकी रचनायें श्रृंगार में डूबकर लोगें को रसपान कराती दिखाई देती है तो वहीं दूसरी ओर समाज की बुराईयों को उजागर करती हुई जनचेतना के स्वर मुखरित करती है। यही तो कवि कर्म है जो अपनी कविता से न्याय करे।

छतरपुर जिले के नवल किशोर सोनी 'मायूस' जी ऐसे ही लाडले सपूत हैं जिन्होंने समाज को जाग्रति प्रदान करने के लिए कलम का सहारा लिया और समाज में समता और न्याय के लिए आवाज बुलंद की। वे लगभग तीन दशक से काव्य सृजन में लगे हुए है। हालाकि उनकी बुंदेली रचनाएँ बहुरंगी हैं तथा समाज और राजनीति पर करारे व्यंग्य हैं। अपनी रचनाओं के द्वारा उन्होंने अशिक्षितों को शिक्षा की ओर उन्मुख करने का प्रयास किया। उनका ध्येय रहा है कि शिक्षा जीवन का अनिवार्य अंग हैं। वैसे तो इन्होंने विभिन्न विषयों पर कलम चलाई है जिनमें से शिक्षा के प्रति जाग्रति के लिए अनेक रचनाएँ अपनी लेखनी के द्वारा प्रकट की है–

''अपुन पड़ो लिखो और सवई खौ पडाव।।
वेर-वेर कात समय अनपढ नई राव।।[2]

वे इन पंक्तियों से स्पष्ट करते हैं कि शिक्षा समय की माँग है इसलिए खुद शिक्षित होकर दूसरों को भी शिक्षित करो। जिससे समाज में सम्मान हो और कोई तुम्हारा शोषण भी न कर पाये।

इन्हीं की परम्परा के बुंदेली के प्रसिद्ध कवि श्री शंकर दयाल खरे 'शंकर' जी हैं जो समाज में व्याप्त बुराईयों को दूर करने का मन बनाये रहे है। इनकी रचनाएँ विविधता से भरी हुई है, जो सामाजिक चेतना के स्वर मुखरित करती हैं। समाज आज व्यसनों में लिप्त दिखाई देता है जैसे शराब, गुटखा, जुआ आदि जो व्यक्ति को शारिरिक पतन के साथ-साथ चारित्रिक पतन की ओर अग्रसर करते है। शंकर जी ने जो देखा उसका जीवंत उदाहरण प्रस्तुत किया। मैने इनकी रचनाओं का अवलोकन किया तो पाया कि इन्हें यथार्थ की धरती पर जमें रहना ही आता है। श्रृंगार इन्हें रिझा नहीं पाया। साहूकारी व्यवस्था जो किसान के गले की फासी बन जाती है। एक कृषक की व्यथा को 'शंकर' जी ने जीवंत व्यक्त किया है–

''साउकार से करजा काडो। करी भौत नादानी
दस के बीस वना लए चुपकई। भेद खुलो तब जानी।[3]

शंकर दयाल खरे 'शंकर छतरपुर जिले के अग्रणी कवियों में से एक है इनकी कृति 'बॉकी बनी बुंदेली बानी' विविध विषयों का भण्डार है जिसमें व्यवस्था पर व्यंग्य से लेकर आपसी सौहार्द के स्वर झलकते हैं तो वहीं दूसरी ओर हास-परिहास और बुंदेलखण्ड प्रेम भी प्रदर्शित करते हैं।

छतरपुर के संतोष सिंह बुंदेला जी ऐसे रचनाकार रहें है जिन्होंने बुंदेली कविता को एक ऊँचाई प्रदान की है। इनके गीत जनमानस के ह्रदय में बसे हुए हैं। इनके गीत के भाव लोगों को बरबस

ही अपनी ओर आकर्षित कर लेते हैं। ये बुंदेली साहित्य के लिए निरंतर कार्य करते रहे हैं। बुंदेला जी सामंतशाही होते हुए भी मानव प्रेमी थे, वे बंधुआ मजदूरी के खिलाफ थे व किसान के परम हितैषी थे। उन्होंने शिक्षा पर जोर दिया। उनका मानना था कि अनपढ़ होना ही लोगों के शोषण का कारण है। उन्होंने लिखा है-

''कै हम पै रूठ गयो करतार, भँजा रयो जनम जनम के दाव।
तरा ऊँगे सै गये ते छोड, कात ते ल्याय सिंगारे तोड़।[4]

उन्होंने किसान-मजदूरों का शोषण अपनी आँखों से देखा है। शोषण से द्रवित होकर उनकी कलम विद्रोही हो गई और उन्होंने अपने कवि कर्म का निर्वाह करते हुए समाज को नई दिशा दिखाई, समाज में जाग्रति का संचार किया। वे अपने कवि कर्म से अमर हैं। समाज में व्यापत विषमता जब तक बनी रहेगी समाज में संघर्ष चलता रहेगा। समाज विकास की मुख्य धारा से हमेशा दूर रहेगा।

दिनकर जी ने लिखा है। -

जब तक मनुज-मनुज का सुख भाग नहीं सम होगा।
सामित न होगा कोलाहल, संघर्ष नहीं कम होगा।

''मनुष्य को अपनी आवश्यकता की पूर्ति के लिए संतोषजनक पौष्टिक आहार, सामान्य स्तर का कपड़ा एक उचित ढंग का मकान, और अन्य उपयोग की वस्तुएं जो किसी भी परिवार के लिए आवश्यक है। व्यक्ति की दूसरी आवश्यकता न्यूनतम शिक्षा प्रास करने की है। उसे थोड़ा बहुत पढ़ना लिखना आना चाहिए जिससे वह अपनी दैनिक गतिविधियाँ चला सके। किन्तु सामंतवाद के कारण गरीबों और अमीरों की खाई बहुत गहरी होती गई। तरण ग्रस्तता और बंधुआ मजदूर प्रथा ने आम आदमी की स्थिति बहुत जर्जर और सोचनीय कर दी थी।[5]

जहाँ तक छतरपुर के कवियों में सामाजिक चेतना के स्वर की बात है वे इस पर खरे उतरते है। छतरपुर जिला बुंदेली साहित्य की परम्परा को शोमित करता है। यहाँ का कवि समाज में व्यास अशिक्षा, सामंतशाही व्यवस्था, दहेज प्रथा, वैमनस्य, भ्रूण हत्या, नशाखोरी, शोषण आदि बुराईयों को अपनी कलम के माध्यम से दूर करने के लिए तत्पर दिखाई देता है। कवि सम्मेलनों के माध्यम से अपनी आवाज बुलंद कर लोगों को जन जाग्रती का संदेश देता है। सागर संभाग में जिला छतरपुर के कवि सामाजिक चेतना की दृष्टि से अग्रणी दिखाई देते हैं। भैयालाल व्यास, संतोष सिंह बुंदेला, अवध किशोर जडिया, नवलकिशोर सोनी 'मायूस' राघवेन्द्र उदैनिया, शंकर दयाल खरे, शंकर गोपाल दास रूसिया, सुरेन्द्र नारायण तिवारी, आदि साहित्य के सेवक है। इनके बुंदेली काव्य में सामाजिक समरसता छुआछूत के प्रति विरोध, अशिक्षा समासि पर जोर सामंतवादी व्यावस्था के प्रति आक्रोस, शोषण के खिलाफ जागरूकता, दहेज प्रथा, नशाचारी के प्रति जागरूकता का संदेश देते हैं। सांप्रदायिक सदभाव, देश प्रेम, भ्रूण हत्या आदि ज्वलंत विषयों पर जोर देते हैं।

साहित्य का महत्व तब और बढ़ जाता है जब लोक मनोरंजन के साथ-साथ समाज को नई दिशा प्रदान करे। साहित्यकार श्रृंगार लिखकर स्वानुभूति कर सकता है। वास्तव में देखा जाए तो समाज हमेशा की तरह आज भी विसंगतियों से जूझ रहा है। हर तरफ अफरा तफरी का माहौल है। किसान की हालत वैसी है जैसी पहले थी। लोग पलायन कर रहे है। नशाखोरी जस की तस है। अब तो ये आलम है कि शादियाँ शराबघर लगतीं हैं। छतरपुर जिले में बुंदेली कवि समाज में घटित होने वाली तमाम गति विधियों पर नंजर रखता है। मैंने देखा है कि जितना इन्हें श्रृंगार लिखना पसंद है उससे कही ज्यादा समाज की विसंगतियाँ को दूर करने के लिए प्रयासरत दिखते हैं। लोगों को जगाने का कार्य करते है। यहाँ तक कि सरकार की योजनाएँ भी कविताओं के माध्यम से लोगों तक पहुँचाने का कार्य इनके द्वारा किया जाता है।

गोपालदास रूसिया जी सामाजिक सरोकारो के कवि है जिन्होंने अपनी कलम से चेतना के स्वर प्रस्तुत किये हैं। इनकी चौकड़िया प्रसिद्ध है। इनकी पुस्तक है नीचट बोल बुंदेली के जो चौकड़िया विधा में है। इस पुस्तक में सतरंगी रचनाओं का संकलन है। जहाँ एक ओर श्रृंगार बरसता है जो लोगों को प्रेमरस का पान कराता है। वही दूसरी ओर यथार्थ के धरातल पर गोते लगाता हुआ प्रतीत होता हैं। इनकी चौकड़िया लोगों को आपस में प्रेम करना सिखाती है, शिक्षा की अनिवार्यता बताते हुए व्यसनों के दुष्परिणाम बताती हुई आगे बढ़ती है तथा साम्प्रदायिक सौहार्द्र की बात करते हैं।

''कौम - कौम को बीज दारके कीने आग लगाई।
भलो गुपाल हुयै न उनकों जो करवाय लडाई।''[6]

सभी में प्रेम रहे। सभी एक दूसरे के धर्म का सम्मान करें। तभी समाज का विकास संभव है और राष्ट्र का विकास भी इसी में निहित है कि सब आपसी विवाद से परे हटकर एक साथ ही राह पर आगे बढ़ें। इस तरह छतरपुर जिले के बुंदेली कवि सामाजिक चेतना से ओतप्रोत है, इन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से समाज में जाग्रति लाने का प्रयास किया है। इनकी रचनाएँ समाज को आईना दिखाने में सक्षम है। इनकी रचनाएँ बुंदेली भाषा को पहचान दिलाने में सक्षम है।

सामाजिक चेतना के कुछ उदाहरण-

''चले गरीबी सै लखे जे, वीर बाँकुरे रन में।
लै हँसिया हतयार हात में ठाडे है खेतन में।।[7]
''घर से इनै निकारो जू-घर से इयै निकारो जू।
ई दहेज के कुंभ करन खाँ सबरे मिलकै मारौ जू।।[8]

संदर्भ-

1. मनोज्ञ परंपराओं का जीवन्त स्थल छतरपुर- प्रो. ज्योति प्रकाश सक्सेना
2. रैवे इतै देवता तरसे - नवलकिशोर सोनी 'मायूस'
3. बाँकी बनी बुंदेली बानी - शंकर दयाल खरे 'शंकर'
4. मिठौआ है ई कुँआ कौ नीर - संतोष सिंह बुन्देला
5. भारतीय सामाजिक संरचना और परिवर्तन- डॉ. दोषी एवं डॉ. पी.सी. जैन
6. नीचट बोल बुंदेली के - गोपाल प्रसाद रूसिया
7. बेर मकुइयाँ - राघवेन्द्र उदैनिया
8. रैवे इतै देवता तरसे - नवल किशोर सोनी 'मायूस'

- शा.कन्या महाविद्यालय, पन्ना
जिला-पन्ना (म.प्र.)

*****

बुन्देली के सशक्त कवि श्री भानुप्रताप शुक्ल 'भानु' के आकस्मिक निधन पर
बुन्देली बसंत परिवार
हार्दिक शोक व्यक्त करता है।
-संपादक

कारस देव एवं धर्मासॉबरी में चारागाही संस्कृति के लोक साक्ष्य

-डॉ. सीमा तिवारी

लोकगाथा नायक या नायिका प्रधान, कथानक व उपकथानक के साथ चारित्रिक गुणों से युक्त व देशकाल आदि गुणों को लेकर जीवन पर प्रकाश डालतीं हैं। अधिकांश लोकगाथायें वीर रस, करूण रस प्रधान होती हैं। लोकगाथाओं में इतिहास, समाज, नीति, संस्कृति, अर्थव्यवस्था आदि का बोध होता है। बैलेड की परिभाषा - प्रो. किटरिज के अनुसार बैलेड वह गीत है जिनमें एक कहानी कही जाती है अथवा यों कहें कि कोई कथा ही गीत के रूप में कही जाती है।[1]

डॉ. सत्यव्रत सिन्हा के अनुसार लोकगाथा एक सामाजिक संस्था है, जिसकी अन्तरात्मा में व्यक्ति बैठा हुआ है। उस व्यक्ति की अवहेलना हम कदापि नहीं कर सकते।[2] डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय के अनुसार वैदिक साहित्य में गायन शब्द का प्रयोग उस व्यक्ति के लिए किया जाता है जो किसी प्राचीन आख्यान या कथा को कहने वाला हो। अत: गाथा शब्द का अर्थ हुआ कोई आख्यान या कथा।[3]

राबर्ट ग्रेम्स ने लिखा है कि इसका संबंध बैलेट शब्द से है। इसका मूल अर्थ उस गीत से है जो नृत्य के साथ गाया जा सकता है। कुछ समय बाद बैलेट शब्द का प्रयोग संगीतात्मक गीतों के लिए होने लगा।[4]

डॉ. मरे के अनुसार बैलेड वह स्फूर्तिदायक या उत्तेजनापूर्ण कविता है, जिसमें कोई जनप्रिय आख्यान रोचक ढ़ंग से वर्णित हो।[5]

चारागाही लोकगाथायें-

बुन्देलखण्ड में चरागाही लोकसंस्कृति अति प्राचीन रही है। महाभारतकाल में यह क्षेत्र यादवों का गढ़ रहा है। बुन्देलखण्ड का एक नाम चेदि जनपद भी रहा है। चेदि जनपद में पशु पालकों को अधिक महत्व मिला था। ग्वालियर पशुपालकों का केन्द्र था। इस क्षेत्र में पशुपालक जातियाँ अहीर, गूजर अधिक थे। अहीर-गूजर चरवाहे पशुओं को चराने जंगल में ले जाते थे, वह क्रम आज भी जारी है। यहाँ के ग्रामीण क्षेत्रों में चरवाहे पशु चराने ले जाते हैं। यादवों, अहीरों, गड़रियों आदि पशुपालकों के साथ ही गूजरों की स्थिति के संबंध में अनुशीलन भी महत्वपूर्ण है।[6]

उक्त जातियाँ चम्बल नदी के केन के मध्य यमुना नदी की तटीय पट्टी के चरागाहों में निवास करते थे। कारसदेव की गाथा या गोटों में चामल शब्द बार-बार आता है, चामल अर्थात् चम्बल। चम्बल नदी के किनारे उत्तर दिशा में यह क्षेत्र जो कि चरागाही क्षेत्र है यहाँ से दिल्ली तक जाता है। बुंदेलखण्ड में यादवों के बाद गूजरों का राज्य रहा है। इस समाज ने यहाँ के सांस्कृतिक विकास में अपना योगदान दिया है। चंदेलकाल में यहाँ का लोकादर्श युद्ध विषयक रहा है। युद्ध में वीरता पूर्वक लड़ना तथा वीरगति प्राप्त करना रहा है। आल्हाखण्ड में भी इसका स्पष्ट वर्णन मिलता है:-

बारा बरस लौ कूकर जीवे और सोरा लौ जिये सियार।
बरस अठारा लौ छत्री जिये, आंगे जीवे तो धिक्कार।।

युद्ध में खेत रहना बड़े भाग्य की बात होती थी-

जो मर जैहों रन खेतन में, साका चली अंगारू जाय।

इन सबमें राजभक्ति तथा देशभक्ति जुड़ी थी। देश के लिए बलिदान देना सच्चे वीर की पहचान मानी जाती थी, वीरता की साधना और साधना के प्रतीक थे, शिव चन्देलों के आराध्य थे। बुन्देलखण्ड की लोकगाथाओं में शिव को सर्वाधिक महत्व यिा गया है। कारसदेव की गाथा में कारसदेव शिव के वरदान से अवतरित हुए थे। गाथाओं के प्रसंगों में यत्र-तत्र शिव का आव्हान होता है :-

शिव समान दाता नहीं, विपत बिड़ारन हार।
लज्जा मोरी राखियों, बरधा के असवार।।

कारसदेव-

कारसदेव की गाथा चरागाही संस्कृति की पृष्ठभूमि पर आधारित है। राजू गूजर अपने परिवार सहित पशुधन के साथ गड़राझौर में रहता है। एक समय जब गड़राझौर के राजा ने राजू गूजर की कन्या एलादी को अपने पुत्र के लिए माँगा था, साथ में राजू गूजर को यह धमकी भी देता है कि अगर सात दिनों में उसने एलादी के विवाह का प्रस्ताव स्वीकार नहीं किया तो वह जबरन अपने पुत्र के साथ एलादी का विवाह कर देगा।

राजू गूजर को यह प्रस्ताव नागवार लगा। उसने यह समझा कि राजा उसकी कन्या को डॉड़ कें रूप में माँग राह है- इस पर वह यही कहता है कि राजा भले ही हमसे पूरी खौंड़ मँगा लेते, मेरा सबकुछ ले लेते तो मैं उन्हें सहर्ष दे देता लेकिन राजा ने मेरी मूँछ का बाल माँगा है और मैं राजा को वह नहीं दे सकता। राजू गूजर अपने परिजनों से सलाह मशविरा करता है और वह आधी रात में झॉज छोड़ देता है।

झाँझ छोड़ने पर राजू गूजर के ऊपर बहुत मुसीबतें आईं। उसकी खोंड़ के पशु मर जाते हैं। वह राजा मानाराव के यहाँ कूड़ा धौंकने का काम करने लगता है तथा उसकी पत्नी राजा के यहाँ अनाज पीसने का काम करती है। गोरे काका तथा सूरपाल राजा की गायें-भैसें चराने लगते हैं। एलादी भोलेनाथ की तपस्या में लीन हो जाती है, शिव जी एलादी की बारह वर्ष की कठिन तपस्या से प्रसन्न होकर उसे कारसदेव जैसा वरदानी भाई देते हैं। बड़े होने पर कारस राजा गडुवाढ़ार से अपने पिता का बदला लेते हैं।

इस तरह से हम देखते हैं कि इस युग में मुख्य रूप से तीन प्रवृत्तियाँ लोकमान्य थीं। वीरता का आदर्श, विवाह-संस्कार में वीरता को चुनौती देकर राजनीतिक हित साधन और बदले की भावना।[7]

कारसदेव और धर्मासांबरी गाथायें चरागाही संस्कृति की पृष्ठभूमि लेकर चलतीं हैं। दोनों गाथाओं के नायक अपने जीवन में संघर्ष तथा वीरता का प्रतिनिधित्व करते हैं। गाथाओं का उद्देश्य कल्याणकारी और सामाजिक चेतना को जाग्रत करने का है।

कारसदेव और धर्मासाँवरी की गाथा में बहुत समानतायें हैं लेकिन एक स्थान पर दोनों में काफी अन्तर जान पड़ता है। कारसदेव के नायक लोकदेवता हैं जबकि धर्मासाँवरी गाथा लौकिक तथा चमत्कारी गाथा है। दोनों चरागाही संस्कृति पर आधारित हैं।

कारसदेव -

राजन् के उड़वैया, भूतन के भगवैया, भैंसन के चरवैया,
बाँह बल भइया भोला जू, मोखों ऐसो वर दइयो हो हो ...।[8]

धर्मासाँवरीः *जब गइयें चरा रये मोरे राम, रमना तो जा रये जूनागढ़ के रे,*
अपने अम्मा छुड़ा दे मोरे राम, बोले ने लोदन जा कहे रे,
मोरी सुनले बरेदी नोने बात।

कारसदेव की गाथा में चारागाही का चित्रण :

खोड़ डरा दये जिने धौरी गाय,
अरे हतियन बाड़ो राजा कईये राजा गड़राझौर,
अरे बेटी भवानी भोर में, जागी हो ऐसी तैयार,
अरे लोई दुलनियाँ अरे हॉतन लै लई, जा रयी माझे हार,
अरे इकबन चाली दो वन चाली, तीजे खोरन द्वार,
अरे राजू पिता सो रहे, सुकनिंदिया खोड़न धौरी गाय,
बोली भवानी को लगेहैं धौरी गाय खों, को तो करियल भैंस,
अरे भीका लगे हैं धौरी, बछला लै जा रयी धौरी के,
अरे भाई एलादी धौरी खों, अरे गोरे करियल भैंस,
अरे राजू खोंड़ में हैं अपनी, अरे लगा रये करियल गाय,
फिर चरा रये पड़ला कारी झाँज के,
अरे ऐलादी ने सिर पै जमा लई दूधकी खेप,
अरे बैन एलादी रतन जड़ाऊ कुड़री धरें,
जापै धरें दुदुवा की नौ मन खेप,
अरे बीसक पडेरू बछेरू डुरया लये जाय,
अरे भैया हतिया हटाले अरे आड़ी गैल को,
मोरे बछला छड़क रे जॉय,
छरके बछेरू नगनाचन के, अर छलके हमारी खेप,
अरे महुतिया भवानी सें कर रओ जवाब,
अरे जे नैयाँ बछेरु धौरी गाय के, नाथ पकर हट जाय।

धर्मासाँवरी

धर्मासाँवरी गाथा भी कारसदेव की गाथा की तरह चरागाही संस्कृति पर आधारित है। यह गाथा दाम्पत्यपरक समस्या को अपने मूल में लेकर चलती है। गाथा के प्रारंभ में चिड़ा-चिड़िया का विवाद चलता है। चिड़ा मुसीबत में चिड़िया एवं बच्चों को छोड़कर चला जाता है, चिड़िया अपने जीवन की परवाह किये बिना बच्चों की रखवाली करती है। मुसीबत टल जाने पर चिड़ा वापिस आ जाता है। चिड़िया उसके साथ नहीं रहना चाहती, वह चाहती है कि जब मुसीबत में वह उसे तथा बच्चों को छोड़ गया तो ऐसे स्वार्थी के साथ अब नहीं रहूँगी। उनका विवाद राजा बाणासुर तथा राजा भोज की कचहरी में पहुँचता है। लेकिन दोनों राजा जो निर्णय देते हैं वह चिड़िया स्वीकार नहीं करती। अन्त में चिड़िया अपने प्राण त्याग देती है, चिड़ा भी अपने प्राण त्याग देता है।

अगले जन्म में चिड़िया धर्मासाँवरी तथा चिड़ा दंग रिछरिया के रूप में जन्म लेते हैं। धर्मासाँवरी को पूर्वजनम की याद बनी रहती है। इस जन्म में भी इन दोनों का विवाह हो जाता है लेकिन विवाह के पश्चात् दंग रिछरिया को बारह वर्ष तक बेड़नी की कैद में रहना पड़ता है। इस दौरान धर्मासाँवरी के जीवन में बहुतेरी मुसीबतें आतीं हैं। गाथा में एक अन्य पात्र परसा का प्रवेश होता है। वह नायक-नायिका का भान्जा है जो कि उनकी मदद करता है। अपने मामा की कैद छुड़ाने हेतु परसा जाता है, वह अपने मामा के नौ सौ नवासी जानवरों की खोंड़ को लेकर यात्रा आरंभ करता है। यात्रा में अनेक कठिनाइयाँ आतीं हैं जिनको पार करके परसा अपने गन्तवय पर पहुँच ही जाता है। इसी दौरान उसे चार विवाह करने पड़ते हैं।

परसा की पूरी यात्रा में चरागाही पृष्ठभूमि और परिवेश केन्द्र में होता है क्योंकि परसा के साथ दंगरिछारिया की गायें, बछड़े आदि होते हैं। परसा की यात्रा में जो वृतान्त आये हैं वे जादू-टोनों से भरे हुए हैं। जादू-टोना तथा परसा की वीरता, उसकी मुसीबत में देवी द्वारा सहायता करना। गाथा में देवी का प्रभाव तत्कालीन समय में शाक्त प्रभाव प्रतीत होता है। बीच-बीच में बलि भी दी जाती है। बलि, अंधविश्वास, तंत्र-मंत्र, तोता, डाइन, रूप परिवर्तन, आकाशवाणी आदि तत्व तत्कालीन लोकसंस्कृति के यथार्थ के प्रतीक हैं।

धर्मासाँवरी गाथा में चारागाही का चित्रण :

गैयाँ निकारी जेने खोंड़ा सें रे, जिनकी सोभा कही ने जाय।
नौ सौ नवासी गईयें ठाँड़ीं हैं रे, जिनके संगे मलनियाँ रे साँड।
विराजन गइया सोई जा रही रे, जब बोले ने रनियाँ मोरे राम।
ये सुनो मोरी नौ सौ नवासी जा बात, तोरे भरोसे जा भनेज खों।
सौंपत हौं रे, मोरी सुनले मलनिया बात।
धरमा तौ कै रयी नौ सौ नवासी सें रे,
जोन चरोखर तुमारे बरेदी चराउत रये रे,
अरे ओई चरोखर खों जाव,
जोन घाट के पानी तो पियत रये,
अरे ओई खों जईयो मोरे राम।

००००००

गईयाँ तो बगरी जहाँ परसा की रे, पड़ला बगर गव मोरे राम,
सुक की मुरलिया परसा की बज रयी रे, गावें छत्तीसई राग मोरे राम।

उक्त दोनों गाथाओं में तत्कालीन चरागाही जीवन के सच्चे दृश्य अंकित हैं। किस तरह से चरवाहे अपने पशुधन की देखरेख किया करते थे। गाय-भैंस, पड़ला, बछला इन सबकी रखवाली चरवाहे ही करते हैं। उन्हें जंगल में चराने ले जाना, पानी पिलाना, उनका दूध निकालना तथा उनकी रखवाली करना ये सब कार्य पशुपालकों के जीवन के महत्वपूर्ण अंग थे। उनकी रोजी ही पशुओं से चलती थी इसलिए वह पशुधन था उनका।

गौचारण संस्कृति से संबंधित ये गाथायें महत्वपूर्ण एवं विशिष्ट जनपदीय सर्जना हैं। कृषि समाजों के विकास के पूर्व और गौचारण युगों में गोपाल संस्कृति के अपने धन, मूल्य, नायक, लोक विश्वास, आस्था और मातृ देवियाँ रहीं हैं। कारसदेव जैसे पशुपालक लोकदेवता का आभीर संस्कृति के साथ गहरा संबंध है। धर्मासाँवरी एक महत्वपूर्ण लोकाख्यान है जो कृषक सामाजिक जीवन के विकास और धारणाओं से जुड़ा प्रतीत होता है। इस कथा के माध्यम से यह गहरा लोक विश्वास प्रकट होता है कि स्वयं काल और काल में जीवन अनन्त है लेकिन बदलते जीवन रूपों के बीच कोई एक सनातन एवं शास्वत अस्तित्व भी है।

सम्पूर्ण गाथा तीन भागों में विभाजित है :

1. *चिड़ा-चिड़िया का प्रसंग,*
2. *धर्मासाँवरी का दंगरिछरिया से विवाह, विवाह के पश्चात् विछोह*
3. *परसा का आगमन, उसकी यात्रा और मामा की कैद छुड़ाना।*

निष्कर्ष

उपरोक्त दोनों गाथायें मूलरूप में चरागाही लोकसंस्कृति से उपजीं हैं। कारसदेव की गाथा विशुद्ध चरागाही रूप चित्रित करती है। गाथा का प्रारंभ राजू गूजर की पशुओं की खोंड़ से होता है। अंत भी सूरपाल द्वारा पशुओं की खोंड़ ले जाने से हुआ है। चरागाही जीवन की विडम्बना के रूप में राजा द्वारा बाधा खड़ी करना है जिससे राजू को झाँझ छोड़नी पड़ जाती है।

कारस का जन्म, बड़े होने पर राजा से बदला लेना, राजा को पराजित करना इन सब प्रसंगों में गाथा धार्मिक भावना की ओर मुड़ जाती है। तत्कालीन संस्कृति में लोकदेवता की मान्यता है जो कारसदेव को देवत्व प्रदान करती है। इस समय गाथा चरागाही नायकत्व से देवत्व का पलड़ा भारी हो जाता है।

पूरी गाथा में गड़राझौर की झाँज या माना राव की झाँज, वहाँ के परिवेश, पशुपालकों की समस्यायें, तत्कालीन संस्कृति, कारस तथा सूरपाल द्वारा बाउन लड़ाइयों का प्रसंग गाथा को युद्ध विषयक मोड़ पर ले जाता है। लेकिन मूल में तो चरागाही कथानक है और अन्त में भी वही इसलिए निष्कर्ष के रूप में गाथा की बुनावट ही चरागाही है। शेष कितने भी ताने-बाने जुड़े हों लेकिन आधार पर ही गाथा रूपी भवन तैयार हुआ है और वह आधार गौचारण है।

धर्मासाँवरी गाथा के प्रारंभ में दाम्पत्य समस्या केन्द्र में है जो कि तत्कालीन स्वच्छन्द समाज में प्रमुख थी। चरागाही समाज निश्चित ही स्वच्छन्दता की प्रवृत्ति को उत्साही मन से भोग रहा था, इसलिए उसके समक्ष जहाँ पशुओं संबंधी समस्यायें थीं और चरागाहों पर नियंत्रण रखने वाली सत्ता या राजा से संघर्ष भी अनिवार्य था, वहाँ पति और पत्नी में अलगाव से संतति बटवारे की समस्या प्रधान थी।[10] इस दृश्टि से धर्मासाँवरी गाथा का सामाजिक महत्व तो है ही साथ ही न्याय करने वाली पंचायतों में पुरूषों का स्वामित्व और नारी की उपेक्षा तथा वीरता और सुन्दरता का पारस्परिक आकर्षण से सामाजिक यथार्थ का पता चलता है –

बोले ने पंचों जा कहें, तुम दोऊ सुनो मोरी बात।
दे दे चिरैया-चिरैया खोंरे, चिरवा-चिरवा खों दै दे मोरे राम।।
बोले चिरहई जा कहे रे, तुम अरज सुनों पंच महराज।
ऐसो करते अपने रमना में रे, हम कायेखों आऊते मोरे राम।
कायखों नेवतो देते पंचों खां रे, बा तौ भागी चिरैया मोरे राम।।

संदर्भ सूची :

1. A Ballad is a song that tells a story or to take the other point of view a story told in song - Child English and Scottish popular ballads ki 132
2. सिन्हा डॉ. सत्यव्रत – भोजपुरी लोकगाथा, पृ 15
3. उपाध्याय कृष्णदेव – लोक साहित्य की भूमिका, पृ. 37
4. ग्रेम्स राबर्ट – दी इंग्लिश बैलेड़, पृ. 40
5. मरे – न्यू इंग्लिश डिक्शनरी पृ. 26
6. गुप्त नर्मदा प्रसाद – बुन्देलखण्ड की संस्कृति एवं साहित्य, आदिवासी लोक कला परिषद्, भोपाल 2007, पृ. 98
7. गुप्त नर्मदा प्रसाद – बुन्देली संस्कृति और साहित्य, आदिवासी लोक कला परिषद् भोपाल 2007, पृ. 99
8. गुप्त नर्मदा प्रसाद – बुन्देली संस्कृति और साहित्य, आदिवासी लोक कला परिषद्, भोपाल 2007, पृ. 104
9. चौबे ओमप्रकाश – धर्मासाँबरी, लोकाख्यान आदिवासी लोक कला अकादमी, भोपाल 2007, पृ. 437
10. गुप्त नर्मदा प्रसाद – बुन्देली संस्कृति और साहित्य – आदिवासी लोक कला अकादमी, भोपाल 2007, पृ. 113
11. चौबे ओमप्रकाश – धर्मासाँबरी, लोकाख्यान आदिवासी लोक कला अकादमी, भोपाल 2007, पृ. 432

–मोबा. 8817396931, 9617627904

*****

गोरी धना के बोल

–गोविन्द यदुवंशी

लाल चुनरिया ओढ़ें ठाड़ी, बोलें बुन्देली बोल।
सीधी गैल धरें चलो जा, टटवा लगो न खोल।।
पवन घुंघटा ले उठाये, सूरज ऊँबत सो दिख जाये।

चोली बन्द अनारी जुबना, कम्मर चलतन में बलखाय।।
हेरन हँसन देख गोरी की, गेलारो रुक जाय।
मोरी कइ मान गेलारे, बोल कुबोल न बोल।।

सीधी गैल धरें चलो जा, टटवा लगो न खोल।
मोय अकेली जान के, नीयत बिगाड़ न लइये।।
मोरे संग सात कोऊँ नइयाँ, ऐसो सोच विचार न लइये।

सुन ले रे गेंलारे, मोरे भइया है रखवारे।।
तोरे जैसे कइएक उन्ने, लतिया कै दय मारे।
भइया के आउन की बेरा, कढ़ जा न कर देर।।

ललचाई आंखन से मोये, टुकर टुकर न हेर।
गोरी हटके गेलारे खां, मन न मोरो टटोल।।
गेलारे के मन में खटके, गोरी धना के बोल।

मैं बुन्देल भूमि की बिटियाँ लक्ष्मी बाई की सान।।
गोरा उनखां छू ना पाये, उड़ गये उनके प्रान।
मोरे हात दुधारू हसिया, बाबुल मोरो किसान।।

जबरई जो मोरे संग करहै, लै लेहों तोरे प्रान।
मोरे बुन्देली पानी में, रंग न अपनो घोल।।
गैलारे सीधी गैल चलो जा, मोटो टटवा लगो न खोल।।

– राम मंदिर के पास,
पन्ना (म.प्र.)

*****

ओरछा रियासत की विरासत का एक विस्मृत कलाकार

-मुन्ना लाल मिश्रा

आजादी के पूर्व बुन्देलखण्ड में ओरछा स्टेट साहित्य, संगीत, कला एवं अनेक रचनात्मक विधाओं में अग्रणी रहा है। इस बुन्देली वसुन्धरा पर अनेक ऐसे कलाकार, संगीतकार व साहित्यकार हुए हैं, जिन्होंने देश विदेश में बुन्देलखण्ड का नाम रोशन किया है। इन्हीं में से एक मृदंगाचार्य मरहूम उस्ताज नजीम खां साहब थे। इनके पिता श्री भीखन खां महाराजा प्रताप सिंह जू के दरबार में संगीताचार्य (गायक) थे श्री भीखन खां पर महाराज को बहुत नाज था लेकिन भीखन खां कम उम्र में ही इस दुनिया से चले गये।

ओरछा नरेश प्रताप सिंह जू देव ने भीखन (खां) के नन्हे पुत्र श्री नजीम खां को दरबारी आश्रय देकर शिक्षा व संगीत की शिक्षा दिलाने की व्यवस्था की एवं परिवार के रोजी रोटी की भी व्यवस्था की।

एक बार दतिया से स्व. हरचरन उर्फ लाल झल्लीराम मृदंगाचार्य राम मंदिर ओरछा में हाजिरी देने आये, स्व. लाला झल्ली का मृदंग वादन सुनकर महाराज प्रताप सिंह बहुत प्रभावित हुए संगीत सभा में ही महाराज ने लाल झल्ली साहब से राजदरबार में रहने का आग्रह किया साथ ही जो भी शर्त उनकी थी उन्हें पूरा करने का वचन दिया। अन्तोगत्वा लाला झल्ली टीकमगढ़ राजदरबार में हमेशा-हमेशा के लिये आ गये। उन्हें रहने के लिये मकान वर्तमान में (शंकर बाबू खरे का निवास नगर भवन चौराहे के पास) एवं जीवन उपयोगी सभी सुविधाएं प्रदान की फिलहाल राजदरबार में लाल झिल्ली का एक ही कार्य था, बालक नजीम खां को मृदंग व तबला का रियाज कराना, स्व. लाल झल्ली ने एक लम्बे अर्से तक बालक नजीम खां ने मृदंग वादन सिखाकर उस्ताज बना दिया परिणाम स्वरूप धीरे-धीरे नजीम खां की ख्याति दूर-दूर तक फैलने लगी। सन् 1932-33 के करीब इलाहाबाद में आयोजित म्यूजिकल कान्फ्रेंस में उस्ताज नजीम खां को आमंत्रित किया गया वहां उन्हें बुन्देलखण्ड के मृदंग वादक प्रतिनिधि का खिताब दिया गया। सन् 1935-36 के लगभग खनियाधाना स्टेट में मृदंग वादन पर उस्ताज नजीम खां को स्वर्णपदक प्राप्त हुआ। महाराज वीर सिंह जू देव टीकमगढ़ ने भी 1940 के दरम्यान राजदरबार में सम्मानित करते हुये एक स्वर्ण पदक, एक रजत पदक प्रदान किया। वैसे अनेकों रियासतों से उस्ताज नजीम खां को सम्मान व पुरस्कार प्राप्त हुए हैं जिन्हें प्रणाम में उनके द्वितीय पुत्र उस्ताज उम्मेद खां रखे हुए हैं। पंडित लक्ष्मीनारायण मिश्रा (स्मृतिशेष) उर्फ लच्छी मिसर बताते थे कि उस्ताज नजीम खां महाराज वीर सिंह के दरबार में नाजिर के पद पर कार्यरत थे, उनके निर्देशन में ही संगीत का संचालन होता था। उस्ताज अपने गुरु लाल झल्ली के प्रति सारी उम्र समर्पित रहे हैं। लाला झल्ली के नाती स्मृतिशेष श्री शंकर बाबू खरे अतीत की स्मृतियों में झांकते हुये बताते थे कि उस्ताज नजीम खां मेरे घर त्यौहारों पर प्रायः आते थे। चाहे दशहरा हो या होली ईद हो या ईदुल फितर, कभी मिठाई का डिब्बा, तो रबड़ी का दोंना लाते थे। अगर नजीम खां ने मेरे परिवार के किसी भी सदस्य के फटे कपड़ों को देख लिया तो तत्काल नया कपड़ा लाकर भेंट करते थे। यहां अभिप्राय सिर्फ लेनदेन का नहीं है, बल्कि गुरु के प्रति,गुरु के परिवार के प्रति, निष्ठा भक्तिभाव का था। जो उस्ताज नजीम खां के हृदय के कोने-कोने में विद्यमान था। महाराज वीर सिंह जू देव उस्ताज नजीम खां से अधिकतर कहा करते थे कि आप अपने बच्चों को संगीत की शिक्षा दे रहे हो या नहीं? इस प्रश्न पर उस्ताज महाराज के सामने तो हां कह देते थे, लेकिन वास्तविक रूप में बच्चों को संगीत की शिक्षा नहीं के बराबर दी। उस्ताज संगीत से अपने बच्चों को दूर ही रखना चाहते थे। चूंकि उस समय संगीत कला का ह्रास होना प्रारंभ हो गया था। भविष्य में संगीत कला का क्या स्वरूप होगा। यह प्रतिबिम्ब उनके मानस में उभरता था ऐसा उनके पुत्र उम्मेद खां बताते हैं।

उस्ताज नजीम खां का जीवन गरीबी और संघर्ष की धरातल पर गुजरा, इसलिये बच्चों के भविष्य के प्रति हमेशा चिन्तित रहते थे। इन सब स्थितियों के बावजूद भी लालच उनके हृदय के किसी भी कोने में नहीं था। ईमान और स्वाभिमान उनके व्यक्तित्व के आभूषण थे। महाराज वीर सिंह जू देव ने एक बार उस्ताज से खुश होकर कहा, मैं आपकी कला से बहुत प्रसन्न हूँ आप जो चाहे मांग लीजिये। नजीम खां ने बड़े अदब से कहा- हजूर मुझे आपकी नजरें इनायत चाहिये।

सन् 1935-36 के लगभग बुन्देलखण्ड रियासतों से राजाओं को महाराज वीर सिंह जू देव ने संगीत समारोह में आमंत्रित किया, जिसमें मैहर महाराज भी उपस्थित हुए वो अपने साथ अली अकबर (जो अंतर्राष्ट्रीय स्तर के सरोद वादक रह चुके हैं) को लाये। मैहर महाराज ने कहा मैं उस्ताज अली अकबर को साथ लाया हूं उनकी संगत कौन करेगा। महाराज वीर सिंह जू ने नजीम खां का नाम प्रस्तावित किया। संगीत प्रारंभ हुआ जो उस्ताज अली अकबर ने कठिन ताल में सरोद वादन बजाना शुरू किया। उस्ताज नजीम खां ने साथियों से कहा कि मैं इस ताल को नहीं जानता था, लेकिन फिर भी उस ताल के वजन को समझकर एवं बोल बनाकर सीधे तरीके से उनकी संगत की, उसके बाद अली अकबर ने दूसरा ताल बदला, जो उस्ताज नजीम की जानकारी व अभ्यास में था, इसलिये संगत जमकर हुई उस्ताज ने मृदंग पर एक गत इस प्रकार की बजाई कि ऐसा प्रतीत हुआ जैसे सम पर खाली या खाली पर सम आ गया हो, इस स्थिति में उस्ताज अली अकबर ने सम ढूंढने के लिये कई चक्कर लगाये और जब भी वह सम पर आते थे तो सम की जगह खाली होती थी। इस नजारा को महाराज वीर सिंह समझ रहे थे। उन्होंने उस्ताज नजीम खां से कहा बस रहने दीजिये, आप सम पर आ जाइये।

वीरसिंह जू देव के दरबार में उस समय लखनऊ की सुप्रसिद्ध तबायफ मुनीर जान आती रहती थी। उस्ताज के प्रति ईर्ष्या घर कर गई, अन्तोगत्वा किसी बात पर मुनीर जान की उस्ताज से अनबन हो गई। मुनीर जान ने उस्ताज नजीम से कहा कि आप कल से मेरे यहां नहीं आवेंगे, इस अपमान से उस्ताज बहुत दुखी हुये, जिसके परिणाम स्वरूप संगीत सभा गृह में तीन चार माह नहीं गये, कुछ दिनों बाद मुनीर जान के निवास पर (जहां पर वर्तमान में बी.ई.ओ. कार्यालय है) में संगीत चल रहा था, संगत मुनीर जान के भाई कर रहे थे। बीच में ही महाराज ने कहा, उस्ताज नजीम खां क्यों नहीं आये, उन्हें बुलाने के लिये नौकर भेजा गया, परन्तु उस्ताज ने जाने से मना कर दिया, महाराज वीर सिंह ने तबायफ मुनीर जान से कहा कि तुम अपने भाई को भेजो, उनका भाई गया, इसी बीच उस्ताज नजीम खां के खिलाफ मुनीर जान ने भड़काना शुरू कर दिया, मुनीर जान का भाई उस्ताज नजीम खां के निवास पर पहुंचे, और और महाराज के

आदेश को बताया, नजीम खां महाराज के समक्ष उपस्थित होकर सलाम करके एक ओर बैठ गये, महाराज ने शराब का गिलास उस्ताज को देकर कहा कि अब आप मस्त होकर संगत कीजिये, संगीत प्रारंभ हुआ और अन्त में महाराज ने उस्ताज से गुस्ताखी का कारण पूछा तो उस्ताज ने अपनी सारी दास्तान सुनाई महाराज ने मुनीर जान से कहा कि तुम इनको नहीं जानती ये मेरे लँगोटिया यार हैं।

उत्तराधिकारी शासन की समाप्ति के बाद महाराज प्रायः बैकुण्ठी पर समय व्यतीत करने लगे थे, उन्हीं दिनों उस्ताज नजीम खां को अपनी जवान बेटी की शादी करना थी, वह महाराज के पास पहुँचे अपने व्यथा कह आर्थिक सहयोग का निवेदन किया, महाराज ने कहा अब मेरा राज्य चला गया है। मैं आपकी कोई मदद नहीं कर सकता हूँ। नजीम खां ने कल्पना भी नहीं की थी कि उन्हें इस तरह का जवाब मिलेगा, वह बैरंग लौट आये आखिर इधर-उधर संगीत प्रोग्राम देकर आर्थिक उपार्जन कर बेटी की शादी से निवृत्त हुए।

सन् 1953-54 के लगभग भगवन्त क्लब द्वारा आयोजित संगीत समारोह में श्री सुरंगे साहब ग्वालियर को आमंत्रित किया गया सुरंगे की संगत कोई अन्य व्यक्ति कर रहा था। महाराज वीर सिंह ने सभा संयोजक श्री ए.पी. शुक्ला जिला शिक्षा अधिकारी से कहा कि उस्ताज नजीम खां को बुलाइये इसताज नजीम खां वहां गये, सुरंग जी की वायलेन के साथ बेजोड़ संगत की, संगीत समाप्ति के बाद महाराज वीर सिंह ने उसताज से कहा कि कल आप बैकुण्ठी आईये, अब आप हमारे फिर आत्मीय हो गये, महाराज के निवास पर दूसरे दिन उस्ताज नजीम खां पहुंचे, महाराज ने कहा कि उस्ताज आप दिल में किसी प्रकार मलाल नहीं रखिये, चूंकि उस समय हमारा दिमाग सही नहीं था, इस बात पर नजीम खां ने हाथ जोड़कर कहा महाराज आपका दिमाग तो सही था परन्तु हमारा वक्त सही नहीं था। महाराज ने उसी दिन से 40/- चालीस रुपया माह उन्हें आर्थिक सहयोग ताजीवन के लिये शुरू कर दिया।

उस्ताज नजीम खां के दो पुत्र प्रथम स्वर्गीय रहमत खां जो मैहर संगीत महाविद्यालय में 1959 से 1990 तक रह कर दिवंगत हो गये। इन्होंने भी सैकड़ों शिष्य बनाकर अपनी संगीत साधना को फलीभूत किया। दूसरे पुत्र उम्मेद खां जो हायर सेकेण्ड्री स्कूल टीकमगढ़ में रहकर रिटायर्ड हो चुके है तथा विरासत से मिली संगीत परम्परा को संजोये हुये छात्र-छात्राओं को शिक्षा (तवला) की दे रहे हैं। नजीम खां का जन्म 1895 में टीकमगढ़ में हुआ और 1962 में इन्तकाल हो गया।

संगीत विरासत को संरक्षण देने वाले विद्वान प्रो. गोविन्द सिंह यादव (रज्जी सर) ने सन् 1992 में आदर्श पहल रखकर संगीत की विरासत परम्परा को कालजयी बनाने की दृष्टि से नगर के सभी संगीतज्ञों को आमंत्रित कर संगीत परिषद् का गठन किया था। जिसमें श्रीमती जयंती राजा को अध्यक्ष पद की बागडोर देकर संगीत समारोह की श्रृंखला प्रारंभ की गई। उस्ताद नजीम खां मृदंगाचार्य की स्मृति में पद्म श्री असगरीबाई की अध्यक्षता में प्रथम बार 1992 में संगीत समारोह का आयोजन किया। उसी क्रम में अनवरत रूप से उनकी चिर स्मृतियों को संजोर हर वर्ष संगीत समारोह बसन्तोत्सव के वेनर से आयोजित होता है। ऐसे महान संगीतज्ञ मरहूम नजीम खां पर बुन्देलखण्ड गौरवान्वित है।

-विरासत कला मंच
टीकमगढ़ (म.प्र.)
मो. 9893139882

*****

लोककथा-

छप्पर फार के देत

-अवधेश 'अवधेशानंद'

पुरानी कानात है भगवान जब देत है तौ छप्पर फार के देत सो साँची है। संजा की बिरिया हती एक खेंत में एक लोग लुगाई आलू की खुदाई कर मजूरी कर रए ते। खेत कौ मालिक कोउ और हतौ ओइ खेंत की मेंड़ पै एक बड़े झकूटे में दो चोर बैठे रात की बाट हेर रए ते। लुगाई आलू खोद रई ती बाकी खुरपी खन्न भई बानें देखौ हात डारकें तौ उऐ कसेंड़िया कौ कनोंठों दिखा परौ। नेंक और माटी काढ़ी तौ कसेंड़िया अच्छी तराँ दिखान लगी। लुगाई नें लोग सें कई ए देखो इतै एक कसेंड़िया गड़ी। लोक ने आकें कसेंड़िया के ऊपर कौ पारौ खेंचौ और चिल्ला परौ अरे जामें तो असरपी भरी हैं। लुगाई ने कई हाँ जें तो असरफी है अपुन की नइयाँ जे तौ खेत के मालिक की है। अपनौ इनपै कछु हक्क नईं बनत जाँ की ताँ गाड़ दो भोरइ मालिक सें कै दें तो बौ उखार लेंजै जो उन्हें हमैं इनाम किताब देनें हुयै सो उनइँ के हाथन सें ले लें। दोउन ने मिलकें बा कसेंड़िया होंन जा के ताँ गाड़ दइ। जे सब बातें झकूटा में दुक दोउ चार सुन रए तै लोग लुगाई अपने घरै चले गये। रात एक पहर जा चुकी ती। बे दोउ चोर जब बा कसेंड़िया की जाँगा पै पोंचे उतैं माटी कौ भदोंना बनौ हतौ। उन चोरन ने माटी सरकाई तौ कसेंड़िया दिखा परी उन नें बा कसेंडिया कों ऊपर निकार लई वाय काढ़ कें जैसोइ पारौ खोलौ बामें से पीरी पीरी बर्र कढ़ परीं बे ततइयाँ उन दोउ चोरन के हातन पाँवन और मों पै चिपट गईं। उन नें कसेंड़िया के मौं पै ज्यों को त्यों पारौ धर कें कसेंड़िया कौ मौं बन्द कर दऔ। चोरन नें सोची जे लोग लुगाई बड़े बदमास कढे हमकों असरफीं कै कैं ततइयँन कों असरफीं बताकें हमें धोकौ दैकें चिथ्वा डारौ।

हमऊँ उन दोंउन कौ ततइयँन सें चिथ्वा के उनकी बदमासी कौ बदलौ लैहें। ऐसी कैकें बे दोउ चोर कसेंड़िया लैकें चल दये। आदी रात हो गईती दोउ चोर उनके घरै पोंचे भीतर सें किबारन की साँकर लगी ती। उन चोरन नें मँगरे पै चढ़ कें छप्पर में छेंकौ करौ और मसकइँ मसकइँ खपरा खेंच कें एक बड़ौ सौ छेद छप्पर में करके ऊ कसेंड़िया को ओंदा दइ, भाग सें बौ छेद उन लोग लुगाई की खाट के ऊपरइँ भऔ तौ। जैसेई चोरन ने बा कसेंडिया खटिया पैं ओंदाई नेचें खन्न खन्न की आवाज सुनी तो बड़े अचरज में हो गये। नेचें दोई लोग लुगाई जग परे। तों देखौ तो खाट पै पीरीं पीरीं ढेरन असरफीं डरीं। दोउन नें बा कसेंड़िया उठा कें बोले हाय जौ तौ बौइ कसेंड़िया है जो अपुन नें खेंत में गाड़ दई ती। हाय जौ इतै कैसें आ गई। लुगाई बोली अपुन नें दूसरे की समझ कें होइँ गाड़ दइ ती अकेंलें जे तौ हमाये भाग की हतीं सो भगवान नें हमें छप्पर फार कें घरै पोंचा दइँ। भगवान को जब देंनें होत तब छप्पर फार कें देत। जौ हमने बड़े बूड़िन के मौं सें सुनी ती सो साँची हो गई। भगवान नें हमाये ऊपर किरपा करी हैं। घर बैठें छप्पर फार के पौंचा दईं। अब अपनौ कौनऊँ दोस नइयाँ। भगवान की जौइ मरजी हती। उन नें हमाई ईमान दारी कौ बदलौ हमें दऔ है जौ उनकौ परसाद समझ कें इन कों अपना लयें चइये। जै होय भगवान जैंसे तुमने हमाइ गरीबी में छप्पर फार कें हमें दऔ ऐसौ सब गरीबन कों दिइयौ। सच्ची है पंडित जी ने आपकौ नाव गरीब निबाजइ बताव तौ सो साँचऊ अपुन गरीब निबाजइ हैं।

-425, श्रमणा सदन, नई बस्ती
झाँसी (म.प्र.)

*****

छतरपुर के ग़ज़लकार : अकेला और अना

-डॉ. श्रीमती प्रमोद पाठक
-डॉ. श्रीमती पुष्पा दुबे

ग़ज़ल के शाब्दिक अर्थ एवं व्युत्पत्ति के संबंध में विद्वानों ने भिन्न-मत प्रकट किये है। ग़ज़ल यद्यपि अरबी भाषा का शब्द है और अरबी में ग़ज़ल कहने की परम्परा भी रही है परन्तु इसका समुचित विकास फारसी में हुआ। शब्द कोशों में ग़ज़ल का अर्थ स्त्री से वार्तालाप बताया गया है। अरबी भाषा में ग़ज़ल का शाब्दिक अर्थ है - 'प्रेमालाप' अतः अपने आरंभिक रूप में ग़ज़ल के माध्यम से प्रेमभावनाओं को व्यक्त किया जाता था।

ग़ज़ल प्रेमाभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम है। जिसमें श्रृंगारिकता, प्रेमपरकता, सुकुमारिता, सौन्दर्य और नारी विषयक भावों की अभिव्यक्ति होती है। परन्तु कालान्तर में ग़ज़ल ने विषय की परम्परागत परिधि को त्यागकर व्यापक सामाजिक धरातल पर पदार्पण किया। ग़ज़ल सदैव से ही एक अति लोकप्रिय काव्य-विधा रही है। हिन्दी ाल का पदार्पण अमीर खुसरो की उन प्रयोगधर्मी ग़ज़लों से ही हो गया था। जिसमें उन्होंने शेर का एक 'मिसरा' उर्दू में कहा था और दूसरा हिन्दुस्तानी में।

साहित्य में ग़ज़ल का पदार्पण अमीर खुसरो की उन प्रयोगधर्मी ग़ज़लों से ही हो गया था। जिसमें उन्होंने शेर का एक 'मिसरा' उर्दू में कहा था और दूसरा हिन्दुस्तानी में।

धीरे-धीरे हिन्दी में कबीर, भारतेन्दु, हरिश्चन्द्र, प्रसाद तथा निराला आदि कवियों ने ग़ज़लें कहीं परन्तु अत्यंत विरल रूप में। यद्‌यपि उनकी ग़ज़लों की शैली में परम्परागत गीतों की छाप अधिक रहीं । परन्तु यहीं से हिन्दी ग़ज़ल में सामाजिक और राष्ट्रीय चेतना का स्वर मुखर होने लगा था परन्तु ये स्वर अधिक क्रांतिकारी और तीव्र नहीं था।

हिन्दी ग़ज़ल के क्षेत्र में दुष्यंत कुमार की ग़ज़लें क्रांतिकारी परिवर्तन लेकर आई। उन्होंने सर्वप्रथम ग़ज़लों को गहरे और व्यापक रूप में सामाजिक सरोकारों से जोड़ा। उन्होंने अपनी ग़ज़लों में सामंजस्य पूर्ण व्यवस्था और सामंजस्यपूर्ण विकास का व्यापक अर्थ प्रदान किया। दुष्यंत कुमार एक युग का नाम है जहां से हिन्दी ग़ज़ल की विकास यात्रा आरंभ होती है और ग़ज़ल व्यक्ति, समाज और व्यवस्था से जुड़कर उसकी विकृतियों पर वीव्र आक्रोश भी अभिव्यक्त करती है।

ग़ज़ल का बुनियादी रूप हुस्नो-इश्क और प्रेम से जुड़ा रहा है और यह महफिलों तक सीमित रही है परन्तु हिन्दी ग़ज़ल महफिलों से निकलकर जनचेतना से जुड़ी है और व्यक्ति, समाज तथा व्यवस्था से सरोकार रखती है। आम आदमी के भीतर मचे कोहराम को हिन्दी ग़ज़ल ने बहुत गहराई से गवाही दी है। हिन्दी ग़ज़ल दैन्य की नहीं तेवर की विधा है। आज की राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक विद्रोपताओं को उजागर करती हुई हिन्दी ग़ज़ल मनुष्यता के विरुद्ध चल रहे षड्यंत्रों के विरोध में पूरी मुस्तैदी से खड़ी है। ग़ज़ल का प्रतिवाद और प्रतिरोध करना उसने बखूबी सीख लिया है। आधुनिक सभ्यता, औद्योगीकरण, भूण्डलीकरण, एकाकीपन, साम्प्रदायिकता, वैमनस्य, सामाजिक और आर्थिक वैषम्य को हिन्दी ग़ज़ल ने आत्मीयता से चित्रित किया है। मनुष्य के भीतर चल रही चुनौतियों, राग-अनुराग, आकर्षण-विकर्षण को ग़ज़ल ने अपनी विषय-वस्तु बनाया है।

प्रगतिशील कवि वीरेन्द्र खरे 'अकेला' का जन्म 18 अगस्त सन् 1968 को छतरपुर (म.प्र.) के ठेठ देहाती आदिवासी बहुल पहाड़ों एवं जंगलों से घिरे छोटे से गांव किशनगढ़ में एक मध्यमवर्गीय कायस्थ परिवार में हुआ। अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा से इतिहास में एम.ए. एवं बी.एड. करने के बाद वे लम्बे समय तक छतरपुर शहर के अशासकीय विद्यालयों में अध्यापन का कार्य करते रहे साथ ही निःशक्तजनों की शिक्षा, प्रशिक्षण और पुर्नवास के लिये समर्पित एन.जी.ओ. प्रगतिशील विकलांग संसार, छतरपुर के संचालन एवं व्यवस्था में सक्रिय भूमिका निभाते रहे। वर्तमान में 'अकेला' जी एक अध्यापक के रूप में शासन को अपनी सेवाएं दे रहे है साथ हश निःशक्तजनों की सेवा एवं लेखन के क्षेत्र में सक्रिय है।

'अकेला' जी को लेखन की प्रेरणा अपने पिता स्व. श्री पुरुषोत्तम दास जी से मिली। जो भजन-कीर्तन लिखने में काफी रुचि रखते थे यद्यपि उनकी कोई कृति प्रकाशित नहीं हुई। माता श्रीमती कमला देवी भी साहित्यिक-सांस्कृतिक रुचि की है। 'अकेला' जी ने सन्- 1990 से ग़ज़ल-गीत लेखन की यात्रा शुरू की जो अनवरत जारी है। ग़ज़ल संग्रह शेष बची चौथाई रात' (1999-अयन प्रकाशन, दिल्ली) के प्रकाशन ने ग़ज़ल के क्षेत्र में उन्हें स्थापित किया और राष्ट्रीय ख्याति दिलाई। दूसरे ग़ज़ल-गीत संग्रह 'सुबह की दस्तक' (2006-सार्थक प्रकाशन दिल्ली) एवं तीसरे ग़ज़ल संग्रह 'अंगारो' पर शबनम' (2012-अयन प्रकाशन, दिल्ली) ने उनकी साहित्यिक पहचान को और पुख्तगी देते हुए उन्हें देश के प्रथम पंक्ति के हिन्दी ग़ज़लकारों के बीच खड़ा कर दिया है।

प्रकाशित कृतियों के अलावा 'अकेला' जी की बहुत सी रचनाएं वसुधा, वागर्थ, कथादेश, महकता आंचल, सृजन-पथ, राष्ट्रधर्म, कादम्बिनी जैसी प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में भी समय-समय पर प्रकाशित होकर प्रशंसित होती रही है। उन्होंने कवि-सम्मेलनों, मुशायरों, काव्य-गोष्ठियों तथा आकाशवाणी के माध्यम से भी काफी लोकप्रियता हासिल की है। देश की अनेक साहित्यिक संस्थाओं द्वारा उन्हें पुरस्कृत एवं सम्मानित भी किया गया है।

अपनी ग़ज़लों के तीखे तेवरों के कारण वीरेन्द्र खरे 'अकेला' बुन्देलखण्ड के दुष्यंत कुमार कहे जाते है। उनकी ग़ज़लों में जीवन की सच्ची-तपती-सुलगती आग पूरी तेजस्विता के साथ विद्यमान है। वे देश और समाज में व्याप्त दुख-दर्दों, अभावों, असफलताओं, विसंगतियों और छल-छद्‌मों को अनूठे अंदाज में पेश कर अपने पाठकों में विपरीत परिस्थितियों से लड़ने का हौसला भर देते हैं। 'अकेला' जी की ग़ज़लों की विशेषताओं को रेखांकित करते हुए प्रसिद्ध कवि डॉ. कुंअर बेचैन लिखते है-'' 'अकेला' जी की ग़ज़लें विविध विषयों पर होने के साथ-साथ बहर आदि की दृष्टि से निष्कलंक हैं, उनमें सहज प्रवाह भी है ओर अमिट प्रभाव भी। ये ग़ज़ले ग़ज़ल की यशस्वी परम्परा में रहकर नए विषयों तथा नए प्रतीकों की खोज करती हैं। इनमें यथार्थ की सच्चाई और कल्पना की ऊँचाई दोनों के दर्शन होते हैं।'' इसी प्रकार 'अकेला' जी की ग़ज़ल के प्रभाव के उद्घाटन करते हुए इस दौर के शहंशाहे ग़ज़ल डॉ. बशीर बद्र कहते हैं- 'अकेला' की ग़ज़ल वो लहर है जो ग़ज़ल के समनदर

में नई हलचल पैदा करेगी।'' पद्म श्री डॉ. गोपालदास नीरज कहते है कि - '' अकेला के शेरों में यह खूबी है कि वे खुद-ब-खुद होठों पर आ जाते है।'' चर्चित व्यंग्कार माणिक वर्मा एवं प्रतिष्ठित साहित्यकार डॉ. देवव्रत जोशी ने भी अपनी टिप्पणी में 'अकेला' को दुष्यंत कुमार के बाद का उल्लेखनीय शायर निरूपित किया है। स्पष्ट है कि वीरेन्द्र खरे 'अकेला' ने हिन्दी ग़ज़ल को नए विषय, नई सोच, नए प्रतीक और सम्यक् शिल्पगत कसावट देकर इस विधा की उल्लेखनीय सेवा की है और इस क्षेत्र में अपनी विशिष्ट पहचान कायम की है। आधुनिक भावबोध ओर व्यक्तिगत एवं समष्टिगत समस्याओं को अभिव्यक्ति देती उनके कुछ शेर दृष्टव्य है -

अदावत दिल में रखते है मगर यारी दिखाते है,
न जाने लोग भी क्या-क्या अदाकारी दिखाते है।
सोच की सीमाओं के बाहर मिले,
प्रश्न थे कुछ और कुछ उत्तर मिले।
हमको ए जनतंत्र तेरे नाम पर,
उस्तरे थामे हुए बंदर मिले।

'अकेला' जी की ग़ज़लें जीवन और जगत के साथ गहरे तक जुड़ी हुई है। वर्तमान सामाजिक्र, राजनीतिक, आर्थिक और धार्मिक परिवेश का यथार्थपरक चिंतन उनकी ग़ज़लों में अभिव्यक्त हुआ है कुछ शेर देखिए-

पार सन्यासियों का है डेरा यहां,
आ चलें ये जगह कुछ सुरक्षित नहीं।
अरे नादान क्यों उलझा है तू चूल्हे बदलने में
ये गीली लकड़ियाँ है क्यों धुआं देंगी न जलने में।

राजनीति और राजनेताओं के दूषित और भ्रष्ट आचरण पर व्यंग्य करते हुए अकेला जी कहते है-

''ये घातों पर घातें देखो, किस्मत की सौगातें देखो,
धरती को जन्नत कर देंगे मक्कारों की बातें देखे।
अफसोस घूम फिर के वहीं फिर से आ गये,
इन रहनबरों की हमको बहुत रहनबरी खली।

मौलाना हारून 'अना' कासमी का जन्म 28 फरवरी सन् 1966 में मध्यप्रदेश के बुन्देलखण्ड इलाके के शहर छतरपुर में हुआ। आपके पिता हाजी मुहम्मद जमील निजामी एक सामाजिक और धार्मिक मिजाज के व्यक्ति थे। हारून को बचपन में ही पांचवीं कक्षा के बाद छतरपुर में ही अरबी मदरसे में दाखिल करा दिया और इसके बाद मजीद तालीम के लिए कानपुर के एक मदरसे (अहसनुल मदारिस) में दाखिल करा दिया और फिर हिन्दुस्तान के अरबी के मशहूर मदरसे मद्वतुल उलामा लखनऊ से फजीलत की, इसके बाद दारूल-उलूम देवबंद से भी आलमियत का कोर्स किया।

होना तो ये चाहिये था कि मौलाना हारून 'अना' कासमी ने मदरसों के जिन समन्दरों में गोते लगाये वहां से निकल कर शुद्ध मौलवी बन जाते है और अगर शायरी करते भी तो नातों और मरसियों में सिमट जाती, मगर हैरत है कि मौलाना की शायरी में धार्मिकता का कोई प्रभाव दिखाई नहीं देता। यूं लगता है जैसे उनकी आवाज हिन्दुस्तान के हर अच्छे और सच्चे नागरिक की आवाज हो, जो देश की विसंगतियों से जूझ कर उस पर प्रहार करना चाहता हो। मौलाना की शायरी में हुस्नों-इश्क का दखल बहुत ज्यादा है क्योंकि दिल की पहल आवाज यहीं से शुरू होती है। शायरी की शब्दावली और नेचर की खूबसूरती की मंजरकशी इसके बगैर नहीं होती। मौलाना की शायरी में बड़े बारीक और नाजुक इशारों के साथ समाज की दुखती हुई रंगों पर यूं हाथ रक्खा गया है कि हर संवेदनशील व्यक्ति उनके शेरों को सुनकर आह या वाह किये बिना नहीं रह सका और उनके लहजे को वक्त का नया लहजा करार दिया गया।

यूं तो मौलाना के ऊपर बहुत से बड़े शायरों ने अपनी राय दी है मगर में समझती हूँ कि मौलाना की पहली किताब 'हवाओं के साज पर' की कवर टिप्पणी पर डॉ. बशीर बद्र ने जो लिखा बस उसी का हवाला देना काफी होगा - ''मौलाना हारून 'अना' कासमी ऐसे नौजवान ग़ज़ल के शायर है जिसके फिक्रो-फन में उनकी सच्ची रियाजत (अभ्यास) वसीअ मुतालआ (विस्तृत अध्ययन) और शायराना सदाकत है। इनके अच्छे शेरों में ग़ज़ल की सदियों की परम्परायें अपने जमाने से बड़े प्यार से गले मिल रही है, इन रिवायतों में नया लबो-लहजा इनकी अपनी पहचान बनाने में पूरी तरह उजले-उजले है।

मौलाना की अयन प्रकाशन दिल्ली से प्रकाशित ये किताब बहुत सराही गयी और उसका दूसरा संस्करण भी निकला। इसके बाद एक और किताब 'मीठी सी चुभन' भी उसी प्रकाशन से प्रकाशित हुई और देश भर में सराही गयी।

परम्परा और प्रगति के साथ 'अना' आधुनिक भावबोध के शायर है एक शेर देखिये -

''दिल और दिमाग और नजर और जबों और
इस दौर का इंसां कई हिस्सों में बंटा है।''

मुहब्बतों और नफरतों, विश्वास और अविश्वास के सायों ने उनकी शायरी में उन ख्यालों को उभारा है जो इंसानियत के लिए बेहद जरूरी है। भाषा की सहजता व सरलता उन्हें चलताऊ भीड़ से अलग करती है। उनके लहजे की आदमी और जुबान की सफाई ने हिन्दी उर्दू को गंगा-जमुना की तरह मिला दिया है-

''हमारे पुरखों की हवेली अजीब कब्रों सी हो गयी है,
थे मेरे हिस्से में तीन कमरे हो आठ बेटों में बंट गये है।

तत्कालीन, धार्मिक, सामाजिक और राजनीतिक विसंगतियों पर प्रहार करते हुए वे कहते है-

एक ढांचा खड़ा है हल लेकर,
अपनी हिन्दुस्तान देखो तो।
कायदे का कोई लीडर मगर अब तक न हुआ,
यूं तो होने जो हुए मुल्क में मतदान बहुत।
अब तो मजहब की फकत इतनी जरूरत है हमें
आड़ में इसके खुराफात हुआ करती है।

इन ग़ज़लकारों की ग़ज़लें विषय वस्तु की दृष्टि से व्यापक जीवन संदर्भो से जुड़ी है जिसमें व्यवस्था का निषेध, व्यक्तित्व का विघटन, सामाजिक विसंगतियों, दूषित अर्थतंत्र का चित्रण हो रहा है। जीवन की विद्रूपताएं, मानव मूल्यों का विखण्डन, पारिवारिक और सामाजिक विखण्डन, विखण्डित लोकतंत्र, भौतिक एवं वैज्ञानिक प्रगति जन्य समस्यायें हिन्दी ग़ज़ल का विषय बनी।

-नरसिंहगढ़पुरवा, छतरपुर

*****

भाई हरगोविन्द त्रिपाठी 'पुष्प' को एक श्रद्धांजलि-

उड़ गये फुलवा रै गई बास

– पं. गुणसागर शर्मा सत्यार्थी

''हैं'' का स्थान आज ''थे'' ने ले लिया। सन् 1962 से आज तक मैं इस बात से गर्वित रहा कि श्री पुष्प जी मेरे मित्र नहीं, बड़े भाई हैं। मित्र तो बहुतेरे हैं और रहेंगे, किन्तु पीठ बल देने वाला बड़ा भाई मिलना दुर्लभ ही है। इस शास्वत सत्य की कभी कल्पना भी नहीं की थी, कि उनके लिए ''हैं'' के स्थान पर मुझे ''थे'' लिखना पड़ेगा। समय की तीव्र गति ने आज उस ''हैं'' को ''थे'' बना दिया। अस्तु –

भाई पुष्प जी को आज अधिकांश लोग एक आदर्श पत्रकार के रूप में ही जानते पहचानते हैं। यह स्वरूप तो बहुत अन्तराल के बाद उभरकर सामने आया। मैं जब उन से पहले पहल मिला था तब वे बुन्देलखण्ड को गौर्वान्वित करने वाले ख्याति प्राप्त सुकवि ही थे। उस समय तक इन पंक्तियों का लेखक कवि नहीं बल्कि एक चित्रकार था। पुष्प जी ने 'विरहिणी' शीर्षक से खण्डकाव्य लिखा था, जिसके प्रकाशनार्थ मैंने आवरण पृष्ठ की सज्जा अपनी कूची से की थी। उसी समय वे मेरे बड़े भाई कब और कैसे बन गये, पता ही नहीं चला। उस समय पुष्प जी राष्ट्रीय स्तर पर मंचजयी कवि रूप में छाये हुए थे। तब देश के बड़े-बड़े कवि चाहे वे डॉ. हरिवंश राय बच्चन हों, या गीतकार गोपाल सिंह नेपाली, बलवीर सिंह 'रंग', शिशुपाल सिंह 'शिशु' अथवा हास्य व्यंग्य के सशक्त हस्ताक्षर काका हाथरसी, निर्भय हाथरसी या फिर गोपाल प्रसाद व्यास .... आदि। वे टीकमगढ़ जिले की पहचान सिर्फ पुष्प जी के कारण जानते थे। मेरे कहने का अभिप्राय यह कि पुष्प जी की महक राष्ट्रीय स्तर पर कवि रूप में छाई हुई थी। जिसे आज विस्मृत नहीं किया जा सकता।

पत्रकारिता तो उन्होंने एक चुनौती के रूप में बहुत बाद में अंगीकार की थी। उनका समूचा जीवन यातनाओं और पीड़ाओं से अभिसिंचित रहा। उनका परिचय स्वयं उन्हीं के शब्दों में देखें, पुष्प जी ने लिखा था कि-

''ऐसा परिचय नहीं, जो केवल प्रिय के मन को भाये
ऐसा जीवन नहीं, जो केवल क्षणभर में मिट जाये।
औरों के हित जीवन देना-यही हमारा जीवन,
मुझे नहीं है जलन किसी से, सुखी रहें सब जन-जन।''

पुष्प जी के संपूर्ण जीवन का प्रतिबिम्ब उनकी इन चार पंक्तियों में 'गागर में सागर' की उक्ति चरितार्थ करता है। वर्तमान मध्यप्रदेश के जिला टीकमगढ़ के पृथ्वीपुर जो एक छोटा सा ग्राम ही उस समय था। वहाँ पं. श्री राजाराम त्रिपाठी को वैसाख शुक्ल सप्तमी गुरुवार के दिन संवत् 1992 वि. को पुत्र धन प्राप्त हुआ जिसका नाम हरगोविन्द रखा गया। जब बालक हरगोविन्द मात्र अठारह माह के थे तभी उनके सिर से पितृहस्त की छाया उठ गई और विधवा माँ ने सभी प्रकार के अभाव झेलकर अपने लाड़ले हरगोविन्द को पाल-पोस कर बड़ा किया। अर्थात् मात्र डेढ़ वर्ष की शैशव अवस्था से ही बालक हरगोविन्द की पीड़ा और भरपूर यातनाओं से ही मैत्री हो गई थी। कविवर पंत जी की पंक्तियों को साकार करने वाली मित्र मंडली में मात्र पीड़ा और यातनाओं के सिवा और कोई न था। पंक्तियाँ साकार हुई-

''वियोगी होगा पहला कवि, आह से उपजा होगा गान।
निकल कर आँखों से चुपचाप, वही होगी कविता अनजान।।''

और वह बालक 'पुष्प' रूप में काँटों में पला, चट्टानों में मचला तथा मरुस्थल रूपी परिस्थितियों में पुष्पित-पल्लवित हुआ। इस प्रकार हरगोविन्द से 'पुष्प' तक की यात्रा पितृविहीन गृह में अपनी निराश्रित विधवा माँ कौशिल्या, पर कर्म से माँ सरास्वती (चाची) के आर्त कंठ, सजल नेत्रों एवं हृदय के जख्मों के दर्द की असह्य पीड़ाओं से होकर कैसे गुजरी होगी? वह शब्दों में व्यक्त करना संभव नहीं है। बस इतन ही कि समझ की आँख खुली तब उन्हें अपनी दृष्टि अपनी ताई माँ के मातृत्व प्रेम की गहरी अनुभूति से मिली। समाज के बियावान में चारों ओर की हिंसक परिस्थितियों से संघर्षरत रहकर पुष्प जी मात्र शिक्षित ही नहीं हुए वरन् डॉ. हरिसिंह गौर वि.वि. सागर से स्नातक, 'साहित्य रत्न' एवं साहित्य वाचस्पति जैसी उपाधियों से विभूषित हुए।

मात्र 17 वर्ष की आयु में पुष्प जी का लिखा एकांकी 'प्रताप की प्रतिज्ञा' सन् 1952 में झाँसी से प्रकाशित ''दैनिक जागरण'' में प्रकाशित हुआ था। यही पुष्प जी को प्रकाश में लाने वाला पहला प्रकाशन था। उसके पश्चात् उनकी लेखनी चली तो चलती ही चली गयी। ऐसी कोई विधा नहीं थी जिसमें उनकी कलम न चली हो। एकांकी, लेख, कविता, कहानी .... आदि सब आये दिन किसी न किसी पत्र या पत्रिका में छप रहे थे। देश के लब्धप्रतिष्ठित साहित्यमनीषी एवं पत्रकार जगत के प्रकाश स्तम्भ कहे जाने वाले पं. बनारसीदास चतुर्वेदी, डॉ. सु.शंकर नायडू (चेन्नई) उपन्यास सम्राट वृंदावन लाल वर्मा, डॉ. हरिवंशराय बच्चन, भवानी प्रसाद मिश्र, गोपाल सिंह नेपाली, काका हाथरसी, गोपाल प्रसाद व्यास, बलवीर सिंह 'रंग' मुजफ्फरपुर से प्रकाशित साप्ताहिक ''नया संसार'' के संपादक लाल जैन ... आदि कितने नामों का उल्लेख किया जाए जो उन दिनों पुष्प जी की प्रशंसा करते नहीं थकते थे।

श्री प्रेम नारायण रूसिया की प्रेरणा से 'बुन्देलखण्ड साहित्य परिषद्' का पुष्प जी ने गठन किया था। जिसके संरक्षक राष्ट्रकवि मैथलीशरण गुप्त, पं. बनारसी दास चतुर्वेदी और वृंदावन लाल वर्मा थे। पुष्प जी इस परिषद् के महासचिव, श्रीमती शिवकली रूसिया अध्यक्ष और इन पंक्तियों का लेखक संयुक्त सचिव थे। इस परिषद् ने पहली बार बुन्देली की अलख जगायी। स्वयं पुष्प जी जो हिन्दी कविता के क्षेत्र में राष्ट्रीय स्तर पर अपनी पहचान बना चुके थे, उन्होंने बुन्देली में कविता लिखकर राष्ट्रीय स्तर के मंचों पर बुन्देली को एक काव्य भाषा की पहचान दिलाई। एक उद्धरण देखें-

''सन्नाटे की परी दुपरिया, हरिया देखों खेत काट रऔ।
काट-काट कर करकें करपा, मूड़न-मूड़न बोज डार रओ।।
हाँफ चलाती, गरौ सुकाती और पसीना खर-खर्राती...

लपटें चल रईं हो.........

लपटें चल रईं हो।।''

इस बुन्देली कविता में बुन्देली का स्वरूप ग्रामीणों द्वारा बोली जाने वाली बोली से ऊपर उठाकर पुष्प जी ने भाषायी संस्कार देते हुए बुन्देली लोक जीवन की बोलती हुई तस्वीर प्रस्तुत की है-

''भाजी सें भौजी नें देखौ बौ कांसे कौ बेला भर दऔ,
दो ठऊआ कोदन की रोटीं, चटनी, मिरचें, नोंन परस दऔ।
प्रेम दिखाती, चाव बढ़ाती, धनियाँ छिन-छिन नेंन चलाती..।
बैठी सामूँ हो......
बैठी सामूँ हो।।

धनुआँ, कलुआ के बैला लै, ऊनें लाँक कौ ढेर कूँच दऔ,
सूपा लैकें लगौ उडाबे, नाज-कनूँका ढेर लगा दऔ।
पैली आती, भर-भर जाती, खरयानन में दाँयँ कराती।
आं गई फसलें हो.......
आ गईं फसलें हो।।''

ऐसी पुष्प जी की बुन्देली कविताओं को विस्मृत नहीं किया जा सकता। जिस 'विरहणी' खण्ड काव्य का मैंने आवरण पृष्ठ बनाया था उससे भी एक बानगी देखें-

''संध्या हटती जीवन घटता,
मैं रो-रो कर दीप जलाती।
हरि याद तुम्हारी आती।।
तुमने जीवन सौंपा मुझको,
जीने का अधिकार न सौंपा।
चित्र बनाये, छाया डाली,
रूप-रूप में माया डाली,
सब कुछ भी दे करके तुमने-
वह अद्भुत श्रृंगार न सौंपा।''...................

क्या भूलूं क्या याद करूँ? की स्थिति में पुष्प जी के कवि स्वरूप के कितने उद्धरण दिये जाए? एक कविता जो मंचों पर बहुत सुनी गई, वह भी देखें-

''.. रात की स्याही तुम्हारा क्या करेगी?
कर्म का चंदा तुम्हारे साथ जब है।
मंजिलें आकर चरण चूमें तुम्हारे,
बाजुओं का बल तुम्हारे साथ जब है।''

कभी पुष्प जी कहते है-*''दर्पण को क्या दोष? अगर चेहरा दोषी है,*
तर्पण को क्या दोष? अंजुली जब ओछी है।
लाख कोसते रहो उमर को दोष नहीं है,
अर्पण को क्या दोष भावना जब खोटी है।।''

ऐसे छोटे-छोटे मुक्तक लिखकर पुष्प जी जो संदेश देते रहे। उन्हें पढ़कर बिहारी की 'सतसई' नामक दोहावली के संदर्भ में कहा गया दोहा याद आ जाता है-

'' सतसैया के दोहरे, ज्यों नाविक के तीर।
देखत में छोटे लगें, घाव करें गंभीर।।''

इस दोहे को पुष्प जी के संदर्भ में इस प्रकार भी पढ़े तो अतिशय नहीं-

''छोटे मुक्तक पुष्प के, ज्यों नाविक के तीर।
देखत में छोट लगें, घाव करत गंभीर।।''

उन दिनों टीकमगढ़ जिले में पत्रकारिता के नाम पर शून्य उभर आया था। राजाशाही जमाने में भले ही राजा से वित्तीय सहारा प्राप्त कर टीकमगढ़ से ''मधुकर'' अथवा ''लोकवार्ता'' जैसी पत्रिकाएँ ही नहीं, ''विन्ध्यवाणी'' जैसे पत्र भी प्रकाशित हुए हों, किन्तु उत्तरदायी शासन के बाद विन्ध्य प्रदेश बना उसके बाद मध्यप्रदेश, किन्तु टीकमगढ़ जिले की गणना तब भी पिछड़े जिले के रूप में होती थी और आज भी कोई विशेष अंतर नहीं आया। स्वतंत्रता के बाद मीडिया अभिजात्य वर्ग के साथ की कठपुतली न बनता तो प्रकाशन होने के भी लाले पड़ जाते। ऐसी स्थिति में 'पुष्प' जी ने जब ओरछा टाइम्स को जन्म दिया तो ना कहीं से वित्तीय सहारा था, न विज्ञापन थे और न ही अखबार के ग्राहक। किन्तु पुष्प जी और उनके मित्रगण जिनमें एक इन पंक्तियों का लेखक भी था। रात शुरू होते ही राजेन्द्र पार्क में पहुँच जाते और बिजली के खम्बे तले बैठकर अखबार तैयार करते, प्रातः पहली बस से पुष्प जी पूरा मेटर लेकर झाँसी जाते और अखबार छपवाकर लाते थे। तब अखबार निकालना बहुत बड़ी चुनौती थी। उस चुनौती को पुष्प जी ने हँसकर स्वीकार किया और तब से आज तक 'ओरछा टाइम्स' एकमात्र जिले का ऐसा अखबार है जो बगैर नागा किये बराबर छप रहा है। जबकि इस बीच उसके समानान्तर कई अखबारों ने जन्म लिया और वे सबके सब कुछ ही दिन अपनी चकाचौंध बिखेरकर समाप्त हो गए। इसके पूर्व पुष्प जी दैनिक जागरण के प्रतिनिधि रहे। इस प्रकार धीरे-धीरे पुष्प जी का साहित्यकार एवं कवि स्वरूप नेपथ्य में चला गया। आज तो वे जिले में एक सफल पत्रकार के रूप में ही जाने जाते रहे हैं।

पुष्प जी स्वयं में बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी थे। एक चिरस्मरणीय कवि, लेखक, रंगकर्मी शिक्षा के क्षेत्र में आदर्श शिक्षक और एक सफलतम पत्रकार के अतिरिक्त कुशल आयोजनकर्ता व संयोजक थे। ओरछा में केशव जयंती समारोह इसका ज्वलंत प्रमाण हैं। ओरछा इस आयोजन के कारण राष्ट्रीय स्तर पर यदि अपनी पहचान बना सका तो उसका श्रेय मात्र पुष्प जी को हैं। उनके वे आयोजन आज कल्पनातीत होकर इतिहास बन चुके है। पिछले कुछ वर्षो से वे रोग शैया पर थे। उनकी स्मरण शक्ति क्षीण हो चुकी थी, पिछले दिनों मैं गया तो वे मुझे भी नहीं पहचान सके। ऐसी स्थिति में दिनाक 7 दिसम्बर 2016 बुधवार के दिन वे महाप्रयाण कर गए। उनकी यादों और संस्मरणों की इतनी लम्बी सूची है कि कहाँ तक लिखें। इतना ही कि मैंने अपना एक मात्र हितचिन्तक बड़ा भाई खो दिया। बुन्देली लोकगीत की पंक्तियाँ याद आती है कि-

बीन-बीन फुलवा, लगाई बड़ी रास।
उड़ गए फुलवा रै गई बास।।

- कुण्डेश्वर, टीकमगढ़ (म.प्र.)

*****

सँकराँत बनाम मकर संक्रान्ति

-पं. ओमप्रकाश तिवारी

अखिल ब्रह्मांड में आठ ग्रह हैं, इनमें पृथ्वी भी एक है, तथा सौर मण्डल के इन ग्रहों का मुखिया 'सूर्य' है। सभी ग्रह सूर्य के चारों ओर चक्कर लगाते हैं। इन ग्रहों में हमारी पृथ्वी भी सूर्य के चारों ओर घूमती है। इसके घूमने की गति दो प्रकार की होती है- पहली दैनिक गति - इसमें पृथ्वी अपनी धुरी पर पश्चिम से पूर्व की ओर घूमती है इसे अपना एक चक्कर पूरा करने में 23 घंटे 56 मिनिट और 4 सेकेण्ड का समय लगता है, इसी गति के कारण दिन-रात होते है। दूसरी वार्षिक गीत - इसमें पृथ्वी को सूर्य का एक चक्कर पूरा करने में 365 दिन 5 घंटे 48 मिनिट और 45:51 सेकेण्ड अर्थात् एक वर्ष का समय लगता है, इसी गति के कारण ''ऋतु परिवर्तन'' होता है। इन ऋतुओं से जल, थल और वायु में होने वाले परिवर्तनों के कारण यहाँ रहने वाले प्राणी भी प्रभावित होते हैं। भारतीय उप महाद्वीप में ग्रीष्म, पावस (वर्षा), शीत, हेमन्त, शिशिर और बसंत यह छः ऋतुएँ होती हैं।

भारतीय ज्योतिष के अनुसार बारह राशियाँ और सत्ताईस नक्षत्र होते हैं। चन्द्रमा एक राशि पर ढाई नक्षत्र पर भ्रमण करता हुआ एक राशि पूर्ण करता है। साथ ही सूर्य एक राशि पर प्रतिदिन एक अंश भ्रमण करते हुए तीन दिन रहता है, इस प्रकार बारह राशियों पर भ्रमण करने में उसे एक वर्ष का समय लगता है। इसी कारण बारह राशियों की बारह संक्रांतियों अर्थात् एक ऋतु से दूसरी ऋतु के मध्य संक्रमण काल होता है। इसी कारण सूर्य जब एक राशि से दूसरी राशि पर पहुँचता है तो उसे उस राशि की संक्रांति कहते हैं, वही है संक्रमण काल। इसी प्रकार से बारह राशियाँ पर संक्रांतियों का सृजन पृथ्वी और सूर्य की गतियों से होता आया है।

हर ऋतु में मौसम बदलता रहता है। मौसम का परिवर्तन शनैः-शनैः होता हुआ हर ऋतु में विशेष तापमान से हवाओं को प्रभावित करता है तथा तापमान और हवाएँ सम्पूर्ण प्रकृति में बदलाव की वयार लाती है, इसमें मौसम कभी ठंडा, कभी गर्म, कभी मिला जुला या सम होने से वनस्पतियाँ व प्राणियों के लिए अनुकूल व प्रतिकूल होता है। इसी कारण पौष मास में पड़ने वाली मकर की संक्रांति सूर्य उत्तरायण होने का पर्व है। जो उत्तर एवं मध्य भारत के निवासियों के लिए शुभ का प्रतीक है, और बुन्देलखण्ड का भू-भाग भारत के मध्य में स्थित है, इसलिए मकर संक्रांति पर्व आज भी हमारे बुन्देलखण्ड के लोक जीवन में कुछ अलग ही उल्लास के साथ समाया हुआ है। बल्कि यह कहना अतिशयोक्ति नहीं है कि बुन्देलखण्ड के लोक पर्वो की माला में संक्रांति सुमेरु के रूप में स्थापित है। क्यों न हो - ठंड़ से ठिठुरे जीवन में उत्तरायण सूर्य की रश्मियाँ उमंग और आशा की किरणों से शक्ति का संचार करती हैं, जो शुभ सूचक है। कदाचित इसीलिए श्रीमद् भगवत गीता में श्रीकृष्ण जी ने कहा है कि उत्तरायण सूर्य में प्राण उत्सर्ग होने पर मोक्ष की प्राप्ति होती है-

''अग्निर्ज्योतिरह शुक्लः षण्मासा उत्तरायणम्।
तत्र प्रयाता गच्छन्ति ब्रह्म विदो जना।।8।24।गीता

यही वजह है कि महाभारत कथा के अनुसार पाण्डवों के पितामह भीष्म ने सूर्य उत्तरायण होने तक शरशैय्या पर 58 दिन कष्टप्रद समय व्यतीत किया और सूर्य के उत्तरायण होने के पश्चात् ही 135 वर्ष की आयु में महा प्रयाण को वरण किया था .... । महाभारत की इस कथा का प्रभाव समूचे भारत के जन जीवन पर ऐसा पड़ा कि पूरे भारत में यह एक महत्वपूर्ण पर्व के रूप में स्थापित हो गया। कहा गया है कि- ''कोस-कोस पै पानी बदले बीस कोस पै बानी।'' तब भारत का भौगोलिक विस्तार तो बहुत बड़ा है। कितनी ही पर्वत श्रृंखलाएँ, नदियाँ, वन, उपवन आदि ने न केवल भाषा में विविध रूप निर्मित किए हैं। बल्कि रीति-रिवाज और सांस्कृतिक परिवेश में भी पर्याप्त अन्तर की सीमा रेखाएँ खींची हैं। तदनुसार दक्षिण भारत में इस पर्व को पोंगल नाम से जाना जाता है, तो पंजाब और हरियाणा में 'लोहड़ी' नाम से। केवल नाम ही नहीं बदले अपितु इन पर्वो के मनाने के तौर-तरीकों में भी पर्याप्त अंतर है। जबकि इन विविध रूपों में भी इस महापर्व का उद्देश्य एक ही है।

हमारा बुन्देलखण्ड भौगोलिक दृष्टि से इतना विशाल है कि विश्व के कई राष्ट्र भी इससे छोटे-बहुत छोटे रह जाते हैं। अतः बुन्देलखण्ड में इस मकर संक्रांति को इतना अधिक महत्व दिया गया कि यहाँ मकर शब्द ही विलुप्त हो गया। केवल 'संक्रांति' शब्द ही बारह संक्रांतियों में मकर संक्रांति का परिचायक है। बुन्देलखण्ड के अनपढ़ एवं साधारण जन अन्य धर्म पंथ के त्यौहारों में संक्रांत पर्व को सर्वश्रेष्ठ निरूपित करके गर्व करते हैं। अस्तु आइये, हम बुन्देलखण्ड के परिवेश में इस महापर्व की चर्चा करें-

बुन्देली संस्कृति में उत्सवों का एक विशिष्ट स्थान और महत्व है तथा हमेशा रहेगा भी। इसका मुख्य कारण लोक जीवन में व्याप्त विभिन्न परम्पराओं एवं रीति-रिवाजों की परिपाटी बहुत प्राचीन है। यही रीति-रिवाज एवं परम्परायें भारतीय संस्कृति के मूलाधार हैं। लोक जीवन की प्रत्येक गतिविधि प्रकृति के सानिध्य में पूर्ण होती है, इसलिए प्रकृति की इस हलचल से मानवीय जीवन से लेकर वनस्पतियाँ तक प्रभावित होती हैं। यही कारण है कि यहाँ का लोक जीवन प्रकृति, लोक मान्यताएँ, लोक परम्पराएँ यहाँ के लोकोत्सव आदि से जन-जन अभिभूत है, तभी तो कहा है-

''देश के प्रदेशन में खण्ड-खण्ड छानौ।
अपनो बुन्देलखण्ड आँगें दिखानौ।।''

इसी क्रम में इस मकर संक्रांति को देखें। निश्चिय ही यह बुन्देलखण्ड का एक महा पर्वोत्सव है, यह पूरे बुन्देलखण्ड में तीन दिवसीय उत्सव के रूप में सम्पन्न होता है।

इस पर्व का धार्मिक रूप से भी विशेष महत्व है, इस पर्व के एक माह पूर्व से ही इसकी तैयारियाँ प्रारंभ हो जाती हैं। पांडित्य कर्म करने वाले भारतीय ज्योतिष की गणनानुसार - संक्रांति का संक्रमण काल तथा उसके अनुसार उसका पुण्य काल एवं उसके वाहन, उपवाहन, वेशभूषा तथा भोजन आदि की गणना करते है फिर इसका बारह राशियों पर फलित निकालकर घर-घर जाकर लोगों को सुनाते है -

यथा - *''आगमनेतु भवेत्सौख्यं, गमने दुखदा भवेत्।*
यत्र दृष्टिःतत्र युद्धं संक्रांति फल मादिशत।।''

अर्थात्- संक्रांति जिस दिशा में आती है वहाँ सुख होता है, जहाँ जाती है वहाँ कष्ट हो जाता है तथा जिस ओर वह देखती है, उस दिशा में

लड़ाई-झगड़े की संभावना रहती है। साथ उसके वाहन, उपवाहन तथा खाद्यान का भी फलित सुनाते हैं। जिसके उपलक्ष्य में उन्हें तिल, गुड, खिचड़ी तथा दक्षिणा स्वरूप कुछ द्रव्य आदि मिलता है। इसप्रकार ज्योतिष की गणनानुसार ही जन मानस तीर्थ यात्राएँ करते हैं तथा तीर्थों पर स्नान कर दान पुण्य कर पुण्यलाभ अर्जित करते है, क्योंकि कहा भी है –

''पग पवित्र तीरथ किए, मुख पवित्र किए नाम।
तन पवित्र तिन नरन को, करै धर्म के काम।।''

पवित्र नदियों में स्नान करने हेतु जाते समय आज भी लोग रास्ते में 'लमटेरा' गीत गाते हुए जाते हैं – यथा –

''बुड़की तो आ गई नओ गुर लएँ,
गुर लए दो-दो लडुआ,
मसक ल्येव यार रे।
बुड़की तो आ गई हो......।।''

इस तरह इस अवसर पर यह आनन्द भी अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच जाता है, क्योंकि घर-घर में इस पर्व पर अनेक धान्य एवं नये गुड़ से विविध प्रकार के यथा-आटा (कनक), तिल, चावल, मूँग, ज्वार के फूला, मक्का के फूला, लाई, सूजी, बेसन, आदि-आदि के लड्डू बनाने का रिवाज आज भी है, साथ ही, खुरमा, सेव, मटरी, पपड़िया, अदरैनी, ठडूला, गुजिया आदि बनाये जाते हैं। इस पर्व के प्रथम दिवस अर्थात् संक्रांति के एक दिन पूर्व मूँग की दाल की मंगौड़ी बनाकर खाने की परम्परा है इस पर्व को पूरे बुन्देलखण्ड में तिलईयाँ कहते हैं। तिलईयाँ के दूसरे दिन अर्थात् संक्रांति के दिन पकवान, लड्डू आदि बाँधकर सपरिवार यथा साधन लोग पवित्र नदियों तालाबों में स्नान करने हेतु जाते हैं, इसलिए इन धार्मिक व पवित्र स्थलों पर मेलों का आयोजन हो जाता है। इन मेलों में घूमते हुए तथा मंदिरों में बैठकर बाबा के गीत गाते हुए मिल जाते हैं यथा-

''भजन बोलो सिया रघुवर के हो,
सिया रघुवर के रे, भजनहिं में लगा दो बेड़ा पार-
भजन बिन सूनी देहिया रे,
हिरदे में बसा लो सीता राम हो।
सूरत मोरी तोहि से लागी रे,
तोहि से लागी रे, बंशी बारे से लागे दोऊ नैन हो।
सूरत के डोरे डरे रे,
डोरे डरे रे, जैसे वंशी डरी रे दौ माझ हो।''

आज अपने बुन्देलखण्ड के यह मेले बहुत प्रसिद्ध है इन मेलों में ग्रामीण परिवेश की झाँकी देखने को मिलती है। जिसमें उनकी वेशभूषा, रहन-सहन, खान-पान, उनके आभूषण, आचार-विचार आदि का ही तो मेला होता है, साथ ही यह उनकी धार्मिक आस्था का प्रतीक भी है।

रणछोर जी: ललितपुर जिले में धौर्रा रेलवे स्टेशन के निकट वेत्रवती (वेतवा) नदी के तट पर प्राचीन रणछोर जी मंदिर है तथा जंगल में ही दो किलोमीटर की दूरी पर मुचकुन्द गुफा है इन स्थानों पर संक्रांति के अवसर पर विशाल मेले का आयोजन होता है।

नीलकण्ठेश्वर पाली: ललितपुर जिले की नव निर्मित तहसील पाली से दो किलोमीटर की दूरी पर तेलिया पत्थर की तीन मुखवाली भगवान शंकर की अत्याधिक आकर्षक मूर्ति पहाड़ पर सघन वृक्षों के बीच मंदिर में स्थित हैं यह इस अवसर पर विशाल मेले का आयोजन होता है।

माता टीला: ललितपुर जिले में तहसील तालवेहट से दस किलोमीटर की दूरी पर एक विशाल टीले पर सिंह वाहिनी टीलामाता का भव्य मंदिर है, इस अवसर पर यहाँ विशाल मेले का आयोजन होता है तथा यहाँ माता टीला बाँध व वेत्रवती नदी में लोक स्नान करते हैं।

देवगढ़: ललितपुर जिला मुख्यालय से 33 किलोमीटर दूर वेतवा नदी के तट पर विशाल मेले का आयोजन होता है यहाँ छठवी शताब्दी का दशावतार मंदिर एवं पहाड़ी पर प्राचीन भगवान शान्तिनाम का विशाल मंदिर है। इस स्थान का प्राचीन नाम लौच्छागिरि का तथा यह भगवान कार्तिकेय की जन्मभूमि भी है।

कुण्डेश्वर धाम: टीकमगढ़ जिला मुख्यालय से दक्षिण की ओर 5 किलो मीटर की दूरी पर ललितपुर रोड पर आशुतोष कुण्डेश्वर महादेव का स्वयं भू शिवलिंग स्थित है, इस प्रसिद्ध शिवलिंग के विशाल मंदिर को घेरती हुई जमड़ार नदी बहती है, जिसका प्राचीन नाम जगदृष्टा था। इस तीर्थ पर इस अवसर पर एक दिवसीय विशाल मेला लगता है, जिसमें हजारों की संख्या में श्रद्धालु लोग आकर स्नान कर दर्शन लाभ प्राप्त करते हैं।

ओरछा धाम: टीकमगढ़ जिला मुख्यालय से 80 किलोमीटर की दूरी पर रामराजा सरकार का पावन तीर्थ ओरछा धाम वेतवा (वेत्रवती) नदी के तट पर स्थित है, यहाँ मकर संक्रांति के अवसर पर विशाल मेले का आयोजन होता है।

जटाशंकर: छतरपुर जिले में बिजावर तहसील मुख्यालय से 17 किमी. की दूरी पर भगवान भोलेनाथ का पावन तीर्थ जटाशंकर के नाम से प्रसिद्ध है, यहाँ पहाड़ पर स्थित प्राकृतिक दो कुण्डों के जल में स्नान कर लोग जटाशंकर महादेव का जलाभिषेक करते हैं, इस अवसर पर यहाँ विशाल मेला लगता है।

भीम कुण्ड: छतरपुर जिले में ही बड़ामलहरा के पास पाताली कुँआ है, जन श्रुति है कि इस स्थान पर वनवास के समय पाण्डुपुत्र भीम ने गदा मारकर इस कूप को बनाया था। इस अवसर पर यहाँ विशाल मेले का आयोजन होता है।

खजुराहो: छतरपुर जिले में ही जिला मुख्यालय से 45 किलोमीटर खजुराहो में मतंगेश्वर महादेव का विशाल मंदिर है, इस अवसर पर यहाँ विशाल मेले का आयोजन होता है। **केदारेश्वर:** झाँसी जिले की मऊरानीपुर तहसील से दक्षिण की ओर 6 किलोमीटर की दूरी पर रौनी गाँव है, जहाँ केदारेश्वर पर्वत पर केदारेश्वर महादेव भैसे पर लिंग रूप में प्रतिष्ठित हैं, यहाँ इस अवसर पर विशाल सांस्कृतिक मेला लगता हैं।

झारखण्ड: झाँसी जिले की गरौठा तहसील में खड़ौरा ग्राम से दो कि.मी. पूर्व में नागनाथ नाम का एक विशाल पर्वत है, इसकी एक गुफा में नागनाथ शिव की एक कलात्मक मूर्ति प्रतिष्ठित है इसी के समीप से बहती हुई धसान नदी (दशार्ण) को धारा में ऋषि विश्वामित्र की मूर्ति स्थित हैं, जिसके दर्शन गीष्म और शीत ऋतु में डुबकी लगाकर किए जाते हैं जिसके दर्शन ग्रीष्म और शीत ऋतु में डुबकी लगाकर किए जाते हैं ऐसी जनश्रुति है कि इसी धारा में बैठकर ऋषि विश्वामित्र ने तपस्या की थी। इस अवसर पर एक विशाल

सांस्कृतिक मेला लगता है।

पारीछा बाँध: झाँसी जिले में झाँसी कानपुर रेल लाइन एवं रोड पर बड़ागाँव कस्बा के आगे वेतवा नदी पर बने पारीछा बाँध पर प्रकृति के अनुपम सौन्दर्य के बीच इस अवसर पर एक विशाल मेला लगता है।

कालपी: जालौन जिले में कालपी शहर जो महर्षि वेदव्यास की जन्मस्थली है ये यमुना नदी के तट पर स्थित चंदेल कालीन किले में सीढ़ियों से नीचे किला मंदिर है इसमें कपलेश्वर शिव की लगभग एक हजार वर्ष पुरानी मूर्ति प्रतिष्ठित है। यहाँ इस अवसर पर एक विशाल सांस्कृति मेला लगता है।

कर्णखेरा: जालौन जिले में प्राचीन सांस्कृतिक स्थल जम्मनपुर से तीन किलोमीटर की दूरी बुन्देलखण्ड का 'पंचनद' स्थित है जिसमें पहूज, कुँवारी, सिंध, चम्बल तथा यमुना नदियों का संगम स्थल है, यहाँ इस अवसर पर विशाल मेला लगता है।

सैदनगर: जालौन जिले में उरई से दक्षिण की ओर वेतवा के किनारे स्थित इस ग्राम में पहाड़ी का प्राकृतिक दृश्य अत्यन्त मनोरम है इस पहाड़ी पर 'अक्षरादेवी' का बहुत सुन्दर एवं प्रसिद्ध स्थापित है। यहाँ इस अवसर पर विशाल मेले का आयोजन होता है।

महोबकण्ठ: महोबा जिला की सीमा पर तथा हरपालपुर जिला छतरपुर की सीमा में 5 किलोमीटर की दूरी पर एक पहाड़ के ऊपर एक विशाल प्राकृतिक तालाब है यह कभी भी सूखता नहीं है तथा इसमें बड़ी-बड़ी मछलियाँ इसकी शोभा बड़ा रही है। यहाँ भगवान शिव का शक्ति के मंदिर एक वटवृक्ष की छाया में बने हुए है इसकी तलहटी में भी एक छोटा सा आकर्षक तालाब है यहाँ इस अवसर पर विराट मेला लगता है।

बाँदकपुर: दमोह जिले की सीमा पर भगवान शंकर का एक प्रसिद्ध तीर्थ है, यहाँ इस अवसर पर विशाल मेले का आयोजन होता है।

राजापुर: प्रमाणित ग्रंथों के अनुसार 'रामचरित मानस' के रचियता गोस्वामी तुलसीदास की जन्मस्थली राजापुर में यमुना के तट पर संकट मोचन हनुमान जी तुलसीदास जी का प्राचीन मंदिर है, यहाँ इस अवसर पर विशाल मेले का आयोजन होता है।

कामदगिरि: चित्रकूट में कामदगिरि की परिक्रमा करने हेतु लाखों की संख्या में लोग पहुँचते है तथा मंदाकिनी नदी में राम घाट पर स्नान कर दर्शन लाभ लेते हैं। इस अवसर पर यहाँ विशाल मेले का आयोजन होता है।

वर्मान घाट: सागर जिले में नर्मदा मईया के तट पर स्थित वर्मान घाट पर माँ नर्मदा के दर्शन व स्थान कर पुण्यलाभ अर्जित करने हेतु लाखों की संख्या में यहाँ श्रद्धालु आते हैं। इस अवसर पर विशाल मेले का आयोजन होता है।

हजारिया महादेव: ललितपुर जिले की ताल के हर तहसील मुख्यालय में नगर से लगे हुए विशाल तालाब के किनारे स्थित हजारिया महादेव के मंदिर पर इस अवसर पर हजारों श्रद्धालु तालाब में स्नान कर महादेव का जलाभिषेक करते हैं। इस अवसर पर विशाल मेले का आयोजन होता है।

मकर संक्रांति के दिन तिल के प्रयोग का विशेष महत्व है, यथा –

''तिलस्नायी, तिलादवर्ती, तिल होमी तिलोदकैः।
तिल भुक तिल दाता च, षट तिल पाप नाशकः।।''

अर्थात् इस दिन तिल को पीसकर लोटे में डालकर उसमें जल मिलाकर या उबटन करें, तिल का होम करे, तिल को जल में छोड़े, तिल के भोजन करें (तिल के लड्डू बनाकर) तिल का दान करे, इन छः प्रकार से प्रयोग फलदायी होता है। इस पर्व पर बुन्देलखण्ड में एक अनौखी परम्परा है यहाँ गड़ियाघुल्ला विशेष रूप से मौजूद होते हैं। घुल्ला अर्थात् घोड़ा (अंश्व) यह मिट्टी, पीतल आदि धातुओं के साथ-साथ शक्कर (चीनी) से भी बनाये जाते हैं जिनका विधिवत पूजन होता है। चूँकि भगवान श्री कृष्ण ने श्रीमद् भगवत गीता के दसवें अध्याय के सत्ताईसवें श्लोक में कहा है कि- ''उच्चैः श्रवसमश्वानां अर्थात् मैं अश्व के रूप में उच्चेश्रवा हूँ। इसलिए भगवान का प्रतिरूप उच्चैश्रवा अश्व के रूप में तथा प्रत्यक्ष देव भगवान भास्कर के रथ के सातो घोड़े-गायित्री, वृहती, त्रिष्णक, गगवी, श्रेष्ठुम, रनुष्टम और गैर पंक्ति के प्रतिरूपों के रूप में तथा बुन्देली धरा पर जन्मे भगवान परशुराम के वाहन सूपर्ण अश्व तथा वीरता की प्रतिमूर्ति बुन्देली धरा के गौरव ऊदल के घोड़े बैंदुला, चन्द्र, शुक्र व वृहस्पति के तथा जैन धर्म के तीर्थंकर संभवनाथ के प्रतीक चिन्ह अश्व के प्रतिरूप एवं बुन्देलखण्ड के लोकदेवता कारसदेव के वाहन अश्व के प्रतिरूपों की पूजा की जाती है। पूजनोपरान्त यह गड़ियाघुल्ला बच्चों के खेलने-खाने के काम आते हैं। इतना ही नहीं यहाँ गाँवों में इन्हीं घुल्लों को मांगलिक स्वरूप में अपनी-अपनी ससुराल भेजने की परम्परा थी जो आज विलुप्त होती जा रही है। साथ ही मेरे देखते ही देखते मकर संक्रांति के अवसर पर आने वाले 'हरबोला' भी बुन्देलखण्ड की लोक परम्परा के इतिहास में विलुप्त हो गये। कहीं- कहीं इन 'हरबोलों' को 'वसुदेवा' भी कहा जाता रहा है। इनके माथे पर मयूर पंखों का अभूत पूर्व मुकुट धोती-कुर्ता, गले में गलगंदा एवं मालाएँ, मस्तक पर चंदन का तिलक, खंजरी, मजीरा और इकतारा मात्र यही उनके वाद्ययंत्र होते थे। वे गाते-बजाते निकलते और किसी से कुछ भी मांगते नहीं थे, हर दरवाजे पर खड़ रहकर गाथा गाते, कुछ मिल जाता तो लेकर गाते हुए ही आगे बढ़ जाते थे, यदि किसी दरवाजे पर कुछ न भी मिले तो भी उनका वह संगीत उसी मस्ती के साथ-गली-कूचों में गूंजता था। उनकी लोक गाथाओं ने स्थानीय एवं क्षेत्रीय इतिहास को जीवित रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। उदाहरणार्थ – 1857 के विप्लव में बुन्देलखण्ड की अहम भूमिका थी यहाँ झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई ने मर्दानी होकर फिरंगियों के छक्के छुड़ाए थे। किन्तु ई. मार्सडन के इतिहास में उसे विकृत करके ही प्रस्तुत किया जो यथार्थ के ठीक विपरीत भी था। यदि इन हरबोलों ने झाँसी की रानी की शौर्य गाथा गाँव-गाँव में गाकर न सुनाई होती तो हमारे स्वतंत्रता संग्राम में बुन्देलखण्ड का योगदान विलुप्त ही हो गया होता। मकर संक्रांति और हरबोलों का गायन परस्पर पूरक रहे हैं। आगत पीढ़ी आज सुभद्रा कुमारी चौहान की कविता से केवल हरबोलों का नाम ही जान पाई है, यथा –

''बुन्देले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मर्दानी वो तो झाँसी वाली रानी थी।''

संक्रांति की यह महत्वपूर्ण परम्परा आज विलुप्त हो गई है जो खेद जनक है। ऐतिहासिक एवं पौराणिक गाथाएँ भी उनके साथ विलुप्त हैं। वे गाथा गाते तो प्रत्येक चरण के बाद एक सम्पुट लगाये थे-

''तन-तन- चून चुखरियाँ खायँ, हर गंगा हर गोपाल।
हर के वचन सुनों दो चार, हर गंगा, हर गोपाल।।''

किन्तु आगत पीढ़ी कैसे जानेगी कि बुन्देले हरबोलों के मुँह सुभद्राकुमारी चौहान ने जो कहानी सुनी थी उसका स्वरूप कैसा था और 'हरबोला' किस चिड़िया का नाम है?

इस पर्व के तीसरे दिन अर्थात् संक्रांति के दूसरे दिन भभराँत का पर्व मनाया जाता है इसमें घर में बने हुए लड्डू, पकवान तथा गड़ियाघुल्ला का विधिवत पूजन कर इन्हें कपड़े की एक थैली में भरकर रख दिया जाता है इसे ''गौन भरना'' कहते हैं। इसे बसंत पंचमी के दिन विधिवत पूजन कर खोला जाता है, इस प्रकार से पुनः एक बार उत्सव बसंत पर लड्डुओं के साथ-साथ गड़िया-घुल्ला के खाने का आनंद लिया जाता है। दूसरी ओर समाज के कुछ वर्गों में भभराँत के दिन शिकार कर उसे बनाकर खाने की परम्परा आज भी है। इसमें भी सामूहिक रूप में जंगल में जाकर जंगली सुअर का शिकार विशेष रूप से किया जाता था। इसमें कई बार लोगों को अपने जीवन से हाथ भी धोना पड़ता था और कई लोग बुरी तरह से जखमी भी हो जाते थे, आज जंगलों की कटाई हो जाने के कारण इनकी संख्या कम हो गई है, इसलिए बाजार से उपलब्ध माँसक्रय करके बनाकर खाने और उसके साथ शराब पीने की परम्परा आज भी देखने को मिलती है। इस भोजन के द्वारा लोगों का तामसी और पाश्विक प्रवृत्तियों को जीवन्त रखने का प्रयास ही है क्योंकि भगवान श्री कृष्ण ने श्रीमद् भगवत गीता के सत्रह वें अध्याय के दसवें श्लोक में कहा है कि - तामसी व्यक्तियों को दुर्गन्ध मय, रस रहित, जूठा तथा बासा और अधपका भोजन प्रिय होता है। यही तामसी भोजन ही अशान्ति और कलह का जन्मदाता है यथा -

''यातयामं गतरसं पूति पर्युषितं च यत्।
उच्छिष्टमपि चामेध्यं भोजनं तामसाप्रियम्।। 17-10।।''

बुन्देली भूमि आभागत होती नजर आ रही है जिसकी एक झलक पं. सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' जी ने प्रस्तुत की है यथा-

'' निश्चल अब वही बुन्देलखण्ड आभागत।
निःशेष सुरभि कुरबक समान।।
संलग्न वृंत पर चिन्त्य प्राण
बीता उत्सव ज्यों चिन्ह म्लान छाया श्लथ।।''

इसीलिए तो राष्ट्रकवि मैथलीशरण गुप्त जी ने कहा था कि -

'' प्राचीन हो कि नवीन छोड़ो रूढ़ियाँ जो हों बुरी।
बनकर विवेकी तुम दिखाओ, हंस जैसी चातुरी।।
प्राचीन बातें ही भली हैं यह विचार अलीक है।
जैसी अवस्था हो जहाँ वैसी व्यवस्था ठीक है।।''

जबकि हमारी यह बुन्देली भूमि विश्वस्तर पर अपना एक विशिष्ट स्थान बनाये हुए थी और बनाये रहे ऐसी हमारी आकाँक्षा है। जैसा कि घासीराम व्यास मऊरानीपुर (झाँसी) उत्तरप्रदेश ने लिखा है कि -

''अमर अनन्दनीय असुर निकन्दनीय
वन्दनीय विश्व में बुन्देलखण्ड भूमि है।।''

-तिवारी सदन, कुण्डेश्वर
जिला-टीकमगढ़ (म.प्र.)
मोबा. 9630078557

*****

बुढ़ापे की व्यथा

-सुरेन्द्र कुमार श्रीवास्तव 'सुमन'

हाड़ तोर मेंनत कर खेती, राखीं भैंसे गइयाँ।
दिन दिन भर रए फाँकें करकें, पेर न पाई पनइयाँ।।
गहनो गुरिया बेंच ललन को, पाँयन ठाड़ो करदव।
बहुअन के संग मजा कर रए, एकउ हमें न मररव।।
सोची ती हम डुको डुकरिया लरकन के संग रेहैं।
चार चार लरका बहुएं हैं हाँतन पे सब लेहैं।।
लर भिर कें अब घरउ छुड़ा लव सार दई रेवे कों।
तीज तुहारन पेउ न पूछें दे दें कछु खावे कों।।
बहुएं चार कोउ ना पूछें उल्टो देवें ताना।
देवर जेठ कों खूब करत हो हमें देव ना दाना।।
बहुंए केरँइ साल बाँट लो कब नों कुन में रेहो।
दो बीघा जो तुमें मिली है बाको तुम का देहो।।
नाती एकउ बात न मांनें ढ़िगां नेक ना आवें।
नैक नैक कामन के लानें औरन सें गिगयावें।।
आँखिंन से लहचार डुकरिया हाँतन रोटी ठोके।
कच्ची कोंरी जोइ मिल रँई खा रए दोऊ रोके।।
रात दिना कोसत बउअन कों लरका करे विराने।
हम तो रोकें काट रए सुन तुम बन जाव सियाने।।
सुख सें कटै बुढ़ापो घर में जलो जथा कछु धरियो।
राम भजन कर ''सुमन'' प्रेम से जीवन यापन करियो।।

-ग्राम कुसमरा, पो. नावली, जालौन (उ.प्र.) पिन-285121
मोबा. 9415924778

*****

बुन्देली चौकड़ियाँ

-दीनदयाल तिवारी 'बेताल'

रूप कौ गरब कभउ न करियौ, ध्यान गुनन पै धरियौ।
गुनइ देखौ रूप न देखौ, धोकौ जिन खा जइयौ।।
पूजा होत है ज्ञान गुनन की, कवि की बात पकरियौं
नइ मानों 'बेताल' बात जा, सोसत सोसत रइयौ।। (1)
होंनी होकर ही मानत, ई खों जन जन जानत।
ई पै बस न चलत काहू कौ, वेद पुरान बखानत।।
जानत है पै सब नइ मानत, अपनी अपनी तानत।
कयँ ''बेताल'' प्रबल है हौनी, ई खों कोउ न टारत।। (2)
सबखों अपनी काया प्यारी, गोरी हो या कारी,
तेल पाउडर खूब लगा रय, क्रीम लगाउत न्यारी।।
ब्यूटी पार्लर में जा जाकें, मसाज करायँ भारी।
धू-धू कर 'बेताल' जल है, प्यारी काया सारी।। (3)

-श्री सिद्ध बाबा कालोनी, टीकमगढ़ (म.प्र.)
मोबा. 9893153534

*****

बुन्देली की कहानी- ओइ की ज़ुबाई

-मनोज सोनी

भारत देश के बीचऊँ बीच की धरती कौ एक बड़ौ हैंसा (हिस्सा) बुन्देलखण्ड के नाव से जानों जात, जा बात अपुन सब खों पतौ है। अपुन जा सोऊ जानत कै जौ बुन्देलखण्ड उत्तर प्रदेश औ मध्य प्रदेश के करीबन 27 जिलन में फैलो है जिनमें बुन्देली बोली जात रई। अपनी ऊ बोली की जा हालत हो रई कै धीरें-धीरें उये बोलबे बारे घटतई चले जा रये। मोय मन में ई बात की चिन्ता बनी रात, सो एक रात कें बुन्देली बर्राटन में साच्दात हो कें जो कछू बोली बा मैं अपन सब सें कन चाउत। चाय जा कैलो कै बुन्देली बोली की बिथा कौ बौ बतकाव बुन्देली के सब जनवन सें कन चाउत। बा बोली कै बुन्देली के बड़े-बड़े जनवा कत कै बुन्देली खड़ी बोली से भौत पैलऊँ की भाषा आय और जा भौतऊ मीठी या गुरीरी लगत। जब लिखबे कौ काम शुरू नईं भव तो ऊ बेरां बुन्देलखण्ड के सबई नन्ने-बड्डे मोइये बोल-बोल कें आपस में बतकाव करतते। ऐसई बृज के बसइया बृज भाषा में औ अबध के बसइया अबधी में बतकाव करतते।

जब लिखबे की शुरुआत भई तौ बृज और अबधी में पैलऊँ कवता-कानियाँ लिखी जान लगीं। फिर बुन्देली में सोऊ आल्हा जैसी कवताएँ औ किस्सा लिखे गये। ऐइ बीचां खड़ी बोली या हिन्दी कौ जनम भऔ। ईमें ऊपर बताई तीनऊँ भाषन के संगै कछू और भाषा-बोलियन के सबद (शब्द) लैकें बोलो व लिखो जान लगो। धीरें-धीरें हाल जौ भव कै पैलऊँ की भाषा बोलियन कौ महत्त घटन लगो और खड़ी बोली कौ महत्त ऐसौ बड़ो कै ऊने आदे सें जादाँ उत्तरी देश पै कब्जा कर लऔ। ईखों हिन्दी कन लगे। सबरौ लिखबौ-पड़बौ हिन्दी में हौन लगो सो ऊ कौ साहित्य दिन दूनों रात चौगुनौ बड़न लगो। जौ देख कें बुन्देलखण्डियन खों सोऊ मोरी बुन्देली भाषा में लिखबे कौ सौंक चर्रानों। परनाम जौ भऔ कै बुन्देली भाषा की कवतन औ किसा कानियन की पोथी (किताबें) सोऊ धड़ा-धड़ छपन लगीं। मोय भाई नौनौं लगो। बुन्देली के जनवन ने बुन्देली भाषा की व्याकरन, सबद कोश और इतहास सोऊ लिख डारे। बोलबे, लिखबे-पड़बे व छपने की खूब तरक्की भई।

देश की सुतंत्रता के बाद सेहरन और गाँवन-खेरन में स्कूल खुलत गये सो लरका-बिटियाँ पड़न लगे। स्कूलन में हिन्दी और अंगरेजी पड़ाई जात सो सब हिन्दी सीकन लगे और बेई बोलन लगे। बीच-बीच कछू अंग्रेजी के सबद सोऊ बोलत। पड़े लिखे मौड़ा-मौड़ी बुन्देली बोलबो भूलत गये, काय कै बुन्देली बोलबे-लिखबे पै गुरू जी नाराज होत। जौलों गाँवन के बिना पड़े-लिखे आदमियन और जनी मांसन की गिनती बड़न लगी उर बुन्देली बोलवे वारन की गिनती घटन लगी। गाँवन सें मजूर बड़े सेहरन में मजूरी करवे जान लगे सो बे सोक बुन्देली छोड़ हिंगलिश (हिन्दी+इंग्लिश) बोलवो सीक गये। रई-खुरी कसर टी.वी. ने पूरी करी जीसैं हिन्दी सोऊ अंगरेजी के अक्षरन में लिखी तक जान लगी। अंग्रेजन की नकल करबे में खाबौ-पीबौ, बोलबौ-चालबौ और सबई कछू बदल गऔ। अब बुन्देली खों को पूँछत? और तौ और अब हिन्दी में पड़वे की जाँगा गाँवन-गाँवन तक में अंगरेजी में पड़ावे बारे स्कूल खुलत जा रये। अब हाल जौ है कै सेहरन और कसबन में हिन्दी कै संगै बुन्देली के सबद बोलवे बारे नाव के लाने रै गये उर गाँवन में पुराने आदमी व जनीमानस कछू हिन्दी और कछू बुन्देली बोलत। मोय अब ऐसौ लगन लगो कै भौतउ जल्दी बौ समै आबे बारौ है कै बुन्देली बोलवे बारे निठुंअईं न बचें। और तौ और बुन्देली में लिखबे बारे और बुन्देली की तरक्की की बातें करबे बारे सोऊ हिन्दी में बतकाऔ करत दिखात। अबै अबै बुन्देली के शब्दकोश, व्युतपति कोश, इतिहास बगैरा की जौन पोथीं लिखीं गई उनकी भूमकायें, प्रकाशकीय, लेखकन की अपनी बातें आदि भी खड़ी बोली में लिखे गये। मतलब जौ कै मो बुन्देली की बड़वाई औ बुन्देलखण्ड के बारे में सबई कछू हिन्दी में लिखो जा रओ। अपन विद्वनन द्वारा पोथीं और पत्रकन में मो बुन्देली के बारे में जौन लिखो जा रओ ऊसें कछू तसल्ली तौ होत कै बुन्देली कौ नाव सैकरन सालै चलै। एक कवता की दो लैनें हैं कै-

इतिहास का आदमी बहुत बोलता है,
क्योंकि आदमी को मुर्दे से तौलता है।

मतलब जौ कै इतहास और सबई विषयन की किताबन में जो सैकरन और हजारन साल पैलऊँ लिखो गओ बौ मुर्दा जैसौ धरो है। जो जिनदा है बौ तौ बोलत हैं। जी भाषा के बोलबे बारे न रै जैं बा तौ मुरदा जैसी पोलिथिन भर में परी रैहै। मो बुन्देली के बोलबे बारन की दिन पै दिन घटत रई तादाद देखकें मन में कल्लौनियाँ लगी रत।

अपुन बुन्देली के सब जनबन और विद्वानन सें मोरी जेई विनती है कै अपन जितनी मैनत मोरे साहित्य खों बड़ाबे के लाने कर रये ऊके संगै-संगै बुन्देली बोलबे बारन के बचाबे औ बड़ावे के लाने सोऊ करौ तौ मोय भाई खुशी हुइये। आँगन-ताँगन बुन्देली मेला, बुन्देली साहित्य सम्मेलन व मानक बुन्देली कौ बतकाऔ देख- सुन के मोइ बाँछें कछू समै के लानें खूबई आ खिल जातीं। मोरे मन में तौ जा लगी रत कै मानक बुन्देली की बात तबे नौनीं लगै जब पैलऊँ बुन्देली खों बचाबे या जिन्दा रखबे की कोशिश होबै। बुन्देली संस्कृति सोऊ जबईं बचै जब बुन्देली भाषा बचै। मैं जा सोऊ जानत कै अपन सब के मन में सोऊ जा बात सालत रत। बुन्देली मेलन में बुन्देली बोलबो, बुन्देलियन कौ खाबौ, पैरबौ, गाबौ-बजाबौ, खेलबौ, कूँदबौ, नचबौ, सबई कछू कौ मजा मेला में आबे बारे खूबई आ लेत। प्रतयोगतन में भाग लैवे बारन खों इनाम-इकराम और साहित्यकारन खों सम्मान उनें और अच्छौ करबे व लिखबे कौ हौंसला देत। पै जौ सब मेलन के भागीदारन तकई रौ जात। पूरे बुन्देलखण्ड खों ईकौ लाभ मिलै जा कोशश अपन सबखों करने पर है।

मोरी मंसा जा है कै इन मेलन और सम्मेल्लनन में बुन्देली खों बड़ाबा दैबे बारे कामन कौ बतकाऔ होबै और बौ बतकाऔ अकेलौ बतकाऔ न रबै। ऐसे कारज करे जाबें जी सें पूरे बुन्देलखण्ड में बुन्देली बोलबे बारे बड़ें और उनके मन में जा बात जम जाबै कै हमें अपनी मातृ भाषा खों भूलनें नइयाँ। आपस बुन्देली बोलबे में सरम न लगै। ईसें मोय तौ साता परै अई अपन सब खों सोऊ अपनी मैनत पै गरब हुइये। मैं अपुन सें जा कन चाउत के सिन्धी और पंजाबियन खों अपनौ देश छोड़े सत्तर साल हो गये और बे हिन्दी बोलवों सीक गये, पै

आपस में अबै अपनी अई भाषा बोलत। जाँ तक मैं जानत तौ उत्तर प्रदेश और मध्यप्रदेश खों छोड़कें देश के सबई प्रान्तन में उनके क्षेत्र की भाषा बोली और पड़ी जात। ऐई सें उन सबकी भाषायें जिन्दा हैं। अबै लों जो भऔ सो भऔ। बुन्देली पड़ाबे की कोशिश सोऊ भईं पै कामें नईं आईं। उत्तर प्रदेश और मध्यप्रदेश जैसे बड़े राज्यन में जितै कैऊ तरा की बोलीं बोली जात होबैं उतै बुन्देली में पड़ाबौ तो साँसऊँ मुश्कल है। इतनौ हो सकत कै हिन्दी के संगै बुन्देली की एक पुस्तक सह भाषा के रूप में पड़ाई जा सकत। जौ काम सोऊ आसान नइयाँ, पै कोशश करे सें का नईं हो सकत। ई काम के लानें अपन सब साहित्यकारन खों पूरे मन से पिठियाँ शुद्ध होकें लगे बिना जौ काम नईं हो सकत। जौ जब हुइये, तब हुइये पै कछू काम तौ अबै भी ऐसे करे जा सकत जी सें लरकन-बिटियन कौ ध्यान व रुझान बुन्देली बोलवे पड़बे की तरप जाबै।

बुन्देली संस्थान की तरफ से स्कूलन में बुन्देली में बाद-बिबाद, निबंध, कविता, कहानी बगैरा लिखबे की प्रतियोगिता कराई जा सकतीं और बच्चन खों इनामें दईं जाबें। जो काम बुन्देली मेलन में तौ होइ सकत। जैसें राष्ट्र भाषा समिति म.प्र. में करत है। दूसरौ काम जौ हो सकत कै बुन्देली संस्थायें दान दातन की मदद सें स्कूलन में बुन्देली भाषा में लिखीं कवतन और कनियन की छोटी छोटी पुस्तिकायें बँटवायें जिनें पड़कें बचचन को मन बुन्देली की तरफ खिंचबै। झाँसी में विश्वनाथ जी शर्मा शिक्षा के क्षेत्र में अबै जो काम कर रये बे तौ बड़ी आसानी सें जौ काम खुद कर सकत कै कौनऊँ संस्था के संगै मिलकें कर सकत।

एक काम जौ हो सकत कै हमाये क्षेत्र के नेता अपने क्षेत्र में बुन्देली में भाषन देवें। ईकौ भौत असर छोटे-बड्डे सबई पै हुइये, कायकै लरकन खों नेतन की नकल करबे कौ सौंक है। ईके लाने सोऊ पहल साहित्तकारन खों नेतन खों समझांके करने परै। नेतन खों समजाबौ बड़े साहित्यकारन के बस की बात है। बुन्देली भाषा से संबंधित जौन सम्मेलन होबैं उतै सबरो बतकाव बुन्देली अई में होबै। हिन्दी औ अंगरेजी के कारन बुन्देली बोलबे बारे खों आदमी गमार कन लगत, ईसें जो बोलन भी चाय तौ नईं बोलत। कजन्त की दारै घर में सब जनें आपस में बुन्देली बोलें तौ काऊ खों झिजक न हुइये। बुन्देली कौ भलौ चाबे बारन खों अपने घरन में ईकौ उदाहरण दव चइये। अगर अकेलौ कोऊ बोलन भी चाउत तौ घर बारे उए झिड़क देत। जो जानत हैं बे सोऊ भूलत जात। जैसें धरे लोय खों जंगाल लग जात ऐसउ बुन्देली के संगै हो रऔ।

अपन सब मिलकें सोसौ तौ न जाने कितनें तरीका बुन्देली बोलबे खों बड़ाबा दैवे के निकट आयें। अगर सब जाँगां के बुन्देली मेलन के कर्ताधर्ता कभऊँ-कभऊँ इकट्ठे बैठकें ईके बारे में बतकाऔ करकें उपाय निकारें और मिलकें हल करें तौ ऐसौ नइयाँ कै बिगरत बात न बनै। कन लगत कै गाँय-गाँय ब्याव हो जात सौ जरूरत गावे की है। सब जनें ठान लेबें तो का नईं हो सकत पै जरूरत ठानबे की है। सो मोरी विनती पै अपुन सब खों विचार आय करनें। मोरी जा कथा ओइ की अर्जी मानी जाबै।

-राजमहल के पास, टीकमगढ़ (म.प्र.)

*****

तीन बुन्देली गज़लें

-डॉ. राघवेन्द्र उदैनियाँ ''सनेही''

(1)

कसाकसी में वारौ काँहे।
मँहगाई कौ चारौ काँ है।।
जीखाँ जो कानें सो कै रओ,
उनके मौं पै पारौ काँ है।।
भलें कछू ए.सी. में सो रय,
सबकौ इतै गुजारौ काँ है।।
सबई तरा की जाँचें चल
कऔ दार में करौ काँ है।।
जीनें लठ्ठ धुँआँ में मारो,
ढूँड़ौ तौ ऊ सारौ काँ है।।
घर के सबरे नोट खंगर गए,
बक्सन में अब तारौ काँ है।।
बड़ो-चड़ो जोंन ''सनेही''
ऊखाँ और उतारौ काँ है।।

(2)

दुनियाँ बड़ी धुकैल, समरकें रइयो बिट्टू
पौंचा दैहै जैल, समरकें रइयो बिट्टू।।
इतै एक सें एक खलीफा, मुल्ला काजी,
मीठे और गुडैल, समरकें रइयो बिट्टू।।
आबड़ में पर जैहौ जिदना, पछतैहौ फिर,
भगें न मिल है गैल, समरकें रइयो बिट्टू।।
चरकें चारौ ऐंन दलाँकत-फूँसत फिर रए,
जे बैला गरेंल, समरकें रइयो बिट्टू।।
नागनाथ और सांपनाथ हैं एकइ जैसे,
सबके सबइ बिसैल, समरकें रइयो बिट्टू।।
मौंसे मेंपर घंई ''सनेही'' मीठौ बोलें,
भीतर मैलइ मैल, समरकें रइयो बिट्टू।।

(3)

जाँ देखौ ताँ आज, दार में कारौ है।
होय काउ कौ राज, दार में कारौ है।।
भृष्टाचारी, दन्द-फन्द में जो माहिरे,
बेई बने सरताज, दार में कारौ है।।
हत्या, लूट, डकैती, कर बेदाग बरी,
बची न कौनऊँ खाज, दार में कारौ है।।
करे घुटाले ऐंन पकर गए जेल गये,
तोउ न आई लाज, दार में कारौ है।।
आग लगाकें खुद पानी खाँ दौर परे,
का नोंनों अंदाज, दार में कारौ है।।
मुखिया के जो रये ''सनेही पिछलगू,
गिरी उनइँ पै गाज, दार में कारौ है।।

-सरानी गेट के बाहर, छतरपुर (म.प्र.)

*****

बुन्देली की कहानी- ओइ की जुबाई

-मनोज सोनी

भारत देश के बीचऊँ बीच की धरती कौ एक बड़ौ हैंसा (हिस्सा) बुन्देलखण्ड के नाव से जानों जात, जा बात अपुन सब खों पतौ है। अपुन जा सोऊ जानत कै जौ बुन्देलखण्ड उत्तर प्रदेश औ मध्य प्रदेश के करीबन 27 जिलन में फैलो है जिनमें बुन्देली बोली जात रई। अपनी ऊ बोली की जा हालत हो रई कै धीरें-धीरें उये बोलबे बारे घटतई चले जा रये। मोय मन में ई बात की चिन्ता बनी रात, सो एक रात कें बुन्देली बर्राटन में साच्छात हो कें जो कछू बोली बा मैं अपन सब सें कन चाउत। चाय जा कैलो कै बुन्देली बोली की बिथा कौ बौ बतकाव बुन्देली के सब जनवन सें कन चाउत। बा बोली कै बुन्देली के बड़े-बड़े जनवा कत कै बुन्देली खड़ी बोली से भौत पैलऊँ की भाषा आय और जा भौतऊ मीठी या गुरीरी लगत। जब लिखबे कौ काम शुरू नईं भव तो ऊ बेरां बुन्देलखण्ड के सबई नन्ने-बड्डे मोइये बोल-बोल कें आपस में बतकाव करतते। ऐसई बृज के बसइया बृज भाषा में औ अबध के बसइया अबधी में बतकाव करतते।

जब लिखबे की शुरुआत भई तौ बृज और अबधी में पैलऊँ कवता-कानियाँ लिखी जान लगीं। फिर बुन्देली में सोऊ आल्हा जैसी कवताएँ औ किस्सा लिखे गये। ऐइ बीचां खड़ी बोली या हिन्दी कौ जनम भऔ। ईमें ऊपर बताई तीनऊँ भाषन के संगै कछू और भाषा-बोलियन के सबद (शब्द) लैकें बोलो व लिखो जान लगो। धीरें-धीरें हाल जौ भव कै पैलऊँ की भाषा बोलियन कौ महत्त घटन लगो और खड़ी बोली कौ महत्त ऐसौ बड़ो कै ऊने आदे सें जादाँ उत्तरी देश पै कब्जा कर लऔ। ईखों हिन्दी कन लगे। सबरौ लिखबौ-पड़बौ हिन्दी में हौन लगो सो ऊ कौ साहित्य दिन दूनों रात चौगुनौ बड़न लगो। जौ देख कें बुन्देलखण्डियन खों सोऊ मोरी बुन्देली भाषा में लिखबे कौ सौंक चर्रानों। परनाम जौ भऔ कै बुन्देली भाषा की कवतन औ किसा कानियन की पोथी (किताबें) सोऊ धड़ा-धड़ छपन लगीं। मोय भाई नौनौं लगो। बुन्देली के जनवन ने बुन्देली भाषा की व्याकरन, सबद कोश और इतहास सोऊ लिख डारे। बोलबे, लिखबे-पड़बे व छपने की खूब तरक्की भई।

देश की सुतंत्रता के बाद सेहरन और गाँवन-खेरन में स्कूल खुलत गये सो लरका-बिटियाँ पड़न लगे। स्कूलन में हिन्दी और अंगरेजी पड़ाई जात सो सब हिन्दी सीकन लगे और बेई बोलन लगे। बीच-बीच कछू अंग्रेजी के सबद सोऊ बोलत। पड़े लिखे मौड़ा-मौड़ी बुन्देली बोलबो भूलत गये, काय कै बुन्देली बोलबे-लिखबे पै गुरू जी नाराज होत। जौलों गाँवन के बिना पड़े-लिखे आदमियन और जनी मांसन की गिनती बड़न लगी उर बुन्देली बोलवे वारन की गिनती घटन लगी। गाँवन सें मजूर बड़े सेहरन में मजूरी करवे जान लगे सो बे सोक बुन्देली छोड़ हिंगलिश (हिन्दी+इंगलिश) बोलवो सीक गये। रई-खुरी कसर टी.वी. ने पूरी करी जीसें हिन्दी सोऊ अंगरेजी के अक्षरन में लिखी तक जान लगी। अंग्रेजन की नकल करबे में खाबौ-पीबौ, बोलबौ-चालबौ और सबई कछू बदल गऔ। अब बुन्देली खों को पूँछत? और तौ और अब हिन्दी में पड़वे की जाँगा गाँवन-गाँवन तक में अंगरेजी में पड़ावे बारे स्कूल खुलत जा रये। अब हाल जौ है कै सेहरन और कसबन में हिन्दी कै संगै बुन्देली के सबद बोलवे बारे नाव के लाने रै गये उर गाँवन में पुराने आदमी व जनीमानस कछू हिन्दी और कछू बुन्देली बोलत। मोय अब ऐसौ लगन लगो कै भौतउ जल्दी बौ समै आबे बारौ है कै बुन्देली बोलवे बारे निठुंअईं न बचें। और तौ और बुन्देली में लिखबे बारे और बुन्देली की तरक्की की बातें करबे बारे सोऊ हिन्दी में बतकाऔ करत दिखात। अबै अबै बुन्देली के शब्दकोश, व्युतपति कोश, इतिहास बगैरा की जौन पोथीं लिखीं गई उनकी भूमकायें, प्रकाशकीय, लेखकन की अपनी बातें आदि भी खड़ी बोली में लिखे गये। मतलब जौ कै मो बुन्देली की बड़वाई औ बुन्देलखण्ड के बारे में सबई कछू हिन्दी में लिखो जा रऔ। अपन विद्वनन द्वारा पोथीं और पत्रकन में मो बुन्देली के बारे में जौन लिखो जा रऔ ऊसें कछू तसल्ली तौ होत कै बुन्देली कौ नाव सैकरन सालै चलै। एक कवता की दो लैनें हैं कै-

इतिहास का आदमी बहुत बोलता है,
क्योंकि आदमी को मुर्दे से तौलता है।

मतलब जौ कै इतहास और सबई विषयन की किताबन में जो सैकरन और हजारन साल पैलऊँ लिखो गऔ बौ मुर्दा जैसौ धरो है। जो जिनदा है बौ तौ बोलत हैं। जी भाषा के बोलबे बारे न रै जैं बा तौ मुरदा जैसी पोलिथिन भर में परी रैहै। मो बुन्देली के बोलबे बारन की दिन पै दिन घटत रई तादाद देखकें मन में कल्लौनियाँ लगी रत।

अपुन बुन्देली के सब जनबन और विद्वानन सें मोरी जेई विनती है कै अपन जितनी मैनत मोरे साहित्य खों बड़ाबे के लाने कर रये ऊके संगै-संगै बुन्देली बोलबे बारन के बचाबे औ बड़ावे के लाने सोऊ करौ तौ मोय भाई खुशी हुइये। आँगन-ताँगन बुन्देली मेला, बुन्देली साहित्य सम्मेलन व मानक बुन्देली कौ बतकाऔ देख- सुन के मोइ बाँछें कछू समै के लानें खूबई आ खिल जातीं। मोरे मन में तौ जा लगी रत कै मानक बुन्देली की बात तबै नौनीं लगै जब पैलऊँ बुन्देली खों बचाबे या जिन्दा रखबे की कोशिश होबै। बुन्देली संस्कृति सोऊ जबईं बचै जब बुन्देली भाषा बचै। मैं जा सोऊ जानत कै अपन सब के मन में सोऊ जा बात सालत रत। बुन्देली मेलन में बुन्देली बोलबो, बुन्देलियन कौ खाबौ, पैरबौ, गाबौ-बजाबौ, खेलबौ, कूँदबौ, नचबौ, सबई कछू कौ मजा मेला में आबे बारे खूबई आ लेत। प्रतयोगतन में भाग लैवे बारन खों इनाम-इकराम और साहित्यकारन खों सम्मान उनें और अच्छौ करबे व लिखबे कौ होंसला देत। पै जौ सब मेलन के भागीदारन तकई रौ जात। पूरे बुन्देलखण्ड खों ईकौ लाभ मिलै जा कोशश अपन सबखों करने पर है।

मोरी मंसा जा है कै इन मेलन और सम्मेल्लनन में बुन्देली खों बड़ाबा दैबे बारे कामन कौ बतकाऔ होबै और बौ बतकाऔ अकेलौ बतकाऔ न रबै। ऐसे कारज करे जाबें जी सें पूरे बुन्देलखण्ड में बुन्देली बोलबे बारे बड़ें और उनके मन में जा बात जम जाबै कै हमें अपनी मातृ भाषा खों भूलनें नइयाँ। आपस बुन्देली बोलबे में सरम न लगै। ईसें मोय तौ साता परै अई अपन सब खों सोऊ अपनी मैनत पै गरब हुइये। मैं अपुन सें जा कन चाउत के सिन्धी और पंजाबियन खों अपनौ देश छोड़े सत्तर साल हो गये और बे हिन्दी बोलवों सीक गये, पै

आपस में अबै अपनी अई भाषा बोलत। जाँ तक मैं जानत तौ उत्तर प्रदेश और मध्यप्रदेश खों छोड़कें देश के सबई प्रान्तन में उनके क्षेत्र की भाषा बोली और पड़ी जात। ऐई सें उन सबकी भाषायें जिन्दा हैं। अबै लों जो भऔ सो भऔ। बुन्देली पड़ाबे की कोशिश सोऊ भईं पै कामें नईं आईं। उत्तर प्रदेश और मध्यप्रदेश जैसे बड़े राज्यन में जितै कैऊ तरा की बोलीं बोली जात होबैं उतै बुन्देली में पड़ाबौ तो साँसऊँ मुश्कल है। इतनौ हो सकत कै हिन्दी के संगै बुन्देली की एक पुस्तक सह भाषा के रूप में पड़ाई जा सकत। जौ काम सोऊ आसान नइयाँ, पै कोशश करे सें का नईं हो सकत। ई काम के लानें अपन सब साहित्यकारन खों पूरे मन से पिठियाँ शुद्ध होकें लगे बिना जौ काम नईं हो सकत। जौ जब हुइये, तब हुइये पै कछू काम तौ अबै भी ऐसे करे जा सकत जी सें लरकन-बिटियन कौ ध्यान व रुझान बुन्देली बोलवे पड़बे की तरप जाबै।

बुन्देली संस्थान की तरफ से स्कूलन में बुन्देली में बाद-बिबाद, निबंध, कविता, कहानी बगैरा लिखबे की प्रतियोगिता कराई जा सकतीं और बच्चन खों इनामें दईं जाबें। जो काम बुन्देली मेलन में तौ होइ सकत। जैसें राष्ट्र भाषा समिति म.प्र. में करत है। दूसरौ काम जौ हो सकत कै बुन्देली संस्थायें दान दातन की मदद सें स्कूलन में बुन्देली भाषा में लिखीं कवतन और कनियन की छोटी छोटी पुस्तिकायें बँटवायें जिनें पड़कें बचचन को मन बुन्देली की तरफ खिंचबै। झाँसी में विश्वनाथ जी शर्मा शिक्षा के क्षेत्र में अबै जो काम कर रये बे तौ बड़ी आसानी सें जौ काम खुद कर सकत कै कौनऊँ संस्था के संगै मिलकें कर सकत।

एक काम जौ हो सकत कै हमाये क्षेत्र के नेता अपने क्षेत्र में बुन्देली में भाषन देवें। ईकौ भौत असर छोटे-बड्डे सबई पै हुइये, कायकै लरकन खों नेतन की नकल करबे कौ सौंक है। ईके लाने सोऊ पहल साहित्तकारन खों नेतन खों समझांके करने परै। नेतन खों समजाबौ बड़े साहित्यकारन के बस की बात है। बुन्देली भाषा से संबंधित जौन सम्मेलन होबैं उतै सबरो बतकाव बुन्देली अई में होबै। हिन्दी औ अंगरेजी के कारन बुन्देली बोलबे बारे खों आदमी गमार कन लगत, ईसें जो बोलन भी चाय तौ नईं बोलत। कजन्त की दारै घर में सब जनें आपस में बुन्देली बोलें तौ काऊ खों झिजक न हुइये। बुन्देली कौ भलौ चाबे बारन खों अपने घरन में ईकौ उदाहरण दव चइये। अगर अकेलौ कोऊ बोलन भी चाउत तौ घर बारे उए झिड़क देत। जो जानत हैं बे सोऊ भूलत जात। जैसें धरे लोय खों जंगाल लग जात ऐसऊ बुन्देली के संगै हो रऔ।

अपन सब मिलकें सोसौ तौ न जाने कितनें तरीका बुन्देली बोलबे खों बड़ाबा दैवे के निकट आयें। अगर सब जाँगां के बुन्देली मेलन के कर्ताधर्ता कभऊँ-कभऊँ इकट्ठे बैठकें ईके बारे में बतकाऔ करकें उपाय निकारें और मिलकें हल करें तौ ऐसौ नइयाँ कै बिगरत बात न बनै। कन लगत कै गाँय-गाँय ब्याव हो जात सौ जरूरत गावे की है। सब जनें ठान लेबें तो का नईं हो सकत पै जरूरत ठानबे की है। सो मोरी विनती पै अपुन सब खों विचार आय करनें। मोरी जा कथा ओइ की अर्जी मानी जाबै।

-राजमहल के पास, टीकमगढ़ (म.प्र.)

*****

तीन बुन्देली ग़ज़लें

-डॉ. राघवेन्द्र उदैनियाँ ''सनेही''

(1)

कसाकसी में वारौ काँहै।
मैंगाई कौ चारौ काँ है।।
जीखाँ जो कानें सो कै रओ,
उनके मौं पै पारौ काँ है।।
भलें कछू ए.सी. में सो रय,
सबकौ इतै गुजारौ काँ है।।
सबई तरा की जाँचें चल
कऔ दार में करौ काँ है।।
जीनें लठ्ठ धुँआँ में मारो,
ढूँड़ौ तौ ऊ सारौ काँ है।।
घर के सबरे नोट खंगर गए,
बक्सन में अब तारौ काँ है।।
बड़ो-चड़ो जोंन ''सनेही''
ऊखाँ और उतारौ काँ है।।

(2)

दुनियाँ बड़ी धुकैल, समरकें रइयो बिट्टू
पौंचा दैहै जैल, समरकें रइयो बिट्टू।।
इतै एक सें एक खलीफा, मुल्ला काजी,
मीठे और गुडैल, समरकें रइयो बिट्टू।।
आबड़ में पर जैहौ जिदना, पछतैहौ फिर,
भगें न मिल है गैल, समरकें रइयो बिट्टू।।
चरकें चारौ ऐंन दलाँकत-फूँसत फिर रए,
जे बैला गर्रेल, समरकें रइयो बिट्टू।।
नागनाथ और सांपनाथ हैं एकइ जैसे,
सबके सबइ बिसैल, समरकें रइयो बिट्टू।।
मौंसे मेंपर घंई ''सनेही'' मीठौ बोलें,
भीतर मैलइ मैल, समरकें रइयो बिट्टू।।

(3)

जाँ देखौ ताँ आज, दार में कारौ है।
होय काउ कौ राज, दार में कारौ है।।
भृष्टाचारी, दन्द-फन्द में जो माहिरे,
बेई बने सरताज, दार में कारौ है।।
हत्या, लूट, डकैती, कर बेदाग बरी,
बची न कौनऊँ खाज, दार में कारौ है।।
करे घुटाले ऐंन पकर गए जेल गये,
तोउ न आई लाज, दार में कारौ है।।
आग लगाकें खुद पानी खाँ दौर परे,
का नोंनों अंदाज, दार में कारौ है।।
मुखिया के जो रये ''सनेही पिछलग्गू,
गिरी उनइँ पै गाज, दार में कारौ है।।

-सरानी गेट के बाहर, छतरपुर (म.प्र.)

*****

प्रेम न होय बिना चमचोंई

-सुरेन्द्र नायक

अथ श्री चमचोंई कथा प्रथमोऽध्याय: शुभारम्भ:। जय होए गोरियन की।

देखो लल्लू, अपुन कौनऊ लेखक-वेखक तो हैं नइयां। ऐसेंई कभऊं-कभऊं उठाईगिरि कर लेत। आजईं एक जने को फोन आओ। वे बतान लगे के कौनऊ बुंदेली पत्रिका निकर रई। हमने कई के हमें बुन्देली का आत? सो वे मार बतखाव करन लगे। बोले, के माटी को करजा सोऊ होत, जो काए भूल रए? जैसो बने, तैसो लिखो। लेकिन लिखो। करजा से उरिन हो पाओ, न हो पाओ, लेकिन तुमाओ जी तो हलको हो जे, के तुमने कोशिश तो करी। औरऊ निरे जने हैं, बेऊ का पबार रए? जिनसे जित्तोबन जाए उत्तो करो, तभई अपनी बुन्देली बोली आगे बनी रय पे।

भैए, एक भीतर की बता और बताएं। हमाए पाठक सोऊ महा उचक्का हैं। वे हमें लेखक तो नईं मानत लेकिन तफरी के लानें हमाई उचक्कयाई खूब चटखारे लें-लेकें पढ़त। पाठकन की बुरी नोनी सुनत-सुनत हम सोऊ खूबई बेशरम हो गए। लाद लई, बाय लाज काय की। उपन्यास लिखत-लिखत जी पक गओ तो किस्सा लिखन लगे, नौटंकी लिखन लगे, कछू और बतखाव लिखन लगे, जिन दिनन कछू न पबार पाए' उन दिनन दूसरन की किताबन की समीक्षा लिखन लगे। दूसरन को खरी-खोटी सुनाबे में अपनो का जा रओ? कहत हैं के भागे भूत की लंगोटी भौत। सो अगर दो-चार पाठकन ने फोन पे हमाई फजीहत कर दई, बई बहुत। वैसेऊं लेखकन - वेखकन कों कौऊ कुबेर को खजानो तो दे नईं दओ।

एक बात हम तुमें पेलेंई बताएं दे रए। नईं तो तुम बाद में हमाई थुक्का-फजीयत करो। जो लेख हमने नईं लिखो। तो तुम पूछ हौ का जो चोरी को है? सो चांए तुम हमसें गंगाजली उठवा लो, चांए गीता की कसम खबबा लो, जो चोरी को सोऊ नइयां। अब तुम सो हो के मास्साब कहां पढ़ात हुएं? तो हम तुमे बताएं दे रए। मास्साब सरकारी मास्टर नइयां। जो तो उनको बैक पर गओ काय से वे शिक्षा बहुत देत। वे स्कूल में तो वेसे ऊं नईं पढ़ा सकत, काए से वे तो अंगूठा छाप हैं। अब तुम पूंछ हो के वे अंगूठा छाप काय रय गए? असल में भओ जो के जब वे छोटेई हते, तभईं एक दिना उनके स्कूल के हैड मास्टर साब ने उनसें पूँछी के लला तुम के भइया-बैन हो? सो तुमने बताई, बारह। हैड मास्टर हक्को-बक्को रय गओ। बा ने फिर पूँछी, लला तुमाए बाप का करत? सो उनने तुरतईं बता दई, जोई करत। हैड मास्टर साब गुस्सया गए और उनने मास्साब को स्कूल की शक्ल नईं देखी।

लेकिन उनें मास्टर बनबे को नशा तो हतोई, और बे पढ़े हते नईं। सो उनने आठ-दस रडुआ-भडुआ चेला चपाटे पाल लए और खुद की कोचिंग खोल लई- 'लुगयाई, छिनरयाई और इश्कयाई - तीन महीने में गारंटिड सफलता वरना पूरी फीस वापस।' वे समझाउत ऊ बहुत बारीकी से हैं। प्रेम तीन तरीका को होत। पहलो लुगयाई। जो अपनी लुगाई या मुहल्ला पड़ोस की लुगाइयन से करो जात। लाल चुनरिया में सब दाग छिप जात सो कोऊ शक नईं करत। जासें जामें कछू डर नईं रहत। कौन कोऊ डी.एन.ए. टेस्ट करा रओ? दूसरो है छिनरयाई। मोड़ी राजी नइयां और तुम लगे ऊको बेर-बेर छेड़बे। जा में पन्हइयन और सैंडिलन को डौल पक्को आय धरो। तीसरो है इश्कयाई जो प्रेम को सिरमौर है। दोनों तरफ हो आग बराबर लगी हुई। फिर काय को डर ? तोऊ सावधानी तो रखनेई परत, के कोऊ लपटा-झपटी करत न देख ले। अगर पकर गए तो हो सकत कोऊ खुदईं जुतया दे या घरे शिकायत जड़ दे।

तो लल्लू, हमने मास्साब की नामवरी तो बहुत सुनी ती लेकिन देखी नई हती। ऐसे महापुरुशन के दरसन तो बड़े भाग से मिलत। लेकिन परसों-नरसों भओ का। संजा हती। हम अपयें चौंतरा पे बैठे हते। तभईं हमने देखों के एक डुकरा चिल्लात चलो आ रओ, 'नाश मिटे, तुमाई ठठरी बंधे, डुकरा कों मारत में शरम नईं आई।' हमने उने पुचकारो, 'बब्बा' तुमाई मुड़ी सें तो भल्ल भल्ल खून बह रओ। तनक हिरकें बैठो तो हम धजी बांध दें। ई बिरिया डाकदर तो मिलहे नईं।' उनने गारी देबो तो बंद कर देओ लेकिन 'हाय राम! हाय राम!' इल्लान लगे। बई बेरा हम भीतर सें अपईं नंबर एक वाली लुगाई की पुरानी धुतिया से एक चौंड़ी धजी फार लियाए और बब्बा की मुड़ी बांध दई। बब्बा की नाक सोऊ बहुत औगुनी हती। बा तुरतईं समझ गई कि जो उन्ना कौऊ लुगाई को पहनो भओ है। जो तो बाकी बासई से पता चल रओ तो। फिर का हतो। बब्बा को तुरतई आराम मिल गओ और उनको कांखबो- कूलभो बंद हो गओ।

ई के बाद हमने डुकरा सें पूंछी, ''काए बब्बा, तुमाए उन्ना कैसें फट गए?, डुकरा बात टारत भओ बोलो, 'इश्कनें हमसे अस करी, जस अरहूं न कराए। मसखरी भौजी करें, और देवर पिट जाए।' ई बात सें हम इत्तो तो समझई गए के डुकरा कौनऊ पहुंचो भओ कवि है और केशव दास जी को चेला है लेकिन अपओं नाम नईं बता रओ। हमने फिर टोंचिया लई, ''बब्बा तुम को हो? कौन गांव के हो?' डुकरा मुसकियाओ, ''लला, बहुतईं चतुर बन रए। का हरें हरें सबई पूछन चांहत?'' हमाई भौजाई सोऊ बड़ी रसिया हतीं। वे किवारन के पछांई खड़ी खड़ीं हमाई सबरी बातें सुन रईंतीं। उने डुकरा की बातन में मजा आ रओ तो। सो उनने अपईं मोड़ी के हाथन डुकरा को एक कप चाय भेज दई। डुकरा ने हालईं अपनो पतो ठिकानों बता दओ,'' इश्क ने मास्साब कों नंगो कर दओ। वैसे अपनीयंऊ उन्नालत्ता की दुकान दती।' हमऊं होशियार तो हतेई। सो हम समझ गए के गालिब को जो चेला और कोऊ नइयां बल्कि साक्षात् मास्साबई हैं। हमने तुरतईं उनके पांव पकर लए और फिर चरनन में लोट पोट हो गए, ''मास्साब, हमऊं को अपनो चेला बना लेओ।'' अंधो का चाए, दो आंखें। सो मास्साब ने हमें अपनो चेला बना लओ।

जाके बाद हमने मास्साब की गहराई नापबो शुरू करो, ''मास्साब, तुमाई खुपड़िया कैसें फूटी ती?'' मास्साब तनक उदास हो गए लेकिन बता सो दई, ''लला, का बताएँ? बड़ो बुरो जमानो आ गओ। हम एक तेरहीं में गए ते। उतै भटा की सब्जी सोऊ बनी हती। खाओ भटन सें, न खाओ भटन सें। और नईं तो फिर कद्दू सें। मोय भटा बैसेंई औगुन करत सो मोय भटन से कछू मतलब सोऊ नईं हतो। फिर भओ जो के उते एक मोड़ा शहर में रय कें आओ तो। ऊँ भटन को बैंगन कहत तो। सो ऊने भटा परसबो शुरू करो, ''बेगम ले लो, बेगम'' अब मोय का पता हतो के जो मोड़ा हकलात है सो बैंगन कों बेगम कर रओ। मोंने सोची के जो बड़े आदमियन को मामला है सो दच्छिना में दस के नोट के संगे एक-एक जनी सोऊ बट रई। पैलेऊं तो अपने इते राजा महाराज रिसियन मुनियन को अपनी मोड़ी दे देत ते। सो हमऊं ने टेर लगा दई, 'बेटा, एक बेगम हमऊं को।'' हमाओ बोलबो भओ और बई बेरा कछू बाहरी मोड़ने ने हमाई कुदच्छिना कर दई।''

बोलत-बोलत मास्साब की आंखें भरियाईं। सो हमने मास्साब खों तसल्ली दई। मास्साब, जामें कछू खास बात नइयां। कभऊं कभऊं बोली-बानी में जीभ सरक जात, या कभऊं कभऊं समझबे को फेर हो जात, सो जो तो होनेई हतो। हमईं जाने के बेर ऐसेंई कुटे पिटे लेकिन हमने अपयें आचरन और इज्जत पे आंच नईं आन दई। हमाई नाक का सूपनखा की नाक है जो तनक सी थू-थू में ई कट जाए। हमाई नाक तो नेतन जैसी है। जब हेई नइयां तो कट है का?

हमने मास्साब की चेलियाई का लई के वे तो हेकड़ी पे उतर आए। उने अपएँ कारनामा याद आन लगे। वे बोले, ''बेटा अभे तुम हमाए नए-नए चेला बने हो सो हमाए गुन-अवगुन का जानो? कछू दिनन में तुम सबई जान जेओ के हम कित्ती ऊँची चीज हैं। अभे परसालई की बात है। एक चेला की चिट्ठी-पाती नईं पहुँच पा रई ती। हमने बाय तसल्ली दई। जा कौनऊ नई बात नइयां। जा दिक्कत तो पुराने जमाने मेऊं होत ती, 'खत कबूतर किस तरह ले जाए बाम-ए-यार पर / पर करतने को लगी हैं कैंचियां दीवार/ तब उस्ताद ने जुगाड़ बताईती, 'खत कबूतर इस तरह ले जाए बाम-ए-यार पर/ पर पर पर हो संदेशा, पर कट गिरे दीवार पर/' तो बेटा हम काम में अकल लगत। हमाए कए सें चेला ने अपईं माशूका कों एक मोबाइल फोन दे दओ। सोई खूब गुटरगूं होन लगी। कछू दिनन बाद दोऊ जनन को अलग-अलग ब्याव हो गओ। सो सब टंटो अपएं आप खतम हो गओ। जा बात छोड़ो। जई जोड़ को किस्सा सुनो। हमाए एक चेला को नओ नओ ब्याब भओ और बोऊ पैलो पैलो। सो बाए जादा सहूर तो हतो नईं। पैली पैली रात हती और ऊके दोस्तन ने बाए दो घूंट पिबा दई। बो टुन्न होकें आधी रात में अपईं दुल्हन के पास पहुंचो। ऊकी दुल्हन मुस्का कें बोली, ''बहुत देर कर दी मेहरबां आते आते/ न सोचा तेरे बिना दुनिया से जा रहा कोई/'' शेर-शायरी तो चेला के बाप कों पता नइ हती सो चेला सकपका गाऔ और चिमाई मार कें सो गओ। दुल्हन तो वैसेंऊ रूंआसी हती। बाए अपएँ मैके वाले यारन की याद आ रई ती। सो वऊ करवट लें के लेट गई। दूसरे रोज हमने बा चेला को जवाब सिखा दओ सो ऊने अपनी दुल्हन से के दई, ''गुजार दी जिन्दगी तेरे इंतजार में/ऐसे भी हैं कट न सकी जिनसे एक रात/'' फिर का हतो? दुल्हन खूब खिलखिला के हँस परी। जऊ बात छोड़ो। अभे नओ नओ किस्सा है। हमाई साख तो वैसेंऊ नोनी नइयां। जनीं तो अपुन से ऐसें डरातीं जैसे हमाई बातन सेंई उनको पेट रय जे। लेकिन अटकें भीरें काम तो हमईं से परत। सो एक नई दुल्हनिया हमाएं नियरें चोरी छिपे आई और अपनो दुखड़ा रोन लगी, ''मोय छोटे मिले भरतार। जवानी कैसे कटे।'' सो हमने बाए मुफत को टुटका थमा दओ, 'का पड़ोसी सबरे मर गए/गांव में नइयां छिनरा/तोए छोटे मिले भरतार/जवानी ऐंसे कटें/' अब जा तो बऊ जानत हती के हमाओऊ कोऊ धनी धोरी नइयां, वैसे करीं तो चार-चार हतीं लेकिन सब चिरैयां नाईं फुर्र हो गईं। सो ऊने चलत-चलत हमऊं कों मुस्का कें इशारो पर दओ। मास्टर और डाक्टर की फीस कोऊ नईं मारत। कहूं दुबारऊ तो काम पड़ सकत। हो सकत जे ऊकी खाली मन भरबे की बातें होंय। लेकिन इते तो बासी कढ़ी में उफान आन ई लगो। साठा सो पाठा। घोड़ा और मरद कभऊं बूढ़े नईं होत। सो हम खूबई खुश हो गए के अथ गोरी की सैकड़न की लिस्ट में कहूं हमाओ नाम लिख जे। हाय भगवान! हमें का पतो हतो के हमाए तो करमई फूटन वाले हैं। भओ जो के ऊकी सास कों जा बात की भनक लग गई और बा हमाए पीछें पर गई। बूढ़ी घोड़ी, लाल लगाम। हमाई तो इज्जतई लुटत लुटत रय गई। ऊके नखरे तो देखो। मोंसे नैन मटक्का करकें गान लगीं, 'बारा बरस की जा बारी उमरिया/ उस पे ये सोला सिंगार रे/रूप ऐसा कि डोल जाए, डोल रसिया/ बोल क्या देगा तू इसका मोल रसिया? ऊके बाद हमऊं गुस्सया गए सो सीधी के दई, हमाए पास का है? तनक बहुत इज्जत बची हती सो तुम बऊ लएँ लें रईं।''

मास्साब को बखान तो खतमईं नई हो रओ तो। सो मोने पलटी खाई, ''मास्साब तुम तो पहुंचे भए गुरू घंटाल हो। तुमाई महिमा की का कहने, गुरू ब्रह्मा, गुरू विष्णु ....। तुमई जैसे घुटे घुटाये बावन के लाने काऊ ने कई है, हरि अनंत, हरि कथा अनंता।'' हमाई चमचोईं से मास्साब उलटे हमाए चरणावनत हो गए। तुरतईं बोले, ''बेटा, कलम पाटी पूजा आजईं हो जाए जासें तुमाई पढ़ाई लिखाई को हरजा न होय।'' जब हमने हामी भर दई तो उनने हमाओ ज्ञान परखो, ''बेटा बारह खड़ी से शुरू करें के ओलम सेंई शुरू करने पर? '' दाई सें पेट का छिपाने सो हमने सच्ची सच्ची रान दई, ''मास्साब, शुरू तो ओलम सेंई करने पर। भओ जो, के हमाओ बारी उमर मेंई ब्याव हो गओ। जो तो सबई जानत के खसम लुगाई में कित्तो प्रेम होत और कित्तो लट्ठम-लट्ठा? भओ जो के हमाए कक्का जनमजात खानदानी रडुआ-भडुआ हते। मतलब उनके बाप नई उमर मेंई रडुआ हो गए ते और कक्का के सगिया तक नईं आएते। ऊ कक्का ने मोय पहलेंई समझा दईती, के बेटा, जोन से प्रेम करियो बा से ब्याव न करियो और जोन से ब्याव करियो बा से प्रेम न करियो। अपुन के पास कौनऊ सरकारी कोटा की दुकान तो है नइयां। चाएँ जो कोऊ मों उठाए चलो आए, बाए ड्रम में से निकार कें दस-पांच लीटर प्रेम दे दो। अब तुमईं बताओ, अगर अपुन कों कौनऊ नोनी भौजी मिल जाए के चिकनी चुपड़ी साली मिल जाए, के छैल छबीली पड़ोसिन मिल जाए, तो का बाए अकेले को पूरो प्रेम दे देओ? फिर और इते उते का देओ? और फिर घरे का देओ, घुइयां? हमाए तो भाग्य खराब हते सो कछू सीखबे को मौकई नईं मिलो। 'तुलसी गाए बजाए के, देत काठ में पांव।' सो बा कंठा में फंस के हमाई टांग ऐसी टूटी, के आज तक नईं जुड़ी। तुमईं बताओ, हम एक पांव सें चौकड़ी कैसें भरें?''

हमाई राम कहानी सुनकें मास्साब हिलकी ले लेंके रोन लगे। बीच-बीच में वे हमाई पीठ पें हाथ फेरकें समझात रए, ''धीरज रखो बेटा, सब ठीक हो जे। अभे तुम कौन बूढ़े हो गए? जौन ने चोंच दई सो चुगो देहे। हमाए फंचोटा में तुम देर सें फंसे। अब देखों हम तुमें का का सिखात? फिर गोरियंऊ चक्कर काट और छोरियंऊ, लुगाइयंव चक्कर काट और भौजाईयंव, सालियंव चक्कर काट और सरहजंऊ।''

तनक देर में मास्साब की हिलकीं रुक गईं और बे बंदरा घांई मुस्कान लगे,

'' देखो बेटा, जामें हमाई तुमाई उत्ती गलती नइयां जित्ती पुराने आदमियन की है। बे कहत रए, 'सिर्फ एहसास है, इसे रूह से महसूस करो/हाथ से छू के इसे रिश्तों का इल्जाम न दो।' और महसूस करत करत बीचई में कितऊं ब्याव हो गओ। सोई रोन लगे 'वक्त ने किया, क्या हसीं सितम/हम रहे न हम, तुम रहे न तुम/' अब अगर उनने आज को इश्क कमीना और बेवफा सनम देखो होतो तो सीधी कहते, इशक विशक हम जानत नइयां इतना करूं इशारा/इशक करो तो आए जइयो जब बजें रात के बारा/' जा के बाद ब्याव चांए जिते होतो लेकिन जो रोबो तो न होतो। मन में जिन्दगी भर मीठी मीठी गुदगुदी रहती सो अलग। अगर माशूका कौनऊ बड़े आदमी की मोड़ी होती तो छाती खोलकें ठोका की कहते, 'जहां में कैश जिन्दा है, तो

लैला मर नहीं सकती।' और ऊसे ब्याव कर लेते। जाके बाद निठल्ले आशिक को घर जमाई तो बननेई है, नईतो मोड़ी को का खबे? घर जमाई की औकात भले कुत्ता घाईं होत लेकिन जो कौन कम है के बड़े आदमी के घरे कूकर घाईं भूंकबे को मिले? अगर माशूका जोरू बनके आशिक के घरे आ गई तो आशिक को मरबो आय धरो। मोड़ी मायके में रानी हती, ब्याव के बाद लक्ष्मी बनकें गई। अब ऐसे में बाय अगर गरीब माशूक के घरे काम वाली बाई के घाईं काम में जुतने परे तो बा तीनऊ संस्कार दिखा कें रानी लक्ष्मी बाई सोऊ बन जे। फिर बा अपएं खसम को अंग्रेज समझन लग और ऊको खदेर-खदेर कें मार।''

मास्साब को बतखाब सुनत-सुनत हमाओ जी पक गओ सो हमने मास्साब से सीधी कई, ''मास्साब, इन बातन के लानें जिन्दगी परी, पैलें हमें बुन्देली को एक लेख लिखवा दो।'' मास्साब बोले, ''हओ, तो लिखो शीर्षक 'प्रेम न होय बिना चमचोंई।''' अपन तो सिटपिटा कें रय गए। हमने कई ''मास्साब, जो तो तुलसी दास की चौपाई लग रई।'' मास्साब इकदम गुस्सया गए। फिर बोले, ''अगर उने इत्तोई सहूर होतो तो काय को फिरते भटा के डेल भए? वे अगर चौबीसऊँ घंटा तनक शऊर से अपईं लुगाई की चमचोंई करत रते तो मजाल हती के बा उने घर से बिड़ार के भगा देती। हमऊं ने चार-चार ब्याव करे हैं। बे भले भग गईं लेकिन मजाल है के कोऊ हमें कूकर घाईं बिड़ार पाओ होए।'' मोय बड़ो अचम्भो लगो सो मोने पूछई धरी, ''मास्साब चार-चार कैसें भग गईं?'' मास्साब ने उसांस भरकें बताई, ''का बताएं लला। बे सबरी जई चौपाई की वजह से भग गईं। जा चौपाई तो हमने तब लिखी जब चारऊं भग गईं। परम ज्ञान का ऐसेंई हो जात?'' हमने फिर कोंचो, ''मास्साब, असली बात तो तुमने बताई यई नईयां। बे भग काय गईं?'' मास्साब उसांस लेंके बतान लगे, ''तब हमाओ पहलो पहलो ब्याव भवतो। बा बेरा हमें प्रेम इरेम को जादा शऊर तो हतो नईं। तुमाई गुरवाइन हतोयंऊ भौंतई सुन्दर। देह तो ऐसी गोरी पीरी हती जैसे मैदा की लोई होय। ऊकी नई उमर हती सो ऐसी गदरानी ती जैसे ताती मुलायम मुलायम लुचई होय। सो गांव के लफरन ने औ ऊके गांव के लबरन ने खुरखुंद कूदबो शुरू कर दओ। भौजी तुमाए गाल तो रसगुल्ला जैसे हैं, होंठ तो बिल्कुल जलेबी जैसे हैं, उनसे तो रसई टपकत। वो का कहत, 'लाले लाले ओंठवा पे चमके वा ललैया/, जैसे रस चुएला/ जैसे अमुआ के मोजरा सें रस चुएला/' प्रेम में का बुन्देली, का भोजपुरी? एकाद बेर हमने कहियऊ के तुम हमें कम टैम देतीं सो बा ने हँसके टार दई,'' मैं तोहे सँभालूं के जोवन बालमा।'' जों लों हम कछू समझ पाउते, ऊको जोवन काऊ और ने सँभार लऔ और बा ऊके संगे फुर्र हो गई। जब दूसरी घर वाली आई, बा हमें दुजिया-दुजिया के कें चिढ़ान लगी। ऊके मायके में मुलक गुंइयां हते। सो वे टैम-बेटैम आन लगे। हम खेत रखाते के जनी? सो बा उनके संग भग गई। ऊ के बाद तीसरी आई। बा हमें तीजिया कहन लगी। बऊ के मायके वाले निरे लग्गा भग्गा हते। बे हमाए लाने मिठाई लियात ते। जीजा शुद्ध घी है, घर के खुआ कौ। बे हमाए सामने तुमाई गुरवाइन सें जिज्जी, जिज्जी करत ते। बाकी हमें कछू पता नईं चलो सो बऊ भग गई। जाके बाद भाई चौथी। अब हम खूबई सावधान हते। मायके लबरन और मुहल्ला के लफरन को घुसबो हमने बिलकुल बंद करा दओ। जा हमें चौथिया नईं कहत ती, ऐसोई कछू और कहत ती। बा बात बताबे की नइयां। बा हती भौतई भली। ऊने हमें चेतावो हतो के कुत्तऊ बैठत तो पूंछ हिला कें बैठत। हम समझई नई पाए के बा मोंसे के रई के ऊके कुत्ता घाईं तलुआ चाटत रओ तो बा हमें कुत्ता घाईं पोट-पुचकार कें रख है और कभऊ बिड़ार कें नईं भगे। फिर भओ जो के पासई में हमाए एक ककयावतें भइया रहत ते। उनकी जोरू पहलेंई मर गइती। रिश्ते में बे हमाए बड़े भैया लगत ते सो टैम पास कों चांए जब हमाए इते आके बैठ जात ते। बे हमाए इते खूब पैसा-टका खर्च करत ते। लेओ, बहू के हाथ की चाय का छूंछे हाथन पी जात। बे जब तुमाई गुरवाइन कों आशीरवाद देत दे तो मुड़ी से शुरू करके पीठ के नीचें तक हाथ फेरत ते। जेठ बहू दोऊ समझत तें बारह महीना में एक महीना जेठ को सोऊ होत। जो लों हम समझ पाए बा जेठ के संगे बैठ गई। ऊके बाद हमने ब्याव को टंटो नई पालो लेकिन चमचोंई खूब सीख लई। अब छाती में तनक-भौत धुकुर पुकुर भलें रहत लेकिन इते-उते से मजे में काम चल जात। मतलब दूध पीबे सें है के अपईं गैयां पालबे सें? ''ई के बाद मास्साब ने लिखबाबो शुरू करो। मतलब मस्टरवा उवाच,'' वत्स! जा चमचाई की महिमा को बखान सकत? राजा साब, राजा साब के कें ठाकुर साब की मुड़ी काट लो। ऐसेंई, पंडित जी, पां लागें के कें पंडित जी की घिची काट लो। जोई हाल प्रेम में है। चमचोंई करकें चांए कछू पा लो। भगवान रामऊं को नभने परो तो। वे अपने ब्याव की बेरा इकड़े खड़े ते। एक तो भगवान, फिर राजा के पुत्र और ता पे ठाकुर। जब जनकपुरी की जनियन ने उने लोक रीति समझाइती, 'झुक जइयो लला रघुवीर/लली मेरी छोटी है/बिनती सुन रघुवीर पसीजे हँस के नभ दओ शीश/' जोई हाल भगवान कृष्ण को हतो। वे प्रेम में राधा के सामनें 'हा-हा' खात ते, तब राधा रानी 'हाँ-हाँ' करत तीं। 'दो हा लिख सखि हाथ सें, भेजे कृष्ण प्रवीण/समझ राधिका अर्थ कों, चन्द्र बिन्दु रख दीन्ह/' जा चमचोंई एक तरफा हो सकत और दोऊ तरफऊ। कब किनकी अटकी? किने जवानी जादा चरी रई? जा में जादा चतुरई नईं करी जात/ 'दुनिया के खेले में पड़ना फिजूल है/दुनिया बई की है, जो डैमफूल है/' एक जगह को किस्सा है। जीजा को ससुराल में परें परें चार पांच रोज हो गए लेकिन साली से ढंग से बातई नईं हो पाई। सो जीजा अटैची उठाकें चल दए। ऊ दिना सास-ससुर को कटाई के लानें खेतन पे जाने तो। सोई साली ने इशारो कर दओ, 'जीजा, आज न जाओ, तुम्हें कौल है/ आज मंगोड़न को डौल है/' जीजा ने फट्ट अटैची नीचे धर दई। अब साली सलहजें मगोरी खबाएँ चाँए निबोरी, निबुआ चुसबाएँ चांए संतरा? कौन जीजा की औकात है के भग जाए/ईके बाद को किस्सा तो सबई जानत, ''राजा तेरी गोदी में पेड़ा बन जाऊंगी/ जब कभऊ भूख लगन लगे तुमकों/जलेबी समोसा रसगुल्ला बन जाऊंगी/' अब ऐसे में घर की कर्री पुरानी बासी बालूशाई किनें भा है? जाके बाद चलती बेरा साली-सलहज के उलाहने सुनो, 'तोबा तोबा, तबाही तबाही/ बेशरम जीजा कों लाज न आई/' सो भैया, जनी जो कहे सो मान लो/ अपनी अकल कभऊं न चलाओ। बा कए के गोबर डारयाओ, तो गोबर डारन लगो। बा कए के सानी करयाओ, तो सानी करन लगो। बा कए के पांव दबा दो, तो किबाड़ उड़का कें ऊके पांव दबान लगो। का अपएँ घर को काम करे में तुमाई इज्जत घट जे? चमचोंई करत रेओ तो सुख से रेओ। का फरक परत के लुगाई के कए से नाक रकड़ी, के खुदईं रगड़ी। नाम कटाबे से नाक रगड़बो जादा नोनो हैं। तिरिया हठ के आगें किनकी चलत, 'हुस्न अगर जिद पे आ जाए/तो इश्क की जां पे बन आए/' तुमने तनकई बात न मानी तो आफतई आय धरी/ कैकई ने दशरथ को का हाल करो तो? दशरथ के तो प्रानई चले गए ते। सो लला, अगर प्रेम से रहनें तो चमचोंई सीखो। मरदन के लानें तो जो और ऊ जरूरी है। चमचोंई के बिना प्रेमऊ बिरथा है और जीवनऊ। अथ श्री चमचोंई कथा प्रथमोऽयायः समाप्तः। आगे फिर का भऊं। बस गोरीं सदा सहाय करें तो जो तो होतई रे है। उने हमाओ पांव छूबो पहुँचे। बाकी मिलबे पे।

-प्रताप नगर कोंच,
जिला-जालौन (उ.प्र.)- 285205

*****

देश में अपुन खौं रामराज चानै है

– डॉ. लोकेन्द्र सिंह गुर्जर नागर

महान देश हिमवर्ष के भी सुख की तरफैं जब हम देखत हैं, तौ लगत है कै हमाव देश और हमाये पुरखा महान हते। सम्राट दशरथ जू के समैं मैं देश कौ राज दजला–फरात तक हतौ उनकी राजधानी अजुध्या जू हती। उनके पाछैं भगवान श्रीराम जू राज आऔ। बई राज की उनहार कौ राज अब हम सब चाउत हैं। श्रीराम जू के पाछै श्रीकृष्ण जू कै अवतार भऔ। श्रीकृष्ण जू के पाछै देश कौ राज कैउ राजन के हातन मैं रऔ। हमाव इतिहास हिरा गव अंधकार काल कौ का पतौ हतो। एक और महान सम्राट कनिष्क भये– कनिस्क जुग कुआऊत है। जाके पाछैं हम सात–साढ़े सात सौ बरमिस तक कऊं मुसलमानन के कऊँ अंग्रेजन के गुलाम रये।

सन् 1947 में हमाव देश आजाद हो गब। जादेश के अब हम सब राजा हैं। आदमी तौ मरजात है पै विचार कऊं न कऊं जिन्दा बनो रत है। देश नै समय–समय पै अन्याव के खिलाफ लड़ाई लड़ी है। जइ लड़ाइ के जैन सम्प्रदाय और बौद्ध सम्प्रदाय हमारो सामें आये। राम–राज नइं आ सकौ। आजादी के पाछै गांधी जू के मन में विचार जगौ कै देश में रामराज आये चइये। भागीदारी के लानैं ग्राम पंचयातन की रूप रेखा खैंची। उनके पाछैं देश के नेतन ने ग्राम पंचायतै बनाई और ग्राम पंचायतो के चुनाव कराये।

पद, सत्ता, सम्पत कौ लालच अपनौ बड़ौ बुरौ रूप धरकै सामनै आ गब। ग्राम पंचायन के चुनाव में फौजदारी हौन लगी – हत्यायै हौन लगी– देश के नेतन के कान पैं जुआँ नो नइँ रेंग रओ। वे भूल गये कै गाँधी जी में गाँवन में खुशी के लानैं पंचायत की बात कई ती आज उल्टौ होन लगौ। उनै का कन्नै तौ उन्हें तो सोउ गुलाम चाइये ते सो दलगत नेतागिरी में गाँव गुलाम के रूप में आउन लगे। ग्राम पंचायत के चुनाव में सुधार की बात तौ दूर रई– एक और नहर कौ चुनाव गावन में उतार दऔ– जैसे शंकर जू ने दक्ष प्रजापति के जग्ग में नन्दी जू कौ पौचा दये ते। अब तौ गाँवन की हालत भौतउ खराब हो गई हैं। जो देखो तो विध्वंस–मार काट। कऊं गांधी आज सदेह होते तौ बे जानै का करते– का कर लेते?

खैर भइया हरौ हमाउ अपुन सब पढे लिखे साहित्यकारन सै जौइ विनती है कै आपकी कलम सै जा खराब ग्राम स्तर के चुनावन की बुराई कर्रेसे होय चइये। इतने कर्रे से होय चइये के अपनौ विरोध प्रदेश और देश के नेतन के कानन के पर्दा सै टकरा जावै वे सुन पावै सांच का है? वे सत्ता के मद में जौ भूल गये के जिन गावन में हम रामराज देखै चाउत ते वे बर्बाद हो गये है उन गाँवन को प्रेम भाइचारौ खतम हो गव है बाप–बेटा , पति–पत्नी, माई, भाई कानौ कयै सवई रिस्ते आठ आठ असुंऊन रो रये है। वे बड़े नेता है उनकौ कोउ गाँव में नई रत जासै दरपन है तौ ऐसो दरपन उनैं दिखाव जाबै– जायै उनकी असली सूरत दिखाई देवै। कऊं हम सब मिलकै जौ काम कर पाये तो समजौ के अपुन ने दूसरी स्वतंत्रता की लड़ाई जीत लई। शास. और प्रशासन खों कौनहुँ दूसरौ रस्ता नइयां पतौ तो नागर साव सै पूंछ लेय– हम बतादे और गांवन में सुख और शान्ति कौ झण्डा गाड दे हैं। गांधी जू को विचार रामराज को रूप आजै है जू! सब जनिन खो भइया सीताराम साब।

–रघुवंश नगर

भाण्डेर मार्ग दतिया, बुन्देलखण्ड (म.प्र.)

मोबा. 9893455304

*****

गीत–

बिटिया की विदा

–नवल किशोर सोनी 'मायूष

अखल बखल जी बोल रओ ऐसें जैसें चलत मथानी।
कैसें करिये आज विदा हम अपनी बिटिया रानी।।

जिदनाँ जनम हमाए घरै प्यारी बिटिया को भओ तो।
उदनाँ गांव भरे में हमनें सबै बुलौआ दओ तो।
हाले फूले नइँ समात ते मन में दौनउँ प्रानी।।

तुमें अठारा बरसें पालो पोसो जतन जतन से।
दिन्नां रात चाओ है तुमखाँ ऐंनइ तन मन धन से।
अपने बस भर डुलन न दओ है कभऊँ पेट को पानी।।

प्रानन से प्यारी बिटिया की मुँइयाँ हम चूमत रए।
घरै लक्ष्मी आ गइ जैसें ऐसें हम झूमत रए।
देखो तुमें हँसत खेलत जब छाती तबइँ जुड़ानी।।

कभउँ रात कें छींकइ आ गइ तुमखाँ भूले भटकें।
भुन्सारे लौ हम औरन के अँसुवा टप टप टपकें।
जैसें हमखाँ ताप चड़ी हो ऐसें देय दँदानी।।

तुमनें दोइ जनन के संगै खैवे खाओ न जौलौ।
खेवो पीबो हमें न औरो कौर न टोरो तौलो।
सोचो ऐइ मनइँ मन ऐंनइ बिटिया काए रिसानी।।

अब बिटिया रानी कै कैं के कव कीखां हम टेरें।
तुम दिखैव नां क्याऊँ हमें तौ की की तरपी हेरें।
ऐइ सोचकें आज जात मन की बगिया कुमल्यानी।।

बिटिया है पराओ धन ईखाँ कै गए सबरे गुनियाँ।
ईसें कन्यादान करत आ रइ है सबरी दुनियाँ।
विसरइ गए ते हम तौ जग की जा है रीत पुरानी।।

अपनी बिटिया आज विदा करतन में छाती फट रइ।
ऐसो लग रओ है आँखन से आज पुतरिया छटरइ।
कैसो लगत विदा करतन में हमने अब जा जानी।।

जाव सासरे सास ससुर खाँ बाप मताइ समजियो।
प्रेम नन्द देवर सें भइया बैनन जैसो करियो।
मात पिता के घाँइ मानियों अपने जेठ जिठानी।।

साँचे मन से सेवा करियो बिटिया सबइ जनन की।
तुमें राखनें लाज आज सें बिटिया दोइ घरन की।
पति परमेशुर होत बात जा कै गए ग्यानी ध्यानी।।

धीरज धरम कभऊँ ना छूटै ध्यान राखियो ईको।
समजा रएं मायूस तुमें बो जो जेठन से सीको।
अपनी ई बिटिया रानी की रक्षा करें भवानी।।

–कोतवाली के पीछे, छतरपुर (म.प्र.)

मोबा. 9993693226

*****

कहानी-

लांछन

-भास्कर सिंह माणिक

पूस को महीना। बा पे करिया रात। चारउं ओर कोहरो। दूर-दूर तक कितऊ कछू नई दिखाई देत। मारे ठंड के जल्दी-जल्दी अपयं-अपयं काम निपटा कें सबई जनें अपने-अपने घर में दुपक जात। छैई-सात बजे सें सड़क सूनी दिखाई देन लगत। कोहरा के मारे खम्मा पै लगे बल्ब तक नई दिखात तो आदमी कांसें दिखात।

कितऊ सें कुत्तन की भौं-भौं तो कितऊ सें मोटर की पों-पों और फटफटियन की फट-फट ईं कें अलावा कछू नई सुनाई देत। ई छोर से ऊ छोर तक सांय-सांय ठंडी हवा। हवा इतनी ठंडी कि दाँत किटकिटात। दूरई सें पतो लग जात कोऊ ठंड के मारे दाँत किटकिटा रओ। को देखे, को उठे। जो बोले बोई किवार खोले। ई सें सबई जने चिमानें बैठे रत। रजाई छोड़तन काऊ सें नई बनत। बूढ़न की को सुनत। वे दस बार चिल्लात तब एक बार उनें उत्तर दओ जात। अपईं-अपईं मड़ईया में बैठे-बैठे खुसुर-फुसुर तो करत रैं लेकिन बूढे दद्दा-बाई कों कोऊ उठकें पानी तक देन नई जे। वे खुदई उठें। अपय लानें आगी जलाएं। अपय उन्ना खुदई बिछाएं। चाये खांस-खांस के वे रात भर जगत रयें। कोऊ उठकें पूछन नई आत। 'काये खांस रये दद्दा' चाये कोऊ मर जाये वे रजाई सें चिपके रें। को उठे ठंड में। अगर मोड़ी मोड़न ने तनक कछू कई तो उनें बूढे बाप-मताई बो ढकेल दओ जाओ बब्बा-बऊ नों वे तुमें कहानियाँ - किस्सा सुनाएँ। फिर का कै नें तान गोड़े सौ गए। फिर चाये कछू होवे उनें नेकऊ फिकिर नईयाँ।

पौर में बैठे-बैठे डुकरा-डुकरिया कहानियाँ सुरू करई रयते कि जई बीच एक ठंडी को चीरत भई आवाज सुनाई दई।

''बचाओ-बचाओ''

सब जनें रजाई में बैठे-बैठे, अपईं-अपईं मड़ईया में एक दूसरे को मों ताकन लगत। कोऊ नई उठत। फिर बोई आवाज सुनाई देत।

''बचाओ-बचाओ, जे हमें मारे देत। हमें बचाओ।''

''ऐसी ठंड में को हो सकत? जो को चिल्ला रओ।''

अपयं - अपयं घर में बैठे-बैठे बातें तो करत लेकिन कोऊ रजाई नई छोड़त। कुत्ता भौं-भौं के कान के परदा फाड़े डारत फिरऊ काऊ ने उठके देखवे की जुररत नई करी। कुत्ता भौं-भौं के शांत हो गए मानों बेऊ ठंड के मारे अपईं जान बचावे को कितऊ दुपक गए होय।

कछू देर के बाद पुलिस की सीटी सुनाई दई। ऊ टेम हमनें देखो रात के ग्यारा बज रयते। पुलिस की जीप जेसेई निकरी कुत्ता फिर भौंके। कछू देर भौंकवे के बाद कुत्ता फिर चुप हो गए। इते हमाई आँख नई लग रईती। मन बेचैन हो रओ तो। जे कुत्ता बेर-बेर काय भौंक रये। पुलिस निकर गई। कुत्तई चुप हो गए। जोई सोच रओ तो कि धम्म की आवाज सुनाई दई। मैं डर गओ। सोच में पर गओ। जो का कितऊ चोर-ओर तो नईयाँ। तनक देर रुक कें हमनें इनें जगाओ। जगाई रयते कि फिर धम्मसुनाई परी। मैं भड़ाभड़ा गओ।

''काय- काय, उठो तो।''

''काय जगा रये? सोन दो।''

''सुनो तो।''

गेरी नींद में आँख कां खुलवे वाली। हमऊ रजाई ओढ़ के पर रये। पर तो रये नींद न आवे। फिर तनक देर बाद फटफटियन की आवाज सुनाई दई। दो या तीन फटफटिया हुए। भुर-भुर कर कें वे निकर गई। सोची इतनी रात में फटफटिया जा ठंड में। फिर विचार आओ कोबरा बारे हुए। गश्त करवे को निकरे हुए।

परें-परें मन नई लग रओ तो। मैं उठो लाइट जलाई। सन्दूक से किताब निकारी। किताब पढ़वे को खोलियई हती कि कुत्ता फिर भौंके। इतनेई में इन की आँख खुल गई।

''काय तुमें चैन नई परत''

''हमनें का कर दओ?''

''का कर दओ? लाइट जला कें काये बैठ गए?''

''हमें नींद नइ आ रई ती। सो बैठ गओ।''

''हम तुमाओ सब मतलब समझत।''

''का समझतीं?

''तुम हमें काय जगा रयते?''

''तुमनें सुनीं कां हती?''

''अब तो सुन रई। सुनाओ का कै रयते?''

''अब का सुनाए?''

''काय अबे का बिगर गओ।''

बातें होई रईतीं कि कुत्ता फिर भौंके। फिर धम्म की आवाज आई और फटफटियन की भुर-भुर भई।

''कछू तुमें सुनाई दई कै नईं''

''ऐसो लगो जैसे कोऊ कितऊ कूदो होय''

''और।''

''और का? कोऊ सड़क से निकर रओ हुए सौ कुत्ता भौंक रये।''

''और फटफटिया''

''जो सड़क है अटफटिया - फटफटिया तो निकरत रतीं।''

''तुम अपयं मन की बताओ।''

''का तुम नई जानतीं।''

बातनई बातन में ठंडी हवा कबे गरम हवा में बदल गई। कबे सबेरो हो गओ। पतो नई लगो।

जैसें तैसें आँख लगी ती बड़ी जोर को हल्ला सुनाई परो। भड़भड़ा के आँख खुल गई।

''का हो गओ?'' काय को हल्ला हो रओ?''

''काये चिल्ला रये?''

''इते तो आओ, इते आओ।''

''आ रई।''

''का नई सुनाई परी।''

''हाँ बताओ का कै रये।''

''काय को हल्ला-गुल्ला हो रओ। का हो गओ। जो को चिल्ला रओ।''

''कछू तो। बताती काय नईयाँ?''

''पैला मोड़ी-मोड़न को स्कूल पठा देवी सोई तुमें बतावी। का हो गओ, का नई हो गओ?''

''हओ।''

''अरे सुनो तो।''

''अब का?''

''दद्दा कां गए?''

''हमनें का कई? पैला मोड़ी-मोड़न स्कूल पठा देवी सोई तुमें बतावी।''

''अबे का हो गओ?''

''तबा पै पराठे जले जा रये। बच्चन को खावे को बांध देवी। सोई आ के पूरी बात बतावी।''

''जाओ-जाओ। हमें चाय दे जाओ।''

''तनक देर लगवी। चिल्लाईयों नईं।''

''जाओ, इते तक बरांन आ रई।''

चाय ले कें रानी अपईं अटरिया पै पौंची।

''ले ओ चाय।''

''जो रांड़ चाय काय ले आई। जा के संग कछू तो लियाती।''

''अबे चारपाई छोड़ी नईयाँ। मूसर से बैठे। मों हाँत धोओ नईयाँ। संगे कछू लियाओ।''

''शेर कबे मों धोत?''

''बड़े शेर आय। तनक धम्म हो जात। चुखरा घाई चिमा जात। ऊ टेम हमई को जगाउत।''

''हाँ साँची कै रई। तुमई तो पालती आई मोय।''

''पच्चीस साल सें जानत तुमें। नेंक कुत्ता भौंको नई तुमाई घिघी बंध जात। ऐसे सांस साध जात जैसे सांप सूघ गओ होय।''

''हाँ सई कै रईं। ऊ दिना बखरी में का हतो।''

''का हतो?''

''जोर-जोर के चिल्ला रईतीं। देखो-देखो कोऊ है। जब आ के कौन ने देखो तो।''

''आ के कौन ने देखो तो? वो तो जा सें आ गए ते कि दद्दा द्वारें बैठते। मोय का पतो तुमाए नातेदार इत्ते मूसर हैं बिना खांसें खखारे बखरी में आ के ठाड़ें हो गए। डरा न जाती तो का करती।''

''डरा तो गईती कै नई?''

''बिना पैचान को कोऊ भीतर घुस आवी तो डर न लगवी? बेऊ कैसे नातेदार बिना आवाज भीतर आ के ठाड़े हो जावी? जाय कभऊ देखो न होय डराती नई तो करती।''

''तो काये पै शेरनी बन रई।''

''अच्छा ठीक है। जब रात बिरात तुमाओ पेट गड़-बड़ हो जात तब तुमाए कामें को आवी। तुमाए संगे ऊ बखरी में को जावी?''

''उते सूनो-सूनो लगत सो तुमे संगे लिवा ले जावी। ई में कौन सी बड़ी बात हो गई जो मोय टोंचना देवी।''

''सई-सई काय नई कै रये। तुमें अंधेरे में डर लगवी सो मोय लिवा ले जावी।''

''तुम चाये कछू कओ। तुमाओ मों।''

''फिर काय कै रये टोंचना देवी''

''तुम जे बेकार की बातें छोड़ो। अब जो बताओ। उते काय को हल्ला हो रओ तो?''

''कछू नई। अपई ऊ बखरी के पांछे जो घर है ऊ घर के मोड़ी-मोड़ा आपस में लड़-भिड़ रये हुएं। वो उतई को हल्ला सुनाई दे रओ तो/बेई चिल्ला रयते।''

''का घर में कोऊ हतो नई सो मोड़ी-मोड़ा लड़ रयते?''

''बगल वाली काकी बता रईतीं वो केऊ दिना से घरे नईं आईं। मोड़ी-मोड़ा अकेले हैं। काऊ बात को लें कें आपस में लड़-भिड़ गए हुए।''

''ऐसो नई हो सकत।''

''कायै नई हो सकत। हमनें सुनी वो तो आठ-आठ, दस-दस दिना को मोड़ी-मोड़ा छोड़ के अकेली चली जात और तौ और।''

''और तो और।''बीचई में बात काट दई।

''बाय अपयं मोड़ी-मोड़न की का फिकिर?अपओं चोला चम्म रये,दूनियाँ भाड़ में जाए। वो चाये काऊ के संग चल देत। रात होय चाये दिन। गरमी होय चाये सरदी। ऊ के लानें तो सब दिना बराबर।''

''वो कर तो करे का? अगर वो काम नईं कर तो खे और का खबे?''

''ऐसो काम हो सकत जो वो हफतन को चली जात और अपयं छोटे-छोटे मोड़ी-मोड़न को छोड़। वे लड़ हैं नईं तो का कर?''

''बोऊ बिचारी का करे? ऊ के सात-आठ मोड़ी-मोड़ा। अपओं पेट भरे के मोड़ी-मोड़न को? वो रात-दिना क माउत जब जा के मोड़ी-मोड़न को पेट पालपाऊत।''

''वो अपयं मोड़ी-मोड़न को अपय संग काये नई ले जात। इते लड़वे को काय छोड़ जात।''

''वो अपयं संग मोड़ी-मोड़ा कैसं ले जाए? बाय दिन-दिन भर काम करने। उते ऊ के मोड़ी-मोड़ा को देख? जानें किते के मारे कितें जाए? ऊ के तनक-तनक से मोड़ी-मोड़ा। जो खराब जमानों। जानें कबे का हो जावे? आज काल तो कदम-कदम पै डर लगत। कितऊ कउआ बैठे तो कितऊ भेड़िया। मौका लगो के झपट्टा मारो। सबई जगां बगुला भगत दिखाई देत। ऐसे में वो विचारी अपय चेनुआ का संग लय-लय फिरे।''

''इते को देखत?''

''इते कां जे? ज्यादा से ज्यादा सड़क तक जा पै। उते काऊ न काऊ की नजर पर जे। जा की नजर पर जे बाई डांट-फटकार के उनें घरें भगा दे।

''आठ-आठ दिना तक मोड़ी-मोड़न को बनाके को खाऊत?''

''ऊ की एक मोड़ी आठ-नौ साल की है। बोई अपयं छोटे-छोटे भईया बैनन की देख-रेख करत। खाना बनाऊत चौका पानी करत।''

''का वो पढ़बे नई जात?''

''वो कैसें पढ़वे जाए। इतने पईसा ऊ के ऐंगर कां हैं जो वो पढ़वे जाए?''

''सरकारी स्कूल तो खुले। उते तो जा सकत। उतई बाय खावे को मिल। उन्ना-लत्ता मिल और किताबे मिल फिरऊ काये नई जात?''

''जो तो तुम नींकी कै रई। वो घर छोड़ के पढ़वे जाए के अपयं तनक-तनक से भईया बैनन को देखे?''

''ऊ के घर परिवार वाले तो हैं। वो पढ़न जाए। अपयं भईया-बैन को उन के ऐंगर छोड़ जाए। अगर वो पढ़ लिख जे तो ऊ को भविष्य बन जे। देखा-देखी में ऊ के भईया बैन भी पढ़न लग।''

''जो तो तुम सई कै रई। जी दिना सें बाप को साया उठे ऊ दिना से काऊ नें उनकी ओर देखो तक नईयाँ।''

''काय पै देखें?''

''काय का कर दओ ऊ नें?''

''हमनें सुनी जी दिना से ऊ को आदमी मर गओ। ऊ दिना से वो छुट्टाँ घूमन लगी। अब तो बो काऊ की आड़ऊ शरम नई करत।''

''वो का कर देवे? ऊ के परिवार के लोगन ने ऊ को संग का दओ? जी दिना से ऊ को घर बारो का मरो ऊ को पूरे परिवार ने छोड़ दओ। छोड़त नई दओ ऐसो दओ जैसे कोऊ दूध में से मक्खी निकार के फैंक देत। वो का करती फुआ-फुआ से बच्चा तो पालने ते सौ वो काम पे जान लगी''

''ऊ को काम तो इतेऊ मिल जा तो। ऊ को दूसरी जगां जावे की का जरूरत हती।''

''इते ऊ ने काम कर वो तो खूब चाओ। कछू दिनन इते काम करो भी।

इते के लोगन ऊ को इज्जत सें काम कां करन दओ? जो देखो सो ऊ की मजबूरी का फायदा उठावे कों फिरन लगो। बुरी नियत सें देखन लगो। केऊ रंडा-मुसंडा अंधेरे-उजेरें ऊ को ताकन लगे। लालच देखा कें ऊ को अपनों बनावे के लानें जाल बिछान लगे। वो का करती? इते के लुचचा-लफगगा ऊँ को इज्जत सें काम कां करन दे रयेते। ई सें वो दूसरी जगां काम करन लगी। का बुरो कर दओ ऊ नें?''

''जो काय नई कात? ऊ की इते दाल नई गल पा रईती। गाँव पुरा के सब लोग जानन लगते ई सें वो दूसरी जगां जाकें अपयं मन की करन लगी। उते को देखवे बारो? का करती का नई करती?''

''तुमें का हो गओ? तुम कैसी बातें कर रई?''

''साँची कै रई। अब को देखवे बारो? की को डर? आदमी हतो सो बाय खा डारो। अब को रोकवे-टोकवे बारो? चाये जां जाए। चाये जी के संग जाए। काम को बहानों। यारन से मिलवो। को जानत?''

''ऊ नें तुमाओ का छुड़ा लओ? सो ऐसी बातें कर रई।''

''वो हमाओ का छुड़े? हम ऊ की टांगे न टोर दें।''

''अच्छा जो बताओ। अगर ऊ को जोई सब करने होतो तो वो इतें सें कभऊ नई जाती। बड़े आराम से रती। अपय मोड़ी-मोड़न को राजन घाई राखती। पढ़वे भेजती। मेहनत मजदूरी नईं करती। बड़े-बड़े बा कें तेल लगाते। नखरे उठाते। पईसा देते। कोऊ बा को का कर लेतो? बा को घर चांये कोऊ आतो-जातो। को रोक सकत तो? लेकिन ऊ नें ऐसो कछू नई करो। वो तसला डार, कें पूड़ी बेल कें अपयं मोड़ी मोड़ा पाल रई। तुमें का जीव उठाई पटक दई।''

''तुम गुस्सां काये हो रये? हमनें ऐसी का कै दई?''

''का कै दई? तुम तो ऊ पे लांछन लगा रई।''

''मैं लांछन कां लगा रई? जैसी सुनीं ती तैसी बता रई। तुमाएं पीरें काये उठ रई?''

''पीरें काये उठ रई? बड़ी आई पीरन बारी। ऊ की जगां कोऊ और होती तो मान भी जातो। ऊ नें कभऊ काऊ के आगें हाँत नई पसारो। मेहनत-मजदूरी कर के अपनों और अपने बच्चन को पेट पाल रई। मेहनत-मजदूरी कर के अपनों और अपने बच्चन को पेट पाल रई। वो लालच में नई फसी। कै वे को चायें कोऊ कछू कये। ऊ नें तसला डारवो, पूड़ी बेलवो मंजूर करो लेकिन इज्जत पे आँच नई आन दई। बेसेऊ एक कहावत है 'गरीब की लुगाई, सब की भौजाई' ऊ ने जा कहावत को भी अपनी मेहनत मजदूरी से झूठो कर दओ। जो तो तुमऊ जानती पांचऊ नगुरियाँ एक सी नई होती। नगुरिया उठावे बारे जो कबे देखत अगर एक नगुरिया काऊ की तरफ उठत है तो चार नगुरिया खुदऊ की तरफ मुड़ जाती।''

''हाँ काये नई जानत? तुमईं की भौजाई बता रईती। वो जानें कां कां मों मारत? मोय का पतो। वे साँची के रईती के झूठी।''

''जा को का मतलब?''

''का तुम नई जानत? इतनेऊ भोले नईयाँ तुम।''

''नगुरिया चाये कोऊ काऊ पे उठा देवे। जी पै बीतत बोई जानत। भौजाई को का परी-परी खा रई और बातें पुटक रई।''

''तुमाई सौं। भौजाई के रईती वो जब तक चार-पाँच पातें नई खा लेत वो का छकत है।''

''पूछियो भौजाई वे कै पातें खातीं?''

''हम काये पूछे? तुमाई भौजाई तुमई पूछो।''

''कै दियो भौजाई से गरीब को ज्यादा मजाक न उड़ावे। जब गरीब की हाय परत तो वो जड़ से मिट जात जो मजाक उड़ात गरीबन को। का भौजाई ने कभऊ बाय काऊ के संग देखो? कउआ कान ले गओ के दई कान नई देखो।''

''तुम तो ऊ की ऐसी बकालत कर रये जैसे वो तुमाई सगी होय।''

''सगी न सई। हम तो ऊ की छाती को दाद देत। ऊ नें बच्चन को मों देखो। नईं और सी लुगाई होती तो वो कभऊ काऊ के संगे भग जाती। मेहनत मजदूरी नईं करती। ऊ को तो घर बिगर गओ। लोगन को का? चाये जैसी चाये काऊ के लानें कन लगत। ऊ के घरें जा के कभऊ पूछी तुमाये ऐंगर खावें को है के नई? लोग बातें तो करत। सहायता नई करत। काऊ नें कभऊ ऊ की सुध लई?''

''हमें तो ऐसो लगत। के तुमऊ.... ।''

''सरम खाओ सरम।''

''काऊ की कछू कै वे सें पैले तनक सोच समझ लेओ करो। वो तो अपई भाबाई भोग रई। उनकी कोऊ नईं कै पे- सौ-सौ चूहा खाएं, बिल्ली हज को चली। वे कछू करें, वे कछू कहें। उन के सातऊ खून माफ। काय सें वे तपाक सें उत्तर दे दें। अपनो मों लटकाएं चले आए। और कें हैं बड़े लोगन की बातें बड़ेई लोग जानें।''

''चलो जे बातें छोड़ो। तुम नहा धो लो खावे को खा लो।''

''का खा लें। तुमने तो हमाओ दिमाग खराब कर दओ और के रई खाबे को खा लो।''

''अब तो गुस्सा थूंक दो। जो सुनीं ती बोई हमने तुमें बताई।''

''का दद्दा खा गए?''

''अबे नई।''

''काये नई खाओ?''

''दद्दा उतई गए।''

''उतई कां गए?''

''जा हल्ला हो रओ तो।''

इतनेई में जोर-जोर से रोवे की आवाजें सुनाई दई।

''हाय अम्मा, हाय अम्मा, हमाओ का हुए।''

''हाँ सुनाई दे रई। कपड़ा पैर के जा रओ। का हो गओ?''

''जो खाना तो रखो''

''लोट के खावी। देख आएं। को रो रओ? काय रो रओ?'' इतनेई में आठ-दस लरका दौड़त दिखाई दय।

''रुको-रुको कां भग रये?''

''देखन जा रए, देखन।''

''का देखन जा रये?''

एकऊ लरका नई रुके। सब सड़क की तरफ दौड़ रयते। उते सौ खांड़ आदमियन की भीड़ हती। हमऊ उते पौंच गए। उते कितऊ सब्जी डरी, कितऊ मिठाई डरी, कितऊ पूड़ी डरी देख के हको बको रै गओ। जो का कितऊ साड़ी, कितऊ पेटी कोट कितऊ ब्लाउज। जो देखे सो सनाको खा के रै जाए। का का बतावे? तन पै एकऊ लत्ता नई रन दओ भेड़ियन नें। ऊ को ऐसो नोंचो भेड़ियन ने ऊ के पूरे शरीर पे जगां-जगां घाव दिखाई दे रयते। घाव देख कें ऐसो लग रओ तो ऊ ने खूब छक्के छुड़ाएं हुए भेड़ियन के।

-मालवीय नगर (बजरिया) काच,
जनपद-जालौन (उ.प्र.) 285205
मोबा. 09936505493

*****

खनियाधाना राज्य का किसान आंदोलन

-डॉ. रामस्वरूप ढेंगुला

ओरछा राज्य के शासक उदोतसिंह ने 1724 ई. में अपने पुत्र अमरसिंह को खनियाधाना की जागीर प्रदान कर, इस राज्य की नींव रखी थी। किसान आंदोलन के दौर में सन् 1930 ई. के आस-पास सम्पूर्ण खनियाधाना रियासत में कुल 41 गांव थे, जिनकी आबादी 18000 के करीब थी। इस दृष्टि से खनियाधाना बुंदेलखण्ड की एक छोटी रियासत थी, इस रियासत का दूसरा महत्वपूर्ण कस्बा बसई था, जिसे इस रियासत की राजधानी कहा जाता था। इस रियासत में सर्वाधिक किसान, खेतिहर, मजदूर, श्रमिक जो सभी के सभी कृषक श्रेणी के ही थे, लोधी समुदाय के थे। लोधी समुदाय के कृषक-किसान इस भाग में नरवर के क्षेत्रों से वहां मुसलमानों के 15-16वीं सदी में आक्रमणों के बाद पलायन कर आए थे। और इस समुदाय के किसानों ने ही बसई-खनियाधाना के क्षेत्र के गांव आबाद किए थे। खनियाधाना वर्तमान में शिवपुरी जिले की तहसील पिछोर का एक बड़ा कस्बा है और इस रियासत का दूसरा कस्बा बसई दतिया जिले में सन् 1950 में शामिल होकर उसके टापू के रूप में शिवपुरी जिले के भागों एवं उत्तरप्रदेश के झांसी जिले के भागों के बीच है।[1]

खनियाधाना रियासत के प्रमुख गांव थे लईरा, हरीनगर, रेबई, मादौन, गरेठा, कमालपुर, जुंगीपुर, बसई, लखनपुर, सतलौन, मकड़ारी, जनकपुर, जैतपुर, हिम्मतपुर, बरदुंआ, सांकुली, नयाखेड़ा, कंधारी आदि हैं। सन् 1909-1935 ई. के समय में खलकसिंह बुंदेला, खनियाधाना राज्य के शासक-जागीरदार के रूप में थे। अंग्रेजी राज्य के अंतर्गत खनियाधाना ''बिना सलामी'' वाली श्रेणी की जागीर थी। इस श्रेणी के शासक नाममात्र के जागीरदार हुआ करते थे, इनकी जागीर की पूरी व्यवस्था एवं संचालन तथा देखरेख का कार्य, अंग्रेजी शासन द्वारा नियुक्त सुपरिन्टेन्डेन्ट के साथ होता था। खनियाधाना बुंदेलखण्ड का भाग था। यह कभी झांसी के मराठा राज्य एवं कभी ग्वालियर के सिंधिया राज्य तथा कभी नौगांव के अंग्रेज पॉलीटिकल एजेन्ट के आधीन (1751-1887) रहते हुए सन् 1888 ई. में सीधे ग्वालियर अंजटी (रीजेन्ट) के आधीन आ गया था। प्रशासनिक रूप में खनियाधाना के भाग शिवपुरी के क्षेत्रों से घिरे होने के कारण ग्वालियर की प्रशासकीय व्यवस्था से जोड़े गए थे। उल्लेखनीय है कि अंत तक खनियाधाना के शासक बुंदेला ठाकुर ही रहे थे।[2]

खनियाधाना राज्य की चेतनात्मक स्थिति:-

खनियाधाना रियासत के भाग बेतवा नदी क्षेत्र के घने जंगलों से घिरे थे, यहां के शासक खलकसिंह ने सन् 1924-27 के दौर में सुप्रसिद्ध क्रान्तिकारी चन्द्रशेखर आजाद को इन सघन वनों में अंग्रेजों की आंख बचाकर लगातार आश्रय दिया था उन्हें गोली-बारूद उपलब्ध कराया था व क्रांन्तिकारी गतिविधियों के संचालन की पूरी छूट प्रदान की थी। अंग्रेजी सरकार को जब यह पता पड़ा तो उन्होंने खलकसिंह को राज्य व्यवस्था से पूरी तरह दूर कर दिया था। तब से वे आध्यात्मिक चिंतन में लीन रहकर तीर्थ यात्राओं से अधिक रुचि लेने लगे थे। चंद्रशेखर आजाद के संपर्क में रहते हुए खनियाधाना के गांवों के लोधी किसान भी अंग्रेजों के प्रति घृणा के भावों से भर गए थे। किसानों में अंग्रेजी शासन के प्रति फैली व्यापक घृणा की पृष्ठभूमि में यहां के शासक खलकसिंह की आंतरिक प्रेरणा भी थी। खलकसिंह को अंग्रेजी प्रशासन ने लगातार उपेक्षित किया था, फलस्वरूप जनभावना संगठित रूप में खड़ी होकर खलकसिंह के प्रति सहानुभूति की भावनाओं से भर गई थी। उल्लेखनीय है कि इस क्षेत्र में लोधी किसान बड़े-बड़े दरवाजों वाले और मंदिराकार आकृति के आलों वाले हवेलीनुमा मकान भी बने हैं। इससे अनुमान होता है कि इस क्षेत्र के प्रमुख लोधी किसानों के कब्जे में सैकड़ों बीघा भूमि रही होगी।[3]

किसान असंतोष:-

बसई क्षेत्र के प्रमुख गांव सांकुली, लखनपुर, जनकपुर आदि में सन् 1930 ई. के दौर में किसान असंतोष ने जन्म लिया था। इसका तात्कालिक कारण खनियाधाना राज्य के सुपरिटेन्डेन्ट प्रभुदयाल द्वारा लगान का बढ़ाया जाना माना जाता है। बसई क्षेत्र के स्वतंत्रता संग्राम सेनानी शिवनारायण खरे के हाथ का एक दस्तावेज उपलब्ध है। उल्लेखनीय है कि शिवनारायण खरे [4] के पिता स्व. रायसाहब गिरजा प्रसाद इस दौर में खनियाधाना स्टेट के दीवान थे। शिवनारायण खरे अपने राजनैतिक जीवन एवं वकालती जीवन को छोड़कर वर्तमान में पूर्णतः आध्यामिक हो गए हैं। और इस समय वे 90 वर्ष की आयु में वर्तमान में छतरपुर में निवास करते हैं। शिवनारायण खरे के इस दौर में किसानों का प्रमुख नारा था-

पत्ता-बजरी हमारी है, प्रभुदयाल शम्भू अत्याचारी है

इस नारे से यह अनुमान करना कठिन नहीं है कि पूर्व में इस क्षेत्र के किसानों से ''वनोउपजों'' पर कोई कर या लगान नहीं लिया जाता था। तेंदू पत्ता संग्रह कर बेचना एवं बजरी का निर्माण कार्यो के उपयोग के लिए बेचना ग्रामीण किसानों के लिए आय का साधन होता था और इससे उनकी रोजी-रोटी चलती थी। बसई क्षेत्र से लगे ''बबीना कैन्टोनेंट'' की फौजी छावनी में बजरी की पर्याप्त खपत थी। उल्लेखनीय है कि इस क्षेत्र में छोटे-छोटे अनेक नदी नाले हैं जिनमें बरसात के बाद पर्याप्त मात्रा में बजरी एकत्रित हो जाती थी और पूरे क्षेत्र में तेंदू पत्ता के पेड़ों की अधिकता थी, जिससे तेंदू पत्ता का संग्रह हो जाता था। तेंदूपत्ता से बीड़ी निर्माण होता था, जो आज भी ग्रामीणों की और गरीबों की रोजी-रोटी का इस क्षेत्र में प्रमुख साधन है।

इस क्षेत्र के 100 वर्षीय वृद्ध किसान श्री वृंदावन लोधी के अनुसार फसल पर लगान के रूप में ''तिहाई'' अर्थात् फसल का तीसरा हिस्सा लगता था। इस वर्ष रियासत की तरफ से लगान में ''सवाई'' बढ़ोत्तरी कर मांग की गई थी, जिसे किसान दे पाने में पूरी तरह असमर्थ थे। इस कारण किसानों में व्यापक असंतोष पैदा हो गया था। जिसके कारण वे अंग्रेजी सत्ता के विरुद्ध संगठित हो गए थे। उल्लेखनीय है कि बुंदेलखण्ड के इन भागों में प्रति पांचवे वर्ष वर्षा न होने के कारण अकाल की स्थिति बन जाती थी। क्योंकि यहां की खेती-किसानी पूरी तरह अच्छी वर्षा पर ही निर्भर करती थी। इस समय इस क्षेत्र में ज्वार, तिली, उर्द, मूंग, बटरा, चना आदि की फसलें होती थीं। परन्तु ज्वार का उत्पादन सबसे अधिक था, ज्वार ही गरीबों का प्रमुख भोजन था और इसके अलावा वनोउपजों में महुआ, कुटकी समा आदि से गरीब किसानों का पेट पल जाता था। फसल के तीसरे भाग को तिहाई कहा जाता था, कर के रूप में इस समय के जो आंकड़े एकत्रित किए गए हैं, उनसे ज्ञात होता है कि अच्छी जमीन पर प्रतिवर्ष लगान के रूप में किसान को अधिकतम दो रुपए देना पड़ते थे। और यहां यह उल्लेखनीय है कि गरीब कृषक के पास सदैव नगदी पैसे का

अभाव इस काल में रहता था। इस काल में एक रूपए का लगभग आधा भाग तो गांव के बनिए के पास बीज के लिए उधार लिए गए धान के सवाए अन्न के रूप में चला जाता था। यह इस काल की सबसे बड़ी समस्या थी।[5]

आंदोलन की प्रगति:

मूलरूप में 1931-32 में चले इस किसान आंदोलन का नेतृत्व सांकुली के निर्भय लोधी ने किया था। निर्भय लोधी सांकुली गांव का एक बड़ा खातेदार किसान था। यह गांव बसई से 11-12 किलोमीटर दूर है, पुराना सांकुली गांव जहां इस किसान आंदोलन ने जन्म लिया था। अब वर्तमान में नवीन सांकुली गांव के से सटा हुआ, बबीना, जिला झांसी, उत्तरप्रदेश की फौजी छावनी का हिस्सा बन चुका है। पुराने गांव के अवशेष के रूप में यहां धराशायी हो चुके मकान और कुएं दिखाई देते हैं। इन कुओं की ईंटे 10x7x2 इंच लम्बी, चौड़ी, मोटी है, यह ईंटे 17वीं सदी के अंत की प्रतीत होती है। इस उजड़े गांव में किसान नेता निर्भय लोधी का जमीन में मिल चुका चबूतरा भी बताया जाता है। निर्भय लोधी के चार भाई और थे, जिनका नाम बलदेव, फूलसिंह, काशीराम और अजुद्धी था, इनके पिता का नाम कुंअर राज था। इसी क्षेत्र के लखनपुर गांव के जरऊ माते ने भी किसान आंदोलन में बढ़चढ़कर भाग लिया था। बसई के समीप स्थित जनकपुर गांव में किसान आंदोलन की पहली किसान सभा हुई थी।[6]

आंदोलन का प्रारंभ:

क्षेत्र में गरीबी तो थी ही, ऊपर से अंग्रेज अधिकारी लगान लेने में बहुत सख्ती करते थे, उस काल के कुछ लोग अभी भी मौजूद हैं। उन लोगों का कहना है कि अंग्रेजी काल में रियासत के किसी भी गांव में तहसील का ''जमादार'' अर्थात् भृत्य भी यदि पहुंच जाता था, तो किसान उसके भय से जंगलों में भागकर छिप जाते थे। दतिया राज्य की आंखों देखी घटना का विवरण बताते हुए दतिया राज्य के स्वर्गीय तहसीलदार लक्ष्मनकिशोर गोस्वामी के करीबी रहे एडवोकेट रामरतन तिवारी ने बताया है कि ''लगान न चुकाने पर गांव के किसान को पेड़ से लटकाकर नीचे आग लगा दी जाती थी''। इस तरह की अनेकों अत्याचारी घटनाएं हैं, किसानों की मारपीट करना तो एक मामूली सी बात होती थी। बसई- खनियाधाना रियासत में शम्भूदयाल नाम का एक ऐसा ही इंसपेक्टर था, जो अपने अत्याचारी, नादिरशाही प्रकृति के कारण किसानों की दृष्टि में पूरा दुष्ट इंसान था। रियासत के दीवान रायबहादुर गिरजाप्रसाद के बड़े पुत्र 90 वर्षीय शिवनारायण खरे ने अपने हस्तलिखित दस्तावेज में लिखा है-

बसई के समूचे क्षेत्र में क्रान्ति और राष्ट्रीयता की भावना तेजी से सुलग रही थी जिसके चलते संवत् 1988 में क्षेत्र के किसानों ने संगठित होकर राज्य शासन से तेंदूपत्ता व बजरी पर अपना अधिकार प्राप्त करने, लगान की माफी, अत्याचारी अधिकारी प्रभुदयाल सुपरिनटेन्डेन्ट पुलिस शम्भूदयाल इंस्पेक्टर व लक्ष्मीप्रसाद दरोगा को नौकरी से हटाने की मांग को लेकर एक ऐसा अभिनव आंदोलन छेड़ा था जिसके उदाहरण देश में कम ही मिलते हैं। क्षेत्र की जनता ने निश्चय किया कि जब तक उनकी मांगें पूरी नहीं होती वह अपनी जमीन पर कोई कास्त नहीं करेंगे। यह आंदोलन दो वर्ष तक चला था।''

इस समय आंदोलनकारी किसानों का प्रमुख नारा था- ''प्रभुदयाल को हटायेंगे, तभी खेत पर जायेंगे।'' अंग्रेज परस्त अधिकारियों को हटाने की मांग किसान आंदोलन के रूप में प्रज्वलित होकर इसलिए सामने आए थी, क्योंकि ये सारे अंग्रेज परस्त अधिकारी खनियाधाना राज्य के किसानों की बहुत मारपीट करते थे। और चाहे जब थाने में बंद कर देते थे। अधिकारियों का स्पष्ट कहना था कि तुम्हारे पास अन्न हो या न हो हमें तो बढ़ा हुआ लगान चाहिए अन्यथा तुम लोगों को दंड दिया जाएगा और तुम्हारी कुड़की भी की जाएगी।

आंदोलन का परिणामः-

आंदोलन के परिणाम की चर्चा करते हुए शिवनारायण खरे ने लिखा है कि -

उक्त आंदोलन को दमन करने के लिए ग्राम सांकुली में पुलिस ने फायरिंग की जिसमें निर्भय लोधी लगने से शहीद हुए और ग्राम लखनपुर में पुलिस की पिटाई से जुरऊ माते भी गंभीर चोटें आने के कारण शहीद हो गए। अधिकारियों के अत्याचारों के विरुद्ध फरियाद करने के उद्देश्य से जनकपुर के बंजारा चीरा के समीप एक सभा ली और सामूहिक रूप से बढ़ी संख्या में ग्वालियर रेजीडेन्ट से शिकायत की। जिस पर अत्याचारी अधिकारियों को हटाया गया। इस प्रकार बसई क्षेत्र के किसानों का आंदोलन आंशिक रूप से सफल हुआ। किन्तु लगान की छूट की मांग जीवित रही। श्री खरे के अनुसार यह किसानों की मांग सन् 1948 में उनके राज्य के प्रधानमंत्री चुने जाने के बाद ही पूरी हुई थी।''[9]

सांकुली गांव के वृद्ध वृन्दावन लोधी के अनुसार निर्भय लोधी के एक गोली हाथ में लगी थी। पर वह गोली लगने के बाद भागा नहीं था, निर्भय होकर खड़ा रहा था। उसके दूसरी गोली सीने में लगी थी, यह गोली लक्ष्मीप्रसाद दरोगा ने मारी थी, उसके साथ एक पंजाबी भी था। इस घटना के कुछ दिन पहले रियासत की पुलिस ने सांकुली गांव की महिलाओं को भी परेशान किया था और गांव में भय पैदा करने के लिए फायरिंग भी की थी। इस घटनाक्रम के बाद शहीद किसान नेता निर्भय लोधी के चारों भाईयों को एक-एक महीने की जेल हो गई थी और उन सबको ग्वालियर-मुरार में कैदी के रूप में रखा गया था। आज गांव क्षेत्र के लोधी समाज में निर्भय लोधी की शहादत को बड़े सम्मान के साथ देखा जाता है। नवीन सांकुली गांव में उसकी मूर्ति भी शासन द्वारा लगाई गई है। खनियाधाना जैसी छोटी रियासत का किसान आंदोलन विन्ध्यक्षेत्र और बुंदेलखण्ड की अन्य रियासतों के लिए प्रेरणा का कारण बना था। खनियाधाना-पिछोर-बसई के पूरे क्षेत्र में लोधी किसानों का आज भी बाहुल्य है।[10]

संदर्भ :-

1. प्रतिपाल सिंह बुन्देलखण्ड का इतिहास, भाग-8, छतरपुर 2009 पृ.131-137,
2. के.पी. त्रिपाठी बुन्देलखण्ड का वृहद इतिहास, टीकमगढ़ 1991 पृ.100-102,
3. वही पृ. 102
4. श्यामलाल साहू, विन्ध्य के राज्यों का स्वतंत्रता संग्राम का इतिहास, पृ. 273
5. प्रतिपाल सिंह बुंदेलखण्ड का इतिहास भाग 1, पृ 71-73
6. पी.एन. श्रीवास्तव संपादक दतिया, गजेटियर भोपाल, 1977, पृ. 347,
7. श्री रामरतन तिवारी छोटा बाजार दतिया में रहते है।
8-9. ये मूल दस्तावेज सतेन्द्र खरे बसई के पास उपलब्ध हैं।
10. सतेन्द्र खरे बसई के सहयोग से वृन्दावन लोधी से किया गया साक्षात्कार

-कुंजनपुरा दतिया म.प्र. पिन- 475661
फोन: 07522- 236136, मोबा. 9407588157

*****

कारसदेव कथा

-डॉ. एम.एल. प्रभाकर

बुन्देलखण्ड में देवी-देवतन की पूजा पैलउं सें होत आ रई। घाट घटोइया, पुलिया बब्बा, बेड़नी, गौंड़ बाबा, मैर बाबा, भुमिया बाबा के संगई संगै लोकदेवता, हरदौल, जगतदेव बाबा उर कारसदेव खों तौ सबई जनें जानत उर पूजत। भादौं की बड़ी चौथ खों जब ढाँक बजत गोटिया गोटें गाउत सो सबई कौ धियान ओई ऑरें चलौ जात। मोय मन की सोऊ हल्केअई सें कैउ विचार आउत रये, सो बड़े बूढ़न सें बूजत आव, जब तनक स्यानौ भऔ तो इतै उतै पतौ लगावे की कौंसस करी तौ कछू जनें बोले किताबन में देखौ कितउं कछू मिल सकत। सो मोय खुद ऐसौ लगौ कें सब जनें सांसी आ के रये। मैंने किताबें पढ़वौ शुरू कर दऔ। धीरें-धीरें समय कढ़न लगौ एक दिना मैं ओड़छें रामराजा जू के दरसनन खों गब तौ सो उतई श्री भगवान सिंह जू गौड़ सें मिलौ (जो अब ई दुनिया में नइयां) उनसै बतकारौ करत-करत कारसदेव महाराज कौ बतकारौ कर दऔ सो उननें अथाई की बातें नाव की खुदई की लिखी किताब दई, जी में कारसदेव महाराज के बारे में तनकई लिखौ मिलौ। मन में चाव और बड़ौ सो दूढ़त-दूढ़त डॉ. बलभद्र जू तिवारी सागर की बुन्देली भाषा उर साहित्य-संस्कृति की किताबें पढ़ी जिनमें तनक जादईं पढ़वे मिलौ। मैंने अपने शोध कार्य (पी.एच.डी.) उपाधि के लानें गाँवन-गाँवन जावौ शुरू करौ सो सब जांगां खूब बतकारौ करौ सो मोय मन में हुलास और बढ़ी सो कारसदेव महराज की किरपा से दतिया के कुँवर साहब परम सम्माननीय डॉ. लोकेन्द्र सिंह नागर 'समरेथ' से मिलवौ भऔ तौ भौतई नौनों लगौ, काय सें कै उननै कारसदेव महाराज पै ढूँढ़-ढूँढ़ कें एक अनूठौ अजूबौ ग्रंथ लिख डारौ, जियै पढ़कें मोय मन बाग-बाग हो गऔ। उनसें भौतई नौनों बतकारौ भऔ। उनकी किताब 'श्री कारसदेव (देव बाबा) पढ़ी तौ मोव जीव जुड़ा गव। नांय डॉ. बहादुर सिंह जू परमार छतरपुर संपादक महोदय हमेसई खुद आउत रत, सो उनकी सबकी सुनकें गुनकें उर अवै तक जो कछू पढ़ौ सुनौ सो ऊ कौ सहारौ लैकें और कारसदेव महाराज खौं पिरनाम करकें, मोव जौ पिरयास है उयै अपन के सामें पेस कर रऔ, सो पिरेम सें पढ़ौ उर भूलै, समारबे की किरपा करियौ ......

कारसदेव महाराज के चरण में सिर झुका कै सबसें पैलउं इनके नाव के बारे में बतकारौ कर लव जाय। इनखौं ई नाव सें काय पुकारौ जात। नागर साब जू के कथन कौ आसरौ लै कें लिख रऔ, कै इनकी सवारी अरना भैंसा हती, जी कौ रंग करिया होत। सो बोलचाल की भाषा में भैंस की जात खों कारी या कारस कई जात, सो भैंसा की सवारी करवे के कारन इनखौं कारसदेव के नाव सें जानौं जात।

कारसदेव महाराज के निवास के बारे में कई जात कै इनके पुरखा राजस्थान के गढ़राजौर के आयँ। बारहवीं सदी में जब दिल्ली के राजा पिरथीराज जू कौ सब राजपाठ चलौ गऔ तबई कौनऊं मुसलमान वास्सन नैं इयै हथयावे की कौंसस करी। एई समय कौनउ जाट राजा ने मौका कौ फायदा उठाकें अपनौ राज बना लऔ तो और गुर्जरन कौ राज मिट गऔ तो। एई गढ़राजौर में कारसदेव महाराज के पुरखा राज करतते चाय जा कैलो कै इतई रत हते। इतई गंगाराम राव कौ जाट राजा अपनौ राज बना कै राज करत तौ। गंगाराम जाट राजा को नाव ऊकी सरीर की बनक खौं देख कै धरौ गऔ तौ। गडुआ के ऊपर के हल्के से मौं कौ और नैचे पैंदा चौरों होवे सें उपै 'गडुआढ़ार' नाव सें जानौ जात तौ। ऊ के तीन लरका हते जिनमें बड़े कौ नाव हरनाम धरैं तौ। अमान सिंह शिशुपाल हल्के आयँ।

कारसदेव महाराज के पिता जू कौ नाव राजू गुर्जर कक्का जू कौ नाव गोरे गुर्जर, उनकी माता जू कौ नाव सोढ़ा उर काकी जू कौ नाव सरनी हतौ, इनकी बैन कौ नाव अहलादी उर कक्याँवते भइया जू कौ नाव सूरजपाल (सूरपाल) उर कक्याँवती बैन कौ नाव सुन्दर हतौ जिनकौ ब्याव सूरजगढ़ के ठाकुरन के गोत्र में भवतौ। इनकी बैन अहलादीक्वांरीअई रईतीं। इनकी बैन हल्के अई सें समजदार उर दयालु हतीं। सो कौनउं बात खौं लैकै ठिनकन लगत तीं। एक दिना पिता जू सें कन लगीं दद्दा मोय घर में पिडै-पिडै अच्छौ नईं लगत, मोय तौ खिरक चानैं। पिता जू सीदे सादे हते सो बिलात समजाउत रय जब नई मानी सो सोढ़ा। (धर्मपत्नी) जू सें बोले। बिटिया जादई जिद कर रईं का करौं खिरक के लाने सोदन करवा खौ कासी जू जा रऔ, नौनै रइऔ उर अहलादी कौ ध्यान राखियो सो सोढ़ा बोलीं बिटिया खौं दोई जनें समजाव मान जै- अहलादी नईं मानती लेव पढ़नै गोट के माध्यम सें इनकौ जो नौनौ प्रसंग

अहलादी-बाबुल सम्वाद - गोट

हथियन बाढ़ौ राजा कइये, राजा पिरथीराज हो ओ हो।
भुंवरन बाढ़ौ गूजर कइये, गढ़ राझोर होओ हो ओ हो।
बोलै ऐलादी-भुवानी अपने, बाबुल से रही बतराय हो ओ हो
मोरे बाबुल? खिरक तो बंधा दै, मथुरा मांझें हार होओ हो बोलै गूजर कैसे रहा, ऐलादी से बतराय।
मोरैं हलकौ नइयो वारो, नइयां नइयां कुटुम-परिवार।
कौन के तो भरोसै खिरक बंधा दऊं, मथुरा मांझें हार हो ओ हो ......
बोलै ऐलादी भुवानी, राजू से रही बतराय।
हमईं तो तुमारे हलके कइये, वारे कइये हमई कुटुम परिवार।
अरे? खिरक तौ बंधा दै, मथुरा मांझै हाट में हो ओ हो ओ।
तब तौ गूजर-दादा पाँवन पैरैं- फुल पाँवड़ी, सिर पै बाँधे लपेड़ा-पाग।
चम्पा बुदरिया हाथन लई, डिगरत जावें काशी नगर खौं हो ओ ओ।
पढ़े पुराने पंडित ढूढँ रहे, घरिया पूंछे वे गढ़ राजौर हो ओ ओ।
चलियो चलियो, उतै पंडित जी, महाराज तुमगढ़ राझौर से ओ ओ
घरियां तो बता दो, खिरक बंधा लऊं, मथुरा मांझे द्वार में हो ओ ओ
अब तो पंडित जी काशी के गूजर से रहे बतराय हो ओ ओ
सावन गरजै भदवां बरसै, भर जै हैं ताल पुखार हो ओ ओ
धरती झिर जै है, गढ़ राझौर की हो ओ ओ
भुंवरन खौं कसालौ हुइहैं, गढ़ राझौर में हो ओ ओ।
खैर बमुरिया के जार कटा लै, कटवा लै कटंगी बांस हो ओ ओ
खिरक तो बंधा लो, वे मथुरागढ़ मांझें हार में हो ओ ओ।
तब तो घरियां सुधवा लई, गूजर नें काशी नगर, शहर सें।
डिगरौ आवै अपनी, गढ़ राझौर को हो ओ ओ,
खैर तौ बमुरिया के जार तौ, कटवा रऔ, कटवा रऔ कटंगी बांस।
भुंवरन खौं खिरक बँधवा रऔ, मथुरा माँझें हार में हो ओ- ओ
भुवरें हांकी गूजर ने गढ़ राझौर,भुंवरें लै आओ मथुरा माझै हार हो ओ ओ
तब तौ खिरक बन गये गूजर, दादा के मांझे हार हो ओ - हो
भुंवरन के व्याउट तौ पर गये, वे मथुरा मांझें हार में हो ओ ओ।
तब तो सात सै मटकी सिर धरे नौ सै, पड़ला की दावत लये दोयने हाथ।
डिगरी तौ भुवानी मथुरा, माझें हार सें हो ओ ओ।
सकरी खोरें कइये मथुरा के उरद बजार।
भुवरें तो हो रईं हाथी, गडुआझार हो ओ ओ

कोई अंक उपलब्ध नहीं हुआ।

'मधुकर' के बंद होने संबंधी आदेश से आहत होकर चतुर्वदी जी ने अपना त्याग-पत्र दे दिया था। इसका उल्लेख उन्होंने दिनांक 20/11/1946 को राजेन्द्र कुमार जैन को लिखे गये पत्र में किया है-'' राजाश्रय में अराजकतावादी का रहना ही घोर विडम्बना है, यद्यपि यह बात ईमानदारी के साथ मुझे स्वीकार करनी होगी कि श्रीमान् ओरछेश ने मुझ पर किसी भी प्रकार का नियंत्रण नहीं रखा।

फिर भी यहाँ से मैंने इस्तीफा दे दिया है।''
मिले रूखी रोटी जो आजाद रहकर
तो है खौंफे जिल्लत के हलवे से बेहतर।''

देश की स्वतंत्रता के लिए दीवानों, बलिदानियों और क्रांतिकारियों के अगणित जीवन चरित्र प्रकाशित कर चतुर्वेदी जी ने जहाँ एक ओर उनके पौरूष, वीरता, साहस का शंखनाद किया वहीं उनके यश की धरोहर को ससम्मान बड़ी सावधानी से सुरक्षित कर देश प्रेम की अलख जगाते हुये, असंख्य बलिदानियों के रक्त के मूल्य पर प्राप्त स्वतंत्रता को हर कीमत पर बचाये रखने हेतु जन-जागरण कर मानस तैयार करने में अद्वितीय योगदान किया।

'मधुकर' के बंद हो जाने पर चतुर्वेदी जी ने 'विन्ध्यवाणी' साप्ताहिक के प्रकाशन की योजना बनाई। उसके वे स्वयं संस्थापक बने और बाबू श्री प्रेमनारायण खरे को पत्र का संपादक बनाया। विन्ध्यवाणी का प्रथम अंक 'शहीदांक' के रूप में 2 अक्टूबर गाँधी जयंती 1948 ई. को प्रकाशित हुआ। बाबू प्रेम नारायण खरे ने एक तीखा सम्पादकीय लिख दिया। फलस्वरूप वह पत्रिका जप्त हो गई और विन्ध्यवाणी का प्रेस शील्ड कर दिया गया।

चतुर्वेदी जी के लाख कोशिशों के बाद विन्ध्य प्रदेश शासन उसके पुन: प्रकाशन की अनुमति इस शर्त पर देने को तैयार हुआ कि संपादक बाबू प्रेम नारायण एक अग्रलेख लिखकर सखेद माफी माँगे। किन्तु इस शर्त को मानने हेतु न तो चतुर्वेदी जी तैयार हुए और ना ही संपादक श्री खरे। फस्वरूप विन्ध्यवाणी का पुनर्प्रकाशन संभव नहीं हो सका और पत्रिका बंद हो गई।

गाँधी जी के सानिध्य में रहे चतुर्वेदी जी ने गाँधीवादी प्रवृत्ति के रूप में कुण्डेश्वर में बुनियादी प्रशिक्षण संस्था स्थापित कराने हेतु तत्कालीन महामहिम राष्ट्रपति महोदय श्री राजेन्द्र प्रसाद जी को पत्र लिखा। इसी पत्र के आधार पर कुण्डेश्वर में बुनियादी प्रशिक्षण संस्था की स्थापना हो गई। चतुर्वेदी जी को इसका प्राचार्य नियुक्त किया गया। उन्होंने प्राचार्य का प्रभार ग्रहण कर संस्था संचालित हो जाने पर प्राचार्य पद पर किसी अन्य व्यक्ति की नियुक्ति करने तथा उन्हें पद मुक्त करने हेतु पत्र लिखकर मुक्ति पा ली।

चतुर्वेदी जी के कारण देश के प्रथम राष्ट्रपति श्रद्धेय राजेन्द्र प्रसाद जी, विनोवा भावे, देश के मूर्धन्य साहित्यिकार कुण्डेश्वर आते रहे। उन्होंने स्वयं लिखा है कि-'' आचार्य विनोवा जी अपनी पार्टी सहित ललितपुर से 36 मील पैदल चलकर कुण्डेश्वर पधारे थे और राष्ट्रपति बाबू राजेन्द्र प्रसाद जी ने भी यहाँ की यात्रा कर गौरवान्वित किया था। अमर शहीद आजाद की माता जी ने भी चौदह दिनों तक उस आश्रम को पवित्र किया और माहौर जी, सदा शिवजी तथा मास्टर रूद्रनारायण जी वहाँ पधारे। स्वर्गीय किदवई साहब आये थे और डाक्टर राम मनोहर लोहिया तथा हर्ष देव मालवीय भी। मिस मार्जोरी साइका तो यहाँ महीने भर रही थीं।

हिन्दी के अनेक प्रतिष्ठित लेखक तथा कवि यहाँ आते रहे। स्व. वृंदावन लाल वर्मा, स्व. घासीराम व्यास, स्व. शील चतुर्वेदी कई बार पधारे थे। पं. परमानंद जी स्वामी ब्रह्मानंद जी ने भी आने की कृपा की थी। आचार्य क्षिति मोहन सेन तथा हजारी प्रसाद जी द्विवेदी ने यहाँ की यात्रा की थी।''

सन् 1952 ई. में चतुर्वेदी जी राज्य सभा के सदस्य मनोनीत हुए। उस कारण उन्हें कुण्डेश्वर छोड़ना पड़ा किन्तु उनकी आत्मा कुण्डेश्वर में ही बसी रही। फीरोजाबाद से दिनांक 7/12/69 को उन्होंने डॉ. दुर्गेश दीक्षित को लिखा था कि-'' मेरी आत्मा तो वहीं कुण्डेश्वर में विद्यमान है। शरीर भर यहाँ हैं। इस पत्र में उन्होंने यह भी लिखा था कि- '' कुण्डेश्वर का मैं अत्यंत ऋणी हूँ। वहाँ मेरे क्षुद्र जीवन के साढ़े चौदह वर्ष बीते और आज भी मैं कुण्डेश्वर की दी हुई रोटी खा रहा हूँ। यदि आप लोगों की मुझसे कुछ सेवा बन पड़ी तो वह ऋण का आंशिक परिशोध ही मानी जानी चाहिए''

अप्रैल 1966 में एक बार जब चतुर्वेदी जी कुण्डेश्वर पधारे थे तब अपनी स्मृतियों का ताजा कर जब वह आम्र निकुँज का अवलोकन कर लौट रहे थे। तब आगे पलाश निकुँज के समीप स्थित विशाल पीपल के वृक्ष की ओर संकेत करते हुए उन्होंने कहा था- ''कहते हैं मृत्यु उपरान्त जीवात्मा पीपल के वृक्ष पर निवास करती है तो मेरी एक ही आकांक्षा है कि मैं मृत्यु को कहीं भी वरण करू मेरी आत्मा इस पीपल पर आकर ही रहे।''

90 वर्ष की आयु में दिनांक 27/04/82 को चतुर्वेदी जी ने स्वर्गीय पं. परमानंद जी पस्तोर स्वतंत्रता संग्राम सेनानी टीकमगढ़ (जो 'विन्ध्यवाणी' के प्रकाशन काल में उनके सहकर्मी रहे) को लिखा था- प्रिय भाई पस्तोर जी, आपके श्रद्धापूर्ण कृपा-पत्र के लिए बहुत-बहुत कृतज्ञ हूँ। 90वीं वर्ष में लिखना-पढ़ना कठिन हो गया है। क्षमा प्रार्थी हूँ। अवश्यमेव आप लोगों के दर्शनार्थ कुण्डेश्वर पहुँचना चाहता हूँ। नाती राजा का भी विशेष आग्रह है। मेरे जीवन के साढे चौदह वर्ष वहीं बीते थे। जिन्हें में कदापि नहीं भूल सकता हूँ। विन्ध्यवाणी के दिन याद आते रहते हैं''

पं. बनारसी दास जी चतुर्वेदी जिन्हें हम टीकमगढ़ वासी श्रद्धापूर्वक 'दद्दा जी' कहा करते थे कि स्मृतियाँ कुण्डेश्वर (टीकमगढ़) और बुन्देलखण्ड के जन-मन में विद्यमान है। बुन्देलखण्ड नामक भू-भाग उनके अवदान को कभी विस्मृत नहीं कर सकता।

24 दिसम्बर को दादा जी की जयंती के अवसर पर प्रति वर्ष क्षेत्र के सभी साहित्यकार उनके प्रशंसक उसी पीपल वृक्ष के तले बैठकर कुण्डेश्वर में अपने श्रद्धा सुमन अर्पित करते हैं। श्रद्धेय दादा जी की एक एक सौ सत्रहवी जयंती पर शत-शत वन्दन, शत-शत नमन।

-अध्यक्ष
श्री वीरेन्द्र केशव साहित्य परिषद्
परिषद चौक, किले का मैदान
टीकमगढ़ (म.प्र.) पिन- 472001

*****

छतरपुर के बुंदेली कवि और सामाजिक चेतना

-डॉ. अजय कुमार खरे

छतरपुर अपनी साहित्यिक परम्परा, सांस्कृतिक विधिधता, धार्मिक समता, लोक रागनियों की सरलता वनाच्छादित पहाड़ियों की मनोरमता, तीज त्योहारों की साकारता खान पान की मौलिकता लोक गाथाओं की ऐतिहासिकता, आवभगत की आतुरता, बोलचाल की उदारता जैसी अनगिनत प्रवृत्तियाँ इसके अतीत को आज भी अक्षुण्य बनाये हुए है। यहाँ के गाँव और नगर सभी साहित्य और संस्कृति के संवाहक हैं। इस पावन भूमि पर ईसुरी, गंगाधर और ख्यालीराम जैसे सिद्धहस्त कवि अवतरित हुए हैं जिनकी चौकडियाँ बुंदेलखण्ड के जनमानस में वसीं हैं। इस जिले में बाबू गुलाब राय, वियोगि हरि और बिजावर के बिहारी जैसे कवियों ने सारे देश में अपनी यश पताका फहराई है। महाराज विश्वनाथ सिंह जू देव के शासन काल में इस क्षेत्र का विकास हुआ था।

प्रो. ज्योति प्रकाश सक्सेना ने लिखा है- ''छतरपुर नगर में सदा से ही साहित्यिक अलख जगती रही है। बुंदेली लोक साहित्य के सिरमौर ईसुरी की फाग परम्परा तथा गंगाधर व्यास की सैर परम्परा से आज भी यह स्थल स्फूर्ति युक्त है। लोकगीत और लोकनृत्य उसके जीवन में स्पंदित हैं। महारानी युगलप्रिया का कवि इसी नगर के राज प्रासाद में मुखरित हुआ था। लाला भगवान दीन, रविराजा श्यामबिहारी मिश्र एवं सुकदेव बिहारी मिश्र जैसे मनीषियों ने यहाँ साहित्य सेवा की। दीवान श्री प्रतिपाल सिंह का इतिहास इसी भूमि में पल्लवित और पुष्पित हुआ। बाबू गुलाब राय जैसे विख्यात समालोचक ने अपने जीवन का अधिकांश समय इसी भूमि पर व्यतीत किया। वियोगी हरि के जन्म स्थल का सौभाग्य इसी धरती को प्राप्त है।''[1]

बुंदेली साहित्य परम्परा स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व से आज तक इस नगर में चली आ रही है। बुंदेली के मधुर गायक कवि संतोष सिंह बुंदेला ने सारे देश में बुंदेली काव्य की कीर्ति पताका फहराई थी। विंध्य कोकिल भैयालाल व्यास बुंदेली साहित्यकारों में अपना अलग स्थान रखते हैं। कविवर अवध किशोर जड़िया के छंदों की सुगंध आज सारे भारत में महक रही है।

नवल किशोर सोनी 'मायूस' की व्यंग्य रचनाएँ, गोपालदास रूसिया की चौकडियाँ, शंकर दयाल खरे की बुंदेली रचनाएँ, राघवेन्द्र उदेनिया की बुंदेली रचनाएँ आदि आज भी छतरपुर जिले में सामाजिक चेतना के स्वर जाग्रत कर रही है। आकाशवाणी के माध्यम से भी यदा कदा इनके जन जाग्रति के स्वर मुखरित होते रहते हैं। डॉ. बहादुर सिंह परमार, सुरेन्द्र शर्मा 'शिरीष' एवं कुंजीलाल पटेल बुंदेली के विकास में निरंतर तत्पर है एवं बुंदेली काव्य परम्परा को जीवन्त बनाये रखने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते हैं।

वर्तमान में समाज में तमाम विसंगतियाँ फन फैलाये खड़ी हैं। जो धीरे-धीरे समाज से संस्कार, सामाजिकता, ईमानदारी, परोपकार की भावना आदि निगल रही हैं। छतरपुर जिले के साहित्यकार समाज में व्याप्त बुराईयों को देखते हुए इसके विरूद्ध कमर कसे हुए दिखाई देते है। जहाँ एक ओर इनकी रचनायें श्रृंगार में डूबकर लोगें को रसपान कराती दिखाई देती है तो वहीं दूसरी ओर समाज की बुराईयों को उजागर करती हुई जनचेतना के स्वर मुखरित करती है। यही तो कवि कर्म है जो अपनी कविता से न्याय करे।

छतरपुर जिले के साहित्यकार समाज में व्याप्त बुराईयों को देखते हुए इसके विरूद्ध कमर कसे हुए दिखाई देते है। जहाँ एक ओर इनकी रचनायें श्रृंगार में डूबकर लोगें को रसपान कराती दिखाई देती है तो वहीं दूसरी ओर समाज की बुराईयों को उजागर करती हुई जनचेतना के स्वर मुखरित करती है। यही तो कवि कर्म है जो अपनी कविता से न्याय करे।

छतरपुर जिले के नवल किशोर सोनी 'मायुस' जी ऐसे ही लाडले सपूत हैं जिन्होंने समाज को जाग्रति प्रदान करने के लिए कलम का सहारा लिया और समाज में समता और न्याय के लिए आवाज बुलंद की। वे लगभग तीन दशक से काव्य सृजन में लगे हुए है। हालाकि उनकी बुंदेली रचनाएँ बहुरंगी हैं तथा समाज और राजनीति पर करारे व्यंग्य हैं। अपनी रचनाओं के द्वारा उन्होंने अशिक्षितों को शिक्षा की ओर उन्मुख करने का प्रयास किया। उनका ध्येय रहा है कि शिक्षा जीवन का अनिवार्य अंग हैं। वैसे तो इन्होंने विभिन्न विषयों पर कलम चलाई है जिनमें से शिक्षा के प्रति जाग्रति के लिए अनेक रचनाएँ अपनी लेखनी के द्वारा प्रकट की है-

''अपुन पड़ो लिखो और सवई खौ पडाव।।
वेर-वेर कात समय अनपढ नई राव।।[2]

वे इन पंक्तियों से स्पष्ट करते हैं कि शिक्षा समय की माँग है इसलिए खुद शिक्षित होकर दूसरों को भी शिक्षित करो। जिससे समाज में सम्मान हो और कोई तुम्हारा शोषण भी न कर पाये।

इन्हीं की परम्परा के बुंदेली के प्रसिद्ध कवि श्री शंकर दयाल खरे 'शंकर' जी हैं जो समाज में व्याप्त बुराईयों को दूर करने का मन बनाये रहे है। इनकी रचनाएँ विविधता से भरी हुई है, जो सामाजिक चेतना के स्वर मुखरित करती हैं। समाज आज व्यसनों में लिप्त दिखाई देता है जैसे शराब, गुटखा, जुआ आदि जो व्यक्ति को शारिरिक पतन के साथ-साथ चारित्रिक पतन की ओर अग्रसर करते है। शंकर जी ने जो देखा उसका जीवंत उदाहरण प्रस्तुत किया। मैने इनकी रचनाओं का अवलोकन किया तो पाया कि इन्हें यथार्थ की धरती पर जमें रहना ही आता है। श्रृंगार इन्हें रिझा नहीं पाया। साहूकारी व्यवस्था जो किसान के गले की फासी बन जाती है। एक कृषक की व्यथा को 'शंकर' जी ने जीवंत व्यक्त किया है-

''साउकार से करजा काडो। करी भौत नादानी
दस के बीस वना लए चुपकई। भेद खुलो तब जानी।[3]

शंकर दयाल खरे 'शंकर छतरपुर जिले के अग्रणी कवियों में से एक है इनकी कृति 'बाँकी बनी बुंदेली बानी' विविध विषयों का भण्डार है जिसमें व्यवस्था पर व्यंग्य से लेकर आपसी सौहार्द के स्वर झलकते हैं तो वहीं दूसरी ओर हास-परिहास और बुंदेलखण्ड प्रेम भी प्रदर्शित करते हैं।

छतरपुर के संतोष सिंह बुंदेला जी ऐसे रचनाकार रहें है जिन्होंने बुंदेली कविता को एक ऊँचाई प्रदान की है। इनके गीत जनमानस के हृदय में बसे हुए हैं। इनके गीत के भाव लोगों को बरबस

ही अपनी ओर आकर्षित कर लेते हैं। ये बुंदेली साहित्य के लिए निरंतर कार्य करते रहे हैं। बुंदेला जी सामंतशाही होते हुए भी मानव प्रेमी थे, वे बंधुआ मजदूरी के खिलाफ थे व किसान के परम हितैषी थे। उन्होंने शिक्षा पर जोर दिया। उनका मानना था कि अनपढ़ होना ही लोगों के शोषण का कारण है। उन्होंने लिखा है-

''कै हम पै रूठ गयो करतार, भँजा रयो जनम जनम के दाव।
तरा ऊँगे सै गये ते छोड़, कात ते ल्याय सिंगारे तोड़।[4]

उन्होंने किसान-मजदूरों का शोषण अपनी आँखों से देखा है। शोषण से द्रवित होकर उनकी कलम विद्रोही हो गई और उन्होंने अपने कवि कर्म का निर्वाह करते हुए समाज को नई दिशा दिखाई, समाज में जाग्रति का संचार किया। वे अपने कवि कर्म से अमर हैं। समाज में व्यापत विषमता जब तक बनी रहेगी समाज में संघर्ष चलता रहेगा। समाज विकास की मुख्य धारा से हमेशा दूर रहेगा।

दिनकर जी ने लिखा है। -

जब तक मनुज-मनुज का सुख भाग नहीं सम होगा।
सामित न होगा कोलाहल, संघर्ष नहीं कम होगा।

''मनुष्य को अपनी आवश्यकता की पूर्ति के लिए संतोषजनक पौष्टिक आहार, सामान्य स्तर का कपड़ा एक उचित ढंग का मकान, और अन्य उपयोग की वस्तुएं जो किसी भी परिवार के लिए आवश्यक है। व्यक्ति की दूसरी आवश्यकता न्यूनतम शिक्षा प्रास करने की है। उसे थोड़ा बहुत पढ़ना लिखना आना चाहिए जिससे वह अपनी दैनिक गतिविधियाँ चला सके। किन्तु सामंतवाद के कारण गरीबों और अमीरों की खाई बहुत गहरी होती गई। तरण ग्रस्तता और बंधुआ मजदूर प्रथा ने आम आदमी की स्थिति बहुत जर्जर और सोचनीय कर दी थी।[5]

जहाँ तक छतरपुर के कवियों में सामाजिक चेतना के स्वर की बात है वे इस पर खरे उतरते है। छतरपुर जिला बुंदेली साहित्य की परम्परा को शोमित करता है। यहाँ का कवि समाज में व्याप्त अशिक्षा, सामंतशाही व्यवस्था, दहेज प्रथा, वैमनस्य, भ्रूण हत्या, नशाखोरी, शोषण आदि बुराईयों को अपनी कलम के माध्यम से दूर करने के लिए तत्पर दिखाई देता है। कवि सम्मेलनों के माध्यम से अपनी आवाज बुलंद कर लोगों को जन जाग्रती का संदेश देता है। सागर संभाग में जिला छतरपुर के कवि सामाजिक चेतना की दृष्टि से अग्रणी दिखाई देते हैं। भैयालाल व्यास, संतोष सिंह बुंदेला, अवध किशोर जडिया, नवलकिशोर सोनी 'मायूस' राघवेन्द्र उदैनिया, शंकर दयाल खरे, शंकर गोपाल दास रूसिया, सुरेन्द्र नारायण तिवारी, आदि साहित्य के सेवक है। इनके बुंदेली काव्य में सामाजिक समरसता छुआछूत के प्रति विरोध, अशिक्षा समाप्ति पर जोर सामंतवादी व्यावस्था के प्रति आक्रोस, शोषण के खिलाफ जागरूकता, दहेज प्रथा, नशाचारी के प्रति जागरूकता का संदेश देते हैं। सांप्रदायिक सदभाव, देश प्रेम, भ्रूण हत्या आदि ज्वलंत विषयों पर जोर देते हैं।

साहित्य का महत्व तब और बढ़ जाता है जब लोक मनोरंजन के साथ-साथ समाज को नई दिशा प्रदान करे। साहित्यकार श्रृंगार लिखकर स्वानुभूति कर सकता है। वास्तव में देखा जाए तो समाज हमेशा की तरह आज भी विसंगतियों से जूझ रहा है। हर तरफ अफरा तफरी का माहौल है। किसान की हालत वैसी है जैसी पहले थी। लोग पलायन कर रहे है। नशाखोरी जस की तस है। अब तो ये आलम है कि शादियाँ शराबघर लगतीं हैं। छतरपुर जिले में बुंदेली कवि समाज में घटित होने वाली तमाम गति विधियों पर नंजर रखता है। मैंने देखा है कि जितना इन्हें श्रृंगार लिखना पसंद है उससे कही ज्यादा समाज की विसंगतियाँ को दूर करने के लिए प्रयासरत दिखते हैं। लोगों को जगाने का कार्य करते है। यहाँ तक कि सरकार की योजनाएँ भी कविताओं के माध्यम से लोगों तक पहुँचाने का कार्य इनके द्वारा किया जाता है।

गोपालदास रूसिया जी सामाजिक सरोकारो के कवि है जिन्होंने अपनी कलम से चेतना के स्वर प्रस्तुत किये हैं। इनकी चौकड़िया प्रसिद्ध है। इनकी पुस्तक है नीचट बोल बुंदेली के जो चौकड़िया विधा में है। इस पुस्तक में सतरंगी रचनाओं का संकलन है। जहाँ एक ओर श्रृंगार बरसता है जो लोगों को प्रेमरस का पान कराता है। वही दूसरी ओर यथार्थ के धरातल पर गोते लगाता हुआ प्रतीत होता हैं। इनकी चौकड़िया लोगों को आपस में प्रेम करना सिखाती है, शिक्षा की अनिवार्यता बताते हुए व्यसनों के दुष्परिणाम बताती हुई आगे बढ़ती है तथा साम्प्रदायिक सौहार्द्र की बात करते हैं।

''कौम - कौम को बीज दारके कीने आग लगाई।
भलो गुपाल हुयै न उनकों जो करवाय लडाई।''[6]

सभी में प्रेम रहे। सभी एक दूसरे के धर्म का सम्मान करें। तभी समाज का विकास संभव है और राष्ट्र का विकास भी इसी में निहित है कि सब आपसी विवाद से परे हटकर एक साथ ही राह पर आगे बढ़ें। इस तरह छतरपुर जिले के बुंदेली कवि सामाजिक चेतना से ओतप्रोत है, इन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से समाज में जाग्रति लाने का प्रयास किया है। इनकी रचनाएँ समाज को आईना दिखाने में सक्षम है। इनकी रचनाएँ बुंदेली भाषा को पहचान दिलाने में सक्षम है।

सामाजिक चेतना के कुछ उदाहरण-

''चले गरीबी सै लखे जे, वीर बाँकुरे रन में।
लै हँसिया हतयार हात में ठाडे है खेतन में।।[7]
''घर से इनै निकारो जू-घर से इयै निकारो जू।
ई दहेज के कुंभ करन खाँ सबरे मिलकै मारौ जू।।[8]

संदर्भ-

1. मनोज्ञ परंपराओं का जीवन्त स्थल छतरपुर- प्रो. ज्योति प्रकाश सक्सेना
2. रैवे इतै देवता तरसे - नवलकिशोर सोनी 'मायूस'
3. बाँकी बनी बुंदेली बानी - शंकर दयाल खरे 'शंकर'
4. मिठौआ है ई कुँआ कौ नीर - संतोष सिंह बुन्देला
5. भारतीय सामाजिक संरचना और परिवर्तन- डॉ. दोषी एवं डॉ. पी.सी. जैन
6. नीचट बोल बुंदेली के - गोपाल प्रसाद रूसिया
7. बेर मकुइयाँ - राघवेन्द्र उदैनिया
8. रैवे इतै देवता तरसे - नवल किशोर सोनी 'मायूस'

- शा.कन्या महाविद्यालय, पन्ना
जिला-पन्ना (म.प्र.)

*****

बुन्देली के सशक्त कवि श्री भानुप्रताप शुक्ल 'भानु' के आकस्मिक निधन पर
बुन्देली बसंत परिवार
हार्दिक शोक व्यक्त करता है।
-संपादक

कारस देव एवं धर्मासॉबरी में चारागाही संस्कृति के लोक साक्ष्य

-डॉ. सीमा तिवारी

लोकगाथा नायक या नायिका प्रधान, कथानक व उपकथानक के साथ चारित्रिक गुणों से युक्त व देशकाल आदि गुणों को लेकर जीवन पर प्रकाश डालतीं हैं। अधिकांश लोकगाथायें वीर रस, करूण रस प्रधान होती हैं। लोकगाथाओं में इतिहास, समाज, नीति, संस्कृति, अर्थव्यवस्था आदि का बोध होता है। बैलेड की परिभाषा - प्रो. किटरिज के अनुसार बैलेड वह गीत है जिनमें एक कहानी कही जाती है अथवा यों कहें कि कोई कथा ही गीत के रूप में कही जाती है।[1]

डॉ. सत्यव्रत सिन्हा के अनुसार लोकगाथा एक सामाजिक संस्था है, जिसकी अन्तरात्मा में व्यक्ति बैठा हुआ है। उस व्यक्ति की अवहेलना हम कदापि नहीं कर सकते।[2] डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय के अनुसार वैदिक साहित्य में गायन शब्द का प्रयोग उस व्यक्ति के लिए किया जाता है जो किसी प्राचीन आख्यान या कथा को कहने वाला हो। अत: गाथा शब्द का अर्थ हुआ कोई आख्यान या कथा।[3]

राबर्ट ग्रेम्स ने लिखा है कि इसका संबंध बैलेट शब्द से है। इसका मूल अर्थ उस गीत से है जो नृत्य के साथ गाया जा सकता है। कुछ समय बाद बैलेट शब्द का प्रयोग संगीतात्मक गीतों के लिए होने लगा।[4]

डॉ. मरे के अनुसार बैलेड वह स्फूर्तिदायक या उत्तेजनापूर्ण कविता है, जिसमें कोई जनप्रिय आख्यान रोचक ढ़ंग से वर्णित हो।[5]

चारागाही लोकगाथायें-

बुन्देलखण्ड में चरागाही लोकसंस्कृति अति प्राचीन रही है। महाभारतकाल में यह क्षेत्र यादवों का गढ़ रहा है। बुन्देलखण्ड का एक नाम चेदि जनपद भी रहा है। चेदि जनपद में पशु पालकों को अधिक महत्व मिला था। ग्वालियर पशुपालकों का केन्द्र था। इस क्षेत्र में पशुपालक जातियाँ अहीर, गूजर अधिक थे। अहीर-गूजर चरवाहे पशुओं को चराने जंगल में ले जाते थे, वह क्रम आज भी जारी है। यहाँ के ग्रामीण क्षेत्रों में चरवाहे पशु चराने ले जाते हैं। यादवों, अहीरों, गड़रियों आदि पशुपालकों के साथ ही गूजरों की स्थिति के संबंध में अनुशीलन भी महत्वपूर्ण है।[6]

उक्त जातियाँ चम्बल नदी के केन के मध्य यमुना नदी की तटीय पट्टी के चरागाहों में निवास करते थे। कारसदेव की गाथा या गोटों में चामल शब्द बार-बार आता है, चामल अर्थात् चम्बल। चम्बल नदी के किनारे उत्तर दिशा में यह क्षेत्र जो कि चरागाही क्षेत्र है यहाँ से दिल्ली तक जाता है। बुंदेलखण्ड में यादवों के बाद गूजरों का राज्य रहा है। इस समाज ने यहाँ के सांस्कृतिक विकास में अपना योगदान दिया है। चंदेलकाल में यहाँ का लोकादर्श युद्ध विषयक रहा है। युद्ध में वीरता पूर्वक लड़ना तथा वीरगति प्राप्त करना रहा है। आल्हाखण्ड में भी इसका स्पष्ट वर्णन मिलता है:-

बारा बरस लौ कूकर जीवे और सोरा लौ जिये सियार।
बरस अठारा लौ छत्री जिये, आंगे जीवे तो धिक्कार।।

युद्ध में खेत रहना बड़े भाग्य की बात होती थी-

जो मर जैहों रन खेतन में, साका चली अंगारू जाय।

इन सबमें राजभक्ति तथा देशभक्ति जुड़ी थी। देश के लिए बलिदान देना सच्चे वीर की पहचान मानी जाती थी, वीरता की साधना और साधना के प्रतीक थे, शिव चन्देलों के आराध्य थे। बुन्देलखण्ड की लोकगाथाओं में शिव को सर्वाधिक महत्व यिा गया है। कारसदेव की गाथा में कारसदेव शिव के वरदान से अवतरित हुए थे। गाथाओं के प्रसंगों में यत्र-तत्र शिव का आव्हान होता है :-

शिव समान दाता नहीं, विपत बिड़ारन हार।
लज्जा मोरी राखियों, बरधा के असवार।।

कारसदेव-

कारसदेव की गाथा चरागाही संस्कृति की पृष्ठभूमि पर आधारित है। राजू गूजर अपने परिवार सहित पशुधन के साथ गड़राझौर में रहता है। एक समय जब गड़राझौर के राजा ने राजू गूजर की कन्या एलादी को अपने पुत्र के लिए माँगा था, साथ में राजू गूजर को यह धमकी भी देता है कि अगर सात दिनों में उसने एलादी के विवाह का प्रस्ताव स्वीकार नहीं किया तो वह जबरन अपने पुत्र के साथ एलादी का विवाह कर देगा।

राजू गूजर को यह प्रस्ताव नागवार लगा। उसने यह समझा कि राजा उसकी कन्या को डॉड़ कें रूप में माँग राह है- इस पर वह यही कहता है कि राजा भले ही हमसे पूरी खौंड़ मँगा लेते, मेरा सबकुछ ले लेते तो मैं उन्हें सहर्ष दे देता लेकिन राजा ने मेरी मूँछ का बाल माँगा है और मैं राजा को वह नहीं दे सकता। राजू गूजर अपने परिजनों से सलाह मशविरा करता है और वह आधी रात में झॉज छोड़ देता है।

झॉझ छोड़ने पर राजू गूजर के ऊपर बहुत मुसीबतें आईं। उसकी खोंड़ के पशु मर जाते हैं। वह राजा मानाराव के यहाँ कूड़ा धौंकने का काम करने लगता है तथा उसकी पत्नी राजा के यहाँ अनाज पीसने का काम करती है। गोरे काका तथा सूरपाल राजा की गायें-भैसें चराने लगते हैं। एलादी भोलेनाथ की तपस्या में लीन हो जाती है, शिव जी एलादी की बारह वर्ष की कठिन तपस्या से प्रसन्न होकर उसे कारसदेव जैसा वरदानी भाई देते हैं। बड़े होने पर कारस राजा गडुवाढ़ार से अपने पिता का बदला लेते हैं।

इस तरह से हम देखते हैं कि इस युग में मुख्य रूप से तीन प्रवृत्तियाँ लोकमान्य थीं। वीरता का आदर्श, विवाह-संस्कार में वीरता को चुनौती देकर राजनीतिक हित साधन और बदले की भावना।[7]

कारसदेव और धर्मासांबरी गाथायें चरागाही संस्कृति की पृष्ठभूमि लेकर चलतीं हैं। दोनों गाथाओं के नायक अपने जीवन में संघर्ष तथा वीरता का प्रतिनिधित्व करते हैं। गाथाओं का उद्देश्य कल्याणकारी और सामाजिक चेतना को जाग्रत करने का है।

कारसदेव और धर्मासाँवरी की गाथा में बहुत समानतायें हैं लेकिन एक स्थान पर दोनों में काफी अन्तर जान पड़ता है। कारसदेव के नायक लोकदेवता हैं जबकि धर्मासाँवरी गाथा लौकिक तथा चमत्कारी गाथा है। दोनों चरागाही संस्कृति पर आधारित हैं।

कारसदेव -

राजन् के उड़वैया, भूतन के भगवैया, भैंसन के चरवैया,
बाँह बल भइया भोला जू, मोखों ऐसो वर दइयो हो हो ...।[8]

धर्मासाँवरी: *जब गइयें चरा रये मोरे राम, रमना तो जा रये जूनागढ़ के रे,*
अपने अम्मा छुड़ा दे मोरे राम, बोले ने लोदन जा कहे रे,
मोरी सुनले बरेदी नोने बात।

कारसदेव की गाथा में चारागाही का चित्रण :

खोड़ डरा दये जिने धौरी गाय,
अरे हतियन बाड़ो राजा कईये राजा गड़राझौर,
अरे बेटी भवानी भोर में, जागी हो ऐसी तैयार,
अरे लोई दुलनियाँ अरे हॉतन लै लई, जा रयी माझे हार,
अरे इकबन चाली दो वन चाली, तीजे खोरन द्वार,
अरे राजू पिता सो रहे, सुकनिंदिया खोड़न धौरी गाय,
बोली भवानी को लगेहै धौरी गाय खों, को तो करियल भैंस,
अरे भीका लगे हैं धौरी, बछला लै जा रयी धौरी के,
अरे भाई एलादी धौरी खों, अरे गोरे करियल भैंस,
अरे राजू खोंड़ में हैं अपनी, अरे लगा रये करियल गाय,
फिर चरा रये पड़ला कारी झाँज के,
अरे ऐलादी ने सिर पै जमा लई दूधकी खेप,
अरे बैन एलादी रतन जड़ाऊ कुड़री धरें,
जापै धरें दुदुवा की नौ मन खेप,
अरे बीसक पडेरू बछेरू डुरया लये जाय,
अरे भैया हतिया हटाले अरे आड़ी गैल को,
मोरे बछला छड़क रे जॉय,
छरके बछेरू नगनाचन के, अर छलके हमारी खेप,
अरे महुतिया भवानी सें कर रओ जवाब,
अरे जे नैयाँ बछेरु धौरी गाय के, नाथ पकर हट जाय।

धर्मासाँवरी

धर्मासाँवरी गाथा भी कारसदेव की गाथा की तरह चरागाही संस्कृति पर आधारित है। यह गाथा दाम्पत्यपरक समस्या को अपने मूल में लेकर चलती है। गाथा के प्रारंभ में चिड़ा-चिड़िया का विवाद चलता है। चिड़ा मुसीबत में चिड़िया एवं बच्चों को छोड़कर चला जाता है, चिड़िया अपने जीवन की परवाह किये बिना बच्चों की रखवाली करती है। मुसीबत टल जाने पर चिड़ा वापिस आ जाता है। चिड़िया उसके साथ नहीं रहना चाहती, वह चाहती है कि जब मुसीबत में वह उसे तथा बच्चों को छोड़ गया तो ऐसे स्वार्थी के साथ अब नहीं रहूँगी। उनका विवाद राजा बाणासुर तथा राजा भोज की कचहरी में पहुँचता है। लेकिन दोनों राजा जो निर्णय देते हैं वह चिड़िया स्वीकार नहीं करती। अन्त में चिड़िया अपने प्राण त्याग देती है, चिड़ा भी अपने प्राण त्याग देता है।

अगले जन्म में चिड़िया धर्मासाँवरी तथा चिड़ा दंग रिछरिया के रूप में जन्म लेते हैं। धर्मासाँवरी को पूर्वजनम की याद बनी रहती है। इस जन्म में भी इन दोनों का विवाह हो जाता है लेकिन विवाह के पश्चात् दंग रिछरिया को बारह वर्ष तक बेड़नी की कैद में रहना पड़ता है। इस दौरान धर्मासाँवरी के जीवन में बहुतेरी मुसीबतें आतीं हैं। गाथा में एक अन्य पात्र परसा का प्रवेश होता है। वह नायक-नायिका का भान्जा है जो कि उनकी मदद करता है। अपने मामा की कैद छुड़ाने हेतु परसा जाता है, वह अपने मामा के नौ सौ नवासी जानवरों की खोंड़ को लेकर यात्रा आरंभ करता है। यात्रा में अनेक कठिनाइयाँ आतीं हैं जिनको पार करके परसा अपने गन्तवय पर पहुँच ही जाता है। इसी दौरान उसे चार विवाह करने पड़ते हैं।

परसा की पूरी यात्रा में चरागाही पृष्ठभूमि और परिवेश केन्द्र में होता है क्योंकि परसा के साथ दंगरिछारिया की गायें, बछड़े आदि होते हैं। परसा की यात्रा में जो वृतान्त आये हैं वे जादू-टोनों से भरे हुए हैं। जादू-टोना तथा परसा की वीरता, उसकी मुसीबत में देवी द्वारा सहायता करना। गाथा में देवी का प्रभाव तत्कालीन समय में शाक्त प्रभाव प्रतीत होता है। बीच-बीच में बलि भी दी जाती है। बलि, अंधविश्वास, तंत्र-मंत्र, तोता, डाइन, रूप परिवर्तन, आकाशवाणी आदि तत्व तत्कालीन लोकसंस्कृति के यथार्थ के प्रतीक हैं।

धर्मासाँवरी गाथा में चारागाही का चित्रण :

गैयाँ निकारी जेने खोंड़ा सें रे, जिनकी सोभा कही ने जाय।
नौ सौ नवासी गईयें ठाँड़ीं हैं रे, जिनके संगे मलनियाँ रे साँड।
विराजन गइया सोई जा रही रे, जब बोले ने रनियाँ मोरे राम।
ये सुनो मोरी नौ सौ नवासी जा बात, तोरे भरोसे जा भनेज खों।
सौंपत हौं रे, मोरी सुनले मलनिया बात।
धरमा तौ कै रयी नौ सौ नवासी सें रे,
जोन चरोखर तुमारे बरेदी चराउत रये रे,
अरे ओई चरोखर खों जाव,
जोन घाट के पानी तो पियत रये,
अरे ओई खों जईयो मोरे राम।

००००००

गईयाँ तो बगरी जहाँ परसा की रे, पड़ला बगर गव मोरे राम,
सुक की मुरलिया परसा की बज रयी रे, गावें छत्तीसई राग मोरे राम।

उक्त दोनों गाथाओं में तत्कालीन चरागाही जीवन के सच्चे दृश्य अंकित हैं। किस तरह से चरवाहे अपने पशुधन की देखरेख किया करते थे। गाय-भैंस, पड़ला, बछला इन सबकी रखवाली चरवाहे ही करते हैं। उन्हें जंगल में चराने ले जाना, पानी पिलाना, उनका दूध निकालना तथा उनकी रखवाली करना ये सब कार्य पशुपालकों के जीवन के महत्वपूर्ण अंग थे। उनकी रोजी ही पशुओं से चलती थी इसलिए वह पशुधन था उनका।

गौचारण संस्कृति से संबंधित ये गाथायें महत्वपूर्ण एवं विशिष्ट जनपदीय सर्जना हैं। कृषि समाजों के विकास के पूर्व और गौचारण युगों में गोपाल संस्कृति के अपने धन, मूल्य, नायक, लोक विश्वास, आस्था और मातृ देवियाँ रहीं हैं। कारसदेव जैसे पशुपालक लोकदेवता का आभीर संस्कृति के साथ गहरा संबंध है। धर्मासाँवरी एक महत्वपूर्ण लोकाख्यान है जो कृषक सामाजिक जीवन के विकास और धारणाओं से जुड़ा प्रतीत होता है। इस कथा के माध्यम से यह गहरा लोक विश्वास प्रकट होता है कि स्वयं काल और काल में जीवन अनन्त है लेकिन बदलते जीवन रूपों के बीच कोई एक सनातन एवं शास्वत अस्तित्व भी है।

सम्पूर्ण गाथा तीन भागों में विभाजित है :

1. चिड़ा-चिड़िया का प्रसंग,
2. धर्मासाँवरी का दंगरिछरिया से विवाह, विवाह के पश्चात् विछोह
3. परसा का आगमन, उसकी यात्रा और मामा की कैद छुड़ाना।

निष्कर्ष

उपरोक्त दोनों गाथायें मूलरूप में चरागाही लोकसंस्कृति से उपजीं हैं। कारसदेव की गाथा विशुद्ध चरागाही रूप चित्रित करती है। गाथा का प्रारंभ राजू गूजर की पशुओं की खोंड़ से होता है। अंत भी सूरपाल द्वारा पशुओं की खोंड़ ले जाने से हुआ है। चरागाही जीवन की विडम्बना के रूप में राजा द्वारा बाधा खड़ी करना है जिससे राजू को झाँझ छोड़नी पड़ जाती है।

कारस का जन्म, बड़े होने पर राजा से बदला लेना, राजा को पराजित करना इन सब प्रसंगों में गाथा धार्मिक भावना की ओर मुड़ जाती है। तत्कालीन संस्कृति में लोकदेवता की मान्यता है जो कारसदेव को देवत्व प्रदान करती है। इस समय गाथा चरागाही नायकत्व से देवत्व का पलड़ा भारी हो जाता है।

पूरी गाथा में गड़राझौर की झाँज या माना राव की झाँज, वहाँ के परिवेश, पशुपालकों की समस्यायें, तत्कालीन संस्कृति, कारस तथा सूरपाल द्वारा बाउन लड़ाइयों का प्रसंग गाथा को युद्ध विषयक मोड़ पर ले जाता है। लेकिन मूल में तो चरागाही कथानक है और अन्त में भी वही इसलिए निष्कर्ष के रूप में गाथा की बुनावट ही चरागाही है। शेष कितने भी ताने-बाने जुड़े हों लेकिन आधार पर ही गाथा रूपी भवन तैयार हुआ है और वह आधार गौचारण है।

धर्मासाँवरी गाथा के प्रारंभ में दाम्पत्य समस्या केन्द्र में है जो कि तत्कालीन स्वच्छन्द समाज में प्रमुख थी। चरागाही समाज निश्चित ही स्वच्छन्दता की प्रवृत्ति को उत्साही मन से भोग रहा था, इसलिए उसके समक्ष जहाँ पशुओं संबंधी समस्यायें थीं और चरागाहों पर नियंत्रण रखने वाली सत्ता या राजा से संघर्ष भी अनिवार्य था, वहाँ पति और पत्नी में अलगाव से संतति बटवारे की समस्या प्रधान थी।[10] इस दृश्टि से धर्मासाँवरि गाथा का सामाजिक महत्व तो है ही साथ ही न्याय करने वाली पंचायतों में पुरूषों का स्वामित्व और नारी की उपेक्षा तथा वीरता और सुन्दरता का पारस्परिक आकर्षण से सामाजिक यथार्थ का पता चलता है -

बोले ने पंचों जा कहें, तुम दोऊ सुनो मोरी बात।
दे दे चिरैया-चिरैया खोंरें, चिरवा-चिरवा खों दै दे मोरे राम।।
बोले चिरहई जा कहे रे, तुम अरज सुनों पंच महराज।
ऐसो करते अपने रमना में रे, हम कायेखों आऊते मोरे राम।
कायखों नेवतो देते पंचों खां रे, बा तौ भागी चिरैया मोरे राम।।

संदर्भ सूची :

1. A Ballad is a song that tells a story or to take the other point of view a story told in song - Child English and Scottish popular ballads ki 132
2. सिन्हा डॉ. सत्यव्रत - भोजपुरी लोकगाथा, पृ 15
3. उपाध्याय कृष्णदेव - लोक साहित्य की भूमिका, पृ. 37
4. ग्रेम्स राबर्ट - दी इंग्लिश बैलेड़, पृ. 40
5. मरे - न्यू इगंलिश डिक्शनरी पृ. 26
6. गुप्त नर्मदा प्रसाद - बुन्देलखण्ड की संस्कृति एवं साहित्य, आदिवासी लोक कला परिषद्, भोपाल 2007, पृ. 98
7. गुप्त नर्मदा प्रसाद - बुन्देली संस्कृति और साहित्य, आदिवासी लोक कला परिषद् भोपाल 2007, पृ. 99
8. गुप्त नर्मदा प्रसाद - बुन्देली संस्कृति और साहित्य, आदिवासी लोक कला परिषद्, भोपाल 2007, पृ. 104
9. चौबे ओमप्रकाश - धर्मासाँबरी, लोकाख्यान आदिवासी लोक कला अकादमी, भोपाल 2007, पृ. 437
10. गुप्त नर्मदा प्रसाद - बुन्देली संस्कृति और साहित्य - आदिवासी लोक कला अकादमी, भोपाल 2007, पृ. 113
11. चौबे ओमप्रकाश - धर्मासाँबरी, लोकाख्यान आदिवासी लोक कला अकादमी, भोपाल 2007, पृ. 432

-मोबा. 8817396931, 9617627904

*****

गोरी धना के बोल

-गोविन्द यदुवंशी

लाल चुनरिया ओढ़ें ठाड़ी, बोलें बुन्देली बोल।
सीधी गैल धरें चलो जा, टटवा लगो न खोल।।
पवन घुंघटा ले उठाये, सूरज ऊँबत सो दिख जाये।

चोली बन्द अनारी जुबना, कम्मर चलतन में बलखाय।।
हेरन हँसन देख गोरी की, गेलारो रुक जाय।
मोरी कइ मान गेलारे, बोल कुबोल न बोल।।

सीधी गैल धरें चलो जा, टटवा लगो न खोल।
मोय अकेली जान के, नीयत बिगाड़ न लइये।।
मोरे संग सात कोऊँ नइयाँ, ऐसो सोच विचार न लइये।

सुन ले रे गेंलारे, मोरे भइया है रखवारे।।
तोरे जैसे कइएक उन्ने, लतिया कै दय मारे।
भइया के आउन की बेरा, कढ़ जा न कर देर।।

ललचाई आंखन से मोये, टुकर टुकर न हेर।
गोरी हटके गेलारे खां, मन न मोरो टटोल।।
गेलारे के मन में खटके, गोरी धना के बोल।

मैं बुन्देल भूमि की बिटियाँ लक्ष्मी बाई की सान।।
गोरा उनखां छू ना पाये, उड़ गये उनके प्रान।
मोरे हात दुधारू हसिया, बाबुल मोरो किसान।।

जबरई जो मोरे संग करहै, लै लेहों तोरे प्रान।
मोरे बुन्देली पानी में, रंग न अपनो घोल।।
गैलारे सीधी गैल चलो जा, मोटो टटवा लगो न खोल।।

- राम मंदिर के पास,
पन्ना (म.प्र.)

*****

ओरछा रियासत की विरासत का एक विस्मृत कलाकार

-मुन्ना लाल मिश्रा

आजादी के पूर्व बुन्देलखण्ड में ओरछा स्टेट साहित्य, संगीत, कला एवं अनेक रचनात्मक विधाओं में अग्रणी रहा है। इस बुन्देली वसुन्धरा पर अनेक ऐसे कलाकार, संगीतकार व साहित्यकार हुए हैं, जिन्होंने देश विदेश में बुन्देलखण्ड का नाम रोशन किया है। इन्हीं में से एक मृदंगाचार्य मरहूम उस्ताज नजीम खां साहब थे। इनके पिता श्री भीखन खां महाराजा प्रताप सिंह जू के दरबार में संगीताचार्य (गायक) थे श्री भीखन खां पर महाराज को बहुत नाज था लेकिन भीखन खां कम उम्र में ही इस दुनिया से चले गये।

ओरछा नरेश प्रताप सिंह जू देव ने भीखन (खां) के नन्हे पुत्र श्री नजीम खां को दरबारी आश्रय देकर शिक्षा व संगीत की शिक्षा दिलाने की व्यवस्था की एवं परिवार के रोजी रोटी की भी व्यवस्था की।

एक बार दतिया से स्व. हरचरन उर्फ लाल झल्लीराम मृदंगाचार्य राम मंदिर ओरछा में हाजिरी देने आये, स्व. लाला झल्ली का मृदंग वादन सुनकर महाराज प्रताप सिंह बहुत प्रभावित हुए संगीत सभा में ही महाराज ने लाल झल्ली साहब से राजदरबार में रहने का आग्रह किया साथ ही जो भी शर्त उनकी थी उन्हें पूरा करने का वचन दिया। अन्तोगत्वा लाला झल्ली टीकमगढ़ राजदरबार में हमेशा-हमेशा के लिये आ गये। उन्हें रहने के लिये मकान वर्तमान में (शंकर बाबू खरे का निवास नगर भवन चौराहे के पास) एवं जीवन उपयोगी सभी सुविधाएं प्रदान की फिलहाल राजदरबार में लाल झिल्ली का एक ही कार्य था, बालक नजीम खां को मृदंग व तबला का रियाज कराना, स्व. लाल झल्ली ने एक लम्बे अर्से तक बालक नजीम खां ने मृदंग वादन सिखाकर उस्ताज बना दिया परिणाम स्वरूप धीरे-धीरे नजीम खां की ख्याति दूर-दूर तक फैलने लगी। सन् 1932-33 के करीब इलाहाबाद में आयोजित म्यूजिकल कान्फ्रेंस में उस्ताज नजीम खां को आमंत्रित किया गया वहां उन्हें बुन्देलखण्ड के मृदंग वादक प्रतिनिधि का खिताब दिया गया। सन् 1935-36 के लगभग खनियाधाना स्टेट में मृदंग वादन पर उस्ताज नजीम खां को स्वर्णपदक प्राप्त हुआ। महाराज वीर सिंह जू देव टीकमगढ़ ने भी 1940 के दरम्यान राजदरबार में सम्मानित करते हुये एक स्वर्ण पदक, एक रजत पदक प्रदान किया। वैसे अनेकों रियासतों से उस्ताज नजीम खां को सम्मान व पुरस्कार प्राप्त हुए हैं जिन्हें प्रणाम में उनके द्वितीय पुत्र उस्ताज उम्मेद खां रखे हुए हैं। पंडित लक्ष्मीनारायण मिश्रा (स्मृतिशेष) उर्फ लच्छी मिसर बताते थे कि उस्ताज नजीम खां महाराज वीर सिंह के दरबार में नाजिर के पद पर कार्यरत थे, उनके निर्देशन में ही संगीत का संचालन होता था। उस्ताज अपने गुरु लाल झल्ली के प्रति सारी उम्र समर्पित रहे हैं। लाला झल्ली के नाती स्मृतिशेष श्री शंकर बाबू खरे अतीत की स्मृतियों में झांकते हुये बताते थे कि उस्ताज नजीम खां मेरे घर त्यौहारों पर प्रायः आते थे। चाहे दशहरा हो या होली ईद हो या ईदुल फितर, कभी मिठाई का डिब्बा, तो रबड़ी का दोंना लाते थे। अगर नजीम खां ने मेरे परिवार के किसी भी सदस्य के फटे कपड़ों को देख लिया तो तत्काल नया कपड़ा लाकर भेंट करते थे। यहां अभिप्राय सिर्फ लेनदेन का नहीं है, बल्कि गुरु के प्रति,गुरु के परिवार के प्रति, निष्ठा भक्तिभाव का था। जो उस्ताज नजीम खां के हृदय के कोने-कोने में विद्यमान था। महाराज वीर सिंह जू देव उस्ताज नजीम खां से अधिकतर कहा करते थे कि आप अपने बच्चों को संगीत की शिक्षा दे रहे हो या नहीं? इस प्रश्न पर उस्ताज महाराज के सामने तो हां कह देते थे, लेकिन वास्तविक रूप में बच्चों को संगीत की शिक्षा नहीं के बराबर दी। उस्ताज संगीत से अपने बच्चों को दूर ही रखना चाहते थे। चूंकि उस समय संगीत कला का ह्रास होना प्रारंभ हो गया था। भविष्य में संगीत कला का क्या स्वरूप होगा। यह प्रतिबिम्ब उनके मानस में उभरता था ऐसा उनके पुत्र उम्मेद खां बताते हैं।

उस्ताज नजीम खां का जीवन गरीबी और संघर्ष की धरातल पर गुजरा, इसलिये बच्चों के भविष्य के प्रति हमेशा चिन्तित रहते थे। इन सब स्थितियों के बावजूद भी लालच उनके हृदय के किसी भी कोने में नहीं था। ईमान और स्वाभिमान उनके व्यक्तित्व के आभूषण थे। महाराज वीर सिंह जू देव ने एक बार उस्ताज से खुश होकर कहा, मैं आपकी कला से बहुत प्रसन्न हूँ आप जो चाहे मांग लीजिये। नजीम खां ने बड़े अदब से कहा- हजूर मुझे आपकी नजरें इनायत चाहिये।

सन् 1935-36 के लगभग बुन्देलखण्ड रियासतों से राजाओं को महाराज वीर सिंह जू देव ने संगीत समारोह में आमंत्रित किया, जिसमें मैहर महाराज भी उपस्थित हुए वो अपने साथ अली अकबर (जो अंतर्राष्ट्रीय स्तर के सरोद वादक रह चुके हैं) को लाये। मैहर महाराज ने कहा मैं उस्ताज अली अकबर को साथ लाया हूं उनकी संगत कौन करेगा। महाराज वीर सिंह जू ने नजीम खां का नाम प्रस्तावित किया। संगीत प्रारंभ हुआ जो उस्ताज अली अकबर ने कठिन ताल में सरोद वादन बजाना शुरू किया। उस्ताज नजीम खां ने साथियों से कहा कि मैं इस ताल को नहीं जानता था, लेकिन फिर भी उस ताल के वजन को समझकर एवं बोल बनाकर सीधे तरीके से उनकी संगत की, उसके बाद अली अकबर ने दूसरा ताल बदला, जो उस्ताज नजीम की जानकारी व अभ्यास में था, इसलिये संगत जमकर हुई उस्ताज ने मृदंग पर एक गत इस प्रकार की बजाई कि ऐसा प्रतीत हुआ जैसे सम पर खाली या खाली पर सम आ गया हो, इस स्थिति में उस्ताज अली अकबर ने सम ढूंढने के लिये कई चक्कर लगाये और जब भी वह सम पर आते थे तो सम की जगह खाली होती थी। इस नजारा को महाराज वीर सिंह समझ रहे थे। उन्होंने उस्ताज नजीम खां से कहा बस रहने दीजिये, आप सम पर आ जाइये।

वीरसिंह जू देव के दरबार में उस समय लखनऊ की सुप्रसिद्ध तबायफ मुनीर जान आती रहती थी। उस्ताज के प्रति ईर्ष्या घर कर गई, अन्तोगत्वा किसी बात पर मुनीर जान की उस्ताज से अनबन हो गई। मुनीर जान ने उस्ताज नजीम से कहा कि आप कल से मेरे यहां नहीं आवेंगे, इस अपमान से उस्ताज बहुत दुखी हुये, जिसके परिणाम स्वरूप संगीत सभा गृह में तीन चार माह नहीं गये, कुछ दिनों बाद मुनीर जान के निवास पर (जहां पर वर्तमान में बी.ई.ओ. कार्यालय है) में संगीत चल रहा था, संगत मुनीर जान के भाई कर रहे थे। बीच में ही महाराज ने कहा, उस्ताज नजीम खां क्यों नहीं आये, उन्हें बुलाने के लिये नौकर भेजा गया, परन्तु उस्ताज ने जाने से मना कर दिया, महाराज वीर सिंह ने तबायफ मुनीर जान से कहा कि तुम अपने भाई को भेजो, उनका भाई गया, इसी बीच उस्ताज नजीम खां के खिलाफ मुनीर जान ने भड़काना शुरू कर दिया, मुनीर जान का भाई उस्ताज नजीम खां के निवास पर पहुंचे, और और महाराज के

आदेश को बताया, नजीम खां महाराज के समक्ष उपस्थित होकर सलाम करके एक ओर बैठ गये, महाराज ने शराब का गिलास उस्ताज को देकर कहा कि अब आप मस्त होकर संगत कीजिये, संगीत प्रारंभ हुआ और अन्त में महाराज ने उस्ताज से गुस्ताखी का कारण पूछा तो उस्ताज ने अपनी सारी दास्तान सुनाई महाराज ने मुनीर जान से कहा कि तुम इनको नहीं जानती ये मेरे लँगोटिया यार हैं।

उत्तराधिकारी शासन की समाप्ति के बाद महाराज प्रायः बैकुण्ठी पर समय व्यतीत करने लगे थे, उन्हीं दिनों उस्ताज नजीम खां को अपनी जवान बेटी की शादी करना थी, वह महाराज के पास पहुँचे अपने व्यथा कह आर्थिक सहयोग का निवेदन किया, महाराज ने कहा अब मेरा राज्य चला गया है। मैं आपकी कोई मदद नहीं कर सकता हूँ। नजीम खां ने कल्पना भी नहीं की थी कि उन्हें इस तरह का जवाब मिलेगा, वह बैरंग लौट आये आखिर इधर-उधर संगीत प्रोग्राम देकर आर्थिक उपार्जन कर बेटी की शादी से निवृत्त हुए।

सन् 1953-54 के लगभग भगवन्त क्लब द्वारा आयोजित संगीत समारोह में श्री सुरंगे साहब ग्वालियर को आमंत्रित किया गया सुरंगे की संगत कोई अन्य व्यक्ति कर रहा था। महाराज वीर सिंह ने सभा संयोजक श्री ए.पी. शुक्ला जिला शिक्षा अधिकारी से कहा कि उस्ताज नजीम खां को बुलाइये इसताज नजीम खां वहां गये, सुरंग जी की वायलेन के साथ बेजोड़ संगत की, संगीत समाप्ति के बाद महाराज वीर सिंह ने उसताज से कहा कि कल आप बैकुण्ठी आईये, अब आप हमारे फिर आत्मीय हो गये, महाराज के निवास पर दूसरे दिन उस्ताज नजीम खां पहुंचे, महाराज ने कहा कि उस्ताज आप दिल में किसी प्रकार मलाल नहीं रखिये, चूंकि उस समय हमारा दिमाग सही नहीं था, इस बात पर नजीम खां ने हाथ जोड़कर कहा महाराज आपका दिमाग तो सही था परन्तु हमारा वक्त सही नहीं था। महाराज ने उसी दिन से 40/- चालीस रुपया माह उन्हें आर्थिक सहयोग ताजीवन के लिये शुरू कर दिया।

उस्ताज नजीम खां के दो पुत्र प्रथम स्वर्गीय रहमत खां जो मैहर संगीत महाविद्यालय में 1959 से 1990 तक रह कर दिवंगत हो गये। इन्होंने भी सैकड़ों शिष्य बनाकर अपनी संगीत साधना को फलीभूत किया। दूसरे पुत्र उम्मेद खां जो हायर सेकेण्ड्री स्कूल टीकमगढ़ में रहकर रिटायर्ड हो चुके है तथा विरासत से मिली संगीत परम्परा को संजोये हुये छात्र-छात्राओं को शिक्षा (तवला) की दे रहे हैं। नजीम खां का जन्म 1895 में टीकमगढ़ में हुआ और 1962 में इन्तकाल हो गया।

संगीत विरासत को संरक्षण देने वाले विद्वान प्रो. गोविन्द सिंह यादव (रज्जी सर) ने सन् 1992 में आदर्श पहल रखकर संगीत की विरासत परम्परा को कालजयी बनाने की दृष्टि से नगर के सभी संगीतज्ञों को आमंत्रित कर संगीत परिषद् का गठन किया था। जिसमें श्रीमती जयंती राजा को अध्यक्ष पद की बागडोर देकर संगीत समारोह की श्रृंखला प्रारंभ की गई। उस्ताद नजीम खां मृदंगाचार्य की स्मृति में पद्म श्री असगरीबाई की अध्यक्षता में प्रथम बार 1992 में संगीत समारोह का आयोजन किया। उसी क्रम में अनवरत रूप से उनकी चिर स्मृतियों को संजोर हर वर्ष संगीत समारोह बसन्तोत्सव के वेनर से आयोजित होता है। ऐसे महान संगीतज्ञ मरहूम नजीम खां पर बुन्देलखण्ड गौरवान्वित है।

-विरासत कला मंच
टीकमगढ़ (म.प्र.)
मो. 9893139882

*****

लोककथा-

छप्पर फार के देत

-अवधेश 'अवधेशानंद'

पुरानी कानात है भगवान जब देत है तौ छप्पर फार के देत सो साँची है। संजा की बिरिया हती एक खेंत में एक लोग लुगाई आलू की खुदाई कर मजूरी कर रए ते। खेत कौ मालिक कोउ और हतौ ओइ खेंत की मेंड़ पै एक बड़े झकूटे में दो चोर बैठे रात की बाट हेर रए ते। लुगाई आलू खोद रई ती बाकी खुरपी खन्न भई बानें देखौ हात डारकें तौ उऐ कसेंड़िया कौ कनोंठों दिखा परौ। नेंक और माटी काढ़ी तौ कसेंड़िया अच्छी तराँ दिखान लगी। लुगाई नें लोग सें कई ए देखो इतै एक कसेंड़िया गड़ी। लोक ने आकें कसेंड़िया के ऊपर कौ पारौ खेंचौ और चिल्ला परौ अरे जामें तो असरपी भरी हैं। लुगाई ने कई हाँ जें तो असरफी है अपुन की नइयाँ जे तौ खेत के मालिक की है। अपनौ इनपै कछु हक्क नइँ बनत जाँ की ताँ गाड़ दो भोरइ मालिक सें कै दें तो बौ उखार लेंजै जो उन्हें हमैं इनाम किताब देनें हुयै सो उनइँ के हाथन सें ले लें। दोउन ने मिलकें बा कसेंड़िया होंन जा के ताँ गाड़ दइ। जे सब बातें झकूटा में दुक दोउ चार सुन रए तै लोग लुगाई अपने घरै चले गये। रात एक पहर जा चुकी ती। बे दोउ चोर जब बा कसेंड़िया की जाँगा पै पोंचे उतैं माटी कौ भदोंना बनौ हतौ। उन चोरन ने माटी सरकाई तौ कसेंड़िया दिखा परी उन नें बा कसेंडिया कों ऊपर निकार लई वाय काढ़ कें जैसोइ पारौ खोलौ बामें से पीरी पीरी बर्र कढ़ परीं बे ततइयाँ उन दोउ चोरन के हातन पाँवन और मों पै चिपट गईं। उन नें कसेंड़िया के मौं पै ज्यों को त्यों पारौ धर कें कसेंड़िया कौ मौं बन्द कर दऔ। चोरन नें सोची जे लोग लुगाई बड़े बदमास कढे हमकों असरफीं कै कैं ततइयँन कों असरफीं बताकें हमें धोकौ दैकें चिथ्वा डारौ।

हमऊँ उन दोंउन कौ ततइयँन सें चिथ्वा के उनकी बदमासी कौ बदलौ लैहें। ऐसी कैकें बे दोउ चोर कसेंड़िया लैकें चल दये। आदी रात हो गईती दोउ चोर उनके घरै पोंचे भीतर सें किबारन की साँकर लगी ती। उन चोरन नें मँगरे पै चढ़ कें छप्पर में छेंकौ करौ और मसकइँ मसकइँ खपरा खेंच कें एक बड़ौ सौ छेद छप्पर में करके ऊ कसेंड़िया को ओंदा दइ, भाग सें बौ छेद उन लोग लुगाई की खाट के ऊपरइँ भऔ तौ। जैसेई चोरन ने बा कसेंडिया खटिया पैं ओंदाई नेचें खन्न खन्न की आवाज सुनी तो बड़े अचरज में हो गये। नेचें दोई लोग लुगाई जग परे। तों देखौ तो खाट पै पीरीं पीरीं ढेरन असरफीं डरीं। दोउन नें बा कसेंड़िया उठा कें बोले हाय जौ तौ बौइ कसेंड़िया है जो अपुन नें खेंत में गाड़ दई ती। हाय जौ इतै कैसें आ गई। लुगाई बोली अपुन नें दूसरे की समझ कें होइँ गाड़ दइ ती अकेंलें जे तौ हमाये भाग की हतीं सो भगवान नें हमें छप्पर फार कें घरै पोंचा दइँ। भगवान को जब देंने होत तब छप्पर फार कें देत। जौ हमने बड़े बूड़िन के मौं सें सुनी ती सो साँची हो गई। भगवान नें हमाये ऊपर किरपा करी हैं। घर बैठें छप्पर फार के पौंचा दईं। अब अपनौ कौनऊँ दोस नइयाँ। भगवान की जौइ मरजी हती। उन नें हमाई ईमान दारी कौ बदलौ हमें दऔ है जौ उनकौ परसाद समझ कें इन कों अपना लयें चइये। जै होय भगवान जैंसे तुमने हमाइ गरीबी में छप्पर फार कें हमें दऔ ऐसौ सब गरीबन कों दिइयौ। सच्ची है पंडित जी ने आपकौ नाव गरीब निबाजइ बताव तौ सो साँचऊ अपुन गरीब निबाजइ हैं।

-425, श्रमणा सदन, नई बस्ती
झाँसी (म.प्र.)

*****

छतरपुर के ग़ज़लकार : अकेला और अना

-डॉ. श्रीमती प्रमोद पाठक
-डॉ. श्रीमती पुष्पा दुबे

ग़ज़ल के शाब्दिक अर्थ एवं व्युत्पत्ति के संबंध में विद्वानों ने भिन्न-मत प्रकट किये है। ग़ज़ल यद्यपि अरबी भाषा का शब्द है और अरबी में ग़ज़ल कहने की परम्परा भी रही है परन्तु इसका समुचित विकास फारसी में हुआ। शब्द कोशों में ग़ज़ल का अर्थ स्त्री से वार्तालाप बताया गया है। अरबी भाषा में ग़ज़ल का शाब्दिक अर्थ है - 'प्रेमालाप' अतः अपने आरंभिक रूप में ग़ज़ल के माध्यम से प्रेमभावनाओं को व्यक्त किया जाता था।

ग़ज़ल प्रेमाभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम है। जिसमें श्रृंगारिकता, प्रेमपरकता, सुकुमारिता, सौन्दर्य और नारी विषयक भावों की अभिव्यक्ति होती है। परन्तु कालान्तर में ग़ज़ल ने विषय की परम्परागत परिधि को त्यागकर व्यापक सामाजिक धरातल पर पदार्पण किया। ग़ज़ल सदैव से ही एक अति लोकप्रिय काव्य-विधा रही है। हिन्दी ाल का पदार्पण अमीर खुसरो की उन प्रयोगधर्मी ग़ज़लों से ही हो गया था। जिसमें उन्होंने शेर का एक 'मिसरा' उर्दू में कहा था और दूसरा हिन्दुस्तानी में।

साहित्य में ग़ज़ल का पदार्पण अमीर खुसरो की उन प्रयोगधर्मी ग़ज़लों से ही हो गया था। जिसमें उन्होंने शेर का एक 'मिसरा' उर्दू में कहा था और दूसरा हिन्दुस्तानी में।

धीरे-धीरे हिन्दी में कबीर, भारतेन्दु, हरिश्चन्द्र, प्रसाद तथा निराला आदि कवियों ने ग़ज़लें कहीं परन्तु अत्यंत विरल रूप में। यद्युपि उनकी ग़ज़लों की शैली में परम्परागत गीतों की छाप अधिक रहीं। परन्तु यहीं से हिन्दी ग़ज़ल में सामाजिक और राष्ट्रीय चेतना का स्वर मुखर होने लगा था परन्तु ये स्वर अधिक क्रांतिकारी और तीव्र नहीं था।

हिन्दी ग़ज़ल के क्षेत्र में दुष्यंत कुमार की ग़ज़लें क्रांतिकारी परिवर्तन लेकर आई। उन्होंने सर्वप्रथम ग़ज़लों को गहरे और व्यापक रूप में सामाजिक सरोकारों से जोड़ा। उन्होंने अपनी ग़ज़लों में सामंजस्य पूर्ण व्यवस्था और सामंजस्यपूर्ण विकास का व्यापक अर्थ प्रदान किया। दुष्यंत कुमार एक युग का नाम है जहां से हिन्दी ग़ज़ल की विकास यात्रा आरंभ होती है और ग़ज़ल व्यक्ति, समाज और व्यवस्था से जुड़कर उसकी विकृतियों पर वीव्र आक्रोश भी अभिव्यक्त करती है।

ग़ज़ल का बुनियादी रूप हुस्नो-इश्क और प्रेम से जुड़ा रहा है और यह महफिलों तक सीमित रही है परन्तु हिन्दी ग़ज़ल महफिलों से निकलकर जनचेतना से जुड़ी है और व्यक्ति, समाज तथा व्यवस्था से सरोकार रखती है। आम आदमी के भीतर मचे कोहराम को हिन्दी ग़ज़ल ने बहुत गहराई से गवाही दी है। हिन्दी ग़ज़ल दैन्य की नहीं तेवर की विधा है। आज की राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक विद्रोपताओं को उजागर करती हुई हिन्दी ग़ज़ल मनुष्यता के विरुद्ध चल रहे षड़यंत्रों के विरोध में पूरी मुस्तैदी से खड़ी है। ग़ज़ल का प्रतिवाद और प्रतिरोध करना उसने बखूबी सीख लिया है। आधुनिक सभ्यता, औद्योगीकरण, भूण्डलीकरण, एकाकीपन, साम्प्रदायिकता, वैमनस्य, सामाजिक और आर्थिक वैषम्य को हिन्दी ग़ज़ल ने आत्मीयता से चित्रित किया है। मनुष्य के भीतर चल रही चुनौतियों, राग-अनुराग, आकर्षण-विकर्षण को ग़ज़ल ने अपनी विषय-वस्तु बनाया है।

प्रगतिशील कवि वीरेन्द्र खरे 'अकेला' का जन्म 18 अगस्त सन् 1968 को छतरपुर (म.प्र.) के ठेठ देहाती आदिवासी बहुल पहाड़ों एवं जंगलों से घिरे छोटे से गांव किशनगढ़ में एक मध्यमवर्गीय कायस्थ परिवार में हुआ। अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा से इतिहास में एम.ए. एवं बी.एड. करने के बाद वे लम्बे समय तक छतरपुर शहर के अशासकीय विद्यालयों में अध्यापन का कार्य करते रहे साथ ही निःशक्तजनों की शिक्षा, प्रशिक्षण और पुर्नवास के लिये समर्पित एन.जी.ओ. प्रगतिशील विकलांग संसार, छतरपुर के संचालन एवं व्यवस्था में सक्रिय भूमिका निभाते रहे। वर्तमान में 'अकेला' जी एक अध्यापक के रूप में शासन को अपनी सेवाएं दे रहे है साथ हश निःशक्तजनों की सेवा एवं लेखन के क्षेत्र में सक्रिय है।

'अकेला' जी को लेखन की प्रेरणा अपने पिता स्व. श्री पुरुषोत्तम दास जी से मिली। जो भजन-कीर्तन लिखने में काफी रुचि रखते थे यद्यपि उनकी कोई कृति प्रकाशित नहीं हुई। माता श्रीमती कमला देवी भी साहित्यिक-सांस्कृतिक रुचि की है। 'अकेला' जी ने सन्- 1990 से ग़ज़ल-गीत लेखन की यात्रा शुरू की जो अनवरत जारी है। ग़ज़ल संग्रह शेष बची चौथाई रात' (1999-अयन प्रकाशन, दिल्ली) के प्रकाशन ने ग़ज़ल के क्षेत्र में उन्हें स्थापित किया और राष्ट्रीय ख्याति दिलाई। दूसरे ग़ज़ल-गीत संग्रह 'सुबह की दस्तक' (2006-सार्थक प्रकाशन दिल्ली) एवं तीसरे ग़ज़ल संग्रह 'अंगारो' पर शबनम' (2012-अयन प्रकाशन, दिल्ली) ने उनकी साहित्यिक पहचान को और पुख्तगी देते हुए उन्हें देश के प्रथम पंक्ति के हिन्दी ग़ज़लकारों के बीच खड़ा कर दिया है।

प्रकाशित कृतियों के अलावा 'अकेला' जी की बहुत सी रचनाएं वसुधा, वागर्थ, कथादेश, महकता आंचल, सृजन-पथ, राष्ट्रधर्म, कादम्बिनी जैसी प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में भी समय-समय पर प्रकाशित होकर प्रशंसित होती रही है। उन्होंने कवि-सम्मेलनों, मुशायरों, काव्य-गोष्ठियों तथा आकाशवाणी के माध्यम से भी काफी लोकप्रियता हासिल की है। देश की अनेक साहित्यिक संस्थाओं द्वारा उन्हें पुरस्कृत एवं सम्मानित भी किया गया है।

अपनी ग़ज़लों के तीखे तेवरों के कारण वीरेन्द्र खरे 'अकेला' बुन्देलखण्ड के दुष्यंत कुमार कहे जाते है। उनकी ग़ज़लों में जीवन की सच्ची-तपती-सुलगती आग पूरी तेजस्विता के साथ विद्यमान है। वे देश और समाज में व्याप्त दुख-दर्दों, अभावों, असफलताओं, विसंगतियों और छल-छद्मों को अनूठे अंदाज में पेश कर अपने पाठकों में विपरीत परिस्थितियों से लड़ने का हौसला भर देते हैं। 'अकेला' जी की ग़ज़लों की विशेषताओं को रेखांकित करते हुए प्रसिद्ध कवि डॉ. कुंअर बेचैन लिखते है-" 'अकेला' जी की ग़ज़लें विविध विषयों पर होने के साथ-साथ बहर आदि की दृष्टि से निष्कलंक हैं, उनमें सहज प्रवाह भी है ओर अमिट प्रभाव भी। ये ग़ज़ले ग़ज़ल की यशस्वी परम्परा में रहकर नए विषयों तथा नए प्रतीकों की खोज करती हैं। इनमें यथार्थ की सच्चाई और कल्पना की ऊँचाई दोनों के दर्शन होते हैं।" इसी प्रकार 'अकेला' जी की ग़ज़ल के प्रभाव के उद्घाटन करते हुए इस दौर के शहंशाहे ग़ज़ल डॉ. बशीर बद्र कहते हैं- 'अकेला' की ग़ज़ल वो लहर है जो ग़ज़ल के समनदर

में नई हलचल पैदा करेगी।'' पद्म श्री डॉ. गोपालदास नीरज कहते है कि – '' अकेला के शेरों में यह खूबी है कि वे खुद–ब–खुद होठों पर आ जाते है।'' चर्चित व्यंग्कार माणिक वर्मा एवं प्रतिष्ठित साहित्यकार डॉ. देवव्रत जोशी ने भी अपनी टिप्पणी में 'अकेला' को दुष्यंत कुमार के बाद का उल्लेखनीय शायर निरूपित किया है। स्पष्ट है कि वीरेन्द्र खरे 'अकेला' ने हिन्दी ग़ज़ल को नए विषय, नई सोच, नए प्रतीक और सम्यक् शिल्पगत कसावट देकर इस विधा की उल्लेखनीय सेवा की है और इस क्षेत्र में अपनी विशिष्ट पहचान कायम की है। आधुनिक भावबोध ओर व्यक्तिगत एवं समष्टिगत समस्याओं को अभिव्यक्ति देती उनके कुछ शेर दृष्टव्य है –

अदावत दिल में रखते है मगर यारी दिखाते है,
न जाने लोग भी क्या–क्या अदाकारी दिखाते है।
सोच की सीमाओं के बाहर मिले,
प्रश्न थे कुछ और कुछ उत्तर मिले।
हमको ए जनतंत्र तेरे नाम पर,
उस्तरे थामे हुए बंदर मिले।

'अकेला' जी की ग़ज़लें जीवन और जगत के साथ गहरे तक जुड़ी हुई है। वर्तमान सामाजिक्र, राजनीतिक, आर्थिक और धार्मिक परिवेश का यथार्थपरक चिंतन उनकी ग़ज़लों में अभिव्यक्त हुआ है कुछ शेर देखिए–

पार सन्यासियों का है डेरा यहां,
आ चलें ये जगह कुछ सुरक्षित नहीं।
अरे नादान क्यों उलझा है तू चूल्हे बदलने में
ये गीली लकड़ियाँ है क्यों धुआं देंगी न जलने में।

राजनीति और राजनेताओं के दूषित और भ्रष्ट आचरण पर व्यंग्य करते हुए अकेला जी कहते है–

''ये घातों पर घातें देखो, किस्मत की सौगातें देखो,
धरती को जन्नत कर देंगे मक्कारों की बातें देखे।
अफसोस घूम फिर के वहीं फिर से आ गये,
इन रहनबरों की हमको बहुत रहनबरी खली।

मौलाना हारून 'अना' कासमी का जन्म 28 फरवरी सन् 1966 में मध्यप्रदेश के बुन्देलखण्ड इलाके के शहर छतरपुर में हुआ। आपके पिता हाजी मुहम्मद जमील निजामी एक सामाजिक और धार्मिक मिजाज के व्यक्ति थे। हारून को बचपन में ही पांचवीं कक्षा के बाद छतरपुर में ही अरबी मदरसे में दाखिल करा दिया और इसके बाद मजीद तालीम के लिए कानपुर के एक मदरसे (अहसनुल मदारिस) में दाखिल करा दिया और फिर हिन्दुस्तान के अरबी के मशहूर मदरसे मद्वतुल उलामा लखनऊ से फजीलत की, इसके बाद दारूल–उलूम देवबंद से भी आलमियत का कोर्स किया।

होना तो ये चाहिये था कि मौलाना हारून 'अना' कासमी ने मदरसों के जिन समन्दरों में गोते लगाये वहां से निकल कर शुद्ध मौलवी बन जाते है और अगर शायरी करते भी तो नातों और मरसियों में सिमट जाती, मगर हैरत है कि मौलाना की शायरी में धार्मिकता का कोई प्रभाव दिखाई नहीं देता। यूं लगता है जैसे उनकी आवाज हिन्दुस्तान के हर अच्छे और सच्चे नागरिक की आवाज हो, जो देश की विसंगतियों से जूझ कर उस पर प्रहार करना चाहता हो। मौलाना की शायरी में हुस्नों–इश्क का दखल बहुत ज्यादा है क्योंकि दिल की पहल आवाज यहीं से शुरू होती है। शायरी की शब्दावली और नेचर की खूबसूरती की मंजरकशी इसके बगैर नहीं होती। मौलाना की शायरी में बड़े बारीक और नाजुक इशारों के साथ समाज की दुखती हुई रंगों पर यूं हाथ रक्खा गया है कि हर संवेदनशील व्यक्ति उनके शेरों को सुनकर आह या वाह किये बिना नहीं रह सका और उनके लहजे को वक्त का नया लहजा करार दिया गया।

यूं तो मौलाना के ऊपर बहुत से बड़े शायरों ने अपनी राय दी है मगर में समझती हूँ कि मौलाना की पहली किताब 'हवाओं के साज पर' की कवर टिप्पणी पर डॉ. बशीर बद्र ने जो लिखा बस उसी का हवाला देना काफी होगा – ''मौलाना हारून 'अना' कासमी ऐसे नौजवान ग़ज़ल के शायर है जिसके फिक्रो–फन में उनकी सच्ची रियाजत (अभ्यास) वसीअ मुतालआ (विस्तृत अध्ययन) और शायराना सदाकत है। इनके अच्छे शेरों में ग़ज़ल की सदियों की परम्परायें अपने जमाने से बड़े प्यार से गले मिल रही है, इन रिवायतों में नया लबो–लहजा इनकी अपनी पहचान बनाने में पूरी तरह उजले–उजले है।

मौलाना की अयन प्रकाशन दिल्ली से प्रकाशित ये किताब बहुत सराही गयी और उसका दूसरा संस्करण भी निकला। इसके बाद एक और किताब 'मीठी सी चुभन' भी उसी प्रकाशन से प्रकाशित हुई और देश भर में सराही गयी।

परम्परा और प्रगति के साथ 'अना' आधुनिक भावबोध के शायर है एक शेर देखिये –

''दिल और दिमाग और नजर और जबों और
इस दौर का इंसां कई हिस्सों में बंटा है।''

मुहब्बतों और नफरतों, विश्वास और अविश्वास के सायों ने उनकी शायरी में उन ख्यालों को उभारा है जो इंसानियत के लिए बेहद जरूरी है। भाषा की सहजता व सरलता उन्हें चलताऊ भीड़ से अलग करती है। उनके लहजे की आदमी और जुबान की सफाई ने हिन्दी उर्दू को गंगा–जमुना की तरह मिला दिया है–

''हमारे पुरखों की हवेली अजीब कब्रों सी हो गयी है,
थे मेरे हिस्से में तीन कमरे हो आठ बेटों में बंट गये है।

तत्कालीन, धार्मिक, सामाजिक और राजनीतिक विसंगतियों पर प्रहार करते हुए वे कहते है–

एक ढांचा खड़ा है हल लेकर,
अपनी हिन्दुस्तान देखो तो।
कायदे का कोई लीडर मगर अब तक न हुआ,
यूं तो होने जो हुए मुल्क में मतदान बहुत।
अब तो मजहब की फकत इतनी जरूरत है हमें
आड़ में इसके खुराफात हुआ करती है।

इन ग़ज़लकारों की ग़ज़लें विषय वस्तु की दृष्टि से व्यापक जीवन संदर्भो से जुड़ी है जिसमें व्यवस्था का निषेध, व्यक्तित्व का विघटन, सामाजिक विसंगतियों, दूषित अर्थतंत्र का चित्रण हो रहा है। जीवन की विद्रूपताएं, मानव मूल्यों का विखण्डन, पारिवारिक और सामाजिक विखण्डन, विखण्डित लोकतंत्र, भौतिक एवं वैज्ञानिक प्रगति जन्य समस्यायें हिन्दी ग़ज़ल का विषय बनी।

–नरसिंहगढ़पुरवा, छतरपुर

*****

भाई हरगोविन्द त्रिपाठी 'पुष्प' को एक श्रद्धांजलि-

उड़ गये फुलवा रै गई बास

– पं. गुणसागर शर्मा सत्यार्थी

''हैं'' का स्थान आज ''थे'' ने ले लिया। सन् 1962 से आज तक मैं इस बात से गर्वित रहा कि श्री पुष्प जी मेरे मित्र नहीं, बड़े भाई हैं। मित्र तो बहुतेरे हैं और रहेंगे, किन्तु पीठ बल देने वाला बड़ा भाई मिलना दुर्लभ ही है। इस शास्वत सत्य की कभी कल्पना भी नहीं की थी, कि उनके लिए ''हैं'' के स्थान पर मुझे ''थे'' लिखना पड़ेगा। समय की तीव्र गति ने आज उस ''हैं'' को ''थे'' बना दिया। अस्तु –

भाई पुष्प जी को आज अधिकांश लोग एक आदर्श पत्रकार के रूप में ही जानते पहचानते हैं। यह स्वरूप तो बहुत अन्तराल के बाद उभरकर सामने आया। मैं जब उन से पहले पहल मिला था तब वे बुन्देलखण्ड को गौर्वान्वित करने वाले ख्याति प्राप्त सुकवि ही थे। उस समय तक इन पंक्तियों का लेखक कवि नहीं बल्कि एक चित्रकार था। पुष्प जी ने 'विरहिणी' शीर्षक से खण्डकाव्य लिखा था, जिसके प्रकाशनार्थ मैंने आवरण पृष्ठ की सज्जा अपनी कूची से की थी। उसी समय वे मेरे बड़े भाई कब और कैसे बन गये, पता ही नहीं चला। उस समय पुष्प जी राष्ट्रीय स्तर पर मंचजयी कवि रूप में छाये हुए थे। तब देश के बड़े-बड़े कवि चाहे वे डॉ. हरिवंश राय बच्चन हों, या गीतकार गोपाल सिंह नेपाली, बलवीर सिंह 'रंग', शिशुपाल सिंह 'शिशु' अथवा हास्य व्यंग्य के सशक्त हस्ताक्षर काका हाथरसी, निर्भय हाथरसी या फिर गोपाल प्रसाद व्यास .... आदि। वे टीकमगढ़ जिले की पहचान सिर्फ पुष्प जी के कारण जानते थे। मेरे कहने का अभिप्राय यह कि पुष्प जी की महक राष्ट्रीय स्तर पर कवि रूप में छाई हुई थी। जिसे आज विस्मृत नहीं किया जा सकता।

पत्रकारिता तो उन्होंने एक चुनौती के रूप में बहुत बाद में अंगीकार की थी। उनका समूचा जीवन यातनाओं और पीड़ाओं से अभिसिंचित रहा। उनका परिचय स्वयं उन्हीं के शब्दों में देखें, पुष्प जी ने लिखा था कि-

''ऐसा परिचय नहीं, जो केवल प्रिय के मन को भाये
ऐसा जीवन नहीं, जो केवल क्षणभर में मिट जाये।
औरों के हित जीवन देना-यही हमारा जीवन,
मुझे नहीं है जलन किसी से, सुखी रहें सब जन-जन।''

पुष्प जी के संपूर्ण जीवन का प्रतिबिम्ब उनकी इन चार पंक्तियों में 'गागर में सागर' की उक्ति चरितार्थ करता है। वर्तमान मध्यप्रदेश के जिला टीकमगढ़ के पृथ्वीपुर जो एक छोटा सा ग्राम ही उस समय था। वहाँ पं. श्री राजाराम त्रिपाठी को वैसाख शुक्ल सप्तमी गुरुवार के दिन संवत् 1992 वि. को पुत्र धन प्राप्त हुआ जिसका नाम हरगोविन्द रखा गया। जब बालक हरगोविन्द मात्र अठारह माह के थे तभी उनके सिर से पितृहस्त की छाया उठ गई और विधवा माँ ने सभी प्रकार के अभाव झेलकर अपने लाड़ले हरगोविन्द को पाल-पोस कर बड़ा किया। अर्थात् मात्र डेढ़ वर्ष की शैशव अवस्था से ही बालक हरगोविन्द की पीड़ा और भरपूर यातनाओं से ही मैत्री हो गई थी। कविवर पंत जी की पंक्तियों को साकार करने वाली मित्र मंडली में मात्र पीड़ा और यातनाओं के सिवा और कोई न था। पंक्तियाँ साकार हुई-

''वियोगी होगा पहला कवि, आह से उपजा होगा गान।
निकल कर आँखों से चुपचाप, वही होगी कविता अनजान।।''

और वह बालक 'पुष्प' रूप में काँटों में पला, चट्टानों में मचला तथा मरुस्थल रूपी परिस्थितियों में पुष्पित-पल्लवित हुआ। इस प्रकार हरगोविन्द से 'पुष्प' तक की यात्रा पितृविहीन गृह में अपनी निराश्रित विधवा माँ कौशिल्या, पर कर्म से माँ सरास्वती (चाची) के आर्त कंठ, सजल नेत्रों एवं हृदय के जख्मों के दर्द की असह्य पीड़ाओं से होकर कैसे गुजरी होगी? वह शब्दों में व्यक्त करना संभव नहीं है। बस इतन ही कि समझ की आँख खुली तब उन्हें अपनी दृष्टि अपनी ताई माँ के मातृत्व प्रेम की गहरी अनुभूति से मिली। समाज के बियावान में चारों ओर की हिंसक परिस्थितियों से संघर्षरत रहकर पुष्प जी मात्र शिक्षित ही नहीं हुए वरन् डॉ. हरिसिंह गौर वि.वि. सागर से स्नातक, 'साहित्य रत्न' एवं साहित्य वाचस्पति जैसी उपाधियों से विभूषित हुए।

मात्र 17 वर्ष की आयु में पुष्प जी का लिखा एकांकी 'प्रताप की प्रतिज्ञा' सन् 1952 में झाँसी से प्रकाशित ''दैनिक जागरण'' में प्रकाशित हुआ था। यही पुष्प जी को प्रकाश में लाने वाला पहला प्रकाशन था। उसके पश्चात् उनकी लेखनी चली तो चलती ही चली गयी। ऐसी कोई विधा नहीं थी जिसमें उनकी कलम न चली हो। एकांकी, लेख, कविता, कहानी .... आदि सब आये दिन किसी न किसी पत्र या पत्रिका में छप रहे थे। देश के लब्धप्रतिष्ठित साहित्यमनीषी एवं पत्रकार जगत के प्रकाश स्तम्भ कहे जाने वाले पं. बनारसीदास चतुर्वेदी, डॉ. सु.शंकर नायडू (चेन्नई) उपन्यास सम्राट वृंदावन लाल वर्मा, डॉ. हरिवंशराय बच्चन, भवानी प्रसाद मिश्र, गोपाल सिंह नेपाली, काका हाथरसी, गोपाल प्रसाद व्यास, बलवीर सिंह 'रंग' मुजफ्फरपुर से प्रकाशित साप्ताहिक ''नया संसार'' के संपादक लाल जैन ... आदि कितने नामों का उल्लेख किया जाए जो उन दिनों पुष्प जी की प्रशंसा करते नहीं थकते थे।

श्री प्रेम नारायण रूसिया की प्रेरणा से 'बुन्देलखण्ड साहित्य परिषद्' का पुष्प जी ने गठन किया था। जिसके संरक्षक राष्ट्रकवि मैथलीशरण गुप्त, पं. बनारसी दास चतुर्वेदी और वृंदावन लाल वर्मा थे। पुष्प जी इस परिषद् के महासचिव, श्रीमती शिवकली रूसिया अध्यक्ष और इन पंक्तियों का लेखक संयुक्त सचिव थे। इस परिषद् ने पहली बार बुन्देली की अलख जगायी। स्वयं पुष्प जी जो हिन्दी कविता के क्षेत्र में राष्ट्रीय स्तर पर अपनी पहचान बना चुके थे, उन्होंने बुन्देली में कविता लिखकर राष्ट्रीय स्तर के मंचों पर बुन्देली को एक काव्य भाषा की पहचान दिलाई। एक उद्धरण देखें-

''सन्नाटे की परी दुपरिया, हरिया देखों खेत काट रऔ।
काट-काट कर करकें करपा, मूड़न-मूड़न बोज डार रओ।।
हाँफ चलाती, गरौ सुकाती और पसीना खर-खर्राती...

लपटें चल रईं हो ....

लपटें चल रईं हो।।''

इस बुन्देली कविता में बुन्देली का स्वरूप ग्रामीणों द्वारा बोली जाने वाली बोली से ऊपर उठाकर पुष्प जी ने भाषायी संस्कार देते हुए बुन्देली लोक जीवन की बोलती हुई तस्वीर प्रस्तुत की है–

''भाजी सें भौजी नें देखौ बौ कांसे कौ बेला भर दऔ,
दो ठऊआ कोदन की रोटीं, चटनी, मिरचें, नोंन परस दऔ।
प्रेम दिखाती, चाव बढ़ाती, धनियाँ छिन-छिन नेंन चलाती ..।

बैठी सामूँ हो ......

बैठी सामूँ हो।।

धनुआँ, कलुआ के बैला लै, ऊनें लाँक कौ ढेर कूँच दऔ,
सूपा लैकें लगौ उडाबे, नाज-कनूँका ढेर लगा दऔ।
पैली आती, भर-भर जाती, खरयानन में दाँयँ कराती।

आं गई फसलें हो ....

आ गईं फसलें हो।।''

ऐसी पुष्प जी की बुन्देली कविताओं को विस्मृत नहीं किया जा सकता। जिस 'विरहणी' खण्ड काव्य का मैंने आवरण पृष्ठ बनाया था उससे भी एक बानगी देखें–

''संध्या हटती जीवन घटता,
मैं रो-रो कर दीप जलाती।
हरि याद तुम्हारी आती।।
तुमने जीवन सौंपा मुझको,
जीने का अधिकार न सौंपा।
चित्र बनाये, छाया डाली,
रूप-रूप में माया डाली,
सब कुछ भी दे करके तुमने-
वह अद्भुत श्रृंगार न सौंपा।''...................

क्या भूलूं क्या याद करूँ? की स्थिति में पुष्प जी के कवि स्वरूप के कितने उद्धरण दिये जाए? एक कविता जो मंचों पर बहुत सुनी गई, वह भी देखें–

''.. रात की स्याही तुम्हारा क्या करेगी?
कर्म का चंदा तुम्हारे साथ जब है।
मंजिलें आकर चरण चूमें तुम्हारे,
बाजुओं का बल तुम्हारे साथ जब है।''

कभी पुष्प जी कहते है–''*दर्पण को क्या दोष ? अगर चेहरा दोषी है,*
तर्पण को क्या दोष? अंजुली जब ओछी है।
लाख कोसते रहो उमर को दोष नहीं है,
अर्पण को क्या दोष भावना जब खोटी है।।''

ऐसे छोटे-छोटे मुक्तक लिखकर पुष्प जी जो संदेश देते रहे। उन्हें पढ़कर बिहारी की 'सतसई' नामक दोहावली के संदर्भ में कहा गया दोहा याद आ जाता है–

'' सतसैया के दोहरे, ज्यों नाविक के तीर।
देखत में छोटे लगें, घाव करें गंभीर।।''

इस दोहे को पुष्प जी के संदर्भ में इस प्रकार भी पढ़े तो अतिशय नहीं–

''छोटे मुक्तक पुष्प के, ज्यों नाविक के तीर।
देखत में छोट लगें, घाव करत गंभीर।।''

उन दिनों टीकमगढ़ जिले में पत्रकारिता के नाम पर शून्य उभर आया था। राजाशाही जमाने में भले ही राजा से वित्तीय सहारा प्राप्त कर टीकमगढ़ से ''मधुकर'' अथवा ''लोकवार्ता'' जैसी पत्रिकाएँ ही नहीं, ''विन्ध्यवाणी'' जैसे पत्र भी प्रकाशित हुए हों, किन्तु उत्तरदायी शासन के बाद विन्ध्य प्रदेश बना उसके बाद मध्यप्रदेश, किन्तु टीकमगढ़ जिले की गणना तब भी पिछड़े जिले के रूप में होती थी और आज भी कोई विशेष अंतर नहीं आया। स्वतंत्रता के बाद मीडिया अभिजात्य वर्ग के साथ की कठपुतली न बनता तो प्रकाशन होने के भी लाले पड़ जाते। ऐसी स्थिति में 'पुष्प' जी ने जब ओरछा टाइम्स को जन्म दिया तो ना कहीं से वित्तीय सहारा था, न विज्ञापन थे और न ही अखबार के ग्राहक। किन्तु पुष्प जी और उनके मित्रगण जिनमें एक इन पंक्तियों का लेखक भी था। रात शुरू होते ही राजेन्द्र पार्क में पहुँच जाते और बिजली के खम्बे तले बैठकर अखबार तैयार करते, प्रात: पहली बस से पुष्प जी पूरा मेटर लेकर झाँसी जाते और अखबार छपवाकर लाते थे। तब अखबार निकालना बहुत बड़ी चुनौती थी। उस चुनौती को पुष्प जी ने हँसकर स्वीकार किया और तब से आज तक 'ओरछा टाइम्स' एकमात्र जिले का ऐसा अखबार है जो बगैर नागा किये बराबर छप रहा है। जबकि इस बीच उसके समानान्तर कई अखबारों ने जन्म लिया और वे सबके सब कुछ ही दिन अपनी चकाचौंध बिखेरकर समाप्त हो गए। इसके पूर्व पुष्प जी दैनिक जागरण के प्रतिनिधि रहे। इस प्रकार धीरे-धीरे पुष्प जी का साहित्यकार एवं कवि स्वरूप नेपथ्य में चला गया। आज तो वे जिले में एक सफल पत्रकार के रूप में ही जाने जाते रहे हैं।

पुष्प जी स्वयं में बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी थे। एक चिरस्मरणीय कवि, लेखक, रंगकर्मी शिक्षा के क्षेत्र में आदर्श शिक्षक और एक सफलतम पत्रकार के अतिरिक्त कुशल आयोजनकर्ता व संयोजक थे। ओरछा में केशव जयंती समारोह इसका ज्वलंत प्रमाण हैं। ओरछा इस आयोजन के कारण राष्ट्रीय स्तर पर यदि अपनी पहचान बना सका तो उसका श्रेय मात्र पुष्प जी को हैं। उनके वे आयोजन आज कल्पनातीत होकर इतिहास बन चुके है। पिछले कुछ वर्षो से वे रोग शैया पर थे। उनकी स्मरण शक्ति क्षीण हो चुकी थी, पिछले दिनों मैं गया तो वे मुझे भी नहीं पहचान सके। ऐसी स्थिति में दिनाक 7 दिसम्बर 2016 बुधवार के दिन वे महाप्रयाण कर गए। उनकी यादों और संस्मरणों की इतनी लम्बी सूची है कि कहाँ तक लिखें। इतना ही कि मैंने अपना एक मात्र हितचिन्तक बड़ा भाई खो दिया। बुन्देली लोकगीत की पंक्तियाँ याद आती है कि–

बीन-बीन फुलवा, लगाई बड़ी रास।
उड़ गए फुलवा रै गई बास।।

- कुण्डेश्वर, टीकमगढ़ (म.प्र.)

*****

सँकराँत बनाम मकर संक्रान्ति

-पं. ओमप्रकाश तिवारी

अखिल ब्रह्मांड में आठ ग्रह हैं, इनमें पृथ्वी भी एक है, तथा सौर मण्डल के इन ग्रहों का मुखिया 'सूर्य' है। सभी ग्रह सूर्य के चारों ओर चक्कर लगाते हैं। इन ग्रहों में हमारी पृथ्वी भी सूर्य के चारों ओर घूमती है। इसके घूमने की गति दो प्रकार की होती है- पहली दैनिक गति - इसमें पृथ्वी अपनी धुरी पर पश्चिम से पूर्व की ओर घूमती है इसे अपना एक चक्कर पूरा करने में 23 घंटे 56 मिनिट और 4 सेकेण्ड का समय लगता है, इसी गति के कारण दिन-रात होते है। दूसरी वार्षिक गीत - इसमें पृथ्वी को सूर्य का एक चक्कर पूरा करने में 365 दिन 5 घंटे 48 मिनिट और 45:51 सेकेण्ड अर्थात् एक वर्ष का समय लगता है, इसी गति के कारण ''ऋतु परिवर्तन'' होता है। इन ऋतुओं से जल, थल और वायु में होने वाले परिवर्तनों के कारण यहाँ रहने वाले प्राणी भी प्रभावित होते हैं। भारतीय उप महाद्वीप में ग्रीष्म, पावस (वर्षा), शीत, हेमन्त, शिशिर और बसंत यह छः ऋतुएँ होती हैं।

भारतीय ज्योतिष के अनुसार बारह राशियाँ और सत्ताईस नक्षत्र होते हैं। चन्द्रमा एक राशि पर ढाई नक्षत्र पर भ्रमण करता हुआ एक राशि पूर्ण करता है। साथ ही सूर्य एक राशि पर प्रतिदिन एक अंश भ्रमण करते हुए तीन दिन रहता है, इस प्रकार बारह राशियों पर भ्रमण करने में उसे एक वर्ष का समय लगता है। इसी कारण बारह राशियों की बारह संक्रांतियों अर्थात् एक ऋतु से दूसरी ऋतु के मध्य संक्रमण काल होता है। इसी कारण सूर्य जब एक राशि से दूसरी राशि पर पहुँचता है तो उसे उस राशि की संक्रांति कहते हैं, वही है संक्रमण काल। इसी प्रकार से बारह राशियाँ पर संक्रांतियों का सृजन पृथ्वी और सूर्य की गतियों से होता आया है।

हर ऋतु में मौसम बदलता रहता है। मौसम का परिवर्तन शनैः-शनैः होता हुआ हर ऋतु में विशेष तापमान से हवाओं को प्रभावित करता है तथा तापमान और हवाएँ सम्पूर्ण प्रकृति में बदलाव की वयार लाती है, इसमें मौसम कभी ठंडा, कभी गर्म, कभी मिला जुला या सम होने से वनस्पतियाँ व प्राणियों के लिए अनुकूल व प्रतिकूल होता है। इसी कारण पौष मास में पड़ने वाली मकर की संक्रांति सूर्य उत्तरायण होने का पर्व है। जो उत्तर एवं मध्य भारत के निवासियों के लिए शुभ का प्रतीक है, और बुन्देलखण्ड का भू-भाग भारत के मध्य में स्थित है, इसलिए मकर संक्रांति पर्व आज भी हमारे बुन्देलखण्ड के लोक जीवन में कुछ अलग ही उल्लास के साथ समाया हुआ है। बल्कि यह कहना अतिशयोक्ति नहीं है कि बुन्देलखण्ड के लोक पर्वो की माला में संक्रांति सुमेरु के रूप में स्थापित है। क्यों न हो - ठंड़ से ठिठुरे जीवन में उत्तरायण सूर्य की रश्मियाँ उमंग और आशा की किरणों से शक्ति का संचार करती हैं, जो शुभ सूचक है। कदाचित इसीलिए श्रीमद् भगवत गीता में श्रीकृष्ण जी ने कहा है कि उत्तरायण सूर्य में प्राण उत्सर्ग होने पर मोक्ष की प्राप्ति होती है-

''अग्निर्ज्योतिरह शुक्लः षण्मासा उत्तरायणम्।
तत्र प्रयाता गच्छन्ति ब्रह्म विदो जना।।8।24।गीता

यही वजह है कि महाभारत कथा के अनुसार पाण्डवों के पितामह भीष्म ने सूर्य उत्तरायण होने तक शरशैय्या पर 58 दिन कष्टप्रद समय व्यतीत किया और सूर्य के उत्तरायण होने के पश्चात् ही 135 वर्ष की आयु में महा प्रयाण को वरण किया था ....। महाभारत की इस कथा का प्रभाव समूचे भारत के जन जीवन पर ऐसा पड़ा कि पूरे भारत में यह एक महत्वपूर्ण पर्व के रूप में स्थापित हो गया। कहा गया है कि- ''कोस-कोस पै पानी बदले बीस कोस पै बानी।'' तब भारत का भौगोलिक विस्तार तो बहुत बड़ा है। कितनी ही पर्वत श्रृंखलाएँ, नदियाँ, वन, उपवन आदि ने न केवल भाषा में विविध रूप निर्मित किए हैं। बल्कि रीति-रिवाज और सांस्कृतिक परिवेश में भी पर्याप्त अन्तर की सीमा रेखाएँ खींची हैं। तदनुसार दक्षिण भारत में इस पर्व को पोंगल नाम से जाना जाता है, तो पंजाब और हरियाणा में 'लोहड़ी' नाम से। केवल नाम ही नहीं बदले अपितु इन पर्वो के मनाने के तौर-तरीकों में भी पर्याप्त अंतर है। जबकि इन विविध रूपों में भी इस महापर्व का उद्देश्य एक ही है।

हमारा बुन्देलखण्ड भौगोलिक दृष्टि से इतना विशाल है कि विश्व के कई राष्ट्र भी इससे छोटे-बहुत छोटे रह जाते हैं। अतः बुन्देलखण्ड में इस मकर संक्रांति को इतना अधिक महत्व दिया गया कि यहाँ मकर शब्द ही विलुप्त हो गया। केवल 'संक्रांति' शब्द ही बारह संक्रांतियों में मकर संक्रांति का परिचायक है। बुन्देलखण्ड के अनपढ़ एवं साधारण जन अन्य धर्म पंथ के त्यौहारों में संक्रांत पर्व को सर्वश्रेष्ठ निरूपित करके गर्व करते हैं। अस्तु आइये, हम बुन्देलखण्ड के परिवेश में इस महापर्व की चर्चा करें-

बुन्देली संस्कृति में उत्सवों का एक विशिष्ट स्थान और महत्व है तथा हमेशा रहेगा भी। इसका मुख्य कारण लोक जीवन में व्याप्त विभिन्न परम्पराओं एवं रीति-रिवाजों की परिपाटी बहुत प्राचीन है। यही रीति-रिवाज एवं परम्परायें भारतीय संस्कृति के मूलाधार हैं। लोक जीवन की प्रत्येक गतिविधि प्रकृति के सानिध्य में पूर्ण होती है, इसलिए प्रकृति की इस हलचल से मानवीय जीवन से लेकर वनस्पतियाँ तक प्रभावित होती हैं। यही कारण है कि यहाँ का लोक जीवन प्रकृति, लोक मान्यताएँ, लोक परम्पराएँ यहाँ के लोकोत्सव आदि से जन-जन अभिभूत है, तभी तो कहा है-

''देश के प्रदेशन में खण्ड-खण्ड छानौ।
अपनो बुन्देलखण्ड आँगें दिखानौ।।''

इसी क्रम में इस मकर संक्रांति को देखें। निश्चिय ही यह बुन्देलखण्ड का एक महा पर्वोत्सव है, यह पूरे बुन्देलखण्ड में तीन दिवसीय उत्सव के रूप में सम्पन्न होता है।

इस पर्व का धार्मिक रूप से भी विशेष महत्व है, इस पर्व के एक माह पूर्व से ही इसकी तैयारियाँ प्रारंभ हो जाती हैं। पांडित्य कर्म करने वाले भारतीय ज्योतिष की गणनानुसार - संक्रांति का संक्रमण काल तथा उसके अनुसार उसका पुण्य काल एवं उसके वाहन, उपवाहन, वेशभूषा तथा भोजन आदि की गणना करते है फिर इसका बारह राशियों पर फलित निकालकर घर-घर जाकर लोगों को सुनाते है -

यथा - *''आगमनेतु भवेत्सौख्यं, गमने दुखदा भवेत्।*
यत्र दृष्टिःतत्र युद्धं संक्रांति फल मादिशत।।''

अर्थात्- संक्रांति जिस दिशा में आती है वहाँ सुख होता है, जहाँ जाती है वहाँ कष्ट हो जाता है तथा जिस ओर वह देखती है, उस दिशा में

लड़ाई-झगड़े की संभावना रहती है। साथ उसके वाहन, उपवाहन तथा खाद्यान का भी फलित सुनाते हैं। जिसके उपलक्ष्य में उन्हें तिल, गुड, खिचड़ी तथा दक्षिणा स्वरूप कुछ द्रव्य आदि मिलता है। इसप्रकार ज्योतिष की गणनानुसार ही जन मानस तीर्थ यात्राएँ करते हैं तथा तीर्थों पर स्नान कर दान पुण्य कर पुण्यलाभ अर्जित करते है, क्योंकि कहा भी है -

''पग पवित्र तीरथ किए, मुख पवित्र किए नाम।
तन पवित्र तिन नरन को, करै धर्म के काम।।''

पवित्र नदियों में स्नान करने हेतु जाते समय आज भी लोग रास्ते में 'लमटेरा' गीत गाते हुए जाते हैं - यथा -

''बुड़की तो आ गई नओ गुर लएँ,
गुर लए दो-दो लडुआ,
मसक ल्येव यार रे।
बुड़की तो आ गई हो......।।''

इस तरह इस अवसर पर यह आनन्द भी अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच जाता है, क्योंकि घर-घर में इस पर्व पर अनेक धान्य एवं नये गुड़ से विविध प्रकार के यथा-आटा (कनक), तिल, चावल, मूँग, ज्वार के फूला, मक्का के फूला, लाई, सूजी, बेसन, आदि-आदि के लड्डू बनाने का रिवाज आज भी है, साथ ही, खुरमा, सेव, मटरी, पपड़िया, अदरैनी, ठडूला, गुजिया आदि बनाये जाते हैं। इस पर्व के प्रथम दिवस अर्थात् संक्रांति के एक दिन पूर्व मूँग की दाल की मंगौड़ी बनाकर खाने की परम्परा है इस पर्व को पूरे बुन्देलखण्ड में तिलईयाँ कहते हैं। तिलईयाँ के दूसरे दिन अर्थात् संक्रांति के दिन पकवान, लड्डू आदि बाँधकर सपरिवार यथा साधन लोग पवित्र नदियों तालाबों में स्नान करने हेतु जाते हैं, इसलिए इन धार्मिक व पवित्र स्थलों पर मेलों का आयोजन हो जाता है। इन मेलों में घूमते हुए तथा मंदिरों में बैठकर बाबा के गीत गाते हुए मिल जाते हैं यथा-

''भजन बोलो सिया रघुवर के हो,
सिया रघुवर के रे, भजनहिं में लगा दो बेड़ा पार-
भजन बिन सूनी देहिया रे,
हिरदे में बसा लो सीता राम हो।
सूरत मोरी तोहि से लागी रे,
तोहि से लागी रे, बंशी बारे से लागे दोऊ नैन हो।
सूरत के डोरे डरे रे,
डोरे डरे रे, जैसे वंशी डरी रे दौ माझ हो।''

आज अपने बुन्देलखण्ड के यह मेले बहुत प्रसिद्ध है इन मेलों में ग्रामीण परिवेश की झाँकी देखने को मिलती है। जिसमें उनकी वेशभूषा, रहन-सहन, खान-पान, उनके आभूषण, आचार-विचार आदि का ही तो मेला होता है, साथ ही यह उनकी धार्मिक आस्था का प्रतीक भी है।

रणछोर जी: ललितपुर जिले में धौर्रा रेलवे स्टेशन के निकट वेत्रवती (वेतवा) नदी के तट पर प्राचीन रणछोर जी मंदिर है तथा जंगल में ही दो किलोमीटर की दूरी पर मुचकुन्द गुफा है इन स्थानों पर संक्रांति के अवसर पर विशाल मेले का आयोजन होता है।

नीलकण्ठेश्वर पाली: ललितपुर जिले की नव निर्मित तहसील पाली से दो किलोमीटर की दूरी पर तेलिया पत्थर की तीन मुखवाली भगवान शंकर की अत्याधिक आकर्षक मूर्ति पहाड़ पर सघन वृक्षों के बीच मंदिर में स्थित हैं यह इस अवसर पर विशाल मेले का आयोजन होता है।

माता टीला: ललितपुर जिले में तहसील तालवेहट से दस किलोमीटर की दूरी पर एक विशाल टीले पर सिंह वाहिनी टीलामाता का भव्य मंदिर है, इस अवसर पर यहाँ विशाल मेले का आयोजन होता है तथा यहाँ माता टीला बाँध व वेत्रवती नदी में लोक स्नान करते हैं।

देवगढ़: ललितपुर जिला मुख्यालय से 33 किलोमीटर दूर वेतवा नदी के तट पर विशाल मेले का आयोजन होता है यहाँ छठवी शताब्दी का दशावतार मंदिर एवं पहाड़ी पर प्राचीन भगवान शान्तिनाम का विशाल मंदिर है। इस स्थान का प्राचीन नाम लौच्छागिरि का तथा यह भगवान कार्तिकेय की जन्मभूमि भी है।

कुण्डेश्वर धाम: टीकमगढ़ जिला मुख्यालय से दक्षिण की ओर 5 किलो मीटर की दूरी पर ललितपुर रोड पर आशुतोष कुण्डेश्वर महादेव का स्वयं भू शिवलिंग स्थित है, इस प्रसिद्ध शिवलिंग के विशाल मंदिर को घेरती हुई जमड़ार नदी बहती है, जिसका प्राचीन नाम जगदृष्टा था। इस तीर्थ पर इस अवसर पर एक दिवसीय विशाल मेला लगता है, जिसमें हजारों की संख्या में श्रद्धालु लोग आकर स्नान कर दर्शन लाभ प्राप्त करते हैं।

ओरछा धाम: टीकमगढ़ जिला मुख्यालय से 80 किलोमीटर की दूरी पर रामराजा सरकार का पावन तीर्थ ओरछा धाम वेतवा (वेत्रवती) नदी के तट पर स्थित है, यहाँ मकर संक्राति के अवसर पर विशाल मेले का आयोजन होता है।

जटाशंकर: छतरपुर जिले में बिजावर तहसील मुख्यालय से 17 किमी. की दूरी पर भगवान भोलेनाथ का पावन तीर्थ जटाशंकर के नाम से प्रसिद्ध है, यहाँ पहाड़ पर स्थित प्राकृतिक दो कुण्डों के जल में स्नान कर लोग जटाशंकर महादेव का जलाभिषेक करते हैं, इस अवसर पर यहाँ विशाल मेला लगता है।

भीम कुण्ड: छतरपुर जिले में ही बड़ामलहरा के पास पाताली कुँआ है, जन श्रुति है कि इस स्थान पर वनवास के समय पाण्डुपुत्र भीम ने गदा मारकर इस कूप को बनाया था। इस अवसर पर यहाँ विशाल मेले का आयोजन होता है।

खजुराहो: छतरपुर जिले में ही जिला मुख्यालय से 45 किलोमीटर खजुराहो में मतंगेश्वर महादेव का विशाल मंदिर है, इस अवसर पर यहाँ विशाल मेले का आयोजन होता है। **केदारेश्वर:** झाँसी जिले की मऊरानीपुर तहसील से दक्षिण की ओर 6 किलोमीटर की दूरी पर रौनी गाँव है, जहाँ केदारेश्वर पर्वत पर केदारेश्वर महादेव भैसे पर लिंग रूप में प्रतिष्ठित हैं, यहाँ इस अवसर पर विशाल सांस्कृतिक मेला लगता हैं।

झारखण्ड: झाँसी जिले की गरौठा तहसील में खड़ौरा ग्राम से दो कि.मी. पूर्व में नागनाथ नाम का एक विशाल पर्वत है, इसकी एक गुफा में नागनाथ शिव की एक कलात्मक मूर्ति प्रतिष्ठित है इसी के समीप से बहती हुई धसान नदी (दशार्ण) को धारा में ऋषि विश्वामित्र की मूर्ति स्थित हैं, जिसके दर्शन गीष्म और शीत ऋतु में डुबकी लगाकर किए जाते हैं जिसके दर्शन ग्रीष्म और शीत ऋतु में डुबकी लगाकर किए जाते हैं ऐसी जनश्रुति है कि इसी धारा में बैठकर ऋषि विश्वामित्र ने तपस्या की थी। इस अवसर पर एक विशाल

सांस्कृतिक मेला लगता है।

पारीछा बाँध: झाँसी जिले में झाँसी कानपुर रेल लाइन एवं रोड पर बड़ागाँव कस्बा के आगे वेतवा नदी पर बने पारीछा बाँध पर प्रकृति के अनुपम सौन्दर्य के बीच इस अवसर पर एक विशाल मेला लगता है।

कालपी: जालौन जिले में कालपी शहर जो महर्षि वेदव्यास की जन्मस्थली है ये यमुना नदी के तट पर स्थित चंदेल कालीन किले में सीढ़ियों से नीचे किला मंदिर है इसमें कपलेश्वर शिव की लगभग एक हजार वर्ष पुरानी मूर्ति प्रतिष्ठित है। यहाँ इस अवसर पर एक विशाल सांस्कृति मेला लगता है।

कर्णखेरा: जालौन जिले में प्राचीन सांस्कृतिक स्थल जम्मनपुर से तीन किलोमीटर की दूरी बुन्देलखण्ड का 'पंचनद' स्थित है जिसमें पहूज, कुँवारी, सिंध, चम्बल तथा यमुना नदियों का संगम स्थल है, यहाँ इस अवसर पर विशाल मेला लगता है।

सैदनगर: जालौन जिले में उरई से दक्षिण की ओर वेतवा के किनारे स्थित इस ग्राम में पहाड़ी का प्राकृतिक दृश्य अत्यन्त मनोरम है इस पहाड़ी पर 'अक्षरादेवी' का बहुत सुन्दर एवं प्रसिद्ध स्थापित है। यहाँ इस अवसर पर विशाल मेले का आयोजन होता है।

महोबकण्ठ: महोबा जिला की सीमा पर तथा हरपालपुर जिला छतरपुर की सीमा में 5 किलोमीटर की दूरी पर एक पहाड़ के ऊपर एक विशाल प्राकृतिक तालाब है यह कभी भी सूखता नहीं है तथा इसमें बड़ी-बड़ी मछलियाँ इसकी शोभा बड़ा रही है। यहाँ भगवान शिव का शक्ति के मंदिर एक वटवृक्ष की छाया में बने हुए है इसकी तलहटी में भी एक छोटा सा आकर्षक तालाब है यहाँ इस अवसर पर विराट मेला लगता है।

बाँदकपुर: दमोह जिले की सीमा पर भगवान शंकर का एक प्रसिद्ध तीर्थ है, यहाँ इस अवसर पर विशाल मेले का आयोजन होता है।

राजापुर: प्रमाणित ग्रंथों के अनुसार 'रामचरित मानस' के रचियता गोस्वामी तुलसीदास की जन्मस्थली राजापुर में यमुना के तट पर संकट मोचन हनुमान जी तुलसीदास जी का प्राचीन मंदिर है, यहाँ इस अवसर पर विशाल मेले का आयोजन होता है।

कामदगिरि: चित्रकूट में कामदगिरि की परिक्रमा करने हेतु लाखों की संख्या में लोग पहुँचते है तथा मंदाकिनी नदी में राम घाट पर स्नान कर दर्शन लाभ लेते हैं। इस अवसर पर यहाँ विशाल मेले का आयोजन होता है।

वर्मान घाट: सागर जिले में नर्मदा मईया के तट पर स्थित वर्मान घाट पर माँ नर्मदा के दर्शन व स्थान कर पुण्यलाभ अर्जित करने हेतु लाखों की संख्या में यहाँ श्रद्धालु आते हैं। इस अवसर पर विशाल मेले का आयोजन होता है।

हजारिया महादेव: ललितपुर जिले की ताल के हर तहसील मुख्यालय में नगर से लगे हुए विशाल तालाब के किनारे स्थित हजारिया महादेव के मंदिर पर इस अवसर पर हजारों श्रद्धालु तालाब में स्नान कर महादेव का जलाभिषेक करते हैं। इस अवसर पर विशाल मेले का आयोजन होता है।

मकर संक्रांति के दिन तिल के प्रयोग का विशेष महत्व है, यथा -

''तिलस्नायी, तिलादवर्ती, तिल होमी तिलोदकै:।
तिल भुक तिल दाता च, षट तिल पाप नाशक:।।''

अर्थात् इस दिन तिल को पीसकर लोटे में डालकर उसमें जल मिलाकर या उबटन करें, तिल का होम करे, तिल को जल में छोड़े, तिल के भोजन करें (तिल के लड्डू बनाकर) तिल का दान करे, इन छः प्रकार से प्रयोग फलदायी होता है। इस पर्व पर बुन्देलखण्ड में एक अनौखी परम्परा है यहाँ गड़ियाघुल्ला विशेष रूप से मौजूद होते हैं। घुल्ला अर्थात् घोड़ा (अंश्व) यह मिट्टी, पीतल आदि धातुओं के साथ-साथ शक्कर (चीनी) से भी बनाये जाते हैं जिनका विधिवत पूजन होता है। चूँकि भगवान श्री कृष्ण ने श्रीमद् भगवत गीता के दसवें अध्याय के सत्ताईसवें श्लोक में कहा है कि- ''उच्चैः श्रवसमश्वानां अर्थात् मैं अश्व के रूप में उच्चेश्रवा हूँ। इसलिए भगवान का प्रतिरूप उच्चैश्रवा अश्व के रूप में तथा प्रत्यक्ष देव भगवान भास्कर के रथ के सातो घोड़े-गायित्री, वृहती, त्रिष्णक, गगवी, श्रेष्टुम, रनुष्टम और गैर पंक्ति के प्रतिरूपों के रूप में तथा बुन्देली धरा पर जन्मे भगवान परशुराम के वाहन सूपर्ण अश्व तथा वीरता की प्रतिमूर्ति बुन्देली धरा के गौरव ऊदल के घोड़े बैंदुला, चन्द्र, शुक्र व वृहस्पति के तथा जैन धर्म के तीर्थंकर संभवनाथ के प्रतीक चिन्ह अश्व के प्रतिरूप एवं बुन्देलखण्ड के लोकदेवता कारसदेव के वाहन अश्व के प्रतिरूपों की पूजा की जाती है। पूजनोपरान्त यह गड़ियाघुल्ला बच्चों के खेलने-खाने के काम आते हैं। इतना ही नहीं यहाँ गाँवों में इन्हीं घुल्लों को मांगलिक स्वरूप में अपनी-अपनी ससुराल भेजने की परम्परा थी जो आज विलुप्त होती जा रही है। साथ ही मेरे देखते ही देखते मकर संक्रांति के अवसर पर आने वाले 'हरबोला' भी बुन्देलखण्ड की लोक परम्परा के इतिहास में विलुप्त हो गये। कहीं- कहीं इन 'हरबोलों' को 'वसुदेवा' भी कहा जाता रहा है। इनके माथे पर मयूर पंखों का अभूत पूर्व मुकुट धोती-कुर्ता, गले में गलगंदा एवं मालाएँ, मस्तक पर चंदन का तिलक, खंजरी, मजीरा और इकतारा मात्र यही उनके वाद्ययंत्र होते थे। वे गाते-बजाते निकलते और किसी से कुछ भी मांगते नहीं थे, हर दरवाजे पर खड़ रहकर गाथा गाते, कुछ मिल जाता तो लेकर गाते हुए ही आगे बढ़ जाते थे, यदि किसी दरवाजे पर कुछ न भी मिले तो भी उनका वह संगीत उसी मस्ती के साथ-गली-कूचों में गूंजता था। उनकी लोक गाथाओं ने स्थानीय एवं क्षेत्रीय इतिहास को जीवित रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। उदाहरणार्थ - 1857 के विप्लव में बुन्देलखण्ड की अहम भूमिका थी यहाँ झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई ने मर्दानी होकर फिरंगियों के छक्के छुड़ाए थे। किन्तु ई. मार्सडन के इतिहास में उसे विकृत करके ही प्रस्तुत किया जो यथार्थ के ठीक विपरीत भी था। यदि इन हरबोलों ने झाँसी की रानी की शौर्य गाथा गाँव-गाँव में गाकर न सुनाई होती तो हमारे स्वतंत्रता संग्राम में बुन्देलखण्ड का योगदान विलुप्त ही हो गया होता। मकर संक्रांति और हरबोलों का गायन परस्पर पूरक रहे हैं। आगत पीढ़ी आज सुभद्रा कुमारी चौहान की कविता से केवल हरबोलों का नाम ही जान पाई है, यथा -

''बुन्देले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मर्दानी वो तो झाँसी वाली रानी थी।''

संक्रांति की यह महत्वपूर्ण परम्परा आज विलुप्त हो गई है जो खेद जनक है। ऐतिहासिक एवं पौराणिक गाथाएँ भी उनके साथ विलुप्त हैं। वे गाथा गाते तो प्रत्येक चरण के बाद एक सम्पुट लगाये थे-

''तन-तन- चून चुखरियाँ खायँ, हर गंगा हर गोपाल।
हर के वचन सुनों दो चार, हर गंगा, हर गोपाल।।''

किन्तु आगत पीढ़ी कैसे जानेगी कि बुन्देले हरबोलों के मुँह सुभद्राकुमारी चौहान ने जो कहानी सुनी थी उसका स्वरूप कैसा था और 'हरबोला' किस चिड़िया का नाम है?

इस पर्व के तीसरे दिन अर्थात् संक्रांति के दूसरे दिन भभराँत का पर्व मनाया जाता है इसमें घर में बने हुए लड्डू, पकवान तथा गड़ियाघुल्ला का विधिवत पूजन कर इन्हें कपड़े की एक थैली में भरकर रख दिया जाता है इसे ''गौन भरना'' कहते हैं। इसे बसंत पंचमी के दिन विधिवत पूजन कर खोला जाता है, इस प्रकार से पुनः एक बार उत्सव बसंत पर लड्डुओं के साथ-साथ गड़िया-घुल्ला के खाने का आनंद लिया जाता है। दूसरी ओर समाज के कुछ वर्गों में भभराँत के दिन शिकार कर उसे बनाकर खाने की परम्परा आज भी है। इसमें भी सामूहिक रूप में जंगल में जाकर जंगली सुअर का शिकार विशेष रूप से किया जाता था। इसमें कई बार लोगों को अपने जीवन से हाथ भी धोना पड़ता था और कई लोग बुरी तरह से जख्मी भी हो जाते थे, आज जंगलों की कटाई हो जाने के कारण इनकी संख्या कम हो गई है, इसलिए बाजार से उपलब्ध माँसक्रय करके बनाकर खाने और उसके साथ शराब पीने की परम्परा आज भी देखने को मिलती है। इस भोजन के द्वारा लोगों का तामसी और पाश्विक प्रवृत्तियों को जीवन्त रखने का प्रयास ही है क्योंकि भगवान श्री कृष्ण ने श्रीमद् भगवत गीता के सत्रह वें अध्याय के दसवें श्लोक में कहा है कि - तामसी व्यक्तियों को दुर्गन्ध मय, रस रहित, जूठा तथा बासा और अधपका भोजन प्रिय होता है। यही तामसी भोजन ही अशान्ति और कलह का जन्मदाता है यथा -

''यातयामं गतरसं पूति पर्युषितं च यत्।
उच्छिष्टमपि चामेध्यं भोजनं तामसाप्रियम्।। 17-10।।''

बुन्देली भूमि आभागत होती नजर आ रही है जिसकी एक झलक पं. सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' जी ने प्रस्तुत की है यथा-

'' निश्चल अब वही बुन्देलखण्ड आभागत।
निःशेष सुरभि कुरबक समान।।
संलग्न वृंत पर चिन्त्य प्राण
बीता उत्सव ज्यों चिन्ह म्लान छाया श्लथ।।''

इसीलिए तो राष्ट्रकवि मैथलीशरण गुप्त जी ने कहा था कि -

'' प्राचीन हो कि नवीन छोड़ो रूढ़ियाँ जो हों बुरी।
बनकर विवेकी तुम दिखाओ, हंस जैसी चातुरी।।
प्राचीन बातें ही भली हैं यह विचार अलीक है।
जैसी अवस्था हो जहाँ वैसी व्यवस्था ठीक है।।''

जबकि हमारी यह बुन्देली भूमि विश्वस्तर पर अपना एक विशिष्ट स्थान बनाये हुए थी और बनाये रहे ऐसी हमारी आकाँक्षा है। जैसा कि घासीराम व्यास मऊरानीपुर (झाँसी) उत्तरप्रदेश ने लिखा है कि -

''अमर अनन्दनीय असुर निकन्दनीय
वन्दनीय विश्व में बुन्देलखण्ड भूमि है।।''

-तिवारी सदन, कुण्डेश्वर
जिला-टीकमगढ़ (म.प्र.)
मोबा. 9630078557

*****

बुढ़ापे की व्यथा

-सुरेन्द्र कुमार श्रीवास्तव 'सुमन'

हाड़ तोर मेंनत कर खेती, राखीं भैंसे गइयाँ।
दिन दिन भर रए फाँकें करकें, पेर न पाई पनइयाँ।।
गहनो गुरिया बेंच ललन को, पाँयन ठाड़ो करदव।
बहुअन के संग मजा कर रए, एकउ हमें न मररव।।
सोची ती हम डुको डुकरिया लरकन के संग रेहैं।
चार चार लरका बहुएं हैं हाँतन पे सब लेहैं।।
लर भिर कें अब घरउ छुड़ा लव सार दई रेवे कों।
तीज तुहारन पेउ न पूछें दे दें कछु खावे कों।।
बहुएं चार कोउ ना पूछें उल्टो देवें ताना।
देवर जेठ कों खूब करत हो हमें देव ना दाना।।
बहुंए केरँइ साल बाँट लो कब नों कुन में रेहो।
दो बीघा जो तुमें मिली है बाको तुम का देहो।।
नाती एकउ बात न माँनें ढ़िगां नेक ना आवें।
नैक नैक कामन के लानें औरन सें गिगयावें।।
आँखिंन से लहचार डुकरिया हाँतन रोटी ठोके।
कच्ची कोंरी जोड़ मिल रँईं खा रए दोऊ रोके।।
रात दिना कोसत बउअन कों लरका करे विराने।
हम तो रोकें काट रए सुन तुम बन जाव सियाने।।
सुख सें कटै बुढ़ापो घर में जलो जथा कछु धरियो।
राम भजन कर ''सुमन'' प्रेम से जीवन यापन करियो।।

-ग्राम कुसमरा, पो. नावली, जालौन (उ.प्र.) पिन-285121
मोबा. 9415924778

*****

बुन्देली चौकड़ियाँ

-दीनदयाल तिवारी 'बेताल'

रूप कौ गरब कभउ न करियौ, ध्यान गुनन पै धरियौ।
गुनइ देखौ रूप न देखौ, धोकौ जिन खा जइयौ।।
पूजा होत है ज्ञान गुनन की, कवि की बात पकरियौं
नइ मानों 'बेताल' बात जा, सोसत सोसत रइयौ।। (1)

होंनी होकर ही मानत, ई खों जन जन जानत।
ई पै बस न चलत काहू कौ, वेद पुरान बखानत।।
जानत है पै सब नइ मानत, अपनी अपनी तानत।
कयँ ''बेताल'' प्रबल है हौनी, ई खों कोउ न टारत।। (2)

सबखों अपनी काया प्यारी, गोरी हो या कारी,
तेल पाउडर खूब लगा रय, क्रीम लगाउत न्यारी।।
ब्यूटी पार्लर में जा जाकें, मसाज करायँ भारी।
धू-धू कर 'बेताल' जल है, प्यारी काया सारी।। (3)

-श्री सिद्ध बाबा कालोनी, टीकमगढ़ (म.प्र.)
मोबा. 9893153534

*****

बुन्देली की कहानी- ओइ की जुबाई

-मनोज सोनी

भारत देश के बीचऊँ बीच की धरती कौ एक बड़ौ हैंसा (हिस्सा) बुन्देलखण्ड के नाव से जानों जात, जा बात अपुन सब खों पतौ है। अपुन जा सोऊ जानत कै जौ बुन्देलखण्ड उत्तर प्रदेश औ मध्य प्रदेश के करीबन 27 जिलन में फैलो है जिनमें बुन्देली बोली जात रई। अपनी ऊ बोली की जा हालत हो रई कै धीरें-धीरें उये बोलबे बारे घटतई चले जा रये। मोय मन में ई बात की चिन्ता बनी रात, सो एक रात कें बुन्देली बर्राटन में साच्दात हो कें जो कछू बोली बा मैं अपन सब सें कन चाउत। चाय जा कैलो कै बुन्देली बोली की बिथा कौ बौ बतकाव बुन्देली के सब जनवन सें कन चाउत। बा बोली कै बुन्देली के बड़े-बड़े जनवा कत कै बुन्देली खड़ी बोली से भौत पैलऊँ की भाषा आय और जा भौतऊ मीठी या गुरीरी लगत। जब लिखबे कौ काम शुरू नईं भव तो ऊ बेरां बुन्देलखण्ड के सबई नन्ने-बड्डे मोइये बोल-बोल कें आपस में बतकाव करतते। ऐसई बृज के बसइया बृज भाषा में औ अबध के बसइया अबधी में बतकाव करतते।

जब लिखबे की शुरुआत भई तौ बृज और अबधी में पैलऊँ कवता-कानियाँ लिखी जान लगीं। फिर बुन्देली में सोऊ आल्हा जैसी कवताएँ औ किस्सा लिखे गये। ऐइ बीचां खड़ी बोली या हिन्दी कौ जनम भऔ। ईमें ऊपर बताई तीनऊँ भाषन के संगै कछू और भाषा-बोलियन के सबद (शब्द) लैकें बोलो व लिखो जान लगो। धीरें-धीरें हाल जौ भव कै पैलऊँ की भाषा बोलियन कौ महत्त घटन लगो और खड़ी बोली कौ महत्त ऐसौ बड़ो कै ऊने आदे सें जादाँ उत्तरी देश पै कब्जा कर लऔ। ईखों हिन्दी कन लगे। सबरौ लिखबौ-पड़बौ हिन्दी में हौन लगो सो ऊ कौ साहित्य दिन दूनों रात चौगुनौ बड़न लगो। जौ देख कें बुन्देलखण्डियन खों सोऊ मोरी बुन्देली भाषा में लिखबे कौ सौंक चर्रानों। परनाम जौ भऔ कै बुन्देली भाषा की कवतन औ किसा कानियन की पोथी (किताबें) सोऊ धड़ा-धड़ छपन लगीं। मोय भाई नौनौं लगो। बुन्देली के जनवन ने बुन्देली भाषा की व्याकरन, सबद कोश और इतहास सोऊ लिख डारे। बोलबे, लिखबे-पड़बे व छपने की खूब तरक्की भई।

देश की सुतंत्रता के बाद सेहरन और गाँवन-खेरन में स्कूल खुलत गये सो लरका-बिटियाँ पड़न लगे। स्कूलन में हिन्दी और अंगरेजी पड़ाई जात सो सब हिन्दी सीकन लगे और बेई बोलन लगे। बीच-बीच कछू अंग्रेजी के सबद सोऊ बोलत। पड़े लिखे मौड़ा-मौड़ी बुन्देली बोलबो भूलत गये, काय कै बुन्देली बोलबे-लिखबे पै गुरू जी नाराज होत। जौलों गाँवन के बिना पड़े-लिखे आदमियन और जनी मांसन की गिनती बड़न लगी उर बुन्देली बोलवे वारन की गिनती घटन लगी। गाँवन सें मजूर बड़े सेहरन में मजूरी करवे जान लगे सो बे सोक बुन्देली छोड़ हिंगलिश (हिन्दी+इंग्लिश) बोलवो सीक गये। रई-खुरी कसर टी.वी. ने पूरी करी जीसैं हिन्दी सोऊ अंगरेजी के अक्षरन में लिखी तक जान लगी। अंग्रेजन की नकल करबे में खाबौ-पीबौ, बोलबौ-चालबौ और सबई कछू बदल गऔ। अब बुन्देली खों को पूँछत? और तौ और अब हिन्दी में पड़वे की जाँगा गाँवन-गाँवन तक में अंगरेजी में पड़ावे बारे स्कूल खुलत जा रये। अब हाल जौ है कै सेहरन और कसबन में हिन्दी कै संगै बुन्देली के सबद बोलवे बारे नाव के लाने रै गये उर गाँवन में पुराने आदमी व जनीमानस कछू हिन्दी और कछू बुन्देली बोलत। मोय अब ऐसौ लगन लगो कै भौतउ जल्दी बौ समै आबे बारौ है कै बुन्देली बोलवे बारे निठुंअईं न बचें। और तौ और बुन्देली में लिखबे बारे और बुन्देली की तरक्की की बातें करबे बारे सोऊ हिन्दी में बतकाऔ करत दिखात। अबै अबै बुन्देली के शब्दकोश, व्युतपति कोश, इतिहास बगैरा की जौन पोथीं लिखीं गई उनकी भूमकायें, प्रकाशकीय, लेखकन की अपनी बातें आदि भी खड़ी बोली में लिखे गये। मतलब जौ कै मो बुन्देली की बड़वाई औ बुन्देलखण्ड के बारे में सबई कछू हिन्दी में लिखो जा रऔ। अपन विद्वनन द्वारा पोथीं और पत्रकन में मो बुन्देली के बारे में जौन लिखो जा रऔ ऊसें कछू तसल्ली तौ होत कै बुन्देली कौ नाव सैकरन सालै चलै। एक कवता की दो लैनें हैं कै-

इतिहास का आदमी बहुत बोलता है,
क्योंकि आदमी को मुर्दे से तौलता है।

मतलब जौ कै इतहास और सबई विषयन की किताबन में जो सैकरन और हजारन साल पैलऊँ लिखो गऔ बौ मुर्दा जैसौ धरो है। जो जिनदा है बौ तौ बोलत हैं। जी भाषा के बोलबे बारे न रै जैं बा तौ मुरदा जैसी पोलिथिन भर में परी रैहै। मो बुन्देली के बोलबे बारन की दिन पै दिन घटत रई तादाद देखकें मन में कल्लौनियाँ लगी रत।

अपुन बुन्देली के सब जनबन और विद्वानन सें मोरी जेई विनती है कै अपन जितनी मैनत मोरे साहित्य खों बड़ाबे के लाने कर रये ऊके संगै-संगै बुन्देली बोलबे बारन के बचाबे औ बड़ावे के लाने सोऊ करौ तौ मोय भाई खुशी हुइये। आँगन-ताँगन बुन्देली मेला, बुन्देली साहित्य सम्मेलन व मानक बुन्देली कौ बतकाऔ देख- सुन के मोइ बाँछें कछू समै के लानें खूबई आ खिल जातीं। मोरे मन में तौ जा लगी रत कै मानक बुन्देली की बात तबे नौनीं लगै जब पैलऊँ बुन्देली खों बचाबे या जिन्दा रखबे की कोशिश होबे। बुन्देली संस्कृति सोऊ जबईं बचै जब बुन्देली भाषा बचै। मैं जा सोऊ जानत कै अपन सब के मन में सोऊ जा बात सालत रत। बुन्देली मेलन में बुन्देली बोलबो, बुन्देलियन कौ खाबौ, पैरबौ, गाबौ-बजाबौ, खेलबौ, कूँदबौ, नचबौ, सबई कछू कौ मजा मेला में आबे बारे खूबई आ लेत। प्रतयोगतन में भाग लैवे बारन खों इनाम-इकराम और साहित्यकारन खों सम्मान उनें और अच्छौ करबे व लिखबे कौ होंसला देत। पै जौ सब मेलन के भागीदारन तकई रौ जात। पूरे बुन्देलखण्ड खों ईकौ लाभ मिलै जा कोशश अपन सबखों करने पर है।

मोरी मंसा जा है कै इन मेलन और सम्मेल्लनन में बुन्देली खों बड़ाबा दैबे बारे कामन कौ बतकाऔ होबे और बौ बतकाऔ अकेलौ बतकाऔ न रबै। ऐसे कारज करे जाबें जी सें पूरे बुन्देलखण्ड में बुन्देली बोलबे बारे बड़ें और उनके मन में जा बात जम जाबै कै हमें अपनी मातृ भाषा खों भूलनें नइयाँ। आपस बुन्देली बोलबे में सरम न लगै। ईसें मोय तौ साता परै अई अपन सब खों सोऊ अपनी मैनत पै गरब हुइये। मैं अपुन सें जा कन चाउत के सिन्धी और पंजाबियन खों अपनौ देश छोड़े सत्तर साल हो गये और बे हिन्दी बोलवों सीक गये, पै

आपस में अबै अपनी अई भाषा बोलत। जाँ तक मैं जानत तौ उत्तर प्रदेश और मध्यप्रदेश खों छोड़कें देश के सबई प्रान्तन में उनके क्षेत्र की भाषा बोली और पड़ी जात। ऐई सें उन सबकी भाषायें जिन्दा हैं। अबै लों जो भऔ सो भऔ। बुन्देली पड़ाबे की कोशिश सोऊ भई पै कामें नई आईं। उत्तर प्रदेश और मध्यप्रदेश जैसे बड़े राज्यन में जितै कैऊ तरा की बोलीं बोली जात होबैं उतै बुन्देली में पड़ाबौ तो साँसऊँ मुश्कल है। इतनौ हो सकत कै हिन्दी के संगै बुन्देली की एक पुस्तक सह भाषा के रूप में पड़ाई जा सकत। जौ काम सोऊ आसान नइयाँ, पै कोशश करे सें का नईं हो सकत। ई काम के लानें अपन सब साहित्यकारन खों पूरे मन से पिठियाँ शुद्ध होकें लगे बिना जौ काम नईं हो सकत। जौ जब हुइये, तब हुइये पै कछू काम तौ अबै भी ऐसे करे जा सकत जी सें लरकन-बिटियन कौ ध्यान व रुझान बुन्देली बोलवे पड़बे की तरप जाबै।

बुन्देली संस्थान की तरफ से स्कूलन में बुन्देली में बाद-बिबाद, निबंध, कविता, कहानी बगैरा लिखबे की प्रतियोगिता कराई जा सकतीं और बच्चन खों इनामें दईं जाबें। जो काम बुन्देली मेलन में तौ होइ सकत। जैसें राष्ट्र भाषा समिति म.प्र. में करत है। दूसरौ काम जौ हो सकत कै बुन्देली संस्थायें दान दातन की मदद सें स्कूलन में बुन्देली भाषा में लिखीं कवतन और कनियन की छोटी छोटी पुस्तिकायें बँटवायें जिनें पड़कें बचचन को मन बुन्देली की तरफ खिंचबै। झाँसी में विश्वनाथ जी शर्मा शिक्षा के क्षेत्र में अबै जो काम कर रये बे तौ बड़ी आसानी सें जौ काम खुद कर सकत कै कौनऊँ संस्था के संगै मिलकें कर सकत।

एक काम जौ हो सकत कै हमाये क्षेत्र के नेता अपने क्षेत्र में बुन्देली में भाषन देवें। ईकौ भौत असर छोटे-बड्डे सबई पै हुइये, कायकै लरकन खों नेतन की नकल करबे कौ सौंक है। ईके लाने सोऊ पहल साहित्तकारन खों नेतन खों समझांके करने परै। नेतन खों समजाबौ बड़े साहित्यकारन के बस की बात है। बुन्देली भाषा से संबंधित जौन सम्मेलन होबैं उतै सबरो बतकाव बुन्देली अई में होबै। हिन्दी औ अंगरेजी के कारन बुन्देली बोलबे बारे खों आदमी गमार कन लगत, ईसें जो बोलन भी चाय तौ नईं बोलत। कजन्त की दारै घर में सब जनें आपस में बुन्देली बोलें तौ काऊ खों झिजक न हुइये। बुन्देली कौ भलौ चाबे बारन खों अपने घरन में ईकौ उदाहरण दव चइये। अगर अकेलौ कोऊ बोलन भी चाउत तौ घर बारे उए झिड़क देत। जो जानत हैं बे सोऊ भूलत जात। जैसें धरे लोय खों जंगाल लग जात ऐसऊ बुन्देली के संगै हो रऔ।

अपन सब मिलकें सोसौ तौ न जाने कितनें तरीका बुन्देली बोलबे खों बड़ाबा दैवे के निकट आयें। अगर सब जाँगां के बुन्देली मेलन के कर्ताधर्ता कभऊँ-कभऊँ इकट्ठे बैठकें ईके बारे में बतकाऔ करकें उपाय निकारें और मिलकें हल करें तौ ऐसौ नइयाँ कै बिगरत बात न बनै। कन लगत कै गाँय-गाँय ब्याव हो जात सौ जरूरत गावे की है। सब जनें ठान लेबें तो का नईं हो सकत पै जरूरत ठानबे की है। सो मोरी विनती पै अपुन सब खों विचार आय करनें। मोरी जा कथा ओइ की अर्जी मानी जाबै।

-राजमहल के पास, टीकमगढ़ (म.प्र.)

*****

तीन बुन्देली गज़लें

-डॉ. राघवेन्द्र उदैनियाँ ''सनेही''

(1)

कसाकसी में वारौ काँहै।
मैंगाई कौ चारौ काँ है।।
जीखाँ जो कानें सो कै रओ,
उनके मौं पै पारौ काँ है।।
भलें कछू ए.सी. में सो रय,
सबकौ इतै गुजारौ काँ है।।
सबई तरा की जाँचें चल
कऔ दार में करौ काँ है।।
जीनें लठ्ठ धुँआँ में मारो,
ढूँड़ौ तौ ऊ सारौ काँ है।।
घर के सबरे नोट खंगर गए,
बक्सन में अब तारौ काँ है।।
बड़ो-चड़ो जोंन ''सनेही''
ऊखाँ और उतारौ काँ है।।

(2)

दुनियाँ बड़ी धुकैल, समरकें रंइयो बिट्टू
पौंचा दैहै जैल, समरकें रइयो बिट्टू।।
इतै एक सें एक खलीफा, मुल्ला काजी,
मीठे और गुडैल, समरकें रइयो बिट्टू।।
आबड़ में पर जैहौ जिदना, पछतैहौ फिर,
भगें न मिल है गैल, समरकें रइयो बिट्टू।।
चरकें चारौ ऐंन दलाँकत-फूँसत फिर रए,
जे बैला गर्रेल, समरकें रइयो बिट्टू।।
नागनाथ और सांपनाथ हैं एकइ जैसे,
सबके सबइ बिसैल, समरकें रइयो बिट्टू।।
मौंसे मेंपर घंई ''सनेही'' मीठौ बोलें,
भीतर मैलइ मैल, समरकें रइयो बिट्टू।।

(3)

जाँ देखौ ताँ आज, दार में कारौ है।
होय काउ कौ राज, दार में कारौ है।।
भृष्टाचारी, दन्द-फन्द में जो माहिरे,
बेई बने सरताज, दार में कारौ है।।
हत्या, लूट, डकैती, कर बेदाग बरी,
बची न कौनऊँ खाज, दार में कारौ है।।
करे घुटाले ऐंन पकर गए जेल गये,
तोउ न आई लाज, दार में कारौ है।।
आग लगाकें खुद पानी खाँ दौर परे,
का नोंनों अंदाज, दार में कारौ है।।
मुखिया के जो रये ''सनेही पिछलगू,
गिरी उनइँ पै गाज, दार में कारौ है।।

-सरानी गेट के बाहर, छतरपुर (म.प्र.)

*****

बुन्देली की कहानी- ओइ की जुबाई

–मनोज सोनी

भारत देश के बीचऊँ बीच की धरती कौ एक बड़ौ हैंसा (हिस्सा) बुन्देलखण्ड के नाव से जानों जात, जा बात अपुन सब खों पतौ है। अपुन जा सोऊ जानत कै जौ बुन्देलखण्ड उत्तर प्रदेश औ मध्य प्रदेश के करीबन 27 जिलन में फैलो है जिनमें बुन्देली बोली जात रई। अपनी ऊ बोली की जा हालत हो रई कै धीरें-धीरें उये बोलबे बारे घटतई चले जा रये। मोय मन में ई बात की चिन्ता बनी रात, सो एक रात कें बुन्देली बर्राटन में साच्दात हो कें जो कछू बोली बा मैं अपन सब सें कन चाउत। चाय जा कैलो कै बुन्देली बोली की बिथा कौ बौ बतकाव बुन्देली के सब जनवन सें कन चाउत। बा बोली कै बुन्देली के बड़े-बड़े जनवा कत कै बुन्देली खड़ी बोली से भौत पैलऊँ की भाषा आय और जा भौतऊ मीठी या गुरीरी लगत। जब लिखबे कौ काम शुरू नईं भव तो ऊ बेरां बुन्देलखण्ड के सबई नन्ने-बड्डे मोइये बोल-बोल कें आपस में बतकाव करतते। ऐसई बृज के बसइया बृज भाषा में औ अवध के बसइया अवधी में बतकाव करतते।

जब लिखबे की शुरुआत भई तौ बृज और अवधी में पैलऊँ कवता-कानियाँ लिखी जान लगीं। फिर बुन्देली में सोऊ आल्हा जैसी कवताएँ औ किस्सा लिखे गये। ऐइ बीचां खड़ी बोली या हिन्दी कौ जनम भऔ। ईमें ऊपर बताई तीनऊँ भाषन के संगै कछू और भाषा-बोलियन के सबद (शब्द) लैकें बोलो व लिखो जान लगो। धीरें-धीरें हाल जौ भव कै पैलऊँ की भाषा बोलियन कौ महत्त घटन लगो और खड़ी बोली कौ महत्त ऐसौ बड़ो कै ऊने आदे सें जादाँ उत्तरी देश पै कब्जा कर लऔ। ईखों हिन्दी कन लगे। सबरौ लिखबौ-पड़बौ हिन्दी में हौन लगो सो ऊ कौ साहित्य दिन दूनों रात चौगुनौ बड़न लगो। जौ देख कें बुन्देलखण्डियन खों सोऊ मोरी बुन्देली भाषा में लिखबे कौ सौंक चर्रानों। परनाम जौ भऔ कै बुन्देली भाषा की कवतन औ किसा कानियन की पोथी (किताबें) सोऊ धड़ा-धड़ छपन लगीं। मोय भाई नौनों लगो। बुन्देली के जनवन ने बुन्देली भाषा की व्याकरन, सबद कोश और इतहास सोऊ लिख डारे। बोलबे, लिखबे-पड़बे व छपने की खूब तरक्की भई।

देश की सुतंत्रता के बाद सेहरन और गाँवन-खेरन में स्कूल खुलत गये सो लरका-बिटियाँ पड़न लगे। स्कूलन में हिन्दी और अंगरेजी पड़ाई जात सो सब हिन्दी सीकन लगे और बेई बोलन लगे। बीच-बीच कछू अंग्रेजी के सबद सोऊ बोलत। पड़े लिखे मौड़ा-मौड़ी बुन्देली बोलबो भूलत गये, काय कै बुन्देली बोलबे-लिखबे पै गुरू जी नाराज होत। जौलों गाँवन के बिना पड़े-लिखे आदमियन और जनी मांसन की गिनती बड़न लगी उर बुन्देली बोलवे वारन की गिनती घटन लगी। गाँवन सें मजूर बड़े सेहरन में मजूरी करवे जान लगे सो बे सोक बुन्देली छोड़ हिंगलिश (हिन्दी+इंगलिश) बोलवो सीक गये। रई-खुरी कसर टी.वी. ने पूरी करी जीसैं हिन्दी सोऊ अंगरेजी के अक्षरन में लिखी तक जान लगी। अंग्रेजन की नकल करबे में खाबौ-पीबौ, बोलबौ-चालबौ और सबई कछू बदल गऔ। अब बुन्देली खों को पूँछत? और तौ और अब हिन्दी में पड़वे की जाँगा गाँवन-गाँवन तक में अंगरेजी में पड़ावे बारे स्कूल खुलत जा रये। अब हाल जौ है कै सेहरन और कसबन में हिन्दी कै संगै बुन्देली के सबद बोलवे बारे नाव के लाने रै गये उर गाँवन में पुराने आदमी व जनीमानस कछू हिन्दी और कछू बुन्देली बोलत। मोय अब ऐसौ लगन लगो कै भौतउ जल्दी बौ समै आबे बारौ है कै बुन्देली बोलवे बारे निर्दुेंअईं न बचें। और तौ और बुन्देली में लिखबे बारे और बुन्देली की तरक्की की बातें करबे बारे सोऊ हिन्दी में बतकाऔ करत दिखात। अबै अबै बुन्देली के शब्दकोश, व्युतपति कोश, इतिहास बगैरा की जौन पोथीं लिखीं गई उनकी भूमकायें, प्रकाशकीय, लेखकन की अपनी बातें आदि भी खड़ी बोली में लिखे गये। मतलब जौ कै मो बुन्देली की बड़वाई औ बुन्देलखण्ड के बारे में सबई कछू हिन्दी में लिखो जा रओ। अपन विद्वनन द्वारा पोथीं और पत्रकन में मो बुन्देली के बारे में जौन लिखो जा रओ ऊसें कछू तसल्ली तौ होत कै बुन्देली कौ नाव सैकरन सालै चलै। एक कवता की दो लैनें हैं कै-

इतिहास का आदमी बहुत बोलता है,
क्योंकि आदमी को मुर्दे से तौलता है।

मतलब जौ कै इतहास और सबई विषयन की किताबन में जो सैकरन और हजारन साल पैलऊँ लिखो गओ बौ मुर्दा जैसौ धरो है। जो जिनदा है बौ तौ बोलत हैं। जी भाषा के बोलबे बारे न रै जैं बा तौ मुरदा जैसी पोलिथिन भर में परी रैहै। मो बुन्देली के बोलबे बारन की दिन पै दिन घटत रई तादाद देखकें मन में कल्लौनियाँ लगी रत।

अपुन बुन्देली के सब जनबन और विद्वानन सें मोरी जेई विनती है कै अपन जितनी मैनत मोरे साहित्य खों बड़ाबे के लाने कर रये ऊके संगै-संगै बुन्देली बोलबे बारन के बचाबे औ बड़ावे के लाने सोऊ करौ तौ मोय भाई खुशी हुइये। आँगन-ताँगन बुन्देली मेला, बुन्देली साहित्य सम्मेलन व मानक बुन्देली कौ बतकाऔ देख- सुन के मोइ बाँछें कछू समै के लानें खूबई आ खिल जातीं। मोरे मन में तौ जा लगी रत कै मानक बुन्देली की बात तबे नौनीं लगै जब पैलऊँ बुन्देली खों बचाबे या जिन्दा रखबे की कोशिश होबै। बुन्देली संस्कृति सोऊ जबईं बचै जब बुन्देली भाषा बचै। मैं जा सोऊ जानत कै अपन सब के मन में सोऊ जा बात सालत रत। बुन्देली मेलन में बुन्देली बोलबो, बुन्देलियन कौ खाबौ, पैरबौ, गाबौ-बजाबौ, खेलबौ, कूँदबौ, नचबौ, सबई कछू कौ मजा मेला में आबे बारे खूबई आ लेत। प्रतयोगतन में भाग लैवे बारन खों इनाम-इकराम और साहित्यकारन खों सम्मान उनें और अच्छौ करबे व लिखबे कौ होंसला देत। पै जौ सब मेलन के भागीदारन तकई रौ जात। पूरे बुन्देलखण्ड खों ईकौ लाभ मिलै जा कोशश अपन सबखों करने पर है।

मोरी मंसा जा है कै इन मेलन और सम्मेल्लनन में बुन्देली खों बड़ाबा दैबे बारे कामन कौ बतकाऔ होबै और बौ बतकाऔ अकेलौ बतकाऔ न रबै। ऐसे कारज करे जाबें जी सें पूरे बुन्देलखण्ड में बुन्देली बोलबे बारे बड़ें और उनके मन में जा बात जम जाबै कै हमें अपनी मातृ भाषा खों भूलनें नइयाँ। आपस बुन्देली बोलबे में सरम न लगै। ईसें मोय तौ साता परै अई अपन सब खों सोऊ अपनी मैनत पै गरब हुइये। मैं अपुन सें जा कन चाउत के सिन्धी और पंजाबियन खों अपनौ देश छोड़े सत्तर साल हो गये और बे हिन्दी बोलवों सीक गये, पै

आपस में अबै अपनी अई भाषा बोलत। जाँ तक मैं जानत तौ उत्तर प्रदेश और मध्यप्रदेश खों छोड़कें देश के सबई प्रान्तन में उनके क्षेत्र की भाषा बोली और पड़ी जात। ऐई सें उन सबकी भाषायें जिन्दा हैं। अबै लों जो भऔ सो भऔ। बुन्देली पड़ाबे की कोशिश सोऊ भईं पै कामें नईं आईं। उत्तर प्रदेश और मध्यप्रदेश जैसे बड़े राज्यन में जितै कैऊ तरा की बोलीं बोली जात होबैं उतै बुन्देली में पड़ाबौ तो साँसऊँ मुश्कल है। इतनौ हो सकत कै हिन्दी के संगै बुन्देली की एक पुस्तक सह भाषा के रूप में पड़ाई जा सकत। जौ काम सोऊ आसान नइयाँ, पै कोशश करे सें का नईं हो सकत। ई काम के लानें अपन सब साहित्यकारन खों पूरे मन से पिठियाँ शुद्ध होकें लगे बिना जौ काम नईं हो सकत। जौ जब हुइये, तब हुइये पै कछू काम तौ अबै भी ऐसे करे जा सकत जी सें लरकन-बिटियन कौ ध्यान व रुझान बुन्देली बोलवे पड़बे की तरप जाबै।

बुन्देली संस्थान की तरफ से स्कूलन में बुन्देली में बाद-बिबाद, निबंध, कविता, कहानी बगैरा लिखबे की प्रतियोगिता कराई जा सकतीं और बच्चन खों इनामें दईं जाबें। जो काम बुन्देली मेलन में तौ होइ सकत। जैसें राष्ट्र भाषा समिति म.प्र. में करत है। दूसरौ काम जौ हो सकत कै बुन्देली संस्थायें दान दातन की मदद सें स्कूलन में बुन्देली भाषा में लिखीं कवतन और कनियन की छोटी छोटी पुस्तिकायें बँटवायें जिनें पड़कें बचचन को मन बुन्देली की तरफ खिंचबै। झाँसी में विश्वनाथ जी शर्मा शिक्षा के क्षेत्र में अबै जो काम कर रये बे तौ बड़ी आसानी सें जौ काम खुद कर सकत कै कौनऊँ संस्था के संगै मिलकें कर सकत।

एक काम जौ हो सकत कै हमाये क्षेत्र के नेता अपने क्षेत्र में बुन्देली में भाषन देवें। ईकौ भौत असर छोटे-बड्डे सबई पै हुइये, कायकै लरकन खों नेतन की नकल करबे कौ सौंक है। ईके लाने सोऊ पहल साहित्तकारन खों नेतन खों समझांके करने परै। नेतन खों समजाबौ बड़े साहित्यकारन के बस की बात है। बुन्देली भाषा से संबंधित जौन सम्मेलन होबैं उतै सबरो बतकाव बुन्देली अई में होबै। हिन्दी औ अंगरेजी के कारन बुन्देली बोलबे बारे खों आदमी गमार कन लगत, ईसें जो बोलन भी चाय तौ नईं बोलत। कजन्त की दारै घर में सब जनें आपस में बुन्देली बोलें तौ काऊ खों झिजक न हुइये। बुन्देली कौ भलौ चाबे बारन खों अपने घरन में ईकौ उदाहरण दव चइये। अगर अकेलौ कोऊ बोलन भी चाउत तौ घर बारे उए झिड़क देत। जो जानत हैं बे सोऊ भूलत जात। जैसें धरे लोय खों जंगाल लग जात ऐसऊ बुन्देली के संगै हो रऔ।

अपन सब मिलकें सोसौ तौ न जाने कितनें तरीका बुन्देली बोलबे खों बड़ाबा दैवे के निकट आयें। अगर सब जाँगां के बुन्देली मेलन के कर्ताधर्ता कभऊँ-कभऊँ इकट्ठे बैठकें ईके बारे में बतकाऔ करकें उपाय निकारें और मिलकें हल करें तौ ऐसौ नइयाँ कै बिगरत बात न बनै। कन लगत कै गाँय-गाँय ब्याव हो जात सौ जरूरत गावे की है। सब जनें ठान लेबें तो का नईं हो सकत पै जरूरत ठानबे की है। सो मोरी विनती पै अपुन सब खों विचार आय करनें। मोरी जा कथा ओइ की अर्जी मानी जाबै।

–राजमहल के पास, टीकमगढ़ (म.प्र.)

*****

तीन बुन्देली गज़लें

–डॉ. राघवेन्द्र उदैनियाँ ''सनेही''

(1)

कसाकसी में वारौ काँहै।
मैंगाई कौ चारौ काँ है।।
जीखाँ जो कानें सो कै रओ,
उनके मौं पै पारौ काँ है।।
भलें कछू ए.सी. में सो रय,
सबकौ इतै गुजारौ काँ है।।
सबई तरा की जाँचें चल
कऔ दार में करौ काँ है।।
जीनें लठ्ठ धुँआँ में मारो,
ढूँडौ तौ ऊ सारौ काँ है।।
घर के सबरे नोट खंगर गए,
बक्सन में अब तारौ काँ है।।
बड़ो-चड़ो जोंन ''सनेही''
ऊखाँ और उतारौ काँ है।।

(2)

दुनियाँ बड़ी धुकैल, समरकें रइयो बिट्टू
पौंचा दैहै जैल, समरकें रइयो बिट्टू।।
इतै एक सें एक खलीफा, मुल्ला काजी,
मीठे और गुडैल, समरकें रइयो बिट्टू।।
आबड़ में पर जैहौ जिदना, पछतैहो फिर,
भगें न मिल है गैल, समरकें रइयो बिट्टू।।
चरकें चारौ ऐंन दलाँकत-फूँसत फिर रए,
जे बैला गर्रेल, समरकें रइयो बिट्टू।।
नागनाथ और सांपनाथ हैं एकइ जैसे,
सबके सबइ बिसैल, समरकें रइयो बिट्टू।।
मौंसे मेंपर घंई ''सनेही'' मीठौ बोलें,
भीतर मैलइ मैल, समरकें रइयो बिट्टू।।

(3)

जाँ देखौ ताँ आज, दार में कारौ है।
होय काउ कौ राज, दार में कारौ है।।
भृष्टाचारी, दन्द-फन्द में जो माहिरे,
बेई बने सरताज, दार में कारौ है।।
हत्या, लूट, डकैती, कर बेदाग बरी,
बची न कौनऊँ खाज, दार में कारौ है।।
करे घुटाले ऐंन पकर गए जेल गये,
तोउ न आई लाज, दार में कारौ है।।
आग लगाकें खुद पानी खाँ दौर परे,
का नोंनों अंदाज, दार में कारौ है।।
मुखिया के जो रये ''सनेही पिछलग्गू,
गिरी उनइँ पै गाज, दार में कारौ है।।

–सरानी गेट के बाहर, छतरपुर (म.प्र.)

*****

प्रेम न होय बिना चमचोंई

-सुरेन्द्र नायक

अथ श्री चमचोंई कथा प्रथमोऽध्याय: शुभारम्भ:। जय होए गोरियन की।

देखो लल्लू, अपुन कौनऊ लेखक-वेखक तो हैं नइयां। ऐसेंई कभऊं-कभऊं उठाईगिरि कर लेत। आजईं एक जने को फोन आओ। वे बतान लगे के कौनऊ बुंदेली पत्रिका निकर रई। हमने कई के हमें बुन्देली का आत? सो वे मार बतखाव करन लगे। बोले, के माटी को करजा सोऊ होत, जो काए भूल रए? जैसो बने, तैसो लिखो। लेकिन लिखो। करजा से उरिन हो पाओ, न हो पाओ, लेकिन तुमाओ जी तो हलको हो जे, के तुमने कोशिश तो करी। औरऊ निरे जने हैं, बेऊ का पबार रए? जिनसे जित्तोबन जाए उत्तो करो, तभईं अपनी बुन्देली बोली आगे बनी रय पे।

भैए, एक भीतर की बता और बताएं। हमाए पाठक सोऊ महा उचक्का हैं। वे हमें लेखक तो नईं मानत लेकिन तफरी के लानें हमाई उचक्कयाई खूब चटखारे लें-लेकें पढ़त। पाठकन की बुरी नोनी सुनत-सुनत हम सोऊ खूबई बेशरम हो गए। लाद लई, बाय लाज काय की। उपन्यास लिखत-लिखत जी पक गओ तो किस्सा लिखन लगे, नौटंकी लिखन लगे, कछू और बतखाव लिखन लगे, जिन दिनन कछू न पबार पाए' उन दिनन दूसरन की किताबन की समीक्षा लिखन लगे। दूसरन को खरी-खोटी सुनाबे में अपनो का जा रओ? कहत हैं के भागे भूत की लंगोटी भौत। सो अगर दो-चार पाठकन ने फोन पे हमाई फजीहत कर दई, बई बहुत। वैसेऊं लेखकन - वेखकन कों कौऊ कुबेर को खजानो तो दे नईं दओ।

एक बात हम तुमें पेलेंई बताएं दे रए। नईं तो तुम बाद में हमाई थुक्का-फजीयत करो। जो लेख हमने नईं लिखो। तो तुम पूछ हौ का जो चोरी को है? सो चांए तुम हमसें गंगाजली उठवा लो, चांए गीता की कसम खबबा लो, जो चोरी को सोऊ नइयां। अब तुम सो हो के मास्साब कहां पढ़ात हुएं? तो हम तुमे बताएं दे रए। मास्साब सरकारी मास्टर नइयां। जो तो उनको बैक पर गओ काय से वे शिक्षा बहुत देत। वे स्कूल में तो वेसे ऊं नईं पढ़ा सकत, काए से वे तो अंगूठा छाप हैं। अब तुम पूंछ हो के वे अंगूठा छाप काय रय गए? असल में भओ जो के जब वे छोटेई हते, तभईं एक दिना उनके स्कूल के हैड मास्टर साब ने उनसें पूँछी के लला तुम के भइया-बैन हो? सो तुमने बताई, बारह। हैड मास्टर हक्को-बक्को रय गओ। बा ने फिर पूँछी, लला तुमाए बाप का करत? सो उनने तुरतईं बता दई, जोई करत। हैड मास्टर साब गुस्सया गए और उनने मास्साब को स्कूल की शक्ल नईं देखी।

लेकिन उनें मास्टर बनबे को नशा तो हतोई, और बे पढ़े हते नईं। सो उनने आठ-दस रडुआ-भडुआ चेला चपाटे पाल लए और खुद की कोचिंग खोल लई- 'लुगयाई, छिनरयाई और इश्कयाई - तीन महीने में गारंटिड सफलता वरना पूरी फीस वापस।' वे समझाउत ऊ बहुत बारीकी से हैं। प्रेम तीन तरीका को होत। पहलो लुगयाई। जो अपनी लुगाई या मुहल्ला पड़ोस की लुगाइयन से करो जात। लाल चुनरिया में सब दाग छिप जात सो कोऊ शक नईं करत। जासें जामें कछू डर नईं रहत। कौन कोऊ डी.एन.ए. टेस्ट करा रओ? दूसरो है छिनरयाई। मोड़ी राजी नइयां और तुम लगे ऊको बेर-बेर छेड़बे। जा में पन्हइयन और सैंडिलन को डौल पक्को आय धरो। तीसरो है इश्कयाई जो प्रेम को सिरमौर है। दोनों तरफ हो आग बराबर लगी हुई। फिर काय को डर ? तोऊ सावधानी तो रखनेई परत, के कोऊ लपटा-झपटी करत न देख ले। अगर पकर गए तो हो सकत कोऊ खुदईं जुतया दे या घरे शिकायत जड़ दे।

तो लल्लू, हमने मास्साब की नामवरी तो बहुत सुनी ती लेकिन देखी नई हती। ऐसे महापुरुशन के दरसन तो बड़े भाग से मिलत। लेकिन परसों-नरसों भओ का। संजा हती। हम अपयें चौंतरा पे बैठे हते। तभईं हमने देखों के एक डुकरा चिल्लात चलो आ रओ, 'नाश मिटे, तुमाई ठठरी बंधे, डुकरा कों मारत में शरम नईं आई।' हमने उने पुचकारो, 'बब्बा' तुमाई मुड़ी सें तो भल्ल भल्ल खून बह रओ। तनक हिरकें बैठो तो हम धजी बांध दें। ई बिरिया डाकदर तो मिलहे नईं।' उनने गारी देबो तो बंद कर देओ लेकिन 'हाय राम! हाय राम!' इल्लान लगे। बई बेरा हम भीतर सें अपईं नंबर एक वाली लुगाई की पुरानी धुतिया से एक चौंड़ी धजी फार लियाए और बब्बा की मुड़ी बांध दई। बब्बा की नाक सोऊ बहुत औगुनी हती। बा तुरतईं समझ गई कि जो उन्ना कौऊ लुगाई को पहनो भओ है। जो तो बाकी बासई से पता चल रओ तो। फिर का हतो। बब्बा को तुरतई आराम मिल गओ और उनको कांखबो- कूलभो बंद हो गओ।

ई के बाद हमने डुकरा सें पूंछी, ''काए बब्बा, तुमाए उन्ना कैसें फट गए?, डुकरा बात टारत भओ बोलो, 'इश्कनें हमसे अस करी, जस अरहूं न कराए। मसखरी भौजी करें, और देवर पिट जाए।' ई बात सें हम इत्तो तो समझई गए के डुकरा कौनऊ पहुंचो भओ कवि है और केशव दास जी को चेला है लेकिन अपओं नाम नईं बता रओ। हमने फिर टोंचिया लई, ''बब्बा तुम को हो? कौन गांव के हो?' डुकरा मुसकियाओ, ''लला, बहुतईं चतुर बन रए। का हरें हरें सबई पूछन चांहत?'' हमाई भौजाई सोऊ बड़ी रसिया हतीं। वे किवारन के पछांई खड़ी खड़ीं हमाई सबरी बातें सुन रईंतीं। उने डुकरा की बातन में मजा आ रओ तो। सो उनने अपईं मोड़ी के हाथन डुकरा को एक कप चाय भेज दई। डुकरा ने हालईं अपनो पतो ठिकानों बता दओ,'' इश्क ने मास्साब कों नंगो कर दओ। वैसे अपनीयंऊ उन्नालत्ता की दुकान दती।' हमऊं होशियार तो हतेई। सो हम समझ गए के गालिब को जो चेला और कोऊ नइयां बल्कि साक्षात् मास्साबई हैं। हमने तुरतईं उनके पांव पकर लए और फिर चरनन में लोट पोट हो गए, ''मास्साब, हमऊं को अपनो चेला बना लेओ।'' अंधो का चाए, दो आंखें। सो मास्साब ने हमें अपनो चेला बना लओ।

जाके बाद हमने मास्साब की गहराई नापबो शुरू करो, ''मास्साब, तुमाई खुपड़िया कैसें फूटी ती?'' मास्साब तनक उदास हो गए लेकिन बता सो दई, ''लला, का बताएँ? बड़ो बुरो जमानो आ गओ। हम एक तेरहीं में गए ते। उतै भटा की सब्जी सोऊ बनी हती। खाओ भटन सें, न खाओ भटन सें। और नईं तो फिर कद्दू सें। मोय भटा बैसेंई औगुन करत सो मोय भटन से कछू मतलब सोऊ नईं हतो। फिर भओ जो के उते एक मोड़ा शहर में रय कें आओ तो। ऊँ भटन को बैंगन कहत तो। सो ऊने भटा परसबो शुरू करो, ''बेगम ले लो, बेगम'' अब मोय का पता हतो के जो मोड़ा हकलात है सो बैंगन कों बेगम कर रओ। मोंने सोची के जो बड़े आदमियन को मामला है सो दच्छिना में दस के नोट के संगे एक-एक जनी सोऊ बट रई। पैलेऊं तो अपने इते राजा महाराज रिसियन मुनियन को अपनी मोड़ी दे देत ते। सो हमऊं ने टेर लगा दई, 'बेटा, एक बेगम हमऊं को।'' हमाओ बोलबो भओ और बई बेरा कछू बाहरी मोड़ने ने हमाई कुदच्छिना कर दई।''

बोलत-बोलत मास्साब की आंखें भरियाईं। सो हमने मास्साब खों तसल्ली दई। मास्साब, जामें कछू खास बात नइयां। कभऊं कभऊं बोली-बानी में जीभ सरक जात, या कभऊं कभऊं समझबे को फेर हो जात, सो जो तो होनेई हतो। हमईं जाने के बेर ऐसेंई कुटे पिटे लेकिन हमने अपयें आचरन और इज्जत पे आंच नईं आन दई। हमाई नाक का सूपनखा की नाक है जो तनक सी थू-थू में ई कट जाए। हमाई नाक तो नेतन जैसी है। जब हेई नइयां तो कट है का?

हमने मास्साब की चेलियाई का लई के वे तो हेकड़ी पे उतर आए। उने अपएँ कारनामा याद आन लगे। वे बोले, ''बेटा अभे तुम हमाए नए-नए चेला बने हो सो हमाए गुन-अवगुन का जानो? कछू दिनन में तुम सबई जान जेओ के हम कित्ती ऊँची चीज हैं। अभे परसालई की बात है। एक चेला की चिट्ठी-पाती नईं पहुँच पा रई ती। हमने बाय तसल्ली दई। जा कौनऊ नई बात नइयां। जा दिक्कत तो पुराने जमाने मेऊं होत ती, 'खत कबूतर किस तरह ले जाए बाम-ए-यार पर / पर करतने को लगी हैं कैंचियां दीवार/ तब उस्ताद ने जुगाड़ बताईती, 'खत कबूतर इस तरह ले जाए बाम-ए-यार पर/ पर पर पर हो संदेशा, पर कट गिरे दीवार पर/' तो बेटा हम काम में अकल लगत। हमाए कए सें चेला ने अपईं माशूका कों एक मोबाइल फोन दे दओ। सोई खूब गुटरगूं होन लगी। कछू दिनन बाद दोऊ जनन को अलग-अलग ब्याव हो गओ। सो सब टंटो अपएं आप खतम हो गओ। जा बात छोड़ो। जई जोड़ को किस्सा सुनो। हमाए एक चेला को नओ नओ ब्याब भओ और बोऊ पैलो पैलो। सो बाए जादा सहूर तो हतो नईं। पैली पैली रात हती और ऊके दोस्तन ने बाए दो घूंट पिबा दई। बो टुन्न होकें आधी रात में अपईं दुल्हन के पास पहुंचो। ऊकी दुल्हन मुस्का कें बोली, ''बहुत देर कर दी मेहरबां आते आते/ न सोचा तेरे बिना दुनिया से जा रहा कोई/'' शेर-शायरी तो चेला के बाप कों पता नइ हती सो चेला सकपका गाऔ और चिमाई मार कें सो गओ। दुल्हन तो वैसेंऊ रूंआसी हती। बाए अपएँ मैके वाले यारन की याद आ रई ती। सो वऊ करवट लें के लेट गई। दूसरे रोज हमने बा चेला को जवाब सिखा दओ सो ऊने अपनी दुल्हन से के दई, ''गुजार दी जिन्दगी तेरे इंतजार में/ऐसे भी हैं कट न सकी जिनसे एक रात/'' फिर का हतो? दुल्हन खूब खिलखिला के हँस परी। जऊ बात छोड़ो। अभे नओ नओ किस्सा है। हमाई साख तो वैसेंऊ नोनी नइयां। जनीं तो अपुन से ऐसें डरातीं जैसे हमाई बातन सेंई उनको पेट रय जे। लेकिन अटकें भीरें काम तो हमईं से परत। सो एक नई दुल्हनिया हमाएं नियरें चोरी छिपे आई और अपनो दुखड़ा रोन लगी, ''मोय छोटे मिले भरतार। जवानी कैसे कटे।'' सो हमने बाए मुफत को टुटका थमा दओ, 'का पड़ोसी सबरे मर गए/गांव में नइयां छिनरा/तोए छोटे मिले भरतार/जवानी ऐंसे कटें/' अब जा तो बऊ जानत हती के हमाओऊ कोऊ धनी धोरी नइयां, वैसे करीं तो चार-चार हतीं लेकिन सब चिरैयां नाईं फुर्र हो गईं। सो ऊने चलत-चलत हमऊं कों मुस्का कें इशारो पर दओ। मास्टर और डाक्टर की फीस कोऊ नईं मारत। कहूं दुबारऊ तो काम पड़ सकत। हो सकत जे ऊकी खाली मन भरबे की बातें होंय। लेकिन इते तो बासी कढ़ी में उफान आन ई लगो। साठा सो पाठा। घोड़ा और मरद कभऊं बूढ़े नईं होत। सो हम खूबई खुश हो गए के अथ गोरी की सैकड़न की लिस्ट में कहूं हमाओ नाम लिख जे। हाय भगवान! हमें का पतो हतो के हमाए तो करमई फूटन वाले हैं। भओ जो के ऊकी सास कों जा बात की भनक लग गई और बा हमाए पीछें पर गई। बूढ़ी घोड़ी, लाल लगाम। हमाई तो इज्जतई लुटत लुटत रय गई। ऊके नखरे तो देखो। मोंसे नैन मटक्का करकें गान लगीं, 'बारा बरस की जा बारी उमरिया/ उस पे ये सोला सिंगार रे/रूप ऐसा कि डोल जाए, डोल रसिया/ बोल क्या देगा तू इसका मोल रसिया? ऊके बाद हमऊं गुस्सया गए सो सीधी के दई, हमाए पास का है? तनक बहुत इज्जत बची हती सो तुम बऊ लएँ लें रईं।''

मास्साब को बखान तो खतमईं नईं हो रओ तो। सो मोने पलटी खाई, ''मास्साब तुम तो पहुंचे भए गुरू घंटाल हो। तुमाई महिमा की का कहने, गुरू ब्रह्मा, गुरू विष्णु ....। तुमई जैसे घुटे घुटाये बावन के लाने काऊ ने कई है, हरि अनंत, हरि कथा अनंता।'' हमाई चमचोंईं से मास्साब उलटे हमाए चरणावनत हो गए। तुरतईं बोले, ''बेटा, कलम पाटी पूजा आजईं हो जाए जासें तुमाई पढ़ाई लिखाई को हरजा न होय।'' जब हमने हामी भर दई तो उनने हमाओ ज्ञान परखो, ''बेटा बारह खड़ी से शुरू करें के ओलम सेंई शुरू करने पर? '' दाई सें पेट का छिपाने सो हमने सच्ची सच्ची रान दई, ''मास्साब, शुरू तो ओलम सेंई करने पर। भओ जो, के हमाओ बारी उमर मेंई ब्याव हो गओ। जो तो सबई जानत के खसम लुगाई में कित्तो प्रेम होत और कित्तो लट्ठम-लट्ठा? भओ जो के हमाए कक्का जनमजात खानदानी रड़ुआ-भड़ुआ हते। मतलब उनके बाप नई उमर मेंई रड़ुआ हो गए ते और कक्का के सगिया तक नईं आएते। ऊ कक्का ने मोय पहलेंई समझा दईती, के बेटा, जोन से प्रेम करियो बा से ब्याव न करियो और जोन से ब्याव करियो बा से प्रेम न करियो। अपुन के पास कौनऊ सरकारी कोटा की दुकान तो है नइयां। चाएँ जो कोऊ मों उठाए चलो आए, बाए ड्रम में से निकार कें दस-पांच लीटर प्रेम दे दो। अब तुमईं बताओ, अगर अपुन कों कौनऊ नोनी भौजी मिल जाए के चिकनी चुपड़ी साली मिल जाए, के छैल छबीली पड़ोसिन मिल जाए, तो का बाए अकेले को पूरो प्रेम दे देओ? फिर और इते उते का देओ? और फिर घरे का देओ, घुइयां? हमाए तो भाग्य खराब हते सो कछू सीखबे को मौकई नईं मिलो। 'तुलसी गाए बजाए के, देत काठ में पांव।' सो बा कंठा में फंस के हमाई टांग ऐसी टूटी, के आज तक नईं जुड़ी। तुमईं बताओ, हम एक पांव सें चौकड़ी कैसें भरें?''

हमाई राम कहानी सुनकें मास्साब हिलकी ले लेंके रोन लगे। बीच-बीच में वे हमाई पीठ पें हाथ फेरकें समझात रए, ''धीरज रखो बेटा, सब ठीक हो जे। अभे तुम कौन बूढ़े हो गए? जौन ने चोंच दई सो चुगो देहे। हमाए फंचोटा में तुम देर सें फंसे। अब देखों हम तुमें का का सिखात? फिर गोरियंऊ चक्कर काट और छोरियंऊ, लुगाइयंव चक्कर काट और भौजाईयंव, सालियंव चक्कर काट और सरहजंऊ।''

तनक देर में मास्साब की हिलकीं रुक गईं और बे बंदरा घांई मुस्कान लगे,

'' देखो बेटा, जामें हमाई तुमाई उत्ती गलती नइयां जित्ती पुराने आदमियन की है। बे कहत रए, 'सिर्फ एहसास है, इसे रूह से महसूस करो/हाथ से छू के इसे रिश्तों का इल्जाम न दो।' और महसूस करत करत बीचई में कितऊं ब्याव हो गओ। सोई रोन लगे 'वक्त ने किया, क्या हसीं सितम/हम रहे न हम, तुम रहे न तुम/' अब अगर उनने आज को इश्क कमीना और बेवफा सनम देखो होतो तो सीधी कहते, इशक विशक हम जानत नइयां इतना करूं इशारा/इशक करो तो आए जइयो जब बजें रात के बारा/' जा के बाद ब्याव चांए जिते होतो लेकिन जो रोबो तो न होतो। मन में जिन्दगी भर मीठी मीठी गुदगुदी रहती सो अलग। अगर माशूका कौनऊ बड़े आदमी की मोड़ी होती तो छाती खोलकें ठोका की कहते, 'जहां में कैश जिन्दा है, तो

लैला मर नहीं सकती।' और ऊसे ब्याव कर लेते। जाके बाद निठल्ले आशिक को घर जमाई तो बननेई है, नईतो मोड़ी को का खबे? घर जमाई की औकात भले कुत्ता घाईं होत लेकिन जो कौन कम है के बड़े आदमी के घरे कूकर घाईं भूंकबे को मिले? अगर माशूका जोरू बनके आशिक के घरे आ गई तो आशिक को मरबो आय धरो। मोड़ी मायके में रानी हती, ब्याव के बाद लक्ष्मी बनकें गई। अब ऐसे में बाय अगर गरीब माशूक के घरे काम वाली बाई के घाईं काम में जुतने परे तो बा तीनऊ संस्कार दिखा कें रानी लक्ष्मी बाई सोऊ बन जे। फिर बा अपएं खसम को अंग्रेज समझन लग और ऊको खदेर-खदेर कें मार।''

मास्साब को बतखाब सुनत-सुनत हमाओ जी पक गओ सो हमने मास्साब से सीधी कई, ''मास्साब, इन बातन के लानें जिन्दगी परी, पैलें हमें बुन्देली को एक लेख लिखवा दो।'' मास्साब बोले, ''हओ, तो लिखो शीर्षक 'प्रेम न होय बिना चमचोंई।''' अपन तो सिटपिटा कें रय गए। हमने कई ''मास्साब, जो तो तुलसी दास की चौपाई लग रई।'' मास्साब इकदम गुस्सया गए। फिर बोले, ''अगर उने इत्तोई सहूर होतो तो काय को फिरते भटा के डेल भए? वे अगर चौबीसऊँ घंटा तनक शऊर से अपईं लुगाई की चमचोंई करत रते तो मजाल हती के बा उने घर से बिड़ार के भगा देती। हमऊं ने चार-चार ब्याव करे हैं। बे भले भग गईं लेकिन मजाल है के कोऊ हमें कूकर घाईं बिड़ार पाओ होए।'' मोय बड़ो अचम्भो लगो सो मोने पूछई धरी, ''मास्साब चार-चार कैसें भग गईं?'' मास्साब ने उसांस भरकें बताई, ''का बताएं लला। बे सबरी जई चौपाई की वजह से भग गईं। जा चौपाई तो हमने तब लिखी जब चारऊं भग गईं। परम ज्ञान का ऐसेंई हो जात?'' हमने फिर कोंचो, ''मास्साब, असली बात तो तुमने बताई यई नईयां। बे भग काय गईं?'' मास्साब उसांस लेंके बतान लगे, ''तब हमाओ पहलो पहलो ब्याव भवतो। बा बेरा हमें प्रेम इरेम को जादा शऊर तो हतो नईं। तुमाई गुरवाइन हतोयंऊ भौंतई सुन्दर। देह तो ऐसी गोरी पीरी हती जैसे मैदा की लोई होय। ऊकी नई उमर हती सो ऐसी गदरानी ती जैसे ताती मुलायम मुलायम लुचई होय। सो गांव के लफरन ने औ ऊके गांव के लबरन ने खुरखुंद कूदबो शुरू कर दओ। भौजी तुमाए गाल तो रसगुल्ला जैसे हैं, होंठ तो बिल्कुल जलेबी जैसे हैं, उनसे तो रसई टपकत। वो का कहत, 'लाले लाले ओंठवा पे चमके वा ललैया/, जैसे रस चुएला/ जैसे अमुआ के मोजरा सें रस चुएला/' प्रेम में का बुन्देली, का भोजपुरी? एकाद बेर हमने कहियऊ के तुम हमें कम टैम देतीं सो बा ने हँसके टार दई,'' मैं तोहे सँभालूं के जोवन बालमा।'' जों लों हम कछू समझ पाउते, ऊको जोवन काऊ और ने सँभार लऔ और बा ऊके संगे फुर्र हो गई। जब दूसरी घर वाली आई, बा हमें दुजिया-दुजिया के कें चिढ़ान लगी। ऊके मायके में मुलक गुंइयां हते। सो वे टैम-बेटैम आन लगे। हम खेत रखाते के जनी? सो बा उनके संग भग गई। ऊ के बाद तीसरी आई। बा हमें तीजिया कहन लगी। बऊ के मायके वाले निरे लग्गा भग्गा हते। बे हमाए लाने मिठाई लियात ते। जीजा शुद्ध घी है, घर के खुआ कौ। बे हमाए सामने तुमाई गुरवाइन सें जिज्जी, जिज्जी करत ते। बाकी हमें कछू पता नईं चलो सो बऊ भग गई। जाके बाद भाई चौथी। अब हम खूबई सावधान हते। मायके लबरन और मुहल्ला के लफरन को घुसबो हमने बिलकुल बंद करा दओ। जा हमें चौथिया नईं कहत ती, ऐसोई कछू और कहत ती। बा बात बताबे की नइयां। बा हती भौतई भली। ऊने हमें चेतावो हतो के कुत्तऊ बैठत तो पूंछ हिला कें बैठत। हम समझई नई पाए के बा मोंसे के रई के ऊके कुत्ता घाईं तलुआ चाटत रओ तो बा हमें कुत्ता घाईं पोट-पुचकार कें रख है और कभऊ बिड़ार कें नईं भगे। फिर भओ जो के पासई में हमाए एक ककयावतें भइया रहत ते। उनकी जोरू पहलेंई मर गइती। रिश्ते में बे हमाए बड़े भैया लगत ते सो टैम पास कों चांए जब हमाए इते आके बैठ जात ते। बे हमाए इते खूब पैसा-टका खर्च करत ते। लेओ, बहू के हाथ की चाय का छूंछे हाथन पी जात। बे जब तुमाई गुरवाइन कों आशीरवाद देत दे तो मुड़ी से शुरू करके पीठ के नीचें तक हाथ फेरत ते। जेठ बहू दोऊ समझत तें बारह महीना में एक महीना जेठ को सोऊ होत। जो लों हम समझ पाए बा जेठ के संगे बैठ गई। ऊके बाद हमने ब्याव को टंटो नई पालो लेकिन चमचोंई खूब सीख लई। अब छाती में तनक-भौत धुकुर पुकुर भलें रहत लेकिन इते-उते से मजे में काम चल जात। मतलब दूध पीबे सें है के अपईं गैयां पालबे सें? ''ई के बाद मास्साब ने लिखबाबो शुरू करो। मतलब मस्टरवा उवाच,'' वत्स! जा चमचाई की महिमा को बखान सकत? राजा साब, राजा साब के कें ठाकुर साब की मुड़ी काट लो। ऐसेंई, पंडित जी, पां लागें के कें पंडित जी की घिची काट लो। जोई हाल प्रेम में है। चमचोंई करकें चांए कछू पा लो। भगवान रामऊं को नभने परो तो। वे अपने ब्याव की बेरा इकड़े खड़े ते। एक तो भगवान, फिर राजा के पुत्र और ता पे ठाकुर। जब जनकपुरी की जनियन ने उने लोक रीति समझाइती, 'झुक जइयो लला रघुवीर/लली मेरी छोटी है/बिनती सुन रघुवीर पसीजे हँस के नभ दओ शीश/' जोई हाल भगवान कृष्ण को हतो। वे प्रेम में राधा के सामनें 'हा-हा' खात ते, तब राधा रानी 'हाँ-हाँ' करत तीं।' दो हा लिख सखि हाथ सें, भेजे कृष्ण प्रवीण/समझ राधिका अर्थ कों, चन्द्र बिन्दु रख दीन्ह/' जा चमचोंई एक तरफा हो सकत और दोऊ तरफऊ। कब किनकी अटकी? किने जवानी जादा चरी रई? जा में जादा चतुरई नईं करी जात/ 'दुनिया के खेले में पड़ना फिजूल है/दुनिया बई की है, जो डैमफूल है/' एक जगह को किस्सा है। जीजा को ससुराल में परें परें चार पांच रोज हो गए लेकिन साली से ढंग से बातई नईं हो पाई। सो जीजा अटैची उठाकें चल दए। ऊ दिना सास-ससुर को कटाई के लानें खेतन पे जाने तो। सोई साली ने इशारो कर दओ, 'जीजा, आज न जाओ, तुम्हें कौल है/ आज मंगोड़न को डौल है/' जीजा ने फट्ट अटैची नीचे धर दई। अब साली सलहजें मगोरी खबाएँ चाँए निबोरी, निबुआ चुसबाएँ चांए संतरा? कौन जीजा की औकात है के भग जाए/ईके बाद को किस्सा तो सबई जानत, ''राजा तेरी गोदी में पेड़ा बन जाऊंगी/ जब कभऊ भूख लगन लगे तुमकों/जलेबी समोसा रसगुल्ला बन जाऊंगी/' अब ऐसे में घर की कर्री पुरानी बासी बालूशाई किनें भा है? जाके बाद चलती बेरा साली-सलहज के उलाहने सुनो, 'तोबा तोबा, तबाही तबाही/ बेशरम जीजा कों लाज न आई/' सो भैया, जनी जो कहे सो मान लो/ अपनी अकल कभऊं न चलाओ। बा कए के गोबर डारयाओ, तो गोबर डारन लगो। बा कए के सानी करयाओ, तो सानी करन लगो। बा कए के पांव दबा दो, तो किबाड़ उड़का कें ऊके पांव दबान लगो। का अपएँ घर को काम करे में तुमाई इज्जत घट जे? चमचोंई करत रेओ तो सुख से रेओ। का फरक परत के लुगाई के कए से नाक रकड़ी, के खुदईं रगड़ी। नाम कटाबे से नाक रगड़बो जादा नोनो हैं। तिरिया हठ के आगें किनकी चलत, 'हुस्न अगर जिद पे आ जाए/तो इश्क की जां पे बन आए/' तुमने तनकई बात न मानी तो आफतई आय धरी/ कैकई ने दशरथ को का हाल करो तो? दशरथ के तो प्रानई चले गए ते। सो लला, अगर प्रेम से रहनें तो चमचोंई सीखो। मरदन के लानें तो जो और ऊ जरूरी है। चमचोंई के बिना प्रेमऊ बिरथा है और जीवनऊ। अथ श्री चमचोंई कथा प्रथमोऽयायः समाप्तः। आगे फिर का भऊं। बस गोरीं सदा सहाय करें तो जो तो होतई रे है। उने हमाओ पांव छूबो पहुँचे। बाकी मिलबे पे।

–प्रताप नगर कोंच,

जिला-जालौन (उ.प्र.)– 285205

*****

देश में अपुन खौं रामराज चानै है

– डॉ. लोकेन्द्र सिंह गुर्जर नागर

महान देश हिमवर्ष के भी सुख की तरफै जब हम देखत हैं, तौ लगत है कै हमाव देश और हमाये पुरखा महान हते। सम्राट दशरथ जू के समैं मैं देश कौ राज दज़ला–फरात तक हतौ उनकी राजधानी अजुध्या जू हती। उनके पाछैं भगवान श्रीराम जू राज आऔ। बई राज की उनहार कौ राज अब हम सब चाउत हैं। श्रीराम जू के पाछै श्रीकृष्ण जू कै अवतार भऔ। श्रीकृष्ण जू के पाछै देश कौ राज कैउ राजन के हातन मैं रऔ। हमाव इतिहास हिरा गव अंधकार काल कौ का पतौ हतो। एक और महान सम्राट कनिष्क भये– कनिस्क जुग कुआऊत है। जाके पाछैं हम सात–साढ़े सात सौ बरमिस तक कऊं मुसलमानन के कऊँ अंग्रेजन के गुलाम रये।

सन् 1947 में हमाव देश आजाद हो गब। जादेश के अब हम सब राजा हैं। आदमी तौ मरजात है पै विचार कऊं न कऊं जिन्दा बनो रत है। देश नै समय–समय पै अन्याव के खिलाफ लड़ाई लड़ी है। जइ लड़ाइ के जैन सम्प्रदाय और बौद्ध सम्प्रदाय हमारो सामें आये। राम–राज नइं आ सकौ। आजादी के पाछै गांधी जू के मन में विचार जगौ कै देश में रामराज आये चइये। भागीदारी के लानैं ग्राम पंचयातन की रूप रेखा खैंची। उनके पाछैं देश के नेतन ने ग्राम पंचायतै बनाई और ग्राम पंचायतो के चुनाव कराये।

पद, सत्ता, सम्पत कौ लालच अपनौ बड़ौ बुरौ रूप धरकै सामनै आ गब। ग्राम पंचायन के चुनाव में फौजदारी हौन लगी – हत्यायै हौन लगी– देश के नेतन के कान पैं जुआँ नो नइँ रैंग रओ। वे भूल गये कै गाँधी जी में गाँवन में खुशी के लानैं पंचायत की बात कई ती आज उल्टौ होन लगौ। उनै का कन्नै तौ उन्हें तो सोउ गुलाम चाइये ते सो दलगत नेतागिरी में गाँव गुलाम के रूप में आउन लगे। ग्राम पंचायत के चुनाव में सुधार की बात तौ दूर रई– एक और नहर कौ चुनाव गावन में उतार दऔ– जैसे शंकर जू ने दक्ष प्रजापति के जग्ग में नन्दी जू कौ पौचा दये ते। अब तौ गाँवन की हालत भौतउ खराब हो गई हैं। जो देखो तो विध्वंस–मार काट। कऊं गांधी आज सदेह होते तौ बे जानै का करते– का कर लेते?

खैर भइया हरौ हमाउ अपुन सब पढे लिखे साहित्यकारन सै जौइ विनती है कै आपकी कलम सै जा खराब ग्राम स्तर के चुनावन की बुराई करेंसे होय चइये। इतने करें से होय चइये के अपनौ विरोध प्रदेश और देश के नेतन के कानन के पर्दा सै टकरा जावै वे सुन पावै सांच का है? वे सत्ता के मद में जौ भूल गये के जिन गावन में हम रामराज देखै चाउत ते वे बर्बाद हो गये है उन गाँवन को प्रेम भाइचारौ खतम हो गव है बाप–बेटा, पति–पत्नी, माई, भाई कानौ कयै सवई रिस्ते आठ आठ असुंऊन रो रये है। वे बड़े नेता है उनकौ कोउ गाँव में नई रत जासै दरपन है तौ ऐसो दरपन उनैं दिखाव जाबै– जायै उनकी असली सूरत दिखाई देवै। कऊं हम सब मिलकै जौ काम कर पाये तो समजौ के अपुन ने दूसरी स्वतंत्रता की लड़ाई जीत लई। शास. और प्रशासन खों कौनहुँ दूसरौ रस्ता नइयां पतौ तो नागर साव सै पूंछ लेय– हम बतादे और गांवन में सुख और शान्ति कौ झण्डा गाड दे हैं। गांधी जू को विचार रामराज को रूप आजै है जू! सब जनिन खो भइया सीताराम साब।

–रघुवंश नगर

भाण्डेर मार्ग दतिया, बुन्देलखण्ड (म.प्र.)

मोबा. 9893455304

*****

गीत–

बिटिया की विदा

–नवल किशोर सोनी 'मायूष

अखल बखल जी बोल रओ ऐसें जैसें चलत मथानी।
कैसें करिये आज विदा हम अपनी बिटिया रानी।।

जिदनाँ जनम हमाए घरै प्यारी बिटिया को भओ तो।
उदनाँ गांव भरे में हमनें सबै बुलौआ दओ तो।
हाले फूले नइँ समात ते मन में दौनउँ प्रानी।।

तुमें अठारा बरसें पालो पोसो जतन जतन से।
दिन्नां रात चाओ है तुमखाँ ऐंनइ तन मन धन से।
अपने बस भर डुलन न दओ है कभऊँ पेट को पानी।।

प्रानन से प्यारी बिटिया की मुँइयाँ हम चूमत रए।
घरै लक्ष्मी आ गइ जैसें ऐसें हम झूमत रए।
देखो तुमें हँसत खेलत जब छाती तबइँ जुड़ानी।।

कभउँ रात कें छींकइ आ गइ तुमखाँ भूले भटकें।
भुन्सारे लौ हम औरन के अँसुवा टप टप टपकें।
जैसें हमखाँ ताप चड़ी हो ऐसें देय दँदानी।।

तुमनें दोइ जनन के संगै खैवे खाओ न जौलौ।
खेवो पीबो हमें न औरो कौर न टोरो तौलो।
सोचो ऐइ मनइँ मन ऐंनइ बिटिया काए रिसानी।।

अब बिटिया रानी कै कैं के कव कीखां हम टेरें।
तुम दिखैव नां क्याऊँ हमें तौ की की तरपी हेरें।
ऐइ सोचकें आज जात मन की बगिया कुमल्यानी।।

बिटिया है पराओ धन ईखाँ कै गए सबरे गुनियाँ।
ईसें कन्यादान करत आ रइ है सबरी दुनियाँ।
विसरइ गए ते हम तौ जग की जा है रीत पुरानी।।

अपनी बिटिया आज विदा करतन में छाती फट रइ।
ऐसो लग रओ है आँखन से आज पुतरिया छटरइ।
कैसो लगत विदा करतन में हमने अब जा जानी।।

जाव सासरे सास ससुर खाँ बाप मताइ समजियो।
प्रेम नन्द देवर सें भइया बैनन जैसो करियो।
मात पिता के घाँइ मानियों अपने जेठ जिठानी।।

साँचे मन से सेवा करियो बिटिया सबइ जनन की।
तुमें राखनें लाज आज सें बिटिया दोइ घरन की।
पति परमेशुर होत बात जा कै गए ग्यानी ध्यानी।।

धीरज धरम कभऊँ ना छूटै ध्यान राखियो ईको।
समजा रएं मायूस तुमें बो जो जेठन से सीको।
अपनी ई बिटिया रानी की रक्षा करें भवानी।।

–कोतवाली के पीछे, छतरपुर (म.प्र.)

मोबा. 9993693226

*****

लांछन

-भास्कर सिंह माणिक

पूस को महीना। बा पे करिया रात। चारउं ओर कोहरो। दूर-दूर तक कितऊ कछू नई दिखाई देत। मारे ठंड के जल्दी-जल्दी अपयं-अपयं काम निपटा कें सबई जनें अपने-अपने घर में दुपक जात। छैई-सात बजे सें सड़क सूनी दिखाई देन लगत। कोहरा के मारे खम्मा पै लगे बल्ब तक नई दिखात तो आदमी कांसें दिखात।

कितऊ सें कुत्तन की भौं-भौं तो कितऊ सें मोटर की पों-पों और फटफटियन की फट-फट ईं कें अलावा कछू नई सुनाई देत। ई छोर से ऊ छोर तक सांय-सांय ठंडी हवा। हवा इतनी ठंडी कि दाँत किटकिटात। दूरई सें पतो लग जात कोऊ ठंड के मारे दाँत किटकिटा रओ। को देखे, को उठे। जो बोले बोई किवार खोले। ई सें सबई जने चिमानें बैठे रत। रजाई छोड़तन काऊ सें नई बनत। बूढ़न की को सुनत। वे दस बार चिल्लात तब एक बार उनें उत्तर दओ जात। अपईं-अपईं मड़ईया में बैठे-बैठे खुसुर-फुसुर तो करत रैं लेकिन बूढे दद्दा-बाई कों कोऊ उठकें पानी तक देन नई जे। वे खुदई उठें। अपय लानें आगी जलाएं। अपय उन्ना खुदई बिछाएं। चाये खांस-खांस के वे रात भर जगत रयें। कोऊ उठकें पूछन नई आत। 'काये खांस रये दद्दा' चाये कोऊ मर जाये वे रजाई सें चिपके रें। को उठे ठंड में। अगर मोड़ी मोड़न ने तनक कछू कई तो उनें बूढे बाप-मताई बो ढकेल दओ जाओ बब्बा-बऊ नों वे तुमें कहानियाँ - किस्सा सुनाएँ। फिर का कै नें तान गोड़े सौ गए। फिर चाये कछू होवे उनें नेकऊ फिकिर नईयाँ।

पौर में बैठे-बैठे डुकरा-डुकरिया कहानियाँ सुरू करई रयते कि जई बीच एक ठंडी को चीरत भई आवाज सुनाई दई।

''बचाओ-बचाओ''

सब जनें रजाई में बैठे-बैठे, अपईं-अपईं मड़ईया में एक दूसरे को मों ताकन लगत। कोऊ नई उठत। फिर बोई आवाज सुनाई देत।

''बचाओ-बचाओ, जे हमें मारे देत। हमें बचाओ।''

''ऐसी ठंड में को हो सकत? जो को चिल्ला रओ।''

अपयं - अपयं घर में बैठे-बैठे बातें तो करत लेकिन कोऊ रजाई नई छोड़त। कुत्ता भौं-भौं के कान के परदा फाड़े डारत फिरऊ काऊ ने उठके देखवे की जुररत नई करी। कुत्ता भौं-भौं के शांत हो गए मानों बेऊ ठंड के मारे अपईं जान बचावे को कितऊ दुपक गए होय।

कछू देर के बाद पुलिस की सीटी सुनाई दई। ऊ टेम हमनें देखो रात के ग्यारा बज रयते। पुलिस की जीप जेसेई निकरी कुत्ता फिर भौंके। कछू देर भौंकवे के बाद कुत्ता फिर चुप हो गए। इते हमाई आँख नई लग रईती। मन बेचैन हो रओ तो। जे कुत्ता बेर-बेर काय भौंक रये। पुलिस निकर गई। कुत्तई चुप हो गए। जोई सोच रओ तो कि धम्म की आवाज सुनाई दई। मैं डर गओ। सोच में पर गओ। जो का कितऊ चोर-ओर तो नईयाँ। तनक देर रुक कें हमनें इनें जगाओ। जगाई रयते कि फिर धम्मसुनाई परी। मैं भड़ाभड़ा गओ।

''काय- काय, उठो तो।''

''काय जगा रये? सोन दो।''

''सुनो तो।''

गेरी नींद में आँख कां खुलवे वाली। हमऊ रजाई ओढ़ के पर रये। पर तो रये नींद न आवे। फिर तनक देर बाद फटफटियन की आवाज सुनाई दई। दो या तीन फटफटिया हुए। भुर-भुर कर कें वे निकर गई। सोची इतनी रात में फटफटिया जा ठंड में। फिर विचार आओ कोबरा बारे हुए। गश्त करवे को निकरे हुए।

परें-परें मन नई लग रओ तो। मैं उठो लाइट जलाई। सन्दूक से किताब निकारी। किताब पढ़वे को खोलियई हती कि कुत्ता फिर भौंके। इतनेई में इन की आँख खुल गई।

''काय तुमें चैन नई परत''

''हमनें का कर दओ?''

''का कर दओ? लाइट जला कें काये बैठ गए?''

''हमें नींद नइ आ रई ती। सो बैठ गओ।''

''हम तुमाओ सब मतलब समझत।''

''का समझतीं?

''तुम हमें काय जगा रयते?''

''तुमनें सुनीं कां हती?''

''अब तो सुन रई। सुनाओ का कै रयते?''

''अब का सुनाए?''

''काय अबे का बिगर गओ।''

बातें होई रईतीं कि कुत्ता फिर भौंके। फिर धम्म की आवाज आई और फटफटियन की भुर-भुर भई।

''कछू तुमें सुनाई दई कै नईं''

''ऐसो लगो जैसे कोऊ कितऊ कूदो होय''

''और।''

''और का? कोऊ सड़क से निकर रओ हुए सौ कुत्ता भौंक रये।''

''और फटफटिया''

''जो सड़क है अटफटिया - फटफटिया तो निकरत रतीं।''

''तुम अपयं मन की बताओ।''

''का तुम नई जानतीं।''

बातनई बातन में ठंडी हवा कबे गरम हवा में बदल गई। कबे सबेरो हो गओ। पतो नई लगो।

जैसें तैसें आँख लगी ती बड़ी जोर को हल्ला सुनाई परो। भड़भड़ा के आँख खुल गई।

''का हो गओ?'' काय को हल्ला हो रओ?''

''काये चिल्ला रये?''

''इते तो आओ, इते आओ।''

''आ रई।''

''का नई सुनाई परी।''

''हाँ बताओ का कै रये।''

''काय को हल्ला-गुल्ला हो रओ। का हो गओ। जो को चिल्ला रओ।''

''कछू तो। बताती काय नईयाँ?''

''पैला मोड़ी-मोड़न को स्कूल पठा देवी सोई तुमें बतावी। का हो गओ, का नई हो गओ?''

''हओ।''

''अरे सुनो तो।''

''अब का?''

''दद्दा कां गए?''

''हमनें का कई? पैला मोड़ी-मोड़न स्कूल पठा देवी सोई तुमें बतावी।''

''अबे का हो गओ?''

''तबा पै पराठे जले जा रये। बच्चन को खावे को बांध देवी। सोई आ के पूरी बात बतावी।''

''जाओ-जाओ। हमें चाय दे जाओ।''

''तनक देर लगवी। चिल्लाईयों नईं।''

''जाओ, इते तक बरांन आ रई।''

चाय ले कें रानी अपईं अटरिया पै पौंची।

''ले ओ चाय।''

''जो रांड़ चाय काय ले आई। जा के संग कछू तो लियाती।''

''अबे चारपाई छोड़ी नईयाँ। मूसर से बैठे। मों हाँत धोओ नईयाँ। संगे कछू लियाओ।''

''शेर कबे मों धोत?''

''बड़े शेर आय। तनक धम्म हो जात। चुखरा घाई चिमा जात। ऊ टेम हमई को जगाउत।''

''हाँ साँची कै रई। तुमई तो पालती आई मोय।''

''पच्चीस साल सें जानत तुमें। नेंक कुत्ता भौंको नई तुमाई घिघी बंध जात। ऐसे सांस साध जात जैसे सांप सूघ गओ होय।''

''हाँ सई कै रईं। ऊ दिना बखरी में का हतो।''

''का हतो?''

''जोर-जोर के चिल्ला रईतीं। देखो-देखो कोऊ है। जब आ के कौन ने देखो तो।''

''आ के कौन ने देखो तो? वो तो जा सें आ गए ते कि दद्दा द्वारें बैठते। मोय का पतो तुमाए नातेदार इत्ते मूसर हैं बिना खांसें खखारे बखरी में आ के ठाड़ें हो गए। डरा न जाती तो का करती।''

''डरा तो गईती कै नई?''

''बिना पैचान को कोऊ भीतर घुस आवी तो डर न लगवी? बेऊ कैसे नातेदार बिना आवाज भीतर आ के ठाड़े हो जावी? जाय कभऊ देखो न होय डराती नई तो करती।''

''तो काये पै शेरनी बन रई।''

''अच्छा ठीक है। जब रात बिरात तुमाओ पेट गड़-बड़ हो जात तब तुमाए कामें को आवी। तुमाए संगे ऊ बखरी में को जावी?''

''उते सूनो-सूनो लगत सो तुमे संगे लिवा ले जावी। ई में कौन सी बड़ी बात हो गई जो मोय टोंचना देवी।''

''सई-सई काय नई कै रये। तुमें अंधेरे में डर लगवी सो मोय लिवा ले जावी।''

''तुम चाये कछू कओ। तुमाओ मों।''

''फिर काय कै रये टोंचना देवी''

''तुम जे बेकार की बातें छोड़ो। अब जो बताओ। उते काय को हल्ला हो रओ तो?''

''कछू नई। अपई ऊ बखरी के पांछे जो घर है ऊ घर के मोड़ी-मोड़ा आपस में लड़-भिड़ रये हुएं। वो उतई को हल्ला सुनाई दे रओ तो/बेई चिल्ला रयते।''

''का घर में कोऊ हतो नई सो मोड़ी-मोड़ा लड़ रयते?''

''बगल वाली काकी बता रईतीं वो केऊ दिना से घरे नईं आईं। मोड़ी-मोड़ा अकेले हैं। काऊ बात को लें कें आपस में लड़-भिड़ गए हुए।''

''ऐसो नई हो सकत।''

''कायै नई हो सकत। हमनें सुनी वो तो आठ-आठ, दस-दस दिना को मोड़ी-मोड़ा छोड़ के अकेली चली जात और तौ और।''

''और तो और।''बीचई में बात काट दई।

''बाय अपयं मोड़ी-मोड़न की का फिकिर?अपओं चोला चम्म रये, दूनियाँ भाड़ में जाए। वो चाये काऊ के संग चल देत। रात होय चाये दिन। गरमी होय चाये सरदी। ऊ के लानें तो सब दिना बराबर।''

''वो कर तो करे का? अगर वो काम नईं कर तो खे और का खबे?''

''ऐसो काम हो सकत जो वो हफतन को चली जात और अपयं छोटे-छोटे मोड़ी-मोड़न को छोड़। वे लड़ हैं नईं तो का कर?''

''बोऊ बिचारी का करे? ऊ के सात-आठ मोड़ी-मोड़ा। अपओं पेट भरे के मोड़ी-मोड़न को? वो रात-दिना क माउत जब जा के मोड़ी-मोड़न को पेट पालपाऊत।''

''वो अपयं मोड़ी-मोड़न को अपय संग काये नई ले जात। इते लड़वे को काय छोड़ जात।''

''वो अपयं संग मोड़ी-मोड़ा कैसं ले जाए? बाय दिन-दिन भर काम करने। उते ऊ के मोड़ी-मोड़ा को देख? जानें किते के मारे कितें जाए? ऊ के तनक-तनक से मोड़ी-मोड़ा। जो खराब जमानों। जानें कबे का हो जावे? आज काल तो कदम-कदम पै डर लगत। कितऊ कउआ बैठे तो कितऊ भेड़िया। मौका लगो के झपट्टा मारो। सबई जगां बगुला भगत दिखाई देत। ऐसे में वो विचारी अपय चेनुआ का संग लय-लय फिरे।''

''इते को देखत?''

''इते कां जे? ज्यादा से ज्यादा सड़क तक जा पै। उते काऊ न काऊ की नजर पर जे। जा की नजर पर जे बाई डांट-फटकार के उनें घरें भगा दे।

''आठ-आठ दिना तक मोड़ी-मोड़न को बनाके को खाऊत?''

''ऊ की एक मोड़ी आठ-नौ साल की है। बोई अपयं छोटे-छोटे भईया बैनन की देख-रेख करत। खाना बनाऊत चौका पानी करत।''

''का वो पढ़बे नई जात?''

''वो कैसें पढ़वे जाए। इतने पईसा ऊ के ऐंगर कां हैं जो वो पढ़वे जाए?''

''सरकारी स्कूल तो खुले। उते तो जा सकत। उतई बाय खावे को मिल। उन्ना-लत्ता मिल और किताबे मिल फिरऊ काये नई जात?''

''जो तो तुम नींकी कै रई। वो घर छोड़ के पढ़वे जाए के अपयं तनक-तनक से भईया बैनन को देखे?''

''ऊ के घर परिवार वाले तो हैं। वो पढ़न जाए। अपयं भईया-बैन को उन के ऐंगर छोड़ जाए। अगर वो पढ़ लिख जे तो ऊ को भविष्य बन जे। देखा-देखी में ऊ के भईया बैन भी पढ़न लग।''

''जो तो तुम सई कै रई। जी दिना सें बाप को साया उठे ऊ दिना से काऊ नें उनकी ओर देखो तक नईयाँ।''

''काय पै देखें?''

''काय का कर दओ ऊ नें?''

''हमनें सुनी जी दिना से ऊ को आदमी मर गओ। ऊ दिना से वो छुट्टाँ घूमन लगी। अब तो बो काऊ की आड़ऊ शरम नई करत।''

''वो का कर देवे? ऊ के परिवार के लोगन ने ऊ को संग का दओ? जी दिना से ऊ को घर बारो का मरो ऊ को पूरे परिवार ने छोड़ दओ। छोड़त नई दओ ऐसो दओ जैसे कोऊ दूध में से मक्खी निकार के फैंक देत। वो का करती फुआ-फुआ से बच्चा तो पालने ते सौ वो काम पे जान लगी''

''ऊ को काम तो इतेऊ मिल जा तो। ऊ को दूसरी जगां जावे की का जरूरत हती।''

''इते ऊ ने काम कर वो तो खूब चाओ। कछू दिनन इते काम करो भी।

इते के लोगन ऊ को इज्जत सें काम कां करन दओ? जो देखो सो ऊ की मजबूरी का फायदा उठावे कों फिरन लगो। बुरी नियत सें देखन लगो। केऊ रंडा-मुसंडा अंधेरे-उजेरें ऊ को ताकन लगे। लालच देखा कें ऊ को अपनों बनावे के लानें जाल बिछान लगे। वो का करती? इते के लुचचा-लफगगा ऊँ को इज्जत सें काम कां करन दे रयेते। ई सें वो दूसरी जगां काम करन लगी। का बुरो कर दओ ऊ नें?''

''जो काय नई कात? ऊ की इते दाल नई गल पा रईती। गाँव पुरा के सब लोग जानन लगते ई सें वो दूसरी जगां जाकें अपयं मन की करन लगी। उते को देखवे बारो? का करती का नई करती?''

''तुमें का हो गओ? तुम कैसी बातें कर रई?''

''साँची कै रई। अब को देखवे बारो? की को डर? आदमी हतो सो बाय खा डारो। अब को रोकवे-टोकवे बारो? चाये जां जाए। चाये जी के संग जाए। काम को बहानों। यारन से मिलवो। को जानत?''

''ऊ नें तुमाओ का छुड़ा लओ? सो ऐसी बातें कर रई।''

''वो हमाओ का छुड़े? हम ऊ की टांगे न टोर दें।''

''अच्छा जो बताओ। अगर ऊ को जोई सब करने होतो तो वो इतें सें कभऊ नई जाती। बड़े आराम से रती। अपय मोड़ी-मोड़न को राजन घाई राखती। पढ़वे भेजती। मेहनत मजदूरी नईं करती। बड़े-बड़े बा कें तेल लगाते। नखरे उठाते। पईसा देते। कोऊ बा को का कर लेतो? बा को घर चांये कोऊ आतो-जातो। को रोक सकत तो? लेकिन ऊ नें ऐसो कछू नई करो। वो तसला डार, कें पूड़ी बेल कें अपयं मोड़ी मोड़ा पाल रई। तुमें का जीव उठाई पटक दई।''

''तुम गुस्सां काये हो रये? हमनें ऐसी का कै दई?''

''का कै दई? तुम तो ऊ पे लांछन लगा रई।''

''मैं लांछन कां लगा रई? जैसी सुनीं ती तैसी बता रई। तुमाएं पीरें काये उठ रई?''

''पीरें काये उठ रई? बड़ी आई पीरन बारी। ऊ की जगां कोऊ और होती तो मान भी जातो। ऊ नें कभऊ काऊ के आगें हाँत नई पसारो। मेहनत-मजदूरी कर के अपनों और अपने बच्चन को पेट पाल रई। मेहनत-मजदूरी कर के अपनों और अपने बच्चन को पेट पाल रई। वो लालच में नई फसी। कै वे को चायें कोऊ कछू कये। ऊ नें तसला डारवो, पूड़ी बेलवो मंजूर करो लेकिन इज्जत पे आँच नई आन दई। बेसेऊ एक कहावत है 'गरीब की लुगाई, सब की भौजाई' ऊ ने जा कहावत को भी अपनी मेहनत मजदूरी से झूठो कर दओ। जो तो तुमऊ जानती पांचऊ नगुरियाँ एक सी नई होती। नगुरिया उठावे बारे जो कबे देखत अगर एक नगुरिया काऊ की तरफ उठत है तो चार नगुरिया खुदऊ की तरफ मुड़ जाती।''

''हाँ काये नई जानत? तुमईं की भौजाई बता रईती। वो जानें कां कां मों मारत? मोय का पतो। वे साँची के रईती के झूठी।''

''जा को का मतलब?''

''का तुम नई जानत? इतनेऊ भोले नईयाँ तुम।''

''नगुरिया चाये कोऊ काऊ पे उठा देवे। जी पै बीतत बोई जानत। भौजाई को का परी-परी खा रई और बातें पुटक रई।''

''तुमाई सौं। भौजाई के रईती वो जब तक चार-पाँच पांते नई खा लेत वो का छकत है।''

''पूछियो भौजाई वे कै पांतें खातीं?''

''हम काये पूछे? तुमाई भौजाई तुमई पूछो।''

''कै दियो भौजाई से गरीब को ज्यादा मजाक न उड़ावे। जब गरीब की हाय परत तो वो जड़ से मिट जात जो मजाक उड़ात गरीबन को। का भौजाई ने कभऊ बाय काऊ के संग देखो? कउआ कान ले गओ के दई कान नई देखो।''

''तुम तो ऊ की ऐसी बकालत कर रये जैसे वो तुमाई सगी होय।''

''सगी न सई। हम तो ऊ की छाती को दाद देत। ऊ नें बच्चन को मों देखो। नईं और सी लुगाई होती तो वो कभऊ काऊ के संगे भग जाती। मेहनत मजदूरी नईं करती। ऊ को तो घर बिगर गओ। लोगन को का? चाये जैसी चाये काऊ के लानें कन लगत। ऊ के घरें जा के कभऊ पूछी तुमाये ऐंगर खावें को है के नई? लोग बातें तो करत। सहायता नई करत। काऊ नें कभऊ ऊ की सुध लई?''

''हमें तो ऐसो लगत। के तुमऊ.... ।''

''सरम खाओ सरम।''

''काऊ की कछू कै वे सें पैले तनक सोच समझ लेओ करो। वो तो अपई भाबाई भोग रई। उनकी कोऊ नईं कै पे- सौ-सौ चूहा खाएं, बिल्ली हज को चली। वे कछू करें, वे कछू कहें। उन के सातऊ खून माफ। काय सें वे तपाक सें उत्तर दे दें। अपनो मों लटकाएं चले आए। और कें हैं बड़े लोगन की बातें बड़ेई लोग जानें।''

''चलो जे बातें छोड़ो। तुम नहा धो लो खावे को खा लो। ''

''का खा लें। तुमने तो हमाओ दिमाग खराब कर दओ और के रई खाबे को खा लो।''

''अब तो गुस्सा थूंक दो। जो सुनीं ती बोई हमने तुमें बताई।''

''का दद्दा खा गए?''

''अबे नई।''

''काये नई खाओ?''

''दद्दा उतई गए।''

''उतई कां गए?''

''जा हल्ला हो रओ तो।''

इतनेई में जोर-जोर से रोवे की आवाजें सुनाई दई।

''हाय अम्मा, हाय अम्मा, हमाओ का हुए।''

''हाँ सुनाई दे रई। कपड़ा पैर के जा रओ। का हो गओ?''

''जो खाना तो रखो''

''लोट के खावी। देख आएं। को रो रओ? काय रो रओ?'' इतनेई में आठ-दस लरका दौड़त दिखाई दय।

''रुको-रुको कां भग रये?''

''देखन जा रए, देखन।''

''का देखन जा रये?''

एकऊ लरका नई रुके। सब सड़क की तरफ दौड़ रयते। उते सौ खांड़ आदमियन की भीड़ हती। हमऊ उते पौंच गए। उते कितऊ सब्जी डरी, कितऊ मिठाई डरी, कितऊ पूड़ी डरी देख के हको बको रै गओ। जो का कितऊ साड़ी, कितऊ पेटी कोट कितऊ ब्लाउज। जो देखे सो सनाको खा के रै जाए। का का बतावे? तन पै एकऊ लत्ता नई रन दओ भेड़ियन नें। ऊ को ऐसो नोंचो भेड़ियन ने ऊ के पूरे शरीर पे जगां-जगां घाव दिखाई दे रयते। घाव देख कें ऐसो लग रओ तो ऊ ने खूब छक्के छुड़ाएं हुए भेड़ियन के।

-मालवीय नगर (बजरिया) काच,
जनपद-जालौन (उ.प्र.) 285205
मोबा. 09936505493

*****

खनियाधाना राज्य का किसान आंदोलन

-डॉ. रामस्वरूप ढेंगुला

ओरछा राज्य के शासक उदोतसिंह ने 1724 ई. में अपने पुत्र अमरसिंह को खनियाधाना की जागीर प्रदान कर, इस राज्य की नींव रखी थी। किसान आंदोलन के दौर में सन् 1930 ई. के आस-पास सम्पूर्ण खनियाधाना रियासत में कुल 41 गांव थे, जिनकी आबादी 18000 के करीब थी। इस दृष्टि से खनियाधाना बुंदेलखण्ड की एक छोटी रियासत थी, इस रियासत का दूसरा महत्वपूर्ण कस्बा बसई था, जिसे इस रियासत की राजधानी कहा जाता था। इस रियासत में सर्वाधिक किसान, खेतिहर, मजदूर, श्रमिक जो सभी के सभी कृषक श्रेणी के ही थे, लोधी समुदाय के थे। लोधी समुदाय के कृषक-किसान इस भाग में नरवर के क्षेत्रों से वहां मुसलमानों के 15-16वीं सदी में आक्रमणों के बाद पलायन कर आए थे। और इस समुदाय के किसानों ने ही बसई-खनियाधाना के क्षेत्र के गांव आबाद किए थे। खनियाधाना वर्तमान में शिवपुरी जिले की तहसील पिछोर का एक बड़ा कस्बा है और इस रियासत का दूसरा कस्बा बसई दतिया जिले में सन् 1950 में शामिल होकर उसके टापू के रूप में शिवपुरी जिले के भागों एवं उत्तरप्रदेश के झांसी जिले के भागों के बीच है।[1]

खनियाधाना रियासत के प्रमुख गांव थे लईरा, हरीनगर, रेबई, मादौन, गरेठा, कमालपुर, जुंगीपुर, बसई, लखनपुर, सतलौन, मकड़ारी, जनकपुर, जैतपुर, हिम्मतपुर, बरदुंआ, सांकुली, नयाखेड़ा, कंधारी आदि हैं। सन् 1909-1935 ई. के समय में खलकसिंह बुंदेला, खनियाधाना राज्य के शासक-जागीरदार के रूप में थे। अंग्रेजी राज्य के अंतर्गत खनियाधाना ''बिना सलामी'' वाली श्रेणी की जागीर थी। इस श्रेणी के शासक नाममात्र के जागीरदार हुआ करते थे, इनकी जागीर की पूरी व्यवस्था एवं संचालन तथा देखरेख का कार्य, अंग्रेजी शासन द्वारा नियुक्त सुपरिन्टेन्डेन्ट के साथ होता था। खनियाधाना बुंदेलखण्ड का भाग था। यह कभी झांसी के मराठा राज्य एवं कभी ग्वालियर के सिंधिया राज्य तथा कभी नौगांव के अंग्रेज पॉलीटिकल एजेन्ट के आधीन (1751-1887) रहते हुए सन् 1888 ई. में सीधे ग्वालियर अंजटी (रीजेन्ट) के आधीन आ गया था। प्रशासनिक रूप में खनियाधाना के भाग शिवपुरी के क्षेत्रों से घिरे होने के कारण ग्वालियर की प्रशासकीय व्यवस्था से जोड़े गए थे। उल्लेखनीय है कि अंत तक खनियाधाना के शासक बुंदेला ठाकुर ही रहे थे।[2]

खनियाधाना राज्य की चेतनात्मक स्थिति:-

खनियाधाना रियासत के भाग बेतवा नदी क्षेत्र के घने जंगलों से घिरे थे, यहां के शासक खलकसिंह ने सन् 1924-27 के दौर में सुप्रसिद्ध क्रान्तिकारी चन्द्रशेखर आजाद को इन सघन वनों में अंग्रेजों की आंख बचाकर लगातार आश्रय दिया था उन्हें गोली-बारूद उपलब्ध कराया था व क्रांन्तिकारी गतिविधियों के संचालन की पूरी छूट प्रदान की थी। अंग्रेजी सरकार को जब यह पता पड़ा तो उन्होंने खलकसिंह को राज्य व्यवस्था से पूरी तरह दूर कर दिया था। तब से वे आध्यात्मिक चिंतन में लीन रहकर तीर्थ यात्राओं से अधिक रुचि लेने लगे थे। चंद्रशेखर आजाद के संपर्क में रहते हुए खनियाधाना के गांवों के लोधी किसान भी अंग्रेजों के प्रति घृणा के भावों से भर गए थे। किसानों में अंग्रेजी शासन के प्रति फैली व्यापक घृणा की पृष्ठभूमि में यहां के शासक खलकसिंह की आंतरिक प्रेरणा भी थी। खलकसिंह को अंग्रेजी प्रशासन ने लगातार उपेक्षित किया था, फलस्वरूप जनभावना संगठित रूप में खड़ी होकर खलकसिंह के प्रति सहानुभूति की भावनाओं से भर गई थी। उल्लेखनीय है कि इस क्षेत्र में लोधी किसान बड़े-बड़े दरवाजों वाले और मंदिराकार आकृति के आलों वाले हवेलीनुमा मकान भी बने हैं। इससे अनुमान होता है कि इस क्षेत्र के प्रमुख लोधी किसानों के कब्जे में सैकड़ों बीघा भूमि रही होगी।[3]

किसान असंतोष:-

बसई क्षेत्र के प्रमुख गांव सांकुली, लखनपुर, जनकपुर आदि में सन् 1930 ई. के दौर में किसान असंतोष ने जन्म लिया था। इसका तात्कालिक कारण खनियाधाना राज्य के सुपरिटेंन्डेन्ट प्रभुदयाल द्वारा लगान का बढ़ाया जाना माना जाता है। बसई क्षेत्र के स्वतंत्रता संग्राम सेनानी शिवनारायण खरे के हाथ का एक दस्तावेज उपलब्ध है। उल्लेखनीय है कि शिवनारायण खरे [4] के पिता स्व. रायसाहब गिरजा प्रसाद इस दौर में खनियाधाना स्टेट के दीवान थे। शिवनारायण खरे अपने राजनैतिक जीवन एवं वकालती जीवन को छोड़कर वर्तमान में पूर्णतः आध्यामिक हो गए हैं। और इस समय वे 90 वर्ष की आयु में वर्तमान में छतरपुर में निवास करते हैं। शिवनारायण खरे के इस दौर में किसानों का प्रमुख नारा था-

पत्ता-बजरी हमारी है, प्रभुदयाल शम्भू अत्याचारी है

इस नारे से यह अनुमान करना कठिन नहीं है कि पूर्व में इस क्षेत्र के किसानों से ''वनोउपजों'' पर कोई कर या लगान नहीं लिया जाता था। तेंदू पत्ता संग्रह कर बेचना एवं बजरी का निर्माण कार्यो के उपयोग के लिए बेचना ग्रामीण किसानों के लिए आय का साधन होता था और इससे उनकी रोजी-रोटी चलती थी। बसई क्षेत्र से लगे ''बबीना कैन्टोनेंट'' की फौजी छाबनी में बजरी की पर्याप्त खपत थी। उल्लेखनीय है कि इस क्षेत्र में छोटे-छोटे अनेक नदी नाले हैं जिनमें बरसात के बाद पर्याप्त मात्रा में बजरी एकत्रित हो जाती थी और पूरे क्षेत्र में तेंदू पत्ता के पेड़ों की अधिकता थी, जिससे तेंदू पत्ता का संग्रह हो जाता था। तेंदूपत्ता से बीड़ी निर्माण होता था, जो आज भी ग्रामीणों की और गरीबों की रोजी-रोटी का इस क्षेत्र में प्रमुख साधन है।

इस क्षेत्र के 100 वर्षीय वृद्ध किसान श्री वृंदावन लोधी के अनुसार फसल पर लगान के रूप में ''तिहाई'' अर्थात् फसल का तीसरा हिस्सा लगता था। इस वर्ष रियासत की तरफ से लगान में ''सवाई'' बढ़ोत्तरी कर मांग की गई थी, जिसे किसान दे पाने में पूरी तरह असमर्थ थे। इस कारण किसानों में व्यापक असंतोष पैदा हो गया था। जिसके कारण वे अंग्रेजी सत्ता के विरुद्ध संगठित हो गए थे। उल्लेखनीय है कि बुंदेलखण्ड के इन भागों में प्रति पांचवे वर्ष वर्षा न होने के कारण अकाल की स्थिति बन जाती थी। क्योंकि यहां की खेती-किसानी पूरी तरह अच्छी वर्षा पर ही निर्भर करती थी। इस समय इस क्षेत्र में ज्वार, तिली, उर्द, मूंग, बटरा, चना आदि की फसलें होती थीं। परन्तु ज्वार का उत्पादन सबसे अधिक था, ज्वार ही गरीबों का प्रमुख भोजन था और इसके अलावा वनोउपजों में महुआ, कुटकी समा आदि से गरीब किसानों का पेट पल जाता था। फसल के तीसरे भाग को तिहाई कहा जाता था, कर के रूप में इस समय के जो आंकड़े एकत्रित किए गए हैं, उनसे ज्ञात होता है कि अच्छी जमीन पर प्रतिवर्ष लगान के रूप में किसान को अधिकतम दो रुपए देना पड़ते थे। और यहां यह उल्लेखनीय है कि गरीब कृषक के पास सदैव नगदी पैसे का

अभाव इस काल में रहता था। इस काल में एक रूपए का लगभग आधा भाग तो गांव के बनिए के पास बीज के लिए उधार लिए गए धान के सवाए अन्न के रूप में चला जाता था। यह इस काल की सबसे बड़ी समस्या थी।[5]

आंदोलन की प्रगति:

मूलरूप में 1931-32 में चले इस किसान आंदोलन का नेतृत्व सांकुली के निर्भय लोधी ने किया था। निर्भय लोधी सांकुली गांव का एक बड़ा खातेदार किसान था। यह गांव बसई से 11-12 किलोमीटर दूर है, पुराना सांकुली गांव जहां इस किसान आंदोलन ने जन्म लिया था। अब वर्तमान में नवीन सांकुली गांव के से सटा हुआ, बबीना, जिला झांसी, उत्तरप्रदेश की फौजी छाबनी का हिस्सा बन चुका है। पुराने गांव के अवशेष के रूप में यहां धराशायी हो चुके मकान और कुएं दिखाई देते हैं। इन कुओं की ईंटे 10x7x2 इंच लम्बी, चौड़ी, मोटी है, यह ईंटे 17वीं सदी के अंत की प्रतीत होती है। इस उजड़े गांव में किसान नेता निर्भय लोधी का जमीन में मिल चुका चबूतरा भी बताया जाता है। निर्भय लोधी के चार भाई और थे, जिनका नाम बलदेव, फूलसिंह, काशीराम और अजुद्धी था, इनके पिता का नाम कुंअर राज था। इसी क्षेत्र के लखनपुर गांव के जरऊ माते ने भी किसान आंदोलन में बढ़चढ़कर भाग लिया था। बसई के समीप स्थित जनकपुर गांव में किसान आंदोलन की पहली किसान सभा हुई थी।[6]

आंदोलन का प्रारंभ:

क्षेत्र में गरीबी तो थी ही, ऊपर से अंग्रेज अधिकारी लगान लेने में बहुत सख्ती करते थे, उस काल के कुछ लोग अभी भी मौजूद हैं। उन लोगों का कहना है कि अंग्रेजी काल में रियासत के किसी भी गांव में तहसील का ''जमादार'' अर्थात् भृत्य भी यदि पहुंच जाता था, तो किसान उसके भय से जंगलों में भागकर छिप जाते थे। दतिया राज्य की आंखों देखी घटना का विवरण बताते हुए दतिया राज्य के स्वर्गीय तहसीलदार लक्ष्मनकिशोर गोस्वामी के करीबी रहे एडवोकेट रामरतन तिवारी ने बताया है कि ''लगान न चुकाने पर गांव के किसान को पेड़ से लटकाकर नीचे आग लगा दी जाती थी''। इस तरह की अनेकों अत्याचारी घटनाएं हैं, किसानों की मारपीट करना तो एक मामूली सी बात होती थी। बसई- खनियाधाना रियासत में शम्भूदयाल नाम का एक ऐसा ही इंसपेक्टर था, जो अपने अत्याचारी, नादिरशाही प्रकृति के कारण किसानों की दृष्टि में पूरा दुष्ट इंसान था। रियासत के दीवान रायबहादुर गिरजाप्रसाद के बड़े पुत्र 90 वर्षीय शिवनारायण खरे ने अपने हस्तलिखित दस्तावेज में लिखा है-

बसई के समूचे क्षेत्र में क्रान्ति और राष्ट्रीयता की भावना तेजी से सुलग रही थी जिसके चलते संवत् 1988 में क्षेत्र के किसानों ने संगठित होकर राज्य शासन से तेंदूपत्ता व बजरी पर अपना अधिकार प्राप्त करने, लगान की माफी, अत्याचारी अधिकारी प्रभुदयाल सुपरिनटेन्डेन्ट पुलिस शम्भूदयाल इंस्पेक्टर व लक्ष्मीप्रसाद दरोगा को नौकरी से हटाने की मांग को लेकर एक ऐसा अभिनव आंदोलन छेड़ा था जिसके उदाहरण देश में कम ही मिलते हैं। क्षेत्र की जनता ने निश्चय किया कि जब तक उनकी मांगें पूरी नहीं होती वह अपनी जमीन पर कोई कास्त नहीं करेंगे। यह आंदोलन दो वर्ष तक चला था।''

इस समय आंदोलनकारी किसानों का प्रमुख नारा था- ''प्रभुदयाल को हटायेंगे, तभी खेत पर जायेंगे।'' अंग्रेज परस्त अधिकारियों को हटाने की मांग किसान आंदोलन के रूप में प्रज्वलित होकर इसलिए सामने आए थी, क्योंकि ये सारे अंग्रेज परस्त अधिकारी खनियाधाना राज्य के किसानों की बहुत मारपीट करते थे। और चाहे जब थाने में बंद कर देते थे। अधिकारियों का स्पष्ट कहना था कि तुम्हारे पास अन्न हो या न हो हमें तो बढ़ा हुआ लगान चाहिए अन्यथा तुम लोगों को दंड दिया जाएगा और तुम्हारी कुड़की भी की जाएगी।

आंदोलन का परिणाम:-

आंदोलन के परिणाम की चर्चा करते हुए शिवनारायण खरे ने लिखा है कि -

उक्त आंदोलन को दमन करने के लिए ग्राम सांकुली में पुलिस ने फायरिंग की जिसमें निर्भय लोधी लगने से शहीद हुए और ग्राम लखनपुर में पुलिस की पिटाई से जुरऊ माते भी गंभीर चोटें आने के कारण शहीद हो गए। अधिकारियों के अत्याचारों के विरुद्ध फरियाद करने के उद्देश्य से जनकपुर के बंजारा चीरा के समीप एक सभा ली और सामूहिक रूप से बढ़ी संख्या में ग्वालियर रेजीडेन्ट से शिकायत की। जिस पर अत्याचारी अधिकारियों को हटाया गया। इस प्रकार बसई क्षेत्र के किसानों का आंदोलन आंशिक रूप से सफल हुआ। किन्तु लगान की छूट की मांग जीवित रही। श्री खरे के अनुसार यह किसानों की मांग सन् 1948 में उनके राज्य के प्रधानमंत्री चुने जाने के बाद ही पूरी हुई थी।''[9]

सांकुली गांव के वृद्ध वृन्दावन लोधी के अनुसार निर्भय लोधी के एक गोली हाथ में लगी थी। पर वह गोली लगने के बाद भागा नहीं था, निर्भय होकर खड़ा रहा था। उसके दूसरी गोली सीने में लगी थी, यह गोली लक्ष्मीप्रसाद दरोगा ने मारी थी, उसके साथ एक पंजाबी भी था। इस घटना के कुछ दिन पहले रियासत की पुलिस ने सांकुली गांव की महिलाओं को भी परेशान किया था और गांव में भय पैदा करने के लिए फायरिंग भी की थी। इस घटनाक्रम के बाद शहीद किसान नेता निर्भय लोधी के चारों भाईयों को एक-एक महीने की जेल हो गई थी और उन सबको ग्वालियर-मुरार में कैदी के रूप में रखा गया था। आज गांव क्षेत्र के लोधी समाज में निर्भय लोधी की शहादत को बड़े सम्मान के साथ देखा जाता है। नवीन सांकुली गांव में उसकी मूर्ति भी शासन द्वारा लगाई गई है। खनियाधाना जैसी छोटी रियासत का किसान आंदोलन विन्ध्यक्षेत्र और बुंदेलखण्ड की अन्य रियासतों के लिए प्रेरणा का कारण बना था। खनियाधाना-पिछोर-बसई के पूरे क्षेत्र में लोधी किसानों का आज भी बाहुल्य है।[10]

संदर्भ :-

1. प्रतिपाल सिंह बुन्देलखण्ड का इतिहास, भाग-8, छतरपुर 2009 पृ.131-137,
2. के.पी. त्रिपाठी बुन्देलखण्ड का वृहद इतिहास, टीकमगढ़ 1991 पृ.100-102,
3. वही पृ. 102
4. श्यामलाल साहू, विन्ध्य के राज्यों का स्वतंत्रता संग्राम का इतिहास, पृ. 273
5. प्रतिपाल सिंह बुंदेलखण्ड का इतिहास भाग 1, पृ 71-73
6. पी.एन. श्रीवास्तव संपादक दतिया, गजेटियर भोपाल, 1977, पृ. 347,
7. श्री रामरतन तिवारी छोटा बाजार दतिया में रहते है।
8-9. ये मूल दस्तावेज सतेन्द्र खरे बसई के पास उपलब्ध हैं।
10. सतेन्द्र खरे बसई के सहयोग से वृन्दावन लोधी से किया गया साक्षात्कार

-कुंजनपुरा दतिया म.प्र. पिन- 475661
फोन: 07522- 236136, मोबा. 9407588157

*****

कारसदेव कथा

-डॉ. एम.एल. प्रभाकर

बुन्देलखण्ड में देवी-देवतन की पूजा पैलउं सें होत आ रई। घाट घटोइया, पुलिया बब्बा, बेड़नी, गौंड़ बाबा, मैर बाबा, भुमिया बाबा के संगई संगै लोकदेवता, हरदौल, जगतदेव बाबा उर कारसदेव खों तौ सबई जनें जानत उर पूजत। भादौं की बड़ी चौथ खों जब ढाँक बजत गोटिया गोटें गाउत सो सबई कौ धियान ओई ओरै चलौ जात। मोय मन की सोऊ हल्केअई सें कैउ विचार आउत रये, सो बड़े बूढ़न सें बूजत आव, जब तनक स्यानौ भऔ तो इतै उतै पतौ लगावे की कौंसस करी तौ कछू जनें बोले किताबन में देखौ कितउं कछू मिल सकत। सो मोय खुद ऐसौ लगौ कें सब जनें सांसी आ के रये। मैंने किताबें पढ़वौ शुरू कर दऔ। धीरें-धीरें समय कढ़न लगौ एक दिना मैं ओड़छें रामराजा जू के दरसनन खों गब तौ सो उतई श्री भगवान सिंह जू गौड़ सें मिलौ (जो अब ई दुनिया में नइयां) उनसै बतकारौ करत-करत कारसदेव महाराज कौ बतकारौ कर दऔ सो उननें अथाई की बातें नाव की खुदई की लिखी किताब दई, जी में कारसदेव महाराज के बारे में तनकई लिखौ मिलौ। मन में चाव और बड़ौ सो दूढ़त-दूढ़त डॉ. बलभद्र जू तिवारी सागर की बुन्देली भाषा उर साहित्य-संस्कृति की किताबें पढ़ी जिनमें तनक जादईं पढ़वे मिलौ। मैंने अपने शोध कार्य (पी.एच.डी.) उपाधि के लानें गाँवन-गाँवन जावौ शुरू करौ सो सब जांगां खूब बतकारौ करौ सो मोय मन में हुलास और बढ़ी सो कारसदेव महराज की किरपा से दतिया के कुँवर साहब परम सम्माननीय डॉ. लोकेन्द्र सिंह नागर 'समरेथ' से मिलवौ भऔ तौ भौतई नौनों लगौ, काय सें कै उननै कारसदेव महाराज पै ढूँढ़-ढूँढ़ कें एक अनूठौ अजूबौ ग्रंथ लिख डारौ, जियै पढ़कें मोय मन बाग-बाग हो गऔ। उनसें भौतई नौनों बतकारौ भऔ। उनकी किताब 'श्री कारसदेव (देव बाबा) पढ़ी तौ मोव जीव जुड़ा गव। नांय डॉ. बहादुर सिंह जू परमार छतरपुर संपादक महोदय हमेसई खुद आउत रत, सो उनकी सबकी सुनकें गुनकें उर अवै तक जो कछू पढ़ौ सुनौ सो ऊ कौ सहारौ लैकें और कारसदेव महाराज खों पिरनाम करकें, मोव जौ पिरयास है उयै अपन के सामैं पेस कर रऔ, सो पिरेम सें पढ़ौ उर भूलै, समारबे की किरपा करियौ ......

कारसदेव महाराज के चरण में सिर झुका कै सबसें पैलउं इनके नाव के बारे में बतकारौ कर लव जाय। इनखौं ई नाव सें काय पुकारौ जात। नागर साब जू के कथन कौ आसरौ लै कें लिख रऔ, कै इनकी सवारी अरना भैंसा हती, जी कौ रंग करिया होत। सो बोलचाल की भाषा में भैंस की जात खों कारी या कारस कई जात, सो भैंसा की सवारी करवे के कारन इनखौं कारसदेव के नाव सें जानौं जात।

कारसदेव महाराज के निवास के बारे में कई जात कै इनके पुरखा राजस्थान के गढ़राजौर के आयँ। बारहवीं सदी में जब दिल्ली के राजा पिरथीराज जू कौ सब राजपाठ चलौ गऔ तबई कौनऊं मुसलमान वास्सन नैं इयै हथयावे की कौंसस करी। एई समय कौनउ जाट राजा ने मौका कौ फायदा उठाकें अपनौ राज बना लऔ तो और गुर्जरन कौ राज मिट गऔ तो। एई गढ़राजौर में कारसदेव महाराज के पुरखा राज करतते चाय जा कैलो कै इतई रत हते। इतई गंगाराम राव कौ जाट राजा अपनौ राज बना कै राज करत तौ। गंगाराम जाट राजा को नाव ऊकी सरीर की बनक खौं देख कै धरौ गऔ तौ। गडुआ के ऊपर के हल्के से मौं कौ और नैचे पैंदा चौरों होवे सें उपै 'गडुआढ़ार' नाव सें जानौ जात तौ। ऊ के तीन लरका हते जिनमें बड़े कौ नाव हरनाम धरैं तौ। अमान सिंह शिशुपाल हल्के आयँ।

कारसदेव महाराज के पिता जू कौ नाव राजू गुर्जर कक्का जू कौ नाव गोरे गुर्जर, उनकी माता जू कौ नाव सोढ़ा उर काकी जू कौ नाव सरनी हतौ, इनकी बैन कौ नाव अहलादी उर कक्याँवते भइया जू कौ नाव सूरजपाल (सूरपाल) उर कक्याँवती बैन कौ नाव सुन्दर हतौ जिनकौ ब्याव सूरजगढ़ के ठाकुरन के गोत्र में भवतौ। इनकी बैन अहलादीक्वांरीअई रईंतीं। इनकी बैन हल्के अई सें समजदार उर दयालु हतीं। सो कौनउं बात खौं लैकै ठिनकन लगत तीं। एक दिना पिता जू सें कन लगीं दद्दा मोय घर में पिडै-पिडै अच्छौ नईं लगत, मोय तौ खिरक चानैं। पिता जू सीदे सादे हते सो बिलात समजाउत रय जब नई मानी सो सोढ़ा। (धर्मपत्नी) जू सें बोले। बिटिया जादई जिद कर रईं का करौं खिरक के लाने सोदन करवा खौ कासी जू जा रऔ, नौनै रइऔ उर अहलादी कौ ध्यान राखियो सो सोढ़ा बोलीं बिटिया खौं दोई जनें समजाव मान जै- अहलादी नईं मानती लेव पढ़नै गोट के माध्यम सें इनकौ जो नौनौ प्रसंग

अहलादी-बाबुल सम्वाद - गोट

हथियन बाढ़ौ राजा कइये, राजा पिरथीराज हो ओ हो।
भुंवरन बाढ़ौ गूजर कइये, गढ़ राझोर होओ हो ओ हो।
बोलै ऐलादी-भुवानी अपने, बाबुल से रही बतराय हो ओ हो
मोरे बाबुल? खिरक तो बंधा दै, मथुरा मांझें हार होओ हो बोलै गूजर
कैसे रहा, ऐलादी से बतराय।
मोरैं हलकौ नइयो वारो, नइयां नइयां कुटुम-परिवार।
कौन के तो भरोसै खिरक बंधा दऊं, मथुरा मांझें हार हो ओ हो ......
बोलै ऐलादी भुवानी, राजू से रही बतराय।
हमईं तो तुमारे हलके कइये, वारे कइये हमई कुटुम परिवार।
अरे? खिरक तौ बंधा दै, मथुरा मांझै हाट में हो ओ हो ओ।
तब तौ गूजर-दादा पाँवन पैरैं- फुल पाँवड़ी, सिर पै बाँधे लपेड़ा-पाग।
चम्पा बुदरिया हाथन लई, डिगरत जावें काशी नगर खौं हो ओ ओ।
पढ़े पुराने पंडित ढूढ़ँ रहे, घरिया पूंछे वे गढ़ राजौर हो ओ ओ।
चलियो चलियो, उतै पंडित जी, महाराज तुमगढ़ राझौर से ओ ओ
घरियां तो बता दो, खिरक बंधा लऊं, मथुरा मांझै द्वार में हो ओ ओ
अब तो पंडित जी काशी के गूजर से रहे बतराय हो ओ ओ
सावन गरजै भदवां बरसै, भर जै हैं ताल पुखार हो ओ ओ
धरती झिर जै है, गढ़ राझोर की हो ओ ओ
भुंवरन खौं कसालौ हुइहैं, गढ़ राझौर में हो ओ ओ।
खैर बमुरिया के जार कटा लै, कटवा लै कटंगी बांस हो ओ ओ
खिरक तो बंधा लो, वे मथुरागढ़ मांझै हार में हो ओ ओ।
तब तो घरियां सुधवा लई, गूजर नें काशी नगर, शहर सें।
डिगरौ आवै अपनी, गढ़ राझौर को हो ओ ओ,
खैर तौ बमुरिया के जार तौ, कटवा रऔ, कटवा रऔ कटंगी बांस।
भुंवरन खौं खिरक बँधवा रऔ, मथुरा माँझैं हार में हो ओ- ओ
भुवरें हांकी गूजर ने गढ़ राझौर,भुंवरें लै आओ मथुरा माझै हार हो ओ ओ
तब तौ खिरक बन गये गूजर, दादा के मांझै हार हो ओ - हो
भुंवरन के व्याउट तौ पर गये, वे मथुरा मांझै हार में हो ओ ओ।
तब तो सात सै मटकी सिर धरै नौ सै, पड़ला की दावत लये दोयने हाथ।
डिगरी तौ भुवानी मथुरा, माँझैं हार सें हो ओ ओ।
सकरी खोरैं कइये मथुरा के उरद बजार।
भुवरें तो हो रईं हाथी, गडुआझार हो ओ ओ

अब का हुइए

-वीरेन्द्र खरे 'अकेला'

रमलू मौं फुलायें बैठो तोए काएसें ऊके लौरे भइया छुटकू के लाने नये उन्ना आ गए तेए जबकि रमलू के उन्ना छुटकू के उन्नन सें जादा फ्टे चिथे और पुराने हते । रमलू की बाई परबतिया ने उए समझाओ कै.''बेटा छटकू अबे हल्को है तुम ऊकी बराबरी नइं करो और फिर अगले मइना तुमाईअई तो बारी हैए तुमइं खाँ पइसा दै दैबी सो अपने मन के लै आइयो।'' बाई कौ आस्वासन पाकें रमलू उठो औ घर से बायरें निकर गओ ।

परबतिया अनपढ़, भौतई पूजा पाठ करबे वारी पुराने जमाने की रूढ़ीवादी एक निम्न वर्ग की औरत हती । ऊके चौथे नंबर की संतान रमलू अब 13 साल कौ हतो । छुटकू ऊसें 3 साल लोरो हतो रमलू सें बड़ी ऊकी तीन बैनें हतीं । एक को ब्याव हो गओ तोए दो अबे कुआंरी हतीं । परबतिया विधवा हती । दो साल पैंलइं खेत पे काम करत ऊके मुन्सेलू गंगुआ पै गाज गिर गईती । तेरइं होबे के बाद गांव के जाने माने पंडित गोपीनाथ ने परबतिया खाँ समझाओ.''देख री खेती को काम बड़ो कर्रो है तोरे बस कौ तौ अब है नइयांए और फिर रमलू हल्कौ है । परबार कैसें चलहैघ् तें भोतइ हैरान हो जैहे । ऐंसो कर खेत बेंच कें एक दो भैंसें लै लेए कौनउं तरां सें गुजारौ तो होइ जै है''

''जैसी अपुन काव महराजए अब तौ बस अपुन सबइ जनन कौ सहारौ है ष् परबतिया की आँखें फिर गीली हो गईं तीं । ष्तें रो नए आखिर गंगुआ हमाओ जजमान हतोए तोरी जमीन जो कउं कोउ न लै है तो मैं लै लेहों ।'' पंडित गोपीनाथ की आंखन में लालच तैर रओ तो । आखिर गंगुआ की तीस.चालीस हजार सें जादा की जांगा पंडित गोपीनाथ ने ऊ विधवा सें दस हजार में हतया लईती ।

परबतिया के घरे दो बड़ी मस्त भैंसें आ गई तीं । बा दिनभर उनकी सेवा.सुसमा में लगी रात ती । घर कौ काम ऊकी दोउ बिटियाँ समारें रात तीं । हरां हरां भैंसन की देखभाल को सबरौ **काम रमलू** सोउ सीख गओ तो । परबतिया खाँ दूध बेंचबे के लाने कऊं आबे जाबे की जरूरत नइँ परत ती । छक्कों अहीर जौन दूध.घी को धंदो करत तो ऊके घर सें दूध खरीद लै जात तो । दूध की बिक्री सें परबतिया खाँ इतने पइसा मिल जात ते कै कोनउ तरा परबार को भरन पोसन हो जात तो । अब बा भौत राहत महसूस कर रई ती । आज परबतिया के इते सत्तनारान की कथा हती । ऊकी टूटी फूटी दालान मुहल्ला.गांव भरे के जनी मान्सन औ बाल बच्चन सें भरी हती । पंडित गोपीनाथ ने खूबई मन सें कथा सुनाई परसाद पाकें गांव मुहल्ला के सब जने चले गए । परबतिया ने कछू संकोच करकें अपनो हाँत पंडित जू के सामू करत भए पूछो.''महराज अब कोनउ परेसानी तौ न आहेघ् ष् ष्अब परेसानी की न पूँछए बस तें तौ ऐंसई दान पुन्न करत राओ करए भगवान सब साजो करहैं ।'' परबतिया के हाँत पे एक नजर डारत भए पंडित गोपीनाथ ने उत्तर दओ ।

'सई-सई बताओ महराजए संकोच न करौ' परबतिया ने कहो ।

''हम तुमसें कै रये न कौनउं परेसानी नइयां ''पंडित जू ने बनावटी गुस्सा दिखाउत भए कई।''अच्छा महराज ।'' परबतिया ने चैन की सांस लई ।

''तो हम चलें'' पंडितजी उठन लगे ।''भोजन पाकें जइयो महराज'' सामने वारे सुकल महराज सें बनवाये दै रये।'' परबतिया ने बिनती करी ।

''अरे नइँ रमलू की बाई नइँ मोय तनक उलात हैए तैं ऐंसो कर सीदौ दै दे मैं बनाउत.खात रैहों ।'' गोपीनाथ बोले ।

परबतिया ने बड़े खुले हाँत सें सीदौ बाध दओ । जो सीदौ चार.पाँच जनन लौ खाँ पूरो हतो । पंडित जी सीदौ लेकें चले गये । परबतिया रमलू औ छुटकू खाँ खाबे परसन लगी । इतनई में मुहल्ला को 16.17 साल को एक लरका बिटई भगत भगत आओ औ हाँपत हाँपत चिल्याकें परबतिया सें बोलो.''अरी काकी तुमाई दोउ भैंसें एक जीप सें भिड़ गयीं और मर गयीं ।'' नईं,नईं..... परबतिया चिल्यानी और धड़ाम सें धरती पे गिर परी । रमलू ने तुरतई रोड की तरफगदबद लगा दई । जमुनाए पुनिया मताई खां बेहोश देख कें जोर जोर सें रोन लगीं । बिटई कुछ समजदार हतो फौरन चिल्लयाओ.ष् छुटकू जल्दी पानी तौ ल्याष् । छुटकू रोउत रोउत दौरो और एक कटुरिया में पानी ले आओ । बिटई ने फौरन परबतिया के चेहरा पै पानी के छींटा मारे औ कछू पानी ऊके मौं में डार दओ ।

होश में आउतनई परबतिया दहाड़ मार कें रोन लगी.''हे भगवान अब का हुइयेए कैसें पलहै हमाओ परबार । अब हम का करें ......'' दोऊ भैंसियन की लासें सड़क के किनारें डरीं तीं । तौ लौ कुछ जनें भैसियन के चारउ तरपे इकट्ठे हो चुके ते । परबतिया करम ठोक कें रोबे लगी ती । रमलूए पुनिया और जमुना उये मौगाउत भये खुदइ सिसक रए ते । छुटकू चुपचाप एक तरप ठांड़ो तो । ऊके बगल में ठांड़े चार.छै जने घटना के बारे में खुसर.पुसर कर रये ते । जे बे मानस हते जोन घटना के बखत कौनउं न कौनउं काम सें रोड के ऐंगर.पास हते । सरियां बोलो.''मौत हती सो ई तरपै आईए नईं तो दिन भर ढिली रात ती औ खिलई के घर के ऐंगर बारे मैदान सें आगूं न बढ़त ती ।''

धुरियां ने अपनी बात कई.''अरे सीदी सीदी इन सबइ जनन की लापरवाई है । आखर ढोर.बछेरूअन कौ ख्याल करो जात कै नई । दूध निचो लओ औ छुट्टां छोर दए ।''

सत्तू कछू जादई तेज विचारन कौ हतोए बोलो.'अरे जे सहर के बड़े बाहन बारे अपने खाँ जानें का समजत सारे दारू पी कें गाड़ी चलाउत । इनखां तौ इतने जूता मारे जायें कै मूड़ में एकउ बार न बचें ।'

''कोउ का करै । मेन रोड के किनारे के गांवन में तौ एई दिक्कत आ होत ।'' जग्गू ने अपनी बात कई ।

जग्गू के बगल में एक सीदो सादो सो ज्वान माधौ प्रसाद ठाड़ो तो । अबे दो.तीन मइना पैलेंइं ऊ प्राइमरी मास्टर बन कें ई गाँव में आओ हतो औ ऐंगरइ के सहर कौ रैबे वारो तो। जब जा घटना घटी तब ऊ रोड के किनारे के एक मात्र चाय के टपरा में बैठो चाय पी रओ तो । माधौ प्रसाद खाँ ई घटना की सबरी जानकारी हती । सब कछू ओई के आँखन के सामूं घटो तो । जौन जीप सें भैंसें मारी गईं तीं ऊके मालिक खां सोउ वो चीनत तो पै सन्ट हतो । कोउ ने ऊसें कछू पूछोई न हतो ।

परबतिया अबउं रोये जा रई ती । दियालू सुभाव के माधौ प्रसाद की सबर अब जवाब दै चुकी ती । ऊ परबतिया के ऐंगर गओ और बोलो.''अरे बाई रोओ न, सबर सें काम लेओ, मैं कोसिस करहों कै तुमें फिर सें भैंसें लैबे के लाने पइसा मिल जाएँ । गल्ती जीप चलावे वारे की है । जीप चालक समेत जीप में सवार सबई आदमी

चुनाव प्रचार के मद में ऐंसे चूर हते कै उने कछू दिखइयइ नईं दे रओ तो। गनीमत है कै उनने कोनउ मानस नईं कुचरो । खैर हम जीप मालिक सें भैंसियन के मुआवजे की माँग करहैं ।''

''काये खाँ झूटी तसल्ली देत भइया, जौ कैसे पतौ चलहै कै कौन नासमिटो चढ़ा गओ जीप, उकी ठठरी बंधे, इतनी बड़ी बड़ी भैंसियां नईं दिखानीं ऊ खाँ ।'' परबतिया बड़बड़ाई ।

''मैं जानत हौं बाई जीप प्रेमी मातों की हती, उनइं कौ लरका तौ चला रओ तो ।' माधौ प्रसाद ने बात साफकरी ।

प्रेमी मातों ! ऐंगर ठाड़े मान्स चौंक गये ।'बेई जौन चुनाव लड़रए'

सत्तू ने कछू याद करत भये कओ ।'हाँ हाँ बेई प्रेमी मातों जोन विधायकी कौ चुनाव लड़ रये हैं, तुमाव गाँव तौ सोउ उनइं के चुनाव क्षेत्र में है ।' माधौ प्रसाद ने ऐंगर ऐंगर ठाड़े लोगन की संका कौ निवारन करो ।

''देखौ तौ भइया कोउ तौ चुनाव जीतबे के लाने पइसा.मइसा, कम्बल.अम्बल और दारू.मारू वोटरन में बंटवाउत औ एक जे हैं कै इनैं भैंसिया.गइयां मार मार कैं आ चुनाव जीतनें ।'' सत्तू लाल ने व्यंग्य कसो ।

''प्रेमी मातों अच्छे मान्स हैं, ओई सहर कौ होबे के नाते तनक.भौत तौ मैं उनें जानतइ हौं और फिर समाचार पत्रन में अक्सर मैंने उनकी बड़वाई पढ़ी हैं।' मोखां भरोसो है कै वे ई बाई के संगे जरूर न्याय करहैं और जो कऊं उनने हमाई न सुनी तौ हम अदालत कौ दुआरो खटखटाबी । अपुन सबइ जने मोरो संग दैहो न।''माधौ प्रसाद ने जानबो चाहो । सत्तू लाल और खिलई ने हामी भरी । बांकी जने चुप्प रये, काये चुप्प हते। ई तरफमाधौ प्रसाद कौ ध्यान नईं हतो । पै असली बात जा हती कै जे मान्स मरी भैंसियन कौ मुआवजा बसूलवो धरम के विरूद्ध काम मानत ते, दूसरे दिना जब परिबतिया और ऊको लरका रमलू माधौ प्रसाद के संगे प्रेमी मातों सें मिलवे की गरज सें सहर जा रये ते तब ई बात कौ खुलासा सोउ हो गओ तो । गैल में सरिया ने परबतिया खां टोको तो.''देखो रमलू की मताई जौन नुकसान होने तो सो ऊ होई गओ । अब तुम मरी भैंसियन के पइसा बसूल करकें उनकी हत्या अपने मूड़ पै काये खाँ लेतीं, मायें ब्याड़ै जान दो । सबरे गाँव की मन्सा तो एई हैए अब तुम मानो तो मानो, नई तौ जैसो दिखाए सो करो ।''

माधौ प्रसाद भौत खुस हतो, काएसें ऊ बिना कोनउ अदालती कार्यवाही के परबतिया खाँ भैंसियन कौ मुआवजा दिवाबे में सफल हो गओ तो। ऊ केऊ दिनन सें मनई मन प्रेमी मातों को गुनगान कर रओ तो.'सांसउं कितने सरल आदमी हैं प्रेमी मातों जी । तनकउ घमंड नइयां । कितने मन सें मिले ते और कितनी सहजता सें उनने भैंसियन के मुआवजे के रूप में दस हजार रूपइया दै कें परबतिया खाँ एक नओ जीवन दै दओ तो । आज राजनीति खाँ ऐसई नेतन की जरूरत है । एंसई लोग देस की सेवा कर सकत हैं । परबतिया खाँ रूपइया देत बखत प्रेमी मातों के मौं सें निकरे जे शब्द बार बार माधौ प्रसाद के दिमाग में गूंजत भये ऊखाँ खुशी दै रये ते.''देख बाई भैंसियन के मरवे में ऊंसें तो हमाये लरका कौ कौनउ दोस नइयां, भैंसियां एकदम सें सामूं आ गईं हुइयें, ऐंसे में ऊ करतोई तो का करतो, मैं ई बहस में सोई परबो नईं चाउत कै तोरी भैंसियां पांच पांच हजार बारीं हतिअई कै नईं । कायेंसें तोरी हालत बाकई खराब है, ईसें जा समज के जे दस हजार रूपैया मैं तोय दान.धरम समज कैं दै रओ हों, जा लै जा, अपनौ परबार पाल, कबउं कौनउं और जरूरत परे तौ बताइये ।'' परबतिया सोउ भौत खुस हती । जैसई उये प्रेमी मातों को ख्याल आउत तो बा मनइ मन उनें प्रनाम कर लेत ती ।

पंडित गोपीनाथ परबतिया सें भौत खफा हते बोले.''मैं ऊ दिना गाँव सें बायरें का गओ, तेनें अनरथई कर डारो । तें बेमतलब में ऊ मास्टर के कैबे में आ गई और मरी भैंसियन के मुआवजे के रूप में पाप ढो ल्याई । वो मास्टर तो अबे लरका है, धरम करम का जाने। ऊ मूरख नें भैंसियन की हत्या कौ पाप तोरे मूड़ पै धरवा दओ । तें भैंसियन के पइसा न बसूलती तो हत्या कौ सबरो पाप जीप डिराइवर पै होतो ।'' आंगू बोले ''धरम कौ मानवे वारो कोनउ तोरे ई काम खाँ साजो न केहे । विसवास न होय तो पूरे गाँव में कोउ सें पूंछ ले । कोनउं तोय सई कै दे तो मैं पंडिताई छोड़ दौं ।''

गोपीनाथ ने तुरतइं ऐंगर पास के तीन.चार समजदार माने जाबे बारे मान्सन खाँ रमलू सें बुलवाओ औ अपनी बात पुष्ट कर दई । जौ काम कोनउ मुस्किल न हतो, काय सें पांव.छै हजार की आबादी वारो जो गाँव अबउँ घोर रूढ़ीवादी हतो ।

''हमें कौन पतो हतो महराज, अब का हुइये । गलती तौ होइ गई ।''

आखिर परबतिया ने अपनो दोस मान लओ ।''कछू उपाव तौ हुइये महराज।'' परबतिया ने घबरा कें पूंछो ।

''है काये नइयां पै तैं कर न पैहे ।'' पंडित गोपीनाथ ने अविस्वास व्यक्त करो ।''काये न कर पाबी, अपुन किरपा करकें बताओ तो ।'' परबतिया ने विनती करी ।

''तें भैंसियन को मुआवजा जीप मालिक खाँ लौटा आ और पाँच पंडितन को भोज कराकें श्रद्धा अनुसार दच्छिना दै दे, सब निवारन हो जैहैए भगवान सब साजौ करहें ।'' आखिर पंडित जी ने अपने मतलब की बात कैई डारी ।

''हम पइसा फेर दैहें तो हमाये बाल बच्चा कैसें पलहैं, भैंसियां काये में आहें महराज।'' परबतिया ने संका जताई ।

''अब चाय तें परवार की चिंता कर ल, चाय धरम निभा ले । राजा हरिश्चंद ने तो धरम निभावे के लाने राज पाठ, परवार सबइ दाँव पे लगा दओ हतो और तें..... मान्सन खाँ धरम की चिंता करो चाइये, घर.परवार की चिंता करबे तौ ऊ ऊपर वारो बैठोई है ।'' गोपीनाथ ने तर्क दओ ।

''तोये सई बताओं परबतिया ! तोरे ई संकट के बारे में मोये कथई के दिना जब तैंनें हांत दिखाओ तो न, तबइ पतो चल गओ तो पै मैं तोये दुखी करबो नइं चाउत तो सो कछू नइं बताओ, बैसें जौ तोरे दान पुन्न कौई फल आय कै तो पै एक भौत बड़ौ संकट आबे बारो हतो जौन ई छोटे से संकट के बहाने टर गओ, एई सें मैं तो कात तें भगवान पे भरोसो रख और अपनौ धरम निभा।'' गोपीनाथ ने अपनो पांडित्य बगारो ।

''हम कलई नेताजू के पइसा लौटा आबी, अब जौन हुइये सो देखो जैहै ।' परबतिया बोली ।''बिल्कुल, पाप जित्ती जल्दी टरे, उतनोई साजौ । औ हाँ ऊ मास्टर खाँ पतो न चल, नई तो ऊ फालतू में टाँग अड़ै ।'' पंडित गोपीनाथ ने शंका व्यक्त करी ।

''बे तो दो.तीन दिना सें गाँव में नइयाँ । उनें कैसें पतो

चलहे ।'' परबतिया बोली ।

परबतिया के घर की हालत अब भौत दैनीय हो गई ती । घर में एक पइसा नई हतो, जौन थोड़ौ.भौत दाना.पानी हतो ऊ ब्राह्मण.भोज और दान.दच्छिना में चलो गओ । भैंसियन के मुआवजे के दस हजार रूपइया परबतिया लौटाई चुकी ती । अब मजदूरी करबे के अलावा कौनउ चारो नईं हतो । पंडित गोपीनाथ ने एक ठेकेदार सें कै कें रमलू ए जमुना औ पुनियां खों गाँव सें 6.7 किलोमीटर दूर एक कस्बा में मजदूरी दिबा दई ती । परबतिया सियानी बिटियन खाँ घर सें इत्ती दूर भेजबे के लाने तैयार न हतीए पै का करती मजबूर हती । कैसउ पेट तो भरनेई तो । परबतिया खुदई मजदूरी करन चाउत हती पै बिटियन ने नईं करन दई । पंडित गोपीनाथ ने सोउ ऊये समझाओ तो.''उतै कछू बैठे बैठे के पइसा नईं मिलत, बड़ी मैनत करने आउतए ई उमर में तोसें ऊसी मैनत नई हो सकत। मैं गाँवइ में तोरे लाक कोनउं काम बतैहों,तैं फिकर न कर ।''

जमुना, पुनिया और रमलू कलेबा बांध कें बड़े सबेरें घर सें निकल जात ते, काये कै आठ बजे सबेरे सें उतै काम शुरू हो जात तो और छै बजे शाम लौ चलत तो । दो सें ढाई बजे लो खाबे की छुट्टी होत तीए बाकी टैम में मई की चिलचिलात दुपारी में ईंट.पथरा ढोबे, गड्ढा खोदबे और गारा बनाबे को कठिन काम । कर्री मैनत औ धूप नें रमलू खाँ आठई दिनन में टोर कैं धर दओ हतो । आज उयै तेज बुखार हतो । ऊ काम पै नईं जा सको । दूसरे दिना रमलू की हालत और बिगर गयी । धीरे धीरे दस दिना बीत गये पै रमलू की हालत में कोनउं खास सुधार नईं भओए जबकि गाँवइं के एक डाक्टर की दबाई बराबर चल रई हती । पूरे परवार को पेट काट कें चल रई हती । जमुना औ पुनिया बराबर काम पै जाती रईंए बिगरे हालात नें उनैं भौत मजबूत बना दओ हतो ।

कात हैं जब मुसीबत आउत है तो चारउ तरफें सें आउत है । लेओ परबतिया पै एक नई मुसीबत आ गई । भओ का। ओई पुरानो किसा । जमुना पै ठेकेदार की नियत डोल गयी । ऊने जमना खाँ अपने कमरा में बुलाओ और फिर .... ।

जमुना खीज गयी.''देखो ठेगेदार साब, हम गरीब हैं सो का भई, हमाएँ सोई इज्जत है, जो सब न चलहै । अब कबऊँ ऐंसी गलती न होबै, नईं ता अच्छो न हुयै ।'' जमुना की ऐसी गलती खाँ ठेकेदार भला का, माफ करतो, ऊने जमुना और पुनिया दोईयन खाँ काम सें निकार दओ ।

परबतिया की समज में नई आ रओ तो कै बा का करे । रमलू बीमार, दबाई खाँ पइसा नई, घर में खाबे खाँ एक दाना नईं, कमाई को कछू जरिया नईं ।
परबतिया ने छुटकू खाँ पंडित गोपीनाथ के घर भेजो, कछू रूपइया उदार मँगाये हते । छुटकू लौटो तो ऊने बताओ कै पंडित जी गाँव में नइयाँ कऊँ बाहर गये ।

छुटकू खाँ उधारी के लाने एक.दो जांगा और भेजो गओ,पै वो खाली हाँतइ लौटो । परबतिया रो परी और करती भी का । ऐंसे बुरये दिन ऊने कभउँ न देखे हते । उयै आज ई बात कौ ऐसास हो रओ तो कै भैंसियन कौ मुआवजा लौटा कें ऊने भौत बड़ी गलती करी । परबतिया पंडित गोपीनाथ औ ठेकेदार खों मनई मन कोस रई ती कै तबई दुआरे की सांकर खटकी । छुटकू ने दुआरौ खोलो तो माधौ प्रसाद मास्साब घर में दाखिल भये ।

'भौत दिनन में दरसन भये अपुन के'' परबतिया ने कओ।

''हओ बाई 1 मई सें स्कूल की छुट्टी हो गईं तीं, सो मैं घरै चलो गयो तो'' माधव प्रसाद ने उत्तर दओ ।

जब माधौ प्रसाद ने परबतिया सें खुशी.खैरियत पूंछी तौ ऊने रोउत भये अपनी सबरी किसा सुना डारी ।

''बाई मैं जो तो नईं जानत कै भैंसियन की हत्या को पाप किये लगै, पै इत्तो जरूर जानत हों कै तैं कै तोरे परवार को कौनउ सदस्य भूख सें मरो तो ऊको पाप तोरे ऊ नालायक पोंगा पंडित के मूड़ पैई जैहे ।'' माधौ प्रसाद ने आक्रोश व्यक्त करो । ''खैर जो हो गओ सो हो गओ, तुम जे कछू रूपैया धर लोए काम आहें औ हाँ कल प्रेमी मातों जी सें मिलबे मोरे संगे शहर चलो। उनें साफसाफई नालायक पंडित की करनी बतइओ, सब करो.धरो ओई कौ आय । भगवान ने चाओ तो सब ठीक हो जैहे ।'' माधौ प्रसाद ने उम्मीद जताई ।

'नेता जू नाराज न हुहैं, हमनें उनके दये रूपइया लौटा कें उनको अनादर नईं करो। परबतिया ने शंका जताई ।

'अनादर तो तुमने उनको करोई है पै बे भले मान्स हैं, तुमाई मजबूरी समजइ लै हैं और तुमें माफ सोउ कर दैहेंए जो मोये पक्को भरोसौ है ।'माधौ प्रसाद बोलो ।

प्रेमी मातों विधायक बन चुके ते । उनसें मिलबो अब उतनो सहज नईं तो जितनो माधौ प्रसाद समझ रओ तो । 'विधायक जी भोपाल में हैंष् के उत्तर के संगे माधौ प्रसाद और परबतिया को उनसें मिलबे कौ चौथो प्रयास सोउ आज असफल हो गओ तोए पै माधव प्रसाद ने हिम्मत न हारी । पांचवों प्रयास बेकार नईं भओ.'विधायक जी इतईं हैंष् को द्वारपाल कौ उत्तर सुनकें माधौ प्रसाद और परिबतिया के चेहरन सें निराशा के बादल छटन लगे ।

झिझकत भये माधौ प्रसाद नें सारी व्यथा.कथा जल्दी जल्दी कै डारी । पूरी बात सुन कें मातों जी ने व्यंग्यात्मक मुस्कान छोड़ी और सूत्र रूप में भाषा कौ इस्तेमाल करत भये बोले.'कौन गाँव, कौन भैंसें, कैसो एक्सीडेंट, कौन परबतिया, कौन माधौ प्रसाद, कैसी मदद, कैसो मुआवजा। तुम दोई कऊँ पागलखाने सें भग कैं तो नईं आये। सियात ऐंसोई है । अरे दंगल सिंह इन पागलन खाँ इतै सें बायरें निकारो । जे भीतर घुस कैसें आये। तुम औरें कछू देखत.दाखत नइयां । चलो जल्दी तौ करो।'

दंगल सिंह कछू प्रयास करे ईसें पैलेंई माधौ प्रसाद औ परबतिया बायरें कड़ गये ।

ष्मालिक का अपुन नें सांचउं उन लोगन खाँ नईं चीनो ष्ष् परबतिया औ माधौ प्रसाद के बायरें चले जाबे पै दंगल सिंह नें प्रेमी मातों सें पूंछो ।

''तें पूरौ गधा है, अरे चुनाव के बखत उन जैसन खाँ न चाउत भये भी चीनने परत है, पै अब तो चुनाव भये ढाई मइना हो गए हैं, अब उनें चीनवे की का जरूरत।'' विधायक जी ने कई ।

''हओ मालिक कछू जरूरत नईयां ।'' दंगल ने हामी भरी ।

प्रेमी मातों आंगूँ बोले. 'ऊ बखत मैंने परबतिया खाँ भैंसियन के मुआवजे के दस हजार रूपैया ईसें दै दये ते कै ऊके गाँव के मान्स हमसें अच्छी तरा सें परभावित हो जायें औ हमई हाँ वोट दें । मैंने बे रूपैया चुनाव कौ खर्चा मान कें परबतिया खाँ दये हतेए मैं उनें उगाबे

थोड़ेई जातोए पै जब वे रूपइया बिना कछू करें धरें लौट आए तो दुबारा बिना मतलब उनें गंवा देबौ तो मूर्खता न हुये । भगवान की किरपा सें सब कछू कितनो साजो भओ । पइसा एक न देने परो औ अखबारन में लगै लगै छपत रये मोरी दियालुता के किस्सा ।'

''को छपवाउत रओ ज '' भीतर सें बरामदे में आउत भये श्रीमती मातों ने पूछो ।

''अरे ओई माधौ प्रसाद, जौन ऊ परबतिया के संगे आओ हतो । ऊ समाज सेवक मास्टर ने हमाओ खूबई प्रचार करो ।'' मातों जी ने कओ और जोर सें हँस परे ।

परबतिया और माधौ प्रसाद मौन साधे बस स्टैण्ड की तरपें चले जा रये ते । अचानक परबतिया रूक गयी औ जोर जोर सें रोन लगी.''जी खाँ हम देवता समजत ते ऊ ठठरी को बरो तौ पूरो राक्षस निकरो । जबै वोट चाने हते सो कैसें प्रेम सें बोलो तो नासमिटो ।'' रोत भये परबतिया बड़बड़ाई ।

''अब कौनउ हाँ का कओ जाएए सब गलती तो तुमाई है । हाथ आए पइसा लौटाबे की का जरूरत हती ।'' माधौ प्रसाद ने कओ ।

''करम फूटे हते हमाए, भइया करम फूटे हते, हमाई मत मारी गयी हती, तबई तौ ऊ नासमिटे पंडित के कये में आ गय, अब का हुइये भइया,अब का हुइये'' कहत भए परबतिया धड़ाम सें जमीन पै गिर परी ।

-छत्रसाल नगर के पीछे, पन्ना रोड,
छतरपुर, म.प्र. मो. 9981585601

*****

बुन्देली - गीत

-स्वतंत्र प्रभाकर रावत

कैसौ अजब जमानो आ गव, जीबो हो गव कर्रो।
प्रानन-गाँठें पर रइं सबहाँ, महंगाई खों ठर्रो।
बोलचाल, व्यौहार, प्रेम-रस, हराँ-हराँ सब बदलो,
कैबे हाँ बातें रै गइं बस, सबइ कछू अब बदलो,
रूप रंग बदलो जीवन कौ, बदल गओ है ढर्रो,
कैसौ अजब ज़मानो आ गव, जीबो हो गव कर्रो।....
भ्रष्टाचार घुटाले बढ़ गये, फैली रिश्वत खोरी,
हमई-तुमई तो देत बढ़ाबो, कीहाँ दइये खोरी,
जाँ देखो ताँ मची धाँदली, जाँ हेरो ताँ भर्रो,
कैसो अजब ज़मानो आ गव, जीबो हो गव कर्रो। ...
बगला-भगत महात्मा नेता, रै-रै रंग बदल रए,
जौन गैल चलबे हाँ कै रए, अपनै खुदई न चल रए,
कपट भेष रख ढोंगी कर रए रास-रंग गुलछर्रो,
कैसो अजब ज़मानो आ गव, जीबो हो गव कर्रो। ...
भइया को बैरी है भइया, आओ कठिन समइया,
दुनिया को भगवान रुपइया, कैसो करिये दइया,
बार बरोबर बारीकी है, मूसर घाँई भर्रो,
कैसौ अजब ज़मानो आ गव, जीबो हो गव कर्रो। ...
ई कलयुग में कैसो हो रव, अब कीसें का कइये,
हम जानत हैं जैसो हो रव, समज मनइं मन रइये,
बज्जर की छाती है अपनी, करें करेजो कर्रो
अजब ज़मानो आ गव, जीबो हो गव कर्रो।

- प्रभाकर आफसेट प्रिंटर्स
कड़ा की बरिया , छतरपुर (म.प्र.)

*****

गुइयन की बतकई

-राजेशचन्द्र गोस्वामी

हमें को हराऊत तो गुफना-गुलेल में,
दऊआ के महुआ तरें गये ते खेल खेल में।
महुअन को रखवारो भगोतो नेकई तडेल में।
नेक में टुकना भरे गिरे थे महुआ।
तेंइके गुफना ओयके गुलेल में।।

गुइयाँ को धक्का लगो
सोवत सों जुवना जगो
कओ गुइयाँ अपई रेल पेल में
वह गओ तो ऊपऊ टुकना
गेवड़े के नरवा की खलेल में
हमें को हराऊत तो गुफना-गुलेल में।

अपुन कभऊँ हारे नईं
झूलन के खेलन में
नोने नोने नाथत ते
नयनन की सयनन में।
दऊआ का दुलरा सहुआ सुलरा
दोऊ कैसे सिसयाने ते।
मोय गुफना की ठेल में।
हमें को हराऊत तो गुफना-गुलेल में।

कओ बा बेर हुरयन ने गेंदो तो गैल में
मोओ गुफना खुबई भन्नाओं तो
तोई गुलेल एनई सन्नाई ती
कैसें सिसयाने-टिटयाने ते सबई
गुफना-गुलेनन तड़ेलन में।
हमें को हराऊत तो गुफना-गुलेल में।

बई सोचें ससुरारे गये होंस फूल में
अब कबहुँ जीते नई ननदी के खेल में,
जेठी जुझाऊ मिली
सास बड़ी खाऊ मिली
छकड़ी सबई भूले
लकड़ी नोन तेल में।
सजना सूधे धरे
जेठा चुगला बड़े।
कैसें कटे जिंदगानी
बताओ वा जेल में।
हमें को हराऊत तो गुफना गुलेल में।

*****

भारतीय लोक साहित्य का वैशिष्ट्य

-डॉ. आशुतोष त्रिपाठी
-डॉ. मिथलेश गुप्ता

"लोक साहित्य लोक संस्कृति का एक भाग है, उसका एक अंश है। यदि लोक संस्कृति की उपमा किसी विशाल वट-वृक्ष से दी जाय तो लोक-साहित्य को उसकी एक शाखा मात्र समझना चाहिये। यदि लोक -संस्कृति शरीर है तो लोक साहित्य उसका एक अवयव है। लोक- संस्कृति का क्षेत्र-विस्तार अत्यन्त व्यापक है, परन्तु लोक साहित्य का विस्तार संकुचित है। लोक-संस्कृति की व्यापकता जन-जीवन के समस्त व्यापारों में उपलब्ध होती है परन्तु लोक साहित्य जनता के गीतों कथाओं,गाथाओं,मुहावरों और कहावतों तक ही सीमित है। एक का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है तो दूसरे का सीमित तथा संकुचित । लोक साहित्य अंग है तो लोक संस्कृति अंगी है। लोक संस्कृति में लोक साहित्य का अन्तर्भाव होता है परन्तु लोक साहित्य में लोक संस्कृति का समावेश होना सम्भव नहीं है।"1 लोक वार्ता के लोक संस्कृति की संज्ञा से अभिहित करते हुए, डॉ0 कृष्णदेव उपाध्याय ने लोक-साहित्य पर उपर्युक्त विचार प्रस्तुत किये। आपके अतिरिक्त भी अन्यान्य विद्वानों ने लोक शब्द पर अपना-अपना अभिमत प्रस्तुत किया है-

डॉ0 हजारी प्रसाद द्विवेदी का कथन है कि लोक शब्द का अर्थ 'जनपद' या 'ग्राम्य' नहीं है, बल्कि नगरों और ग्रामों में फैली समस्त जनता है जिसके व्यावहारिक ज्ञान का आधार पोथियाँ नहीं हैं। नगर में परिष्कृत, रूचि-सम्पन्न तथा सुसंस्कृत समझे जाने वाले लोगों की अपेक्षा अधिक सरल और अकृत्रिम जीवन के अभ्यासी होते हैं तथा परिष्कृत रूचि-सम्पन्न व्यक्तियों की विलासिता और सुकुमारता को जीवित रखने वाली आवश्यक वस्तुयें उत्पन्न करतें हैं।2 डा0 कुंजबिहारी दास ने लोक की सुन्दर व्याख्या करते हुए लिखा है- लोक-गीत उन लोगों के जीवन की अनायास प्रवाहात्मक अभिव्यक्ति है जो सुसंस्कृति तथा सुसभ्य प्रभावों से परे रह कर कम या अधिक रूप में आदिम अवस्था में निवास करते हैं।3 इस प्रकार लोक का अर्थ सरल स्वाभाविक मानव समाज है, जिसकी भावनाओं,विचारों,परम्परओं, क्रियाओं एवं मान्यताओं में वास्तविक कल्याण के तत्व विद्यमान रहते हैं । इसी को हम लोक-संस्कृति भी कह सकते हैं।

लोक साहित्य की परिभाषा देते हुए डॉ0 सत्येन्द्र ने कहा है कि लोक साहित्य के अन्तर्गत वह समस्त बोली या भाषागत अभिव्यक्ति आती है, जिसमें-

1. आदिम मानस के अवशेष उपलब्ध हों।
2. परम्परागत मौलिक क्रम से उपलब्ध बोली या भाषागत अभिव्यक्ति हो जिसे किसी की कृति न कहा जा सके, जिसे श्रुति ही माना जाता हो, और जो लोक मे मानस की प्रवृत्ति में समायी हुई हो।
3. कृतित्व हो किन्तु वह लोक-मानस के सामान्य तत्वों से युक्त हो कि उसके किसी व्यक्तित्व के साथ सम्बद्ध रहते हुए भी, लोक उसे अपने ही व्यक्तित्व की कृति स्वीकार करें।4 लोक वार्ता की प्रवृत्ति पर विचार करते हुए "लोकोलोव" ने भी लिखा है 'कि लोकवार्ता की वस्तु और रूप में प्राचीन संस्कृति के बीज अवश्य रहते हैं। आदिम संस्कारों का आशय उन गुणों, विशेषताओं तथा धर्मो से है जो ऐतिहासिक दृष्टि सें' आदि मानव' में समाविष्ट होगें और जो आज भी प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप में समस्त मनुष्यों में प्राप्त होते हैं।5 वस्तुत: विराट् विश्व के जीववांचल मे प्रच्छन्न सत्य की अगणित मणियाँ अन्वेषक के दुर्गम मार्ग में अपनी प्रकाश किरणों से उसका प्रत्याह्वान करती हैं और प्राप्ति की साधना में तल्लीन साधक साक्षात् तत्वद्रष्टा की भांति उन अनमोल रत्नों को उपलब्ध कर लेता है। लोक साहित्य के महत्वाकांक्षन के निमित्त किसी प्रकार की तत्व दर्शिता अपेक्षित है। लोक-जीवन के सत्य को जगमगाती अनन्त रत्न-राशि इसमें व्याप्त है। सूक्ष्मदर्शी अन्वेषक की भांति स्वयं को समरूप से उस विशाल भावसागर में निमग्न करके ही उन सत्य-रत्नों को प्राप्त किया जा सकता है। लोक साहित्य का सबसे अधिक महत्व सामान्य जीवन के सर्वांगीण सत्य का उद्घाटन करना है।

लोक साहित्य में ऐतिहासिक महत्व की सामग्री का प्रभूत संचयन रहता है जो युग, समाज और व्यक्ति के इतिहास को सजीवता प्रदान करती है। समय के आघात से विलुप्त एवं विस्मृत घटनायें लोकानुभूति द्वारा लोक साहित्य में प्रश्रय पाती है। संसार के इतिहासवेत्ताओं को लोक साहित्य के माध्यम से अतीत सम्बंधी अमूल्य सामग्री प्राप्त होती है। साथ ही इसके अन्तर्गत विभिन्न भौगोलिक स्थानें, नदियों, पर्वतों, समुद्रों, दीपों, आदि का उल्लेख प्राप्त होता है। विभिन्न प्रकार के व्यापार तथा व्यापार के साधनों, आवागमन के साधनों विभिन्न ऋतुओं तथा देशानुकूल जलवायु, वातावरण आदि का वर्णन भी उपलब्ध होता है। लोक साहित्य में देश की युगानुगत परिस्थितयों तथा भौगोलिक स्थितियों का भी वर्णन रहता है। लोक साहित्य समाज की अभिव्यक्ति है अत: इसमें समाज के समस्त पहलुओं का, सुख-दु:ख, राग-विराग, आशा-निराशा, ईर्ष्या-द्वेष आदि मनोभावों का, रीति-रिवाज, आचार-विचार, रहन-सहन, विश्वास और परम्पराओं का सजीव चित्रण प्राप्त होता है। समाज में व्याप्त समस्त सम्बंधों का भावनात्मक निरूपण तथा विभिन्न जातियों का पारस्परिक अनुबंध इसमें प्राप्त होता है। लोक साहित्य में समाज और धर्म का यह अटूट सम्बंध सर्वत्र प्राप्त होता है। विभिन्न देवी-देवताओं की उपासना, नदियों, पर्वतों, साँपों, वृक्षों आदि की पूजा, विभिन्न प्रकार के व्रत, तप, यज्ञ, दान आदि का आयोजन भी लोक साहित्य में वर्णित रहता है। लोक का नैतिक स्तर भी इसी साहित्य में प्राप्त होता है। सदाचार और पवित्र निष्ठाओं में पगे हुए पावन चरित्र लोक साहित्य के अध्येता को भाव-विह्वल बनाये बिना नहीं रहते। आदर्श सती नारी का दिव्य रूप, पिता का त्याग, पुत्र का अनुराग, भाई-बहन का मिलन बिछोह आदि भावोत्कर्ष के अनुपम उदाहरण प्राप्त होते हैं। लोक-भाषा में वर्णित होने के कारण लोकसाहित्य का भाषा वैज्ञानिक महत्त्व भी है। भाषा विकास के क्रम में बोली का असाधारण योग है। शब्दों के प्रामाणिक निरूक्त ज्ञान के हेतु भी हम बोलियों का अध्ययन करते है। लोक-बोलियो के प्राकृतिक शब्द-रूप लोक-साहित्य में ही प्राप्त होते है।

कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि जिस प्रकार भारत की आत्मा गाँवों में बसती है, ठीक उसी प्रकार से लोक साहित्य ही हिन्दी साहित्य का प्राण तत्त्व है। क्योंकि कहा भी गया है कि भारतस्य प्रतिष्ठे द्वे, संस्कृत संस्कृतिस्तथा अर्थात् भारत अपनी प्रतिष्ठा विश्व में संस्कृति के द्वारा ही प्रतिष्ठापित किये है। भारत को जानने के लिये यहाँ की लोक संस्कति को जानना परमावश्यक है। क्योंकि लोक-साहित्य मानव-हृदय की भावात्मक अभिव्यंजना है।

सन्दर्भ:-

1. हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास, भाग 16 प्रस्तावना पृष्ठ 14
2. डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, जनपद वर्ष 1, अंक 1, पृष्ठ 65
3. A Study of orissan folklore, by Dr. Kunj Behari Dass.
4. लोक साहित्य, डॉ. विद्या चौहान, पृष्ठ-16
5. लोक साहित्य विज्ञान, डॉ. सत्येन्द्र, पृष्ठ-4

-हिन्दी विभाग
श्री रामकृष्ण पी. जी. कॉलेज, कुरारा, हमीरपुर (उ0प्र0)

*****

"बैरायठा" महाभारत की गाथा

-डॉ. ओमप्रकाश चौबे

महाभारत की गणना भारतीय साहित्य भण्डार के सर्वश्रेष्ठ महाग्रंथों में की जाती है। महाभारत एक विशाल महासागर है, जिसमें अनमोल मोती और रत्न भरे पड़े हैं। महाभारत की कथा संक्षेप में इस प्रकार है:-

महाराजा शान्तनु के बाद उनके पुत्र चित्रांगद हस्तिनापुर की गद्दी पर बैठे। चित्रांगद की अकाल मृत्यु हो जाने से उनके भाई विचित्रवीर्य गद्दी पर बैठे। महाराजा शान्तनु के प्रथम पुत्र भीष्म थे, ये गंगापुत्र थे। शान्तनु की रानी सत्यवती के दो पुत्र थे चित्रांगद और विचित्रवीर्य। विचित्रवीर्य के दो पुत्र थे - धृतराष्ट्र एवं पाण्डु। चूंकि उनके बड़े पुत्र धृतराष्ट्र जन्मान्ध थे, इसलिए पाण्डु को गद्दी पर बिठाया गया। पाण्डु ने हस्तिनापुर में कई वर्ष तक राज्य किया। महाराज पाण्डु की दो रानियां कुन्ती और माद्री थीं। कुछ काल पश्चात् पाण्डु कोई प्रायाश्चित करने हेतु वन को गये। उनके साथ उनकी दोनों रानियां भी गईं। वनवास के समय कुन्ती एवं माद्री ने पाण्डवों को जन्म दिया। महाराज पाण्डु की इस अवधि में मृत्यु हो गई। पांचों पाण्डव जो कि अनाथ हो गये थे, उनका पालन-पोषण वन के ऋषि-मुनियों ने किया। इनके कुछ बड़े होने पर ऋषियों ने पांचों पाण्डवों के हस्तिनापुर ले जाकर भीष्म पितामह को सौंप दिया। धृतराष्ट्र के सौ पुत्र थे। पांचों पाण्डव कुशाग्र बुद्धि के साथ ही शरीर से भी वलिष्ट थे। बचपन में ही पाण्डवों को मुनियों द्वारा वेद, वेदांग तथा समस्त शास्त्रों का अध्ययन करा दिया था। शस्त्र विद्या में भी वे निपुण थे। उन पांचों के सरल स्वभाव तथा कुशाग्र बुद्धि के कारण यहां सबका मन मोह लिया था। उनकी ख्याति देख कौरव उनसे जलने लगे और उन्हें तरह-तरह के कष्ट देने लगे। पाण्डवों और कौरवों में यह बैरभाव बढ़ता ही जाता था। यह देख भीष्म पितामह ने दोनों को समझा-बुझाकर उनमें संधि करा दी। भीष्म के आदेश पर कुरू राज्य का विभाजन दो हिस्सों में हुआ। एक हस्तिनापुर तथा दूसरा भाग खांडवप्रस्त था। कौरव हस्तिनापुर में रहे और पाण्डवों को खांडवप्रस्थ मिला, जो आगे चलकर इन्द्रप्रस्थ के नाम से जाना गया। ऐसा करने से कुछ दिन शांति रही, लेकिन कोरव इससे खुश नहीं थे इसलिए उन्होंने शकुनि के साथ मिलकर एक षड्यंत्र रचा। तत्कालीन समय में चौसर खेलने का आम रिवाज था। इस खेल में राज्यों तक की बाजियां लगा दी जाती थीं। इसी योजना के तहत् कौरवों ने एक बार पाण्डवों को चौसर खेलने हेतु आमंत्रित किया। पाण्डवों की तरफसे धर्मराज युधिष्ठिर चौसर खेल रहे थे और कौरवों की तरफसे शकुनि खेल रहा था। शकुनि चौपड़ का मजा हुआ खिलाड़ी था उसने युधिष्ठिर को हरा दिया, वे दाव में सब कुछ हार गये। परिणाम स्वरूप पांडवों का राज्य छिन गया, शर्तानुसार पांडवों को तेरह वर्ष का वनवास स्वीकार करना पड़ा। उसमें एक शर्त थी कि बारह वर्ष के वनवास के पश्चात् एक वर्ष का अज्ञातवास करना पड़ेगा। उसके पश्चात् उनका राज्य उन्हें दे दिया जायेगा। अगर एक वर्ष के अज्ञातवास की अवधि में उन्हें देख लिया तो फिर से तेरह वर्ष का वनवास होगा।

धर्मराज अपने भाइयों एवं द्रोपदी सहित वनवास को गये। तेरह वर्ष के वनवास के पश्चात वे लौटे और उन्होंने अपना राज्य वापस मांगा तो दुर्योधन ने पाण्डवों के राज्य वापस करने से इनकार कर दिया। धर्मराज ने यह तक कहा कि हमें राज्य के बदले पांच गांव ही दे दो लेकिन दुर्योधन ने कहा कि तुम्हें "सुई की नौंक" के बराबर भी भूमि नहीं मिलेगी। इस पर मजबूर होकर पांडवों को कौरवों से लड़ना पड़ा और "महाभारत" जैसे विनाशकारी युद्ध का सूत्रपात हुआ। युद्ध में समस्त कौरव मारे गये, अठारह दिन के भीषण युद्ध के पश्चात् पांडव उस विशाल साम्राज्य के स्वामी हुए। इसके पश्चात् पाण्डवों ने छत्तीस वर्ष तक राज्य किया और अंत में अपने पोते अभिमन्यु पुत्र परीक्षित को राज्य सौंपकर पाण्डव द्रोपदी सहित तपस्या करने हिमालय चले गये।1

महाभारत का आख्यान एक अद्भुत रचना है जिसमें मानव जीवन के दुःख-दर्द का सार आ गया है। करुण रस से पूर्ण यह धार्मिक ग्रंथ जीवन के दुःखों पर प्रकाश डालकर पाठकों को अजर-अमर सत्यरूप परमात्मा की ओर बढ़ने को प्रेरित करता है।2

बुन्देलखण्ड की वाचिक परम्परा में लोकगाथा गायन का महत्वपूर्ण स्थान है। इस अंचल में अनेक गाथाओं का गायन होता रहा है। महाभारत कालीन गाथा "बैरायठा" उनमें से एक गाथा है। वर्तमान में यह गाथा विलुप्त प्राय है न ही इसके गाने वाले हैं और न सुनने वाले। इसका कारण गाथा की समयावधि भी एक कारण माना जा सकता है। बैरायठा विराट का अपभ्रंश है। पांडवों का अज्ञातवास विराट राज की नगरी में पूर्ण हुआ था। मैंने इस गाथा का संकलन विगत् पन्द्रह वर्ष पूर्व किया था। विधिवत् इसका ध्वन्यांकन भी कराया था तथा वह ध्वन्यांकन की दस सी.डी. मध्य प्रदेश आदिवासी लोक कला परिषद् को सौंपी थी। इस गाथा का प्रकाशन भी लोकाख्यान नामक पुस्तक में हुआ था लेकिन प्रकाशन में गाथा के कई महत्वपूर्ण प्रसंग छूट गये हैं। इसी आशय से इसका विधिवत् प्रकाशन अत्यावश्यक है।

बैरायठा में लोक कवियों ने कई प्रसंग महाभारत कथा से हटकर दिये हैं मूल कहानी एक जैसी होने पर भी कई प्रसंगों में अंतर है। सुधी पाठकों को यही शोध का विषय है। प्रस्तुत आलेख में पाण्डवों के जन्म का प्रसंग प्रस्तुत किया जा रहा है।

पांडवों का जन्म -

कौंना के घर गैल में, कौना की आवन जान,
कोतरमा घर गैल में, रिखियों की आबन जान रे कै
पंडो राजा गाइये जू....
हांत जोर विनती करें रे, सुनो रिखी महराज
आज नेवतें हमारें हुइयें, सेवा करो रे भरपूर रे कै.....
बोले ने रिखिया जा कहें रे, कौती सुनो हमारी बात
हर जुते हम खायें नहीं रे, मूसर कुटे ने खांय रे कै.....
अनब्याही गाय के रे, होवें नोने दूद रे कै.....
बाकी अग्नी चुरे नई खाय रे कै.....
नोबद पलका बिछ गये रे, जिनकी शोभा कही ने जाय
नरम गदेला बिछ गये काहे, रिखिया करें रे आराम रे कै .....

बेतों बैठीं कातरमा दोर रे कै.....
घर सें कोंती चल भयी रे, जिनखों चलत लगे ने झेल
दो-दो घरी के बीच में काहे, घूमत नगर बजार रे कै.....
जहां बस गये हैं चतुर बसोर रे कै.....
बोले ने कोंती जा कहे रे, भैया सुनो हमारी बात
लेंड़ी देहरिया हमखों दे दे, रिखियों के कर लये सनमान रे कै...
हांत जोर विनती करे रे, मालकन सुनो हमारी बात
अरे लेंड़ी देहरिया हमरें नैयां, नैयां पटंगी मोरें बांस रे कै...
बोले ने कौती जा कहे रे, भैया सुनो हमारी बात
अरे बांस पटंगी कटवा ले काहे, लेंड़ी बनादे मोरे राम रे कै.
बांस पटंगी कट गये रे, तुम सुनो हमारी बात
लेंडी देहरिया बज गयी काये, शोभा कहीं ने जाय रे कै.....
बातो बन गई देहरिया मोरे राम रे कै.....
लैकें देहरिया जा रयी कोंती राम रे कै.....
उनने कजलीवन की धर लई नोनें गैल रे कै.....

जहां बड़ी तलैया मोरे राम रे कै.....
जब ठाड़ी पसाई उर धान रे कै.....
भैया लेंडी देहरिया फेरी मोरे राम रे कै.....
बातो झर गई पसाई और धान रे कै.....

साखः वेतो एक पांव से ठांड़ी हती रे, जिनको ईसुर सें लगरव ध्यान
हली सिंगासन भज भगवान की, गादी हली मोरे राम रे कै.....
बातो गादी डगमन हो रयी मोरे राम रे कै.....
बोलने ईसुर जा कहं रे, भैया सुनो हमारी बात
देखो साटका जल्दी सें काहे, कल में तपसी भओ को राम रे कै.
देखी साटका नारद मुनी ने, जिनकी शोभा कही ने जाय
ठांड़ी कोतरमा कजली वन में, तुमई सें लग रओ नोने ध्यान रेकै.
उनने रिखिया तो नेवते मोरे राम रे कै.....
उनखों चायने पसाई और धान रे कै.....
आकासवानी हो गई हती रे, कोंती सुनरे हमारी बात
अरे आंखें कार्य मीची हती रे, अरे मिलहे पसाई और धान रे कै..
घेरऊ अंधूरा चल भवतो रे, जेकी शोभा कही ने जाय
अरे घेरऊ धान इखट्ठी हो गई, अर भर लई दोहरिया मोरे राम रे कै.
बातो ईसुर की कला मोरे राम रे कै.....
कोंती आंखें खोली हती रे, जिनकी शोभा कही ने जाय
अरे धान सें दुहरिया उगलन लागी, लीला रहस भगवान रे कै..
लैंके दुहरिया जारयी मोरे राम रे कै.....
जिनखों चलत लगे ने झेर रे कै.....
बेतो पौंची महल में मोरे राम रे कै.....
वाउन चिरैयें नेवतत हर्ती रे, जिनकी शोभा कही ने जाय
रोज चिरैयो खों चुन दै रयीं, उदना अबेरा हो गई मोरे राम रे कै..
सबरी चिरैयां बैठीं मोरे राम रे कै.....
बोले चिरैया जा कहे रहे, मालकन सुनो हमारी बात
अरे का गल्ती तो हमसें हो गई, भोजन मिले ने मोरे राम रे कै....
बेतो कै रयी धरम की बात रे कै.....
ऐसी दोहरिया धर दई मोरे राम रे कै.....
उनने धर दई चौक में मोरे राम रे कै.....
अरे धान हमाई दर दियो रे, अबने करो विलम के काम
रिखियो के नेवते हमने कर लये, पूरे करो रे सनमान रे कै.....
वे तो वाउन चिरैयां लग गई मोरे राम रे कै.....
बाउन चिरैयां जुर गई हर्ती रे, जिनकी शोभा कही ने जाय
पुलका पुलका न्यारे कर दये, चावरों लगा दई नोने रास रे कै....
सबखों चुन तो दे रयी मोरे राम रे कै.....

साखः काये खों गा लऊ गुरु आपने, अरे काहे विराम्मन देव
अरे काये खों गा लऊ मैया शारदा, काहे पवन हनूमान रे कै.....
भैया गुन खों गा लऊ गुरु आपने रे, पुजवे विराम्मन देव
भाखा खों गा लऊ भैया शारदा, बल खों पवन हनुमान रे कै.....
चाउर कोतरमा धरे हैं मोरे राम रे कै.....
उनने लै लयी कसेंड़ी मोरे राम रे कै.....
उनने धर लये ग्वालन कैसे भेष रे कै.....
बेतो कजलीवन खों नोने जायं रे कै.....
जिनखों चलत लगे ने नोने झेल रे कै.....
अरे सुरहन गऊयें जहां चर रयी हैं उतै पौंची तो जाय मोरे राम रे कै.
जहां सुरहन तो बगरी मोरे राम रे कै,
बोले ने कोंती जा कहे रे, माता सुनो हमारी बात
आज नेवते रिखियों के कर लये, अनब्यानी तो नैयां मोरे राम रे कै..
बा तो एक खपी है मोरे राम रे कै, जब तो खप रयी तलैयों मोरे राम रे कै.....
जब तो ब्यानी लो नैयां मोरे राम रे कै,

मईखों कोंती निग रयी रे, जिनखों चलत लगे ने झेल
अरे एक तो टलिया खपी हती तलैया उतई तो पांची मोरे राम रे कै.
उनने धर लई कसेंड़ी मोरे राम रे कै,
पानी तो भर रयी खुरियों बीच रे कै, हो रयी परेसान कोतरमा मोरे राम रे कै.....
जब तो हरियायी कोंती टोरी हती रे
अरे गऊ खां धर दयी आज, अरे ईसुर किरपा हो गई
काहे हुमसा लई तलैयों से मोरे राम रे कै,
गैया बाहर तो आ गई मोरे राम रे कै, बा तो जिन्दगी में बियानी नैयां मोरे राम रे!
जिनके ईसुर में लग रये नोने ध्यान रे कै.....

साखः एक पांव सें ठांड़ी हती रे, जिनकी शोभा कही ने जाय
अरे गादी डुग गई ईसुर भगवान की गादी तो ठेरे ने आज रे कै..
वे तो बोले ईसुर मोरे राम रे कै,
देखो साटका जल्दी करो रे अरे गादी ने ठेरे आज रे कै.....
जिनखों अनब्यानी के चायने नोने दूध रे कै....
जिनखों दूद तो दे-दे आज रे कै
आकासवानी तो हो गई हती रे, कोंती सुनो हमारी बात
हरे हांत गैया पै फेरो काहे, अरे बा तो पना रयी मोरे राम रे कै..
बा तो ईसुर की किरपा नोने होय रे कै.....
लगा कछोटो कोतरमा बैठी हती रे और गैयापना गई आज
अरे दोई हांतों कोतरमा ने गैया लगा लयी मोरे राम रे कै.....
बा तो भर लई कसेंड़ी मोरे राम रे कै, वे तो चरन टेक रयी दीनानाथ रे कै.....
लेके कसेंड़ी चली तो गई आज रे कै, जिनखों चलत लगे ने नोने झेल रे कै.....

साखः भोर की बिरियां दुफैर भये रे, अरे लौट रही छकवार
कोतरमा महलों में पोंची शोभा कही ने जाय रे कै
हरघोड़ी बिरमाखुरी रे कै बासक जीन पलान
अरे चंद सूरज दोई पाये कइये चढ़के आ गये चतुर सुजान रे कै
कोंती रिखियों के कर रयी सन्मान रे कै
चौका बासन कर रयी हती रे, जिनकी शोभा कही न आय
बे तो अस्नान कर गयी मोरे राम रे कै.....
अस्नान करकें फारग भयी रे, अरे कोंती के सुनले हवाल
भर लये तबेला काये अदन से, अदन तो धर दये मोरे राम रे कै.
जिनखों सूरज से लग रव नोने ध्यान रे कै,
उनको ईसुर से लग रव नोने ध्यान रे कै.....
सहस किरन धरती तपो रे, ईसुर सुनो हमारी बात
अरे एक किरन तुम छोड़ो काहे, रिखियों के करो सन्मान रे कै..
वे तो सूरज से कर रयी नोने ध्यान रे कैं,
एक किरन धरनी तपी रे, एक किरन दई छोड़
एक किरन चूले पे तप रयी अदन तो बदर होय रे कै.....
जिनने डारे पसाई के चाउर रे कै.....
वो तो चुर गये हैं चावर मोरे राम रे कै.....
चाउर हते सो चुर गये रे ओई में डारे दूद
खीर कोतरमा ने बन रयी काहे शोभा कही ने जाये रे कै.....
उर ओंटे हैं उनने नोने दूद रे कै, वे तो पूरे करें रे सत्कार रे कै
हांत जोर विनती करें रे रिखिया सुनो हमारी बात
भोजन तैयार हो गये काहे जेबे की करियो ने देर रे कै.....
उनने गडुवा तो भर लये मोरे राम रे कै.....
जिनने हांत तो धो लये मोरे राम रे कै.....
उनने चरन पखारे मोरे राम रे कै, वे तो थार परोसे दीनानाथ रे कै
रिखिया भोजन कर रये रे, जिनकी शोभा कही ने जाय

रिखिया खुश दिल हो गये काहे शोभा कही ने जाय रे कै.....
बोलने रिखिया जा कहें रे, कोंती सुनो हमारी बात
अरे बालक हमखों दिखाने नैयां, भेद बतैयो मोरे राम रे कै.....
हांत जोर विनती करें रे, रिखिया सुनो हमारी बात
बालक ईसुर दये नयी काये, अंगनवा में खेलत ने दिखांय रे कै.
उनने पूरे करे रे सत्कार रे कै,
बोलने रिखिया जा कहे रे कोंती सुनो हमारी बात
चारक बजे कुटियों आइयो, देहें तुमें वरदान रे कै.....
भोर होत भुनसारे भये रे, जिनकी शोभा कही ने जाय
अर चार बजे से रिखिया उठ गंगा नहावे जाये रे कै.....
इतनई बेर को बादो नोनो देय रे कै, बातो गंधारन सुन रयी रे मोरे राम रे कै.....

साखः जो जैसी करनी करै, सो तैसई फल पाय
अरे बीजा बैदये बमूर के काहे, दाखों खो पछताय रे कै
भैया रिखिया तो कुटियों नोने जाय रे कै, नाये शाम तो हो रयी दीनानाथ रे कै
बातों गंधारन सुन रयी मोरे राम रे कै, जेकी रात लगत नैयां नींद रे कै.....
रात के तीन बज रये हते रे, जेखों चलत लगे ने देर
नहा धोके फारग हो गई, रिखियों की धरलई नोने गैल रे कै
बातो पोंची झमकों मोरे राम रे कै, वे तो रिखिया तो सो रये भरपूर रे कै.....
जाके कुटिया में पोंची मोरे राम रे कै, बातो दै रयी इसारे मोरे राम रे कै..
रिखियो की नींद खुल गई हती रे, जिनकी शोभा कही ने जाय
कोतरमा द्वार पे आ गई, हम तो नींद में सो रये मोरे राम रे कै.....
रिखिया उठकें तो जा रये सारे रे कै, बे तो गंगा नहावे नोने जाय रे कै
बे तो गंगा में पांचे जाय रे कै.....

साखः गंगा में लोटा बोरे हते रे, अरे गंगा जी ने दये ललकार
अरे कौन पापी आओ काहे रात, सोउत जगा दई मोरे राम रे कै
रिखिया उतई समज रये मोरे राम रे कै, धोका तो हो रये मोरे राम रे कै
उनने दतोने तो टोरीं मोरे राम रे कै, पेड़े ने ललकार दव है मोरे राम रे कै
कुटेम पे तो पोंचे हते रे, जिनकी शोभा कही ने जाय
अरे दतोन टोर कें धर लई काहे बे तो नहा रये गंगा में मोरे राम रे कै
नहा धोयकें चल भये रे, जिनखों चलत लगे ने झेल
दो-दो घड़ी के झेल में काहे, कुटियों पे पोंचे भोरे राम रे कै
वे तो पूजा पाठ कर रये मोरे राम रे कै,
उनने पूजा तो कर लयी मोरे राम रे कै.....

साखः हांत तुमरिया में डारे हते रे, जिनकी शोभा कही ने जाय
"सौ कनूका" निकरे काहे, गंधारन खो दे दये मोरे राम रे कै
बे तो पुत्र तो दे दये मोरे राम रे कै, लेके दान गंधारन चली जाय रे कै
रिखिया तो कोती में भूले मोरे राम रे कै, बा तो पोंची मिहल में मोरे राम रे कै
बे तो लोटा तो भर रये दीनानाथ रे कै, बे तो जल तो चढ़ा रये मोरे राम रे कै
बे तो लोटा भरकें कुटिया जा रये मोरे राम रे कै,
दो-दो घरी के बीच में रे,
जिनकी शोभा कही ने जाय,
अरे कुटिया रिखिया पोंचे काहे,
उते कातरमा तो ठांड़ी मोरे राम रे कै,
बे तो पूजा पाठ कर रये मोरे राम रे कै
पूजा पठ कर लये हते रे, रिखियों के सुनले ब्यान
तूमी में हात डारे काहे, अरे पांचई कनूका आ गये राम रे कै
वे तो कोतरमा खो सौंपे जाय रे कै,
कोती हांत जोर बिनती करे रे,
तुम सुनो रिखि महाराज,
पांच पुत्र से एसई अच्छे, वे तो मोरे राम रे कै.....
वे तो एक-एक खो बीस-बीस होंय रे कै,
ओखों तुम सौ दे दये हते रे
अरे हमें दये तुमने पांच,
ऐसें से तो ऐसई अच्छे हम जा रये है अपने मकान रे कै.
बे तो बोलने रिखिया मेरे राम रे कै,
बोलने रिखिया जा कहे रे कोंती सुनो हमारी बात
अरे सौ को मारवें बारो एकई हुईये, मन में धीरज धरले आज रे कै
कोंती सुनले हमारी नोने बात रे कै,
अरे सौ अंडा मुरगी धरे रे, बा तो टोर बिलैया खाय
अरे शेरा तो नाहर जनमें सौ-सौ तो मारे राम रे कै.....
सौ को मरैया एकई होय रे कै.....
हांत जोर कें ले लये हते रे, जिनकी शोभा कही ने जाय
कोतरमा जब गैल धर लयी चलतों लगत नैया झेल रे कै.....
बे तो बाखरों पोंची मोरे राम रे कै.....

साखः सबरे राग दिन में गाइये रे, कै बैरायठा आदी रात
सुनता होय उठ जागिये काहे मूरख डरे पछताय रे कै
जब मूरख डरे पछताय रे कै, जब उनने तो लै लये बड़दान रे कै
जब नेय बतादव महराज रे कै, जब बोले ऋषि महराज रे कै
जब सुनले ने रानी मोरी बात रे कै, जब लरका तो हुइये महराज रे कै
जब वीरई तो हुइये महराज रे कै, जब कुन्ती तो बोले नोने बात रे कै

साखः बोले कुन्ती जा कहे रे, सुनो ऋषि महराज
ज्ञान बतादे आपनो भैया, सेवा तो कर लये भरपूर रे कै
जब सेवा तो कर लये भरपूर रे कै, जब बोले ऋषि महराज रे कै
जब सुनले ने कुन्ती मोरी बात रे कै, जब करदे विदा महराज रे कै
जब जा रये मुनि महराज रे कै, जब जंगल की पकरी उनने गैल रे कै
जब मन में तो सोचे नोने बात रे कै, जब ऊसई तो दै दये बड़दान रे कै
जब उनकी तो लै लये नोने बात रे कै, जब लै रयी परीक्षा महराज रे कै
जब सपरे तो खोरे महराज रे कै, जब सूरज से कर रयी परनाम रे कै
जब मंत्रई तो पढ़ रयी महराज रे कै, जब सूरज के पर गई कान रे कै
जब उनने तो छोड़ी नोने शाल रे कै, जब आ गये है सूरज भगवान रे कै
जब कुन्ती तो ठांड़ी मोरे राम रे कै, जब नोनी तो बीदी महराज रे कै
जब बोले ने सूरज भगवान रे कै, जब सुनले ने कुन्ती नोने बात रे कै
जब कैसे बुला लये महराज रे कै, जब बोले ने कुन्ती नोने बात रे कै
जब सुनियो ने सूरज भगवान रे कै, जब लै रये हैं इजवत महराज रे कै
जब आ गये हैं सूरज भगवान रे कै, जब वापस तो होजा महराज रे कै
जब बोले ने सूरज भगवान रे कै, जब बिन तो दान नहीं जॉय रे कै
जब तुमखों तो दैहें बड़दान रे कै, जब रानी तो कंप गई महराज रे कै
जब ऐसी विदा दई करतार रे कै, जब बोले ने सूरज भगवान रे कै
जब ललुवा तो हुइये महराज रे कै, जब हुइये करन महराज रे कै
जब वीरों तो कइये नोने वीर रे कै, जब कुन्ती तो सोचे नोने बात रे कै
जब राखे तो नोने सात रे कै, जब चिंता में पर गई नोने नार रे कै
जब मईना तो हो रेय भरपूर रे कै, जब राजा तो हो गये महराज रे कै
जब कईये करन उदराज रे कै, जब रानी तो सोचे नोने बात रे कै
जब राजा से पूछे नोने बात रे कै, जब इन्दुर से कर रई नोने बात रे कै
जब कैसो तो कर लऊ उपदेश रे कै, जब बोले है इन्दुर महराज रे कै
जब सुनले ने कुन्ती नोने बात रे कै, जब खोजो कठेरा महराज रे कै
जब पुत्र तो पारो महराज रे कै, जब जमना तो दैदे बुआय रे कै
जब आ गव कठेरा महराज रे कै, जब पुत्र तो पारो महराज रे कै 3

कौरव-पाण्डवों का जन्म

किसका घर रास्ते में पड़ता है? वहां पर कौन लोग आते-जाते हैं? कुन्ती माता का घर रास्ते में है, वहां पर ऋषियों का

आवागमन होता रहता है, सो मैं पांडवों की गाथा गा रही हूं।

कुन्ती ने ऋषियों के आगमन पर उन्हें प्रणाम किया, उनसे निवेदन किया कि मुनिवर आज आप मेरी कुटिया पर आमंत्रित हैं, मेरे यहां भोजन कीजिए। ऋषियों ने कुन्ती से कहा – देवी! मेरी बात सुनो, हम हल का जुता अनाज नहीं खाते, मूसल का कुटा भी नहीं खायेंगे। अनब्याही गाय का दूध ग्रहण करते हैं एवं बिना अग्नि से पका भोजन हम करते हैं। यदि सारी व्यवस्थाएं हो सकें, तो हम अवश्य भोजन करेंगे।

कुन्ती ने पुनः हाथ जोड़ निवेदन किया – महराज! आप मेरा निमंत्रण स्वीकार करें। मैं आपको यथोचित सम्मान स्वागत करूंगी। ऋषि रुकने को तैयार हुए। कुन्ती ने सबको आराम के लिए यथोचि व्यवस्था की। ऋषिगण आराम करने लगे।

कुन्ती अपने निवास से चली और पूरे बाजार में घुमती हुई बांस के बर्तन बनाने वाले के घर पहुंची। वह बड़ा चतुर था। कुन्ती बोली – भैया! मुझे ऋषियों के स्वागत के लिए 'लेड़ी दोहरिया' (एक तरह का बांस का बना बर्तन, जिसमें पसाई धान एकत्रित की जाती है) दे दो। बांस के बर्तन बनाने वाले ने कुन्ती से हाथ जोड़कर विनती की कि – महारानी! मेरे पास न तो लेड़ी दोहरिया है और न ही कटंग बांस है जिससे वह बनाई जाती है, मैं असमर्थ हूं।

कुन्ती ने कहा कि – बांस कटंगी कटवा लो और मुझे जल्दी से दोहरिया बनाकर दे दो। बांस कटंगी कटवाकर उसने कुन्ती को दोहरिया बनाकर दे दी। वह इतनी अच्छी दोहरिया बनी कि उसकी शोभा का वर्णन नहीं किया जा सकता। उसे लेकर कुन्ती महारानी चल दी। उन्होंने कजलीवन का रास्ता पकड़ा, वहां पर बड़े-बड़े तालाब हैं, जहां पर पसाई धान होता है। पसाई धान बिना जुते स्थान में होता है। उन्होंने जैसे ही दोहरिया फिराई कि पसाई धान झर-झर गिरने लगा। कुन्ती घबराई कि जब धान ही नहीं है तो फिर ऋषियों को क्या खिलाऊंगी।

कुन्ती ने जब देखा कि धान नहीं मिल रहा तो उन्होंने ईश्वर का ध्यान किया। भगवान का सिंहासन हिला, उन्होंने नारद जी से कहा कि – देखो, कलयुग में कौन तपस्वी हो गया है? नारद जी बोले कि – कजलीवन में कुन्ती तपस्या कर रही है। उन्होंने ऋषियों को आमंत्रित किया है, उन्हें पसाई धान के चावल नहीं मिल रहे हैं। भगवान की आकाशवाणी हुई कि तुम्हारा कार्य अवश्य होगा। उसी समय अचानक आंधी आई और सब तरफसे धान दोहरिया में भर गई, जब कुन्ती ने आंखें खोली तो देखा कि दोहरिया धान से भरी है। तो वह उसे उठाकर घर चल दी। फिर उन्होनें चिड़ियों को आमंत्रित किया। चिड़ियों ने उस धान के चावल निकाले। फिर कुन्ती ने घड़ा उठाया और कजलीवन को चल दी, जहां पर सुरहिन गायें थीं। कुन्ती उनसे बोली – हे माता! मैंने आज ऋषियों को आमंत्रित किया है, उन्हें खिलाने के लिए खीर में जो दूध की जरूरत पड़ेगी वह अनब्याही गाय का होना चाहिए। इसलिए मैं आपके पास आई हूं, कृपया मेरी सहायता करें। सुरहिन गाय बोली कि – हम में से तो कोई भी अनब्याही नहीं है। हां, आगे जाकर देखिये, वहां एक गाय मिलेगी जो कीचड़ में धंसी हुई है, वह अनब्याही है। कुन्ती ने जाकर देखा कि एक गाय कीचड़ में धंसी हुई थी, उसको बाहर निकाला, उसको हरी-हरी घास खिलाई और उसे दोहने बैठी तो ईश्वर की कृपा देखिये कि उस अनबयाही गाय से दूध निकलने लगा। कुन्ती अपना दूध का बर्तन भरकर वहां से चल दी। फिर आकर स्नान क्रिया। एक बर्तन में पानी भरकर सूर्य भगवान का ध्यान किया – हे मेरे कुलदेव! मुझे ऋषियों के लिए खीर बनानी है और वह खीर बिना आग से बन जाए यह उनकी शर्त है, आप संसार को अपनी सहस्त्र किरणों से गर्मी प्रदान करते हैं, उसमें से एक किरण की गर्मी मेरे इस बर्तन में डाल दीजिए, जिससे खीर पक जाए और मैं ऋषियों का सत्कार कर सकूं। सूर्यदेव की कृपा से उनकी खीर पककर तैयार हो गई। उन्होंने ऋषियों को बुलाया, उनके चरण पखारे और उन्हें भोजन करवाया।

ऋषियों ने कुन्ती से पूछा कि – इस घर में कोई बच्चा नहीं दिख रहा, इसका कारण बतलाओ? कुन्ती बोली – हे प्रभु! अभी तक ईश्वर ने हमें कोई बालक नहीं दिया, नहीं तो वे अभी तक आपको मेरे आंगन में खेलते हुए दिखाई देते। ऋषि बोले – मेरी कुटी पर सुबह के चार बजे तुम आ जाना। यह सब गान्धारी भी सुन रही थी। गान्धारी-कुन्ती के पूर्व ही ऋषियों के पास पहुंच गई, ऋषियों को जगाया। ऋषि उठकर गंगाजी में स्नान करने चल दिये, जैसे ही उन्होंने पानी को हाथ लगाया, गंगाजी ने गुस्से में कहा कि – इतनी रात गये कौन पापी मुझे सोते से जगा रहा है। ऋषि वहीं समझ गये कि कोई धोखा हुआ है। उन्होंने दतौन तोड़ी तो पेड़ ने भी शिकायत की। नहा-धोकर ऋषि अपनी कुटी पर पहुंचे, पूजन किया और अपने कमण्डल में हाथ डाला तो उनके हाथ में सौ अनाज के दाने आये, वह उन्होंने गान्धारी को दे दिये। ये सौ अनाज के दाने उनके सौ पुत्रों के प्रतीक स्वरूप वरदान थे। ऋषि तो यह समझ रहे थे कि उन्होंने यह अनाज के दाने कुन्ती को दिये हैं। जब रात के चार बजे तब कुन्ती ने स्नान किया, पूजन-पाठ करके पूजन की थाली सजाई और कुटी में ऋषियों के पास पहुंची। उन्होंने देखा कि ऋषि तो सो रहे हैं, वह वहीं पर रुकी रही। जब ऋषियों की नींद खुली तो उन्होंने कुंती को खड़ा पाया। ऋषियों को जब पता चला, तो वह बोले कि हम तो समझ रहे थे कि सतयुग है लेकिन यह तो कलयुग आ गया है, हमने तो उसे कुन्ती समझकर वरदान दे दिया। कुन्ती हाथ जोड़कर बोली कि – अवश्य ही गान्धारी वरदान लेकर चली गई होंगी। ऋषियों ने फिर से गंगाजी में स्नान करने के लिए अपने वस्त्र तथा कमण्डल उठाये, नहा-धोकर अपनी कुटी में आये, पूजा-पाठ की, कमण्डल में हाथ डाला तो पांच दाने उनके हाथ में आये, वे उन्होंने कुन्ती को दे दिये। कुन्ती ने देखा कि ये तो पांच ही हैं। उन्होंने ऋषियों से विनती की – महाराज! यह तो मेरे साथ सरासर अन्याय है, एक को तो आपने सौ पुत्र दे दिये और मुझे पांच, ऐसे तो मैं बांझ ही भली थी। ऋषियों ने समझाया और कहा कि – बेटी! तुम चिन्ता मत करो, तुम्हारा एक-एक पुत्र सौ पुत्रों के बराबर होगा, तुम धैर्य रखो। देखो! मुर्गी तो सैकड़ों अण्डे देती है लेकिन उन्हें तो कोई भी जीव खा जाता है, लेकिन शेरनी तो एक बच्चा जनती है किन्तु वह सैकड़ों को मारने के लिए अकेला काफी होता है। क्रमशः....'''

संदर्भ-

1. महाभारत कथा, चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन दिल्ली, 1996 पृ. 12
2. वही – पृ. 365
3. बैरायठा, डॉ. ओमप्रकाश चौबे, लोक आख्यान आदिवासी लोककला एवं तुलसी साहित्य अकादमी, भोपाल, 2008, पृ. 529 सं. डॉ. कपिल तिवारी
4. बैरायठा गायन, स्त्रोत श्री दौलतराम पटेल, ग्राम तिली, सागर
5. बैरायठा गायन, स्त्रोत श्री हरदास अहिरवार और साथी, ग्राम बम्हौरी, सागर

-गोपालगंज, सागर (म.प्र.)

*****

शेन्जी या जिन्जी (तमिलनाडु) के बुन्देला राजा

-राकेश व्यास
-शिवभूषण सिंह गौतम

शेन्जी या सेनगिरि जिसे बाद में अंग्रेज जिन्जी पुकारने लगे, चेन्नई से लगभग 150 किलोमीटर दूर विलुपुरम जिले का एक महत्वपूर्ण स्थान है। यहां की तीन पहाड़ियों, कृष्णगिरि, राजगिरि और चन्द्रायनदुर्ग पर स्थित महल, मन्दिर, अनाज भंडार व अन्य भवन एक 13 किलोमीटर लम्बे परकोटे और 24 मीटर चौड़ी खाई द्वारा संरक्षित हैं। परकोटे की दीवार और खाई तीनों पहाड़ियों को घेरे हुए है, जिसके कारण इस दुर्ग को शिवाजी महाराज ने सुरक्षा की दृष्टि से सर्वोत्तम दुर्ग कहा था। अंग्रेज इस दुर्भेद किले को 'ट्राय औफदि ईस्ट' कहते थे। सतह से लगभग 240 मीटर की ऊंचाई पर स्थित दुर्ग का क्षेत्रफल लगभग 11 वर्ग किलोमीटर है। इस दुर्ग का इतिहास नवीं शताब्दी के चोला वंश से आरम्भ होता है। इस क्षेत्र में बिखरे पड़े प्रमाण बताते हैं कि इन पहाड़ियों पर जैन मुनि और श्रावक विक्रमी संवत के आरम्भ से रहते आ रहे हैं, जिससे लगता है कि इन पहाड़ियों पर मानवीय बसावट प्राचीन काल से विद्यमान रही है। दुर्ग का इतिहास चोला, विजयनगर, नायक राजवंशों से होता हुआ मराठों, मुगलों, कर्नाटक के नवाबों के बाद फ्रांसिसी और अंग्रेज शासकों तक फैला हुआ है। इसी बीच में 15 वर्ष का समय ऐसा रहा जब बुन्देले राजा सरूपसिंह और उनके बेटे तेजसिंह या देसिंघू ने शिन्जी पर राज्य किया। वे कितने लोकप्रिय शासक रहे होंगे यह इसी बात से प्रमाणित है कि उनकी विरुदावली तमिल और तेलुगु भाषा में आज भी लोकप्रिय हैं और ग्रामीण क्षेत्रों में गाई जाती है। बुन्देलखंड वासी इन नायकों की ऐतिहासिक उपस्थिति से भी अनभिज्ञ हैं पर उन्हें यह जान कर आश्चर्य मिश्रित गर्व होगा कि इस विरुदावली के महानायक बुन्देला राजा देसिंघू पर तमिल भाषा में कई बार चलचित्र भी बन चुके हैं, जिनमें से एक 1960 में बने चलचित्र में एम. जी. रामचन्द्रन जैसे तमिल सिनेमा के प्रसिद्ध अभिनेता और राजनीतिज्ञ ने राजा देसिंघू की मुख्य भूमिका निभाई थी।

जिन्जी का इतिहास और इसके शासक-

श्री श्रीनिवासचारी द्वारा जिन्जी के इतिहास पर एक विस्तृत शोधपूर्ण पुस्तक सन 1943 में लिखी गई थी, जिससे जिन्जी से जुड़े ऐतिहासिक तथ्यों की जानकारी हमें मिलती है। राजा देसिंघू या तेजसिंह बुन्देला के जीवन पर आधारित तमिल विरुदावली या गाथागीत की बात करने से पहले कुछ उनके इतिहास की बात कर लेना उचित होगा। इस बात के समुचित प्रमाण मिलते हैं कि जिन्जी के आसपास के क्षेत्रों का विकास चोला विजयालया राजवंश के समय में होना आरम्भ हो गया था। नवमी शताब्दी में राजेन्द्र चोला प्रथम के समय में जिन्जी चोला मंडलम के क्षेत्र में आता था। इन्हीं दिनों में होयसला, काकातिया और पांड्यान राजवंशों के बढ़ते प्रभाव के कारण जिन्जी में दुर्ग व सुदृढ़ सुरक्षा व्यवस्था का निर्माण आरम्भ हुआ होगा। शनः-शनः जिन्जी का सामरिक महत्व बढ़ता गया और विभिन्न राजाओं ने इसे अपनी आवश्यकता के अनुसार सुदृढ़ता प्रदान की। कहा जाता है कि आनन्द कोन नामक एक चरवाहे को पश्चिमी पहाड़ी पर विशाल धनराशि और सोना-चाँदी मिल गये थे जिससे उसने यहां कमलागिरि को अपने नाम के ऊपर आनन्दगिरि का नाम देकर दुर्ग का निर्माण कार्य करवाया था। उसने इसी धन की सहायता से वहां रहने वाले लड़ाकों की सेना तैयार कर के आसपास के क्षेत्र देवनूर, जयनगोंदन, मेलचेरी आदि को भी अपने अधिकार में ले लिया था। उसने अपने जाति भाइयों को बड़े-बड़े पद प्रदान कर 'सम्मानमनार' की उपाधि दी थी। आनन्द कोन के बाद कृष्णा कोन और उसके बाद कोनेरी कोन और गोविंद कोन ने कृष्णागिरि पर सीढ़ियां बनवाई और गोपालस्वामी मन्दिर का निर्माण करवाया। पुलिया कोन ने कालान्तर में जनहित के अनेक निर्माण कार्य करवाये। कोन राजवंश के बाद कुरुम्बरों का शासन जिन्जी पर रहा। उनके बाद विजयनगरम के राजवंश का प्रभाव लगभग सम्पूर्ण दक्षिण भारत पर रहा, जिससे जिन्जी भी अछूता नहीं रह सका। 17वीं शताब्दी में विजयनगर के नायक कुल के तीन प्रतिनिधि तंजावुर, मदुरा और जिन्जी पर स्वतन्त्र शासन करने लगे पर वे विजयनगर को वार्षिक कर देते थे और उनकी संप्रभुता को स्वीकारते थे। यही समय था जब दक्षिण भारत के पांड्य, चोल और चेर वंश भी विजयनगर की सत्ता को मानते थे और उन्हें भेंट आदि देकर प्रसन्न रखते थे। 17वीं शताब्दी के मध्य से जिन्जी की सत्ता में लगातार परिवर्तन होते रहे। बीजापुर के नवाब ने 1638-39 में रन्दूला खां के सेनापतित्व में जिन्जी पर आक्रमण किया और यहां का अधिकार प्राप्त किया। परन्तु दस वर्ष के अन्दर शिवाजी के मराठों ने जिन्जी पर अधिकार कर लिया जो कि 1698 तक चला। उसके बाद मुगलों और उनके मनसबदार बुन्देलों का शासन जिन्जी पर सन 1714 तक रहा।

1690 से 1697 तक सात वर्ष चले लम्बे घेराव और लड़ाईयों के बाद जिन्जी पर मुगलों का अधिकार तो हो गया पर जुल्फिक्कार खां को यहां की किलेदारी गुसफ्फर खां और बाद में शिवनाथसिंह को सौंप कर तंजावुर व अन्य स्थानों को सुरक्षित करने के लिये जाना पड़ा। शिवनाथसिंह की जागीर में सात तालुक थे। जिन्जी के घेराव के दौरान शिवनाथसिंह को अपनी सेना के साथ उसकी सहायता के लिये दिल्ली से भेजा गया था। शिवनाथसिंह के सहायकों को भी मनसब और जागीरें तिरुवनामलाई और तिरुवती में दी गई। तत्कालीन तमिल पांडुलिपियों के अनुसार शिवनाथसिंह जयपुर के मिर्जा राजा जयसिंह के सरदारों में से एक थे। इसी उथल-पुथल भरे समय में सन 1700 में औरंगजेब के आदेश के अनुसार सरूपसिंह बुन्देला को 2500 का मनसब और 12 लाख की जागीर दे कर जिन्जी की कमान दे दी गई। फोर्ट सैंट डेविड जिसे पहले फोर्ट देवनामपट्टनम भी कहते थे के दस्तावेजों से पता चलता है कि 17 जनवरी 1700 को सरूपसिंह बुन्देला जिन्जी के सर्वेसर्वा बने थे। सन 1703 के अंग्रेजी मद्रास रिकार्ड में लिखा है कि बादशाह के फरमान के अनुसार सरूपसिंह को जिन्जी, कुद्दालूर, तिरुप्पापुलियुर और मन्जाकुप्पम का स्वायत्त शासक घोषित किया गया था। सन 1712 के समझौते से पहले तक उनका अंग्रजों से युद्ध चलता रहता था, जिस कारण अंग्रजों को भारी हानि उठानी पड़ रही थी और उनके अफ्सर और सिपाही जिन्जी की कैद में थे। राजा सरूपसिंह ने जहां एक ओर दिल्ली को कर या 'नजर' देना बन्द कर दिया था, वहीं दूसरी ओर

खालसा के अनेक गांव भी जीत लिये थे। इन दिनों में औरंगजेब की मृत्यु के बाद दिल्ली में भी राजनीतिक उथल पुथल चल रही थी, जिसका पूरा लाभ सरूपसिंह उठा रहे थे। इन बातों की जानकारी सदातुल्लाह खां दिल्ली के बादशाह को लगातार भेज रहा था, परन्तु 1712 तक इस ओर कोई ध्यान नहीं दिया गया। उस समय के इतिहासकार नारायणस्वामी पिल्लई के लेख जो कि मैकेन्जी डाकुमेन्ट्स के साथ सुरक्षित हैंय और अंग्रेजों की पत्रावलियों से पता चलता है कि सरूपसिंह दक्षिण में उस समय के एक महत्वपूर्ण राजा थे और उनके पास धन की कोई कमी नहीं थी, जिससे वे एक बड़ी सेना रखते थे और उनके अधिकार में सामरिक महत्व के कई किले थे। सन 1713 के अन्त में राजा सरूपसिंह की मृत्यु हो गई और तेजसिंह ने राज्य का उत्तराधिकार सम्हाल लिया, जो चला तो मात्र 10 माह ही पर उन्हें प्रसिद्धि बहुत मिली।

राजा तेजसिंह या देसिंघू के बारे में जानकारी जिन्जी निवासी इतिहासकार नारायणस्वामी पिल्लई के लेखों से ही मिलती है। उनके अनुसार पिता की मृत्यु के समय वे अपने सिपाहियों के साथ बिदनूर के राजा की सहायता कर रहे थे, जो उस समय अपने विरोधियों के कारण परेशान थे। तेजसिंह ने वीरता से लड़ते हुए बिदनूर के राजा को जीत दिलाई, जिससे प्रसन्न होकर उसने इन्हें 1 लाख रुपया और अपने अस्तबल का सबसे सुंदर घोड़ा भेंट में दिया। पिता की मृत्यु पर तेजसिंह जिन्जी आये और उनके अन्तिम संस्कार के बाद राज्य की बागडोर सम्हाल ली। उस समय दरबार हुआ जिसमें जिन्जी राज्य के अधिकारियों ने तो उन्हें भेंट आदि दी, पर फौजदारी अधिकारियों ने ऐसा नहीं किया क्योंकि वे मानते थे कि नये राजा को दिल्ली के बादशाह या कम से कम फौजदार सदातुल्लाह खां से जिन्जी पर स्वामित्व का ताजा फरमान प्राप्त करना चाहिये। इसी उहापोह में 6 महीने बीत गये, तब उनके वकनवीस पैय्या रामाकृष्णा ने उन्हें सलाह दी कि उन्हें जिन्जी पर अधिकार का प्रमाणपत्र ले लेना चाहिये। राजा तेजसिंह का मानना था कि उनके पिता को स्वयं आलमगीर का लिखा अधिकारपत्र (मिरास) प्राप्त था इसलिये उन्हें अब किसी ताजा प्रमाणपत्र की आवश्यकता नहीं है। धर दिल्ली में बहादुर शाह के बाद फर्रुखसियर बादशाह बन चुका था और खजाने में धन की कमी से परेशान था। उसने सदातुल्लाह खां और सरूपसिंह के नाम पत्र लिख कर जिन्जी से कर के बाकी 70 लाख रुपयों की मांग रखी। राजा तेजसिंह से कोई उत्तर प्राप्त न होने पर सदातुल्लाह खां ने अपने शेरिस्तादार लाला टोडरमल को जिन्जी भेजा। वे जिन्जी में वेंकटरामास्वामी मन्दिर के पास ठहरे जहां उनसे मिलने पैय्या रामाकृष्णा आदि अधिकारी आये और उन्हें टोडरमल ने शाही फरमान और नवाबी इनायतनामा दिखाया। रामाकृष्णा ने तेजसिंह को टोडरमल से मिलने को तैयार तो कर लिया पर उनकी मुलाकातों का कुछ परिणाम नहीं निकला। टोडरमल वापस आर्कोट चले गये और सदातुल्लाह खां को सारी जानकारी दी। उन लोगों को लगा कि तेजसिंह को अपने 350 घुड़सवारों और 500 सैनिकों पर अत्यधिक भरोसा है और बिना युद्ध के जिन्जी से कुछ भी मिल पाना असंभव है। नवाब ने तब अपनी फौज तिमरी में एकत्रित करनी आरम्भ कर दी और एक माह में वहां पर 5000 घुड़सवार और 10000 सिपाही इकट्ठे हो गये। इसके अतिरिक्त श्रीकालाहस्ती, वेंकटागिरि के सैनिक, पालीगार, बोम्मराजा और अन्य किलेदार भी सिपाही लेकर आ गये। इस प्रकार सिपाहियों की कुल संख्या 30 हजार तक पहुंच गई। तेजसिंह के सलाहकारों ने उन्हें वस्तुस्थिति से अवगत करा दिया और उन्हें स्वविवेक से कोई भी निर्णय लेने के लिये कहा। नवाबी सेना ने जिन्जी का घेराव प्रारम्भ कर दिया तब तेजसिंह ने अपनी जागीर के एक अन्य किलेदार वालुवदूर से सहायता मांगी, जिसने अपने बेटे मोहब्बत खां और दो अन्य मित्रों को 50 घोड़ों के साथ इनकी सहायता के लिये भेज दिया। तेजसिंह ने अपने सिपाहियों और अनुयायियों से स्पष्ट शब्दों में कहा कि यह युद्ध मरणान्तक होगा अतः वे ही लोग साथ आयें जिन्हें अपनी मातृभूमि से प्रेम है और मृत्यु का भय नहीं है। उसके साथ मोहब्बत खां, 200 घुड़सवार और 300 सैनिक आगे बढ़े। राजा तेजसिंह बिना किसी बात की परवाह किये, अपनी रानी से वीरोचित विदा लेकर और उसे अपने व अन्य स्त्रियों के शील की रक्षा का दायित्व देकर युद्धभूमि की ओर चल पड़े। आगे उन्होंने बाढ़ग्रस्त वराह नदी को पार किया। अब उनके साथ केवल 100 घुड़सवार और पैदल सैनिक थे पर ये वीर बुन्देला सीधे नवाब की सेना पर आक्रमण करने के लिये आगे बढ़ते गये। नवाब के सेनापति दाऊद खां ने बुन्देलों की छोटी सी सेना को चारों ओर से घेर लेने का आदेश दिया, साथ ही कहा कि तेजसिंह को मारना नहीं है वरन जीवित पकड़ना है। नवाब की विशाल सेना से तेजसिंह का भयंकर युद्ध हुआ और अपने मित्र मोहब्बत खां और अधिकांश सिपाहियों के मरने के बाद भी तेजसिंह ने हाथी पर सवार दाऊद खां को अपने भाले से मार गिराया। इस लड़ाई में उनके घोड़े का एक पैर कट गया, जिसके कारण तेजसिंह पैदल ही युद्धरत रहने को विवश हुए। कालाहस्ती के नायक राजा ने उनको जीवित पकड़ने का प्रयास जारी रखा पर तेजसिंह के भीषण शौर्य को देखते हुए उसे अपने बंदूकची को उन्हें मारने का आदेश देना पड़ा। यह घटना 3 अक्तूबर 1714 की है।

राजा तेजसिंह की मृत देह को लेकर नवाब ने जिन्जी में प्रवेश किया। राजा सरूपसिंह के कल्याणमहल में नवाब का दरबार लगा, जहां से उसने राजा की मृत्यु की सूचना रानी को भेजी। रानी ने कहलवाया कि नवाब सदातुल्लाह खां उनके पिता तुल्य हैं और वे अपने पति की देह के साथ सती होना चाहती हैं। नवाब ने रानी की इच्छा का सम्मान रखते हुए राज्य की ओर से उन्हें व अन्य क्षत्रिय ललनाओं को जौहर के लिये सारी सुविधायें उपलब्ध कराने का आदेश दिया। राजा तेजसिंह का अन्तिम संस्कार और रानी का जौहर रामा शेट्टी द्वारा निर्मित तालाब के घाट पर सम्पन्न हुआ। दाह संस्कार तेजसिंह के भतीजे अलूपसिंह ने किया। नवाब ने आदेश दिया कि तेजसिंह के सम्बन्धी और साथी राज्य में रह सकते हैं और उनके पद भी ज्यों के त्यों कायम रहेंगे। पर उन लोगों ने कदलीमलाई के पास एक नई बस्ती बसाने की इच्छा प्रकट की जहां पर तेजसिंह की मृत्यु हुई थी। उनको एक कौल के अन्तर्गत वह स्थान दिया गया, जहां उन लोगों ने मोहब्बत खां व अन्य मुसलमान साथियों के मकबरे और तेजसिंह के घोड़े की समाधि भी बनवाई। मोहब्बत खां के शरीर को युद्धभूमि से लाकर तेजसिंह के दाहस्थल के पास ही दफन किया गया और वहां पर पीपल और नीम के पेड़ और बगीचा लगाया गया। ऐसा लिखा है कि अधिकांश बुन्देले इसके बाद वापस बुन्देलखंड लौट गये।

'पोलिटिकल हिस्टरी आफ कर्नाटक अंडर नवाब्स' के

लेखक एन. एस. रामास्वामी के अनुसार औरंगजेब के सेनापति जुल्फिक्कार खां ने 1690 से 1698 तक जिन्जी के किले को शिवाजी के पोते राजाराम से जीतने का प्रयास किया था। आठ वर्ष तक चले इस प्रयास में जितना योगदान मराठों की वीरता का था उतना ही योगदान मुगल सेनापतियों असद खां उसके बेटे जुल्फिक्कार खां और शाहजादे कामबख्श के स्वार्थ का भी था। औरंगजेब ने जब अपने पुत्र कामबख्श को जुल्फिक्कार खां की सहायता के लिये जिन्जी भेजा तब वह अपने सेनापति की गतिविधियों को लेकर चिंतित था क्योंकि उसे पता चल गया था कि जुल्फिक्कार युद्ध को जबरदस्ती लटका रहा है। जुल्फिक्कार और असद को शाहजादे कामबख्श का जिन्जी आना बिल्कुल पसंद नहीं आया और उधर कामबख्श ने भी आते ही मराठों से सांठगांठ कर जुल्फिक्कार को नीचा दिखाना आरम्भ कर दिया। इसी क्रम में एक समय तो असद और जुल्फिक्कार ने मिल कर कामबख्श को कैद भी कर लिया, जिसका बुरा परिणाम उन्हें बाद में दिल्ली में भुगतना पड़ा था। सैय्यदनामा के लेखक जसवंतराय के हवाले से रामास्वामी लिखते हैं कि 1698 में जिन्जी मुगलों के अधिकार में आ गया पर दिल्ली की राजनीति ने जुल्फिक्कार को उसका पूरा अधिकार न देकर सन 1700 में सरूपसिंह बुन्देला को बड़ा मनसब देकर वहां का किलेदार नियुक्त किया, जिन्होंने युद्ध के निर्णायक क्षणों में वीरतापूर्वक लड़ कर जिन्जी के किले को जीता था। वे वहां के किलेदार थे पर उन्हें स्वायत्तता मिली हुई थी। औरंगजेब की मृत्यु के बाद उन्होंने दिल्ली को कर देना भी बंद कर दिया था। सामरिक रूप से महत्वपूर्ण जिन्जी के दुर्ग पर अधिकार के लिये अंग्रेज भी प्रयासरत थे जिनसे सरूपसिंह का फोर्ट सैंट डेविड में उनसे अन्तिम युद्ध 1712 में हुआ। अंग्रेज जिन्जी पर अधिकार नहीं कर पाये और तब उसी वर्ष उनके व सरूपसिंह के बीच एक समझौता हुआ। सरूपसिंह की 1713 में मृत्यु हो गई और उनका बेटा तेजसिंह राजा बना।

सरूपसिंह बुन्देला व अन्य बुन्देले वीर मुगलों की सेना में अच्छे ओहदों पर थे पर इनको अधिक महत्व दिये जाने का एक कारण यह भी हो सकता है कि ये ओरछा के मूल राजघराने से सम्बन्धित थे। अन्यत्र कहीं यह संदर्भ नहीं मिलता पर इस पुस्तक में उद्धृत जसवन्तराय के अनुसार सरूपसिंह वीरसिंह जू देव के पोते थे, जिन्होंने अकबर के विश्वस्त अबुल फजल का वध किया था। तेजसिंह लगभग 10 माह ही जिन्जी पर राज्य कर पाये क्योंकि आर्कोट के नवाब सदातुल्लाह खां से उनका युद्ध हुआ जिसमें उनकी छोटी सी सेना ने बहादुरी से अपने दुर्ग की रक्षा की। सैय्यदनामा के लेखक जसवंतराय के अनुसार मराठे सैनिक भी इस युद्ध में उनके साथ थे। राजा तेजसिंह स्वयं भी इतनी बहादुरी से लड़े कि प्रतिदिन ऐसा लगता था कि जीत बुन्देलों की ही होगी, पर अन्त में वे घायल हुए और मारे गये। नवाब की ओर से युद्ध का संचालन दखिनीराय कर रहा था। इन्हीं के अनुसार तेजसिंह के सम्बन्धी तंजावुर के मराठों का साथ लेकर दखिनीराय से 1717 तक लड़ते रहे।

तमिल विरुदावली-

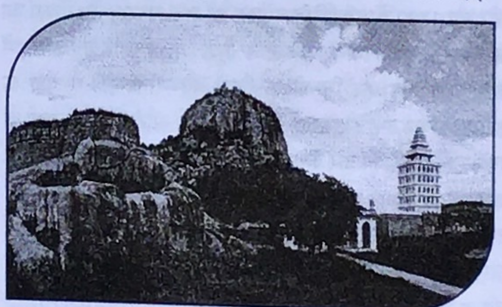
तमिल भाषा में गाया जाने वाला राजा देसिंघू का गाथागीत सम्पूर्ण तमिलनाडु में लोकप्रिय है। शिन्जी के युवा बुन्देला राजा देसिंघू की विरुदावली को तमिल लोक गायक बड़ी ही ओजपूर्ण और मार्मिक शैली में प्रस्तुत करते हैं। यह कथानक सारी भौगोलिक और सांस्कृतिक दूरियों को पाट कर दक्षिण भारत में एक क्षत्रिय बुन्देला राजा की वीरता की गाथा गाता है। उससे भी अधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि यह कथा इतिहास से अधिक लोक मन में रची-बसी है। तमिल इतिहासकार मानते हैं कि शायद राजा देसिंघू का असली नाम तेजसिंह रहा होगा, जो कि तमिल भाषा भाषी की उच्चारण की शैली के कारण बदल कर देसिंघू या देसुजू हो गया होगा। बुन्देलखंड में तो शायद ही कोई इन राजाओं के बारे में जानता होगा। राजा देसिंघू की गाथा उनके पिता सरूपसिंह को मुगल बादशाह द्वारा शिन्जी की किलेदारी दिये जाने से शुरू होती है। गाथागीत में कहीं-कहीं इनके पिता का नाम तरनीसिंह भी आता है। जिन्जी या शिन्जी के तत्कालीन मराठा राजा राजाराम को सन 1698 में जब मुगल सेना के सामने हार का मुंह देखना पड़ा, तब वह स्वयं तो किसी प्रकार दुर्ग छोड़ कर जीवित भागने में सफ्ल हो गये पर शिन्जी का दुर्ग मुगलों के अधिकार में चला गया। सरूपसिंह बुन्देला की वीरता और नेतृत्व क्षमता से प्रभावित होकर बादशाह ने उन्हें बड़ा मनसब देकर शिन्जी की किलेदारी सौंप दी। वे यह फरमान लेकर जुल्फिक्कार खां के पास शिन्जी आये और यहां के सामरिक रूप से महत्वपूर्ण ऐतिहासिक दुर्ग का अधिकार अपने हाथ में ले लिया। यही वह समय था जब अंग्रेज और फ्रांसिसी भी इस दुर्ग को हथियाने के प्रयास में लगे हुए थे। सरूपसिंह अत्यन्त लोकप्रिय और सक्षम राजा सिद्ध हुए जिनकी न्याय प्रियता और जन साधारण के प्रति संवेदना ने उन्हें सभी का चहेता राजा बना दिया। उनके राज्य में हिन्दू और मुसलमान मिल-जुल कर प्रेम भाव से रहते थे और हर ओर सम्पन्नता थी। ऐसा कहते हैं कि बादशाह ने उनको लगभग स्वतन्त्र राजा घोषित कर दिया था और सभी प्रकार के कर माफकर दिये थे। पर अनेक स्थानों पर आता है कि औरंगजेब की मृत्यु के बाद कमजोर हुए मुगल शासन के चलते उन्होंने स्वयं को स्वतन्त्र मान कर दिल्ली के नये बादशाह को कर देने बंद कर दिये थे और उन पर 12 लाख से अधिक का कर बकाया हो गया था और इसी बात का फायदा उठा कर आर्कोट के सदातुल्लाह खां ने बादशाह से उनकी शिकायत कर दी थी और उसे शिन्जी पर आक्रमण करने का आदेश मिला था। विरुदावली में आता है कि शिन्जी में ही सरूपसिंह के पुत्र तेजसिंह या देसिंघू का बचपन बीता और बालपन से ही देसिंघू और उनके बालसखा मोहब्बत खां का भ्रात्रवत प्रेम था। लोकगाथा कुछ ऐसे चलती है कि सरूपसिंह की एक मुसलमान उपपत्नी से उन्हें दाऊद खां नाम का एक पुत्र था, जिसे उन्होंने अपने नजदीकी सलाहकार युसुफखां के कहने पर शिन्जी से दूर भेज दिया था। दाऊद खां आयु में देसिंघू से कुछ महीने बड़ा था अत: उन्हें अंदेशा था कि उनकी मृत्यु के बाद दाऊद खां राज्य पर अपना अधिकार मांग सकता है। युवा होने पर दाऊद खां को सत्य का पता पड़ा तो उसने प्रण लिया कि वह इस अन्याय को नहीं सहेगा और शिन्जी पर अपना अधिकार लेकर रहेगा। पर हुआ ऐसा कि मृत्यु शैया पर लेटी उसकी मां ने उससे वचन ले लिया कि वह और जो कुछ भी करे पर देसिंघू पर कभी आंच नहीं आने देगा। इसी के बीच की एक कथा के अनुसार एक बार दिल्ली के बादशाह ने घोषणा की कि यदि कोई भी उनके अस्तबल के एक अनियन्त्रित घोड़े को वश में कर लेगा तो उसकी जागीर को स्वतन्त्र राज्य बना दिया जायेगा। सरूपसिंह भी उस घोड़े को वश में कर लेने के इरादे से दिल्ली गये पर असफ्ल रहे और उन्हें दरबार में ही रोक लिया गया। कहते हैं कि यह सुन कर युवा राजकुमार देसिंघू अपने पिता को स्वतन्त्र करवाने के लिये दिल्ली पहुंचे और वहां अपने चाचा

भीमसिंह से मिले। देसिंघू ने अश्व संचालन के कौशल का परिचय भरे दरबार में दिया और उस घोड़े को अपने वश में कर लिया। वहां उपस्थित जन समुदाय ने तुमुल ध्वनि से उनका अभिनन्दन किया और प्रसन्न होकर बादशाह ने शिन्जी को स्वतन्त्र राज्य होने का फरमान जारी कर दिया।

उधर दाऊद खां बड़ा होकर आर्कोट के नवाब की सेना में भरती हो गया, जहां वह अपनी बहादुरी के बल पर ऊंचे ओहदे पर पहुंच गया। उसने नवाब को शिन्जी पर आक्रमण करने की सलाह दी पर बादशाह का फरमान होने के कारण नवाब ने ऐसा करने से मना कर दिया। सरूपसिंह के देहान्त के बाद स्थिति कुछ ऐसी बनी कि राजा देसिंघू को एक गंभीर आरोप के कारण अपने पिता के वफादार युसुफ खां को उसके पद से हटाना पड़ा। उधर सदातुल्लाह खां ने चालबाजी से शिन्जी को बादशाह से प्राप्त हुआ पूर्ण स्वराज्य का फरमान गायब करवा दिया। आर्कोट के नवाब ने दाऊद को शेन्जी भेजा और राजा देसिंघू को आदेश दिया कि शेन्जी अपना बकाया कर शाही खजाने में जमा करवा दे और आगे से समय पर कर देना आरम्भ कर दे। इस आदेश से राजा देसिंघू के आत्मसम्मान को चोट पहुंची और उन्होंने किसी भी प्रकार के कर देने से स्पष्ट मना कर दिया। आर्कोट के नवाब ने दाऊद खां के नेतृत्व में शिन्जी पर आक्रमण कर दिया। नवाब की विशाल फौज जिसमें 8500 घुड़सवार, तोपें और 10000 सिपाही थे, देसिंघू के 500 सिपाहियों और 350 घुड़सवारों के लिये बहुत बड़ी थी पर फिर भी राजा के मित्र मोहब्बत खां, जो कि विवाह मंडप से उठ कर सीधे युद्ध में आया था के नेतृत्व में शिन्जी की सेना ने घमासान युद्ध किया और आर्कोट की सेना को शिन्जी के बाहर ही रोक दिया। युसुफ खां ने चालाकी से युवा मोहब्बत खां को मरवा दिया और खबर फैला दी कि दाऊद खां ने राजा देसिंघू के परम मित्र मोहब्बत खां को मारा है। इस समाचार से दुखित देसिंघू ने स्वयं अपनी सेना की बागडोर सम्हाली और उसकी युवा पत्नी ने एक क्षत्राणी के जोश के साथ उसे तिलक लगा कर युद्ध भूमि के लिये विदा किया। युद्ध में देसिंघू के साथ उसका प्रसिद्ध घोड़ा नीलमणि भी था जिसे इस तमिल गाथागीत में अमर कर दिया गया है। दक्षिण में वह घोड़ा महाराणा प्रताप के घोड़े चेतक की तरह ही प्रसिद्ध है। देसिंघू ने दाऊद खां को द्वंद्व युद्ध के लिय ललकारा पर अपनी मां से वचनबद्ध दाऊद ने कहा कि उन दोनों को यह लड़ाई सैनिकों पर छोड़ देनी चाहिये। दाऊद खां उसकी मां के कहे अनुसार देसिंघू को हानि न पहुंचाने के लिये प्रतिबद्ध था और इसी कारण द्वंद्व में वह मारा गया। पर देसिंघू राजा की यह जीत क्षणिक ही रही क्योंकि तभी उसे बताया गया कि दाऊद खां उसका भाई ही था। दु:खी देसिंघू का मन अब युद्ध में नहीं लगा और वे मारे गये। कई बार कथा में कहा जाता है कि उन्होंने इस समाचार से दु:खी होकर स्वयं को मार लिया। आर्कोट का नवाब युद्ध तो जीत गया पर राजा देसिंघू के शौर्य से वह अत्यन्त प्रभावित हुआ और जब उसने क्षत्रिय स्त्रियों को अपने पति की चिताओं पर और स्वयं रानी को राजा देसिंघू की चिता पर सती होते देखा तो उसका हृदय द्रवित हो गया। विजयी नवाब ने रानी के सम्मान में एक नगर रानीपेट के नाम से बसाया।

तेलुगु विरुदावली–

तेलुगु भाषी ग्रामीण क्षेत्रों में जो विरुद गाये जाते हैं उन्हें स्थानीय स्तर पर 'बुर्राकथा' कहते हैं। लोक नायकों से सम्बन्धित अनेक बुर्राकथायें प्रचलित हैं जिनमें से चित्तूर जिले तक सीमित एक बुर्राकथा शिन्जी के राजा देसिंह की वीरता और उनकी रानी के त्याग और बलिदान की गाथा पर आधारित है। देसिंह के पिता सरूपसिंह बुन्देला को शिन्जी की जागीर मुगल बादशाह द्वारा प्रदान की गई थी। सरूपसिंह की मृत्यु के पश्चात आर्कोट के नवाब की इच्छा शिन्जी को अपने अधिकार में लेने की हुई और इसे पाने के लिये उसने बादशाह के कान देसिंह के विरोध में भरने आरम्भ किये। उसने कहा कि इन लोगों ने बादशाह को कर देना बंद कर दिया है और इसी बहाने से उसने शिन्जी पर आक्रमण करने की आज्ञा प्राप्त कर ली। यह बुर्राकथा लोक गायकों द्वारा विशेष शैली में जोश और करुणा के साथ गाई जाती है जिसको सुन कर श्रोता द्रवित हुए बिना नहीं रह पाते। देसिंह के बाल्यकाल की घटनाओं और उनके परम मित्र मोहब्बत खां, जिसे वे भ्रातृवत मानते थे, के विवरण के साथ कथा प्रारम्भ होती है। साथ ही उनके स्वामीभक्त घोड़े बड़ा हजारी की कहानी भी सुनाई जाती है। आर्कोट के नवाब सदातुल्लाह खां ने जब शिन्जी पर आक्रमण किया तब मोहब्बत खां अपनी शादी के मंडप में बैठा था। उसे वहां से उठ कर अपने परम मित्र राजा देसिंह के साथ युद्ध भूमि में जाना पड़ा, जहां वह वीरतापूर्वक युद्ध करते हुए मारा गया। कथा में सेना की विदाई



जिन्जी दुर्ग

और रानी द्वारा राजा देसिंह को वीरोचित विदाई का हृदयस्पर्शी चित्रण किया गया है। देसिंह की सेना छोटी थी पर फिर भी उसके सैनिक अत्यन्त वीरता से लड़े। देसिंह के चातुर्य और उसकी बहादुरी से शत्रु भी प्रभावित हुए बिना नहीं रह सके, आर्कोट का नवाब तो उनके विरुद्ध युद्ध जीतने के बाद भी अवाक था कि ऐसी वीरता भी सम्भव है। युद्धभूमि में राजा की मृत्यु के पश्चात रानी ने क्षत्रियोचित गौरव के साथ सतीत्व को अंगीकार किया। यह मर्मस्पर्शी कथानक अभी भी आंध्र प्रदेश के चित्तूर जिले के गांवों में गाया जाता है।

राजा देसिंघू कथाई (राजा तेजसिंह की कथा) के नाम से प्रचलित इस विरुदावली की कहानी में समयानुसार परिवर्तन होते रहे होंगे, पात्रों के नाम और पात्रों में भी परिवर्तन होता रहा प्रतीत होता है जैसा कि प्राय: ऐसी कथाओं में होता है। अनेक प्रच्छिप्त अंश भी विरुदावली में लोक मानस की भावनानुसार जुड़ते गये होंगे पर मूल कथा में सन्निहित ऐतिहासिक तथ्य झुठलाये नहीं जा सकते। यह एक ऐतिहासिक सच है कि अपने देश से हजारों मील दूर दक्षिण भारत में बुन्देला राजाओं ने शिन्जी और उसके आसपास आठ तालुकों पर 15 वर्ष तक राज्य किया था और अपने राज कौशल और वीरता से ऐसी लोकप्रियता पाई थी कि उनकी गाथा आज भी गाई जाती है।

–व्यास भवन, नरसिंहगढ़ पुरवा
छतरपुर 471001

*****

बुन्देली टहूका (टउका)

-रामगोपाल रायकवार

अबै कछु भौत दिना नईं भय जब गाँव की अथाई पै कौंड़े के चारउँ तरफ लोग बैठ कें आगी तापतते, चिलम-तमाखू पियतते और अपने सुख-दुख की चरचा करत हते। ओई बेरा बन्न-बन्न की गियान-धरम की बातन के संगै मन-बैलाव के लानै अटका, अहाने, टहूका, पटतरें, कहनूतें, कनूतें, सुनउअल किसा, पुछउअल किसा, भजन-कीरतन, लमटेरा, अकबर-बीरबल, लालबुझक्कड़, गंगाराम पटैल और बुलाखीराम नाई की किसा-कानियाँ कईं-सुनीं जाततीं। इन आपबीती और जगबीती बातन सें लोगन की घर-बायरे की भौत-सीं बिबूचनैं सुरझ जाततीं। हाँसी-ठिठोली की तौ पूँछौई नईं, हँसत-हँसत पेट पिरान लगततो। बात सें बात बनाबे में एक सें एक जनबा। किसा-कानियाँ सुनाबे के पैले ऐसीं-ऐसीं तुकबन्दी, उलटबासीं, ऐड़ी-टेड़ी बातें कईं जात हतीं कै सुनबेबारे दाँतन तरें उँगरिया दबा कें रै जाँय। इऐ लगाम लगाबौ कऔ जात हतो। जैसें कै एक हतो खसखस कौ दानौ.....सक्कर कौ घोड़ा, सकर पारे की लगाम...... जरिया कौ काँटौ, अठारा हाँत लाँचौ.....ऐसी केउअक लगामें पाठकन नै पड़ीं-सुनीं हुइयें। किसा पूरी होबे पै बाड़ई नै बनाई टिकटी, हमाई किसा निपटी। हती किसा सो हो गई, बूड़ी डुकरिया सो गई या जैसे हमाय दिन फिरे बैसई सबके दिन फिरें, कै कें किसा खतम करत हते।

इनन सब में अटका, अहाने, पटतरें और टहूका तौ बिलातई जा रय हैं। कायसें कै अब गाँवन-गाँवन टी.बी, मुबायल, कंपूटर सब पौंच गय हैं। मन-बैलाव के संगै इन सबसें जगत्तर भर कौ गियान घरै बैठें मिल जात है। सो जे सब बातें दो-चार बड़े-बूड़न लौं बचीं हैं। ईसें इनै बचाबौ एकाउ जरूरी है। टहूका या टउका एक तरा के बड़े चुटकुलई आँय जिनै हाँसी- ठठ्ठा के लानै कऔ जाततो। कैउ टउका कहनूतन (मुहाबरे) के रूप में कय-सुने जात हैं। इन टउकन में ऊ समय के समाज की सोस जाहर होत है। जाँदाँतर टउका जात-बिरादरी पै बने हैं, ईकौ अरथ जौ मानबौ चइए कै टउका कौनउँ एक जने की हँसी करबे नईं बनाय गय हते। न इनन की मंसा जात-बिरादरी की हँसी करबौ हतो। ऐइसें इन टउकन में जात-बिरादरी और लोगन के नाव के संगै जू, कक्का, माते, बब्बा लगा कें बात कई जात हती। अपनी बुन्देली बोली तौ ऊसई मीठी है, गारी लौं तौ जू लगाकें देत जैसें ससुरजू, सारेजू। जात-बिरादरी कौ सीदौ नाव लैबे की जाँगाँ पंडतजू, दाऊजू, खबासजू, लालाजू, बरेठा, दउआ, बरउआ, चौदरी, धानुक, सेठ-साउकार कैकें चरचा करी जातती। आजकाल ऐसे चुटकुला खासतौर पै सरदारन कौ नाव लैकें कैबे कौ चलन है।

इन टउकन में केउ जाँगाँ जात-बिरादरी कौ नाव आऔ है सो ऊकौ आजकाल की घाँईं बुरऔ नईं मानो जाय। टउकन के बारे में लिखबे के जा मानी नइयाँ कै कौनउँ जात-बिरादरी छोटी कै बड़ी है। जे टउका लोक-साहित्य के आँग हैं इनसें ऊ समय की बातन कौ गियान होत है। तौई कोऊके मन खौं ठेस नईं लगै ईसें लिखबेबारौ(लेखक) सब पाठकन सें छिमा चाउत है। इन टउकन सें जौ सोउ पतौ चलत है कै ऊ बखत की सोस में और जा बखत की सोस में कितनौ फरक आ गऔ है। इन टउकन में एक खासियत जा देखबे मिलत है कै जे तनक-मनक हेरफेर सें सब बोलियन में मिल जात। हमाय जेठे भइया भौत-से टउका सुनाउत हते उननमें सें कछु अबै लौं नईं बिसरे। कछु इताँय-उताँय सुने-पड़े सो बे पाठकन के लानै हाजर हैं।

खुसी रऔ जजमान-

एक पंडतजू हते। बे तनक ऊँचौ सुनतते। थोरे हँसना और सीदे सुभाव के हते, ईसें उनके कछु जजमान हाँसी-ठठ्ठा करबे में नईं चूकतते। एक दिना पंडतजू एक कछबारे में भटा टोर रयते। ओई बेरा उतै सें उनकौ एक मौं लगौ जजमान कड़ौ। जजमान नै पंडतजू सें पैले तनक जोरसें फिर हराँ सें कई-पंडतजू, राम-राम! तुमाई मूँछें सौ गिराम!!

पंडतजू - राम-राम! अब भटा टोरबौ कौन-सौ बड़ौ काम आय ? माते बोले कै तुमईं टोर लो।

जजमान - बाली-बच्चा और पंडतायिन सब ठीक हैं ?

पंडतजू - हऔ, घरै जाकें भरता बनाकें खैं।

जजमान - (तनक जोर सें) कछु असीस मिल जाय।

पंडतजू - खुसी रऔ जजमान, तुमाई दोऊ फूटें!
दाँत बत्तीसउ झरें, घुटन्ना सोऊ टूटें!!

(सुनतन में जा कैबौ सराप या बददुआ-सी लगत पै ईकौ अरथ लम्बी उमर होबे सें है।)

लालाजू सलाम-

एक जने अँदयारे में कउँ जा रयते। अँगाई सें कौनउँ खौं आउत देखकें उन्नै पूँछो-कौन ?
अँगाई सें आबेबारे नै ऊतर दऔ- अड़तालीस के पौन। जाबेबारे बोले- अच्छा! हज्जाम ? आबेबारे नै तुरतईं कई- लालाजू सलाम। जब दोइ जनै लिंगाँ पौंचे तौ लालाजू नै ऊ आदमी सें पूँछी- जा बताऔ तुमनै हमें कैसें चीनो ? आबेबारे नै कई- पैले अपन बताव, अपन नै मोय कैसें चीनो ? लालाजू बोले-ई में कौन-सी बड़ी बात हती, जब तुमनै अड़तालीस के पौन मानै छत्तीस कई तबई हम समज गय कै खबासजू आ रय। खबासजू नै कई- बस ऐइसें हम समज गय कै सामें सें लालाजू आ रय, कायसें कै इत्ती जल्दी गुना-भाग और कोउ लगाइ नईं सकत ?

बर ठाँड़ौ होय तब जानी

एक बेर की बात आय। एक खबास कक्का कऊँ जा रयते। खबास कक्का नै गैल में एक कुँआ में सें अपने लोटा-डोर सें पानी भरो, रोटी खाई। फिर उतईं कुँआ के लिंगा एक बिरछा के तरें दुपाइ बिलमान लगे। औई बेरा एक और गैलारो उतै आकें ठैर गऔ। ऊनै खबास कक्का सें राम-राम करी। खबास कक्का नै राम-राम करकें कई-आऔ माते बिराजबौ होय, कौन ठाकुर आऔ ? गैलारो बोलो-रमपुरा कौ खबास आऔं जू, और अपुन को आऔ ? खबास कक्का नै कई- आहा, जौ तौ अच्छौ जोर जुरो, खबासई मैं आऔं। कितै जाबौ

हो रऔ ? दूसरे खबासजू नै बताऔ–अपने जजमान, गाँव के दाऊजू की बिन्नूराजा के लानै कुँवर की फिराक में जा रऔ हतो। खबास कक्का बोले– जा तौ बेई कहनूत भई कै काँख में मौड़ा, गाँव में टेर! मैं सोउ अपने सुजानगढ़बारे दाऊजू के कुँवर के लानै मौड़ी ढूँढ़त फिर रऔ। तुमाई बिन्नूराजा देखत में नौनी होंय तौ अबई बात पक्की भई जात। दूसरे खबासजू झट्टई बोले– बिन्नूराजा की का पूँछत, साक्छात अपसरा हैं अपसरा। पै तुमाय कुँवर कैसे हैं? खबास कक्का नै जुआब दऔ– पूरे असफेर भर में ऐसे कुँवर मिल जाएँ तौ मूँछें मुड़ा दौं। दूसरे खबासजू नै कई– तौ जौ लो सगुन कौ नारियल। अकती पै बरात लैकें आ जाऔ।

अकती आबे में का झेल हती ? अकती के दिना बरात पौंच गई। बरात कौ खूब आदर-सत्कार भऔ। टींका भऔ। पै भाँवरन की बेरा कुँवरजू नई आय। कटार के संगै भावरें परीं। तीन दिना बरात मेली रई। तीजे दिना भुन्सारे सें बिदा की तैयारी होन लगी। जैसई बिदा भई मौड़ीबारे खबासजू खुसी के मारें कन लगे–

जग जीत गई कानी ! जग जीत गई कानी !!

जा सुनकें लरकाबारे खबास कक्का बोले–

बर ठाँड़ौ होय तब जानी ? बर ठाँड़ौ होय तब जानी ?

खीर के चाँउर–

एक दाऊजू हते। पुरखन कौ धन हतौ सो ठसक के मारें कछु करबे-धरबे कौ नाव नई लेतते। पै परें-परें खाबे सें तौ कुबेर कौ खजानौ बड़ा जात। दाऊजू के घरै कछु नंइं रै गऔ। तनक-सी भूम हती, जीकी अदिया-बटिया सें गुजारौ हो रऔतो। जौ हाल हो गऔ हतो कै कबऊँ-कबऊँ माँड़ पी कें काम चलानै परततो। पै ठसक बेई भरी हती। एक दिना गाँव में पंचात जुरी। दाऊजू खौं सोई जानै हतो। ऊ दिना घरमें खाबे के लानै तनक से चाँउर बचे ते, सो उनइ खौं चुरै कें माँड़ पसाऔ गऔ। दाऊजू नै माँड़ पियो और तीन-चार सीत मूँछन पै अटका कें पंचात में पौंच गय। सबरौ गाँव जुरौतो। गाँव के खबासजू सबखौं चिलम-तमाखू दै रयते। दाऊजू खौं देखकें एक गाँवबारे नै पूँछइ तौ लई– दाऊजू, मूँछन पै का लगौ ? दाऊजू खौं तौ झूँठी ठसक दिखाबे की आदत हतीई, कन लगे– अरे ! कछु नई आज रसौड़ा में खीर बनी हती। ओई खौं जीम कें आ रय, स्यात उलात में खीर के चाँउर मूँछ पै लगे रय। सबनै कई– हऔ दाऊजू ऐसौ हो जात। पै दाऊजू की जा सेखी सुनकें खबासजू खौं ऊपर सें लैकें नैचे तक आग लग गई। कछु दिना पैले दाऊजू नै उऐ बिना बात बुरई तरा सें डाँटो हतो और दो-तीन थौल-थपरियाँ मार दईतीं। खबासजू खौं दाऊजू की हँड़िया के नौन तक कौ पतौ हतो। खबासजू नै मसकउँ तमाखू में एक माँछी मींड़ कें धर दई और दाऊजू खौं खुआ दई। बस फिर का ? जैसई दाऊजू नै तमाखू खाई ओक दऔ। सबरौ माँड़ बायरें कड़ आऔ। खीर की जाँगाँ माँड़ देखकें सबरे गाँवबारे मौं दुका कें मुसक्यान लगे। दाऊजू मूँड़ नैची करकें अपनै घरै लौट आय।

अच्छी च........सौंसन में फँसे

एक बेर का भऔ कै गाँव के बायरें एक नरवा की ढीं पे एक पंडतजू और एक चौदरीजू झाड़े खौं बैठे हते। ऐसौ जोग भऔ कै दोई जने संगै पानी लेवै उठे। पंडतजू और चौदरीजू बिलात देर तक सौंसत रय। पंडतजू सोस रयते कै कजन की दार बे पैले उठत तौ चौदरी कै, कै बैसें तौ बड़े पंडत बनत पै सौंसत हम सें कम हैं। उताँय चौदरीजू जा सोस रयते कै बौ पैले उठत तौ पंडत खों जा कैबे खौं होजे कै जे औरें ढँग सें सौंसत तक नइयाँ! सो ई देखादेखी में दोई जनै खूबई सौंसत रय। नै पंडतजू उठे नै चौदरीजू। जब बिलात देर हो गई तौ पंडतजू झक मार कें जा कत उठे कै आज अच्छी च........सौंसन में फँसे

आठ जनै

एक बेर आठ कोरी आन गाँव जा रयते। चलबे सें पैले सब कोरियन नै आपुस में जा सला-सूद कर लइती कै परदेस कौ मामला है सो सब जनै संगै रयँ। अपन सब आठ जनै हैं। कोऊ इताँय-उताँय नै होय। निगत-निगत गैल में एक नरवा परो। जीमें घुटकन पानी हतो। सब कोरी अपने उन्ना उतार के अपनी लठियन के सहारें नरवा पार करकें ऊ बिजाऊँ पौंच गय। सबनै अपने उन्ना पैरे और चलबे खौं तैयार हो गय तबई एक कोरी नै कई अरे चलबे सें पैले गिनती तौ कर लौ कौनऊ कोरी भइया नरवा में तौ नई बै गऔ ? सबनै कई जा तुमनै नौनी कई, उलायती गिन लो और चलौ नइतो अबेर होजै। एक कोरी दाऊ नै गिनबौ चालू करो, एक...दो...तीन...चार...पाँच...छै....सात ओ मताई सात ऐसौ लगत कै अपन में सें एक जनौ नरवा में बै गऔ। एक जने नै कई रनदै तैनै सई नईं गिनो लै मैं गिनत एक...दो...तीन...चार...पाँच...छै....सात ऐं सातई तौ हो रय। ऐसई-ऐसई आठउ कोरियन नै गिनो पै हरबेर सातई निकरे कायसें जो गिनततौ बौई खुद खौं गिनबौ भूल जात तो। सब ढीड़ें मार-मारकें रोउन लगे। तबई उतै सें एक घुरसवार निकरो। ऊनै उनन सब खौं रोउत देखो सो पूँछी– काय भइया का हो गऔ ? ऐसे ढीड़ें मारकें काय रो रय ? एक कोरी नै बताऔ– अब तुमसें का कएँ, हम आठ जनै आनगाँव एक नैवते खौं जा रयते कै ई नरवा खौं पार करत में हमाऔ एक संगी बै गऔ है। घुरसवार नै धियान सें देखो कै आदमी तौ आठई हैं बौ समज गऔ कै गिनबेबारौ खुद खौं गिनबौ भूल जात है। ऊनै कई– कजनकैं हम तुमाऔ संगी मिलादें तौ का दौ? सब कोरी बोले-भइज्जा हमाय लिंगा का धरो पै तुम हमाऔ संगी मिला देऔ तौ जनम भर जस मानें। घुरसवार नै कई– तौ एक सीद में ठाँड़े हो जाऔ हम एक आदमी की पींठ पै एक थौल मारें और गिनती गिनें, ठीक ? सबनै कई– जैसी तुम कऔ। सब कोरी एक सीद में ठाँड़े हो गय। घुरसवार नै एक कोरी की पींठ पै एक थौल जमाई और जोरसें बोलो एक...फिर दूसरे कोरी की पींठ पै एक थौल जमाई और जोरसें बोलो दो... ऐसई आठउ कोरियन की पींठ पै थौल जमाई और बोलो कऔ हो गय पूरे आठ! सब कोरी खुस। सबनै घुरसवार की खूब बड़वाई करी और अपनी गैल धरी।

खेत कौ पानी खेतइ में तौ रनै

एक गाँव में एक सुनार कक्का रतते। हराँ- हराँ उनै कम दिखान लगौ। सो उननै सब काम-काज अपने मौंड़ा खों सौंप दऔ। मौंड़ा हुस्यार हतो जैसौ बाप-दादन सें सीको हतो सो बैसई बौ करन लगो। ऐसई-ऐसई कछु दिना बीत गय। सुनारन काकी के लिंगा एक हार हतो। हार पुरानौ पर गऔ तो सो कउँ-कउँ टूटन लगो तो। एक दिना सुनारन काकी नै मौंड़ा सें कई कै बेटा मोरो हार कैऊ जाँगा सें टूट रऔ है,

बिलात घिस सोउ गऔ है, टैम होय तौ ऊखों गलाकें नऔ हार बना दो। मौंड़ा बोलो- लो मताई ईमें टैम की का बात है। ल्याऔ, दो-चार दिना में बना दों। सुनारन काकी नै हार दै दऔ। देखत-देखत केऊ दिना हो गय। सुनारन काकी नै मौंड़ खों टोको- काय बेटा, हार में का देर है। मौंड़ा नै कई- बस तनकई रै गऔ। सुनारन काकी देख रइतीं कै मौंड़ा कछु दिनन सें सोस में परो रत है और दूबरौ सोउ होत जा रऔ। सुनारन काकी समज गईं कै मौंड़ा की बिबूचन का है। असल में मौंड़ा ई सोसन में दूबरौ हो रऔ तो कै मताई के हार में सें सौनौ काट कें खोट मिलाय तौ ठीक नई लगत और कजन की दार खालस हार बनाउत तौ धंदे कौ असूल जात रै।

मौंड़ा की जा बिबूचन मताई समज गइती। मताई नै कई- बेटा, सोस नै करौ जैसौ चला चलो आ रऔ बैसई करौ, खेत कौ पानी खेतइ में तौ रनै। मौंड़ा मताई कौ इसारौ समज गऔ। फिर का हतो पैलेई जैसौ खान-पियन लगो और मताई कौ हार चार दिना में गढ़कें दै दऔ।

गंगाजू में हाड़

एक बेर का भऔ कै एक जनै तनक जाँदा हुस्यार हते। उनके दद्दा मरे सो फूल लैकें अकेलेइ पिरयागराज गय। ऊ समैया सब निंगकेंई जात हते। बे जानत ते कै इतै के पंडा मुड़ेमुड़ाय खों बिना उस्तरा के मूँड़ देत, सो उन्नै का करो कै पिरयाग सें एक कोस पैलई एक नरवा में फूल सिरा दय। उननै सोची कै नरवा गंगाजू में मिलतई है सो फूल अपने आप गंगाजू में पौंच जैं,कायखों जाँदा हैरान होंय। नरवा में फूल डारकें घरै लौट आय। कछु दिना बाद उनके दद्दा बरौंटन दिखाने उर कन लगे कै बेटा तुमनै हमें गंगाजू तक लौं नई पौंचाव ? लरका नै कई- हओ दद्दा! कै तौ तुम साँची रय,पै जा तौ बताव उरानौ दैबे तुम पचास कोस इतै तक तौ भगत आय एक कोस गंगाजू लौं नई जा सकतते।

पटवारीजू कौ पिरासचित

एक गाँव में एक पटवारी जू रतते। नाव हतो भगवानदास पै सब गाँव पटवारी जू कतते। सुभाव के भौतई कर्रे। कबहुँ धोके सें भी कौनऊँ कौ भलौ नई कर सकतते। करमन कौ फेर, घर में कोऊ नई हतो। उनके मारें गाँव भर हैरान-परेसान हतो। ईकी जिमीन ऊके खसरा में तौ ऊकी जिमीन ईके खसरा में। बेचारे किसान कचहरी के चक्कर लगा-लगाकें परेसान। ऐसई-ऐसई लोगन खों आपुस में लड़ाउत-भिड़ाउत पटवारी जू बूढ़े हो गय पै मन कौ मैल नइ गऔ।

एक दिना सब गाँवबारन खों जोरकें कन लगे- मैं सब गाँवबारन सें छिमा चाउत हों मैंनें तुम औरन के संगै कबऊँ भलौ नई करो सो मैं चाउत हों कै कछु पिरासचित करकें मरों जीसें ईसुर खों तनक मौं दिखा सकों। गाँवबारे कन लगे- पटवारी कक्का अब जो हो गऔ सो हो गऔ हम औरन के मन में कछु मलाल नइयाँ। पटवारी जू बोले- आहाँ भइया, मोरे मन खों तबई साता परै जब कछु पिरासचित करलौं। मैंने तुम सब खों भौतई कस्ट दय हैं ईसें तुम सब एक काम करियो, जब मैं मर जाऔं तौ तुम औरें मोरे पाछें एक बड़ौ-सौ खूँटा ठोक दिओ। जा मोरी अंतिम इक्छा है। तुम इतनौ काम कर दौ तौ मोरी आतमा खों सांति मिल जै। पटवारी जू नै भौतई कै-सुनकैं और कसमें धरा- धरू कें गाँवबारन सें हओ भरा लई।

कछु दिना बाद पटवारी जू कौ इंतकाल हो गऔ। गाँवबारन नै पटवारी जू की अंतिम इक्छा पूरी करबे के लानै उनके पाछें एक खूँटा ठोक दऔ। फिर पटवारी जू खों अरथी में ओंदौ धरकें मरघटा खों लै चले। मरघटा की गैल थाने के अँगाऊँ सें हती। पटवारी जू की अरथी थाने के सामने सें कड़ी तौ सिपाइन की निगा अरथी पै परी। उनै खूँटा के कारन कफन उठो देखकें कछु संका भई सो उननै अरथी रुकवा लई। कफन उठाकें देखो तौ खूँटा देखकें बोले- ऐसौ लगत है कै तुम सबनै पटवारी जू खों खूँटा ठोककें मार डारो है। गाँवबारन नै भौत सफाई दई पै थानेदार नै एक नई सुनी। जित्ते जनै अरथी में गयते सबखों थाने में बंद कर दऔ। भौत दिना मुकद्दमा चलो। जैसे-तैसें गाँवबारे बरी भय पै सब जेई कत रय कै पटवारी कक्का मरतन मर गय पै सबरे गाँव खों कचहरी कौ मौं दिखा गय। तौ ऐसे हते हमाय पटवारी कक्का।

दाऊ मरें चाय साँप -

कौनउँ गाँव में एक साव कक्का रत ते। एक दिना का भऔ कै उनके घर में करिया गड़ैता कड़ आऔ। बे चिल्लाने सो गाँववारे दौरे और पूँछन लगे कै का हो गऔ, का हो गऔ ? साव कक्का बोले पौर में भौत बड़ौ बाबा घुस आऔ है। चार-पाँच हाँत सें कम नईयाँ! जा सुनकें सब की हवा खिसक गई। उनन में एक दाऊ जू हते। बे जब चाय साव कक्का सें दस-बीस रुपैया ऐंठ लेत ते। उननै सोसी कै जौ मौका अच्छौ है साव कक्का पै ऐसान करबे कौ। बे कन लगे- अरे तौ मरे काय जात ? एक लठिया दो अबई खतम करें देत। साव कक्का ने बेड़ा में सें एक पतरी-सी लठिया दाऊ खों पकरा दई। दाऊ पौर में पिड़ गय। इत्ते में एक गाँववारे नै कई- काय कक्का, ई लठिया सें साँप का मरै ? उल्टौ दाऊ के लानै खतरा है। साव कक्का बोले- दाऊ मरें चाय साँप ! हमाय लानै तौ दोई काल (मौत) हैं।

बब्बा की पौर

एक गाँव में दो गपोड़ी रतते। ऐसीं-ऐसीं लम्बान- पुंछान की हाँकतते कै कछु पूँछो नै। एक दो हाँत की कत तो तौ दूसरौ चार हाँत की मसकत हतो। एक दिना का भऔ कै कौंड़े पै भौत जनै ताप रयते और ग्यान-धियान की चरचा कर रयते। उतईं बे दोई गप्पी बैठे ते। एक गप्पी कन लगो- हमाय बब्बा के बब्बा कौ घर भौत बड़ौ हतो, उनकी पौर तौ इत्ती बड़ी हती कै ऊके एक कुजाऊँ सें भुन्सारे सें चलौ तौ दूसरी कुजाऊँ तक डिन्डूबें लौं पौंच पाउतते। दूसरौ लबरा कन लगो- जा कछु बड़ी बात नइयाँ, हमाय अजा के अजा के लिंगाँ इत्तो बड़ौ बँसेंड़ा हतो, इत्तो बड़ौ कै बे जब चाउतते तब बादरन में टोंकौ करकें पानी बरसा लेतते। पैलौ गप्पी बोल परौ- जा बात तौ जम नई रई। दूसरे गपोड़ी नै पूँछी- काय इमें का गल्त है ? पैलौ गप्पी बोलो- अच्छा, तौ जा बताऔ कै तुमाय अजा के अजा बौ बँसेंड़ा धरत कितै हते ? दूसरौ गप्पी फटाक सें बोलो- तुमाय बब्बा के बब्बा की पौर में धरतते और कितै धरते ?

तौ अबै इतनई। और फिर कबऊँ पाठकन की सेवा में हाजर करों।

- कनिष्ठ व्याख्याता, जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान
कुण्डेश्वर जिला-टीकमगढ़ म.प्र. 472005
मो. 08085153778

*****

बुन्देलखण्ड के किसानों का वर्षा विज्ञान

-डॉ. सरोज गुप्ता

हमारे जनपद लोक संस्कृति के केन्द्र हैं जनपदीय अध्ययन द्वारा हम अपने देश की आत्मा का साक्षात्कार कर सकते हैं। भारतीय किसान अपने अनुभव की थाती से वर्षा सम्बन्धी ज्ञान संचित करते रहते हैं। यद्यपि वे ज्योतिष शास्त्र के पण्डित तथा मानसून वैज्ञानिक नहीं होते पर उनमें जो अनुभवी हैं, चतुर हैं उनसे सुन-सुन कर वे गुनते हैं, गुन - गुनाते हैं और इस सांस्कृतिक वाचिक परम्परा को धरोहर के रूप में आगे बढ़ाते रहते हैं। अनगिनत पोथियाँ परम्परागत विश्वास लिए ये भारतीय किसान कहते हैं कि जो ''पांडे के पत्रा में सो हमाये मों में।'' मौसम विज्ञान उनके अनुभव से छलकता है। कभी पुरवाई, (पूर्व की हवा) कभी पछवा (पश्चिम की हवा) कभी बमूरा (दक्षिणी हवा) हवा चलती है तो ये ग्राम जन पानी का योग-बताने के लिए मीन-मेख का गणित लगाने लगते हैं। गाँव का किसान कह उठता है -

छिन पुरवैया, छिन पछवाव, छिन-छिन बहै बमूरा बाव,
भगरे पाँड़े, पानी आव।

अक्ती वैशाख शुक्ल तीज का त्यौहार ग्रामजनों का प्रमुख पावन त्यौहार है। इस दिन किसान पत्नियाँ खूब तैयारी करती है। घर, आँगन गाय के गोबर से लीप-पोत कर, पण्डितों से शुभ मुहूर्त पूछकर, भाँति-भाँति के पकवान व्यंजन बनाकर अक्षय तृतीया की पूजा करती हैं। कुम्हार के यहाँ से कुड़वारा (गगरी-घैला) लाकर धो-खँगार कर उसमें कलावा बाँधकर, हल्दी से टीक कर, फूल, दूध अक्षत चढ़ाकर होम पूजा करती हैं। इस पूजा में नए वर्ष में हल-बखर में लगाने के लिए बनायी गयी नाना पगैंया भी आज ही बनाकर रखी जाती है। अक्ती की पूजा में चार घैलों (गगरी) की पूजा चतुर्मास - असाढ, सावन, भादों और क्वाँर महिनों के नाम लिखकर घैलों (गगरी) में कच्चे चने डालकर की जाती है। दूसरे दिन बासी अक्ती के दिन इन घैलों को देखते हैं कि किस घैला के दाने (चने) कैसे फूलते हैं। जिस महिने के घैला के दाने जैसे फूलेंगे उसी मास में वैसी ही वर्षा होने का अनुमान लगाया जाता है।

प्रकृति भी किसान का साथ देती है। वन श्री फूलने से भी धन-धान्य का अनुमान लगाया जाता रहा है -

अक्का कोदों नीम वन, अम्मा मौरी धान।
जो पलाश फूलै नहीं, वर्षा नहीं निदान।।

अर्थात् अकौआ (आक) के अच्छे फूलने पर कोदे, नीम के फूलने पर वन (कपास) और आम के अच्छे मौर आने पर धान (चावल) की फसल अच्छी होगी पर यदि पलाश (छेवला) नहीं फूलता है तो वर्षा कम ही होगी। उमड़ते-घुमड़ते बादलों की रंगत देखकर हमारे किसान भाई वर्षा का अनुमान लगाते हैं -

लाल बरसें ताल भर, कारे बरसैं पारे भर,
सेत (श्वेत) बरसैं खेत भर।
जब आवैं धुआँ धारे, एक होवें नदी नारे।
लाल-पीले होय आकाश तब छोड़ो वर्षा की आस।

यदि सूर्यास्त के समय आकाश में इन्द्रधनुष दिखायी पड़ता है तब जानकर लोग कहते हैं -

उओ मदान (इन्द्रधनुष) अथउती बैराँ,
जे देखौ पानी घन घोरा।

भारतीय कृषक निरक्षर किन्तु सफल वैज्ञानिक हैं जो सूर्य और चन्द्रमा के रंग-ढंग को देखकर मौसम का अनुमान लगा लेते हैं। ये चतुर किसान चन्द्रमा की पंचायत को मातवाना और सूर्य देव की कॉन्फ्रेंस को कच्छ कहते हैं। वर्षा के दिनों में यदाकदा सूर्य और चन्द्रमा के चारों ओर बनने वाले रंगीन घेरों की ओर संकेत देखिये -

चन्द्रा बैठो मातनों, सूरज बैठो मच्छ।
एसौ बोले ज्योतिषी, बाँगर लोटे मच्छ।।

रात में चन्द्रमा के आसपास रंगीन घेरे (मातवाना) हो और दिन में कच्छ (सूर्य के आसपास रंगीन घेरे) हो तो समझो इतने जोर की वर्षा होगी कि बंजर जमीन में भी मगरमच्छ लोटने लगेंगे। इस मातवाना और कच्छ की निकटता और दूरी के लिए कहा गया है -

लिगाँ मातनों, दूर पानी,
दूर मातनों लिगाँ पानी।

यह सूर्य और चन्द्र के आसपास के रंगीन घेरे यदि पास दिखायी दे रहे हैं तो पानी दूर है और यदि बहुत ऊँचाई पर हैं तो पानी पास हैं गोस्वामी तुलसीदास जी भी कहते हैं -

वर्षहि जलद भूमि नियराये, यथा नवहिं बुध विद्या पाये। जब दिन में बादल घिर कर, रात में आकाश में तारे छिटकते हैं तो किसान बैचेन होकर कह उठता है -

'दिन में बदरत, रात तरैयां, जानें ईसुर कौन करैयां।

लोक जीवन मानसून से बहुत प्रभावित होता है। कौंधती बिजली, गरजते बादल और बरसती बूंदे .... यही तो पहचान है बरसात की। बारिश की फुहारे जब तन के साथ मन को भिंगोती हैं तो लोक मन अलमस्त हो उठता है। हवा के रुख को देखकर किसानों ने चारों दिशाओं से बहने वाली हवा के नामकरण किये हैं पूर्व की ओर से बहने वाली हवा पुरवाई 'पछ्वा', दक्षिण की हवा 'बमूरा', या 'हाड़ा' और उत्तर की हवा को 'सुअरी' कहते हैं। पुरवैया का पानी रिमझिम पर झोकों से जमकर बरसता हैं। पछवा का कम और सुअरी का मूसलाधार बरसता है। उत्तर की ओर से घिरे बादलों और चमकने वाली बिजली को देखकर लोग कहते हैं -

'उत्तर कौ लोंकवौ, बड़े कौ बोलवौ।'

अर्थात दोनों ही निरर्थक हैं। पुरवैया के बादलों को देखकर ग्राम बधू अपने पति से ठिठौली करती कहती है -

गाड़ी वारे मसक देव बैल, अबै पुरवैया के बादर ऊनाए।
कौना बदरिया ऊनई रसिया, कौन बरस गये मेह ?
अग्गिम बदरिया ऊनई रसिया, पश्चिम बरसै मेह।
गाड़ी वारे मसक देव बैल, अबै पुरवैया के बादर ऊनाए।।

रिमझिम फुहारों के बीच घिरे बादलों में इस गीत को गाती कामनियों के उल्लास को देखते ही बनता है। कैसी ही उदासी हो, वर्षा के ये गीत मन को तरोताजा कर देते हैं। हवा और बादलों के रूख के साथ कीट-पतंगे, पशु - पक्षियों के कार्य व्यवहार से भी वर्षा का पता लगाया जा सकता है । ये सभी किसान विज्ञान के साथी हैं, इनके हाव- भाव से किसान अपना आगम जान लेता है। सेंडर नाम का मच्छर / पतिंगा (बहुत छोटा) जब ऑखो में लगे तो समझना चाहिए कि पानी बरसने वाला है। चिड़ियों का पंख फैला - फैला कर धूल में

लोटना भी पानी का सूचक है और बादलों के उमड़ने - घुमड़ने पर मोरों का नाचना, बगुलों की पंक्ति का उड़ना भी पानी गिरने का संकेत देता है। जरिया - बेरियों में नए अंकुर निकलना भी वर्षा प्रारंम्भ के सूचक है।

उल्टौ गिरगिट ऊपर चढ़ै, वर्षा सों थल बूढो परें।

जानकारों का कहना है कि जब टिटहरी अपने अण्डे नदी, तालाब, पुखरियों के किनारे ऐसे स्थान की ऊँचाई पर रखती है जहाँ तक पानी भर ही नहीं सकता, इससे भी किसान अंदाज लगा लेता है कि इस वर्ष वर्षा कितनी होगी। कहा जाता है-

समय कौ आगम जानत टीटरी,
अण्डा धरत नखन सों जोर।

इस प्रकार बुदेलखंड के किसानों के पास वर्षा से संबंधित न जाने कितने विचार भरे पड़े हैं। वर्षा और नक्षत्र विज्ञान एक अलग ही विषय है इसीलिए यहाँ नक्षत्रों की चर्चा नही की गयी है। वाचिक परम्परा द्वारा संरक्षित ये लोकगीत व इनमें निहित मान्यतायें वैज्ञानिक है। मैने स्वयं गाँवो में भीख माँगने वालों को खंजडी बजाकर लोकगीतो को गाते सुना है इसलिए मुझे ग्रामीणों की अन्दरूनी शक्ति पर अटूट विश्वास है। प्राचीन लोक संस्कृति मुझे आकर्षित करती रही है। अत: आज आवश्यकता है इन मान्यताओं को आज के ऋतु विज्ञान से परखने एवं मिलाकर देखने की तभी हम अपनी विरासत को अक्षुण्ण व संग्रहणीय बना सकते हैं।

सन्दर्भ: भारतीय किसान - श्री हरगोविन्द
नगरिया - चिरगाँव, झांसी (उ.प्र.)

अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
शास. स्नातकोत्तर, कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर

*****

मुसाफिर

-वत्सल नाथ त्रिपाठी

मुसाफिर हूँ,
दिन रात का फर्क नहीं,
दर्द की अनुभूति नहीं,
बस एक मुकाम है,
उस तक पहुँचने की,
है मुझे अभिलाषा, मुसाफिर हूँ।
पैरों की बेड़ियों को,
आज़ाद कर दिया मैंने,
एक सफ़र में,
मुकाम की तलाश में
यूँ ही नहीं भटकता रहा,
उम्मीद है,
एक कल्पना है मन में,
सुखद अहसास है,
सूरज की रौशनी में,
मंजिल सामने है।
सपने भी पुरे होते है, मैं मुसाफिर हूँ,
अनन्त अभिलाषा है।
यूँ ही कर गुजरने की,
एक तमन्ना है।

-भोपाल, मो. 8225819895

*****

तीन लघुकथाएँ

डॉ. एल.आर. सोनी 'सीकर'

1. का माँगें-

'' सुनो इंजीनियर साब-आप अपईं बच्ची के रिश्ते के लानें आये हैं-सो बच्चा अपनों ही मानें। इंजीनियरिंग डिग्री (ई.सी.) फर्स्ट - पास कर कें -सीधे-विदेस केलिफोर्निया-(अमेरिका) चलौ गओ तो। उतै-2 साल रह कें-घर अपयें देस (भारत) वापस आगयो है, आप 25-30 लाख की-सादी तौ करई सकत हैं, आप भौत बड़े साब हैं।'' एक सज्जन इवै आ ये ते 15 लाख की बात-सुनकें-हमनें नईं-हमाई पत्नी ने-उन्हें-वापस कर दऔ तो। आप सें का मँगें-आप बस हाँ! करौ-खुशी देओ और खुशी - लेओ।

2. बारे भाईसाब -

'' हम फला बोल रये हैं - हम परसों -आप के बच्चे का फलदान लैंकें आ रये हैं-सो सब तैयारी कर लें।''- ठीक है। इधर पंडित जी आ गये, गाँव के सबई भले आदमी आ गये। भीतर से - उनकी घरवालियाँ भी-इकठ्ठी हुय गईं फलदान कौ-कारज भी सुरू हुय गओ, फुल-फलारीं, कपड़े, सड़ियाँ, एक मोटर साईकिल, मय चाबी के सामने खड़ी कर दई। लरका कों बुलाकें - तिलक/सुभराशि/दैकें/माला पहिनाके सुभ कर दओ। लड्डू की थैलियाँ भी सबई जान खाँ-बैटवाय दई गईं। अब भेटें-मान्नन खाँ सबई घर-बारन खाँ-सुरू कर दई। पैला-लरका के बहनोई को भेट दई गई-तो बननें बिटिया बारन की तरफ सें सबई जनन को-दोई हात जेरि कें राम-राम कई और बाय जो जानकारी दई गई ती-उमें 16 आने की जाँगा 13 1/2 आने भर ही दिखी और 2 1/2 आने भर कम-कर दई तौ बानें अपयें ससुर (दादाजी) कों सबई बात बताई और कई कि हम का कर सकत हैं- अब आपई जानें इज्जत को सवाल है। आप कछु कयें। तब बच्ची के बाप सें उनने कई-बाहरे बारे भाईसाब ! आपउ खूब महान हैं-जवान करकें पलटाई जित्ते में तिलक तय हतौ-उमें सबई समिल कर लओ। का कानें -का -कानें। अब तो ब्याव करनें ही परि है।

3. हम तौ जानत ते -

दो साथ-साथ पढ़े-मित्रन में से एक नें-''इलैक्ट्रानिक सामान....(फ्रीज, वाशिंग मशीन, रंगीन-टी.वी. आदि) की दुकान डाल लई। दूसरे मित्र ने एक बड़ी अच्छी वाशिंग मशीन खरीदनी चाही। देखो। भाई-आपये घर की बात है-सई दाम। सई मुनाफा लगा कें-दै दईओ। मशीन-अच्छी, स्टेडर्ड कम्पनी की तुमें - 15 हजार में पड़ है। जामे हुमाओ-मुनाफ 3 जुड़ो है-जो आज काल सबई जागा चल रओ है-और सबई दुकानदार चला रये हैं-जो 25% के बराबर बैठत है -यानी - 12 हजार की मशीन 15 हजार में विकत है इमें दुकान किराओ, नौकर चाकर, हमाओ खर्चा, दोनों टेक्सउ समिल हैं-हमाई-मजबूरी है। अरे भाई 12 1/2% मुनाफा लगा कें हमें 13 1/2 हजार में पैक करवाय देव। हम कौनउँ पक्की रसीद नई माँगत हैं। दोस्त मे! पक्की रसीद तौ - 15 हजार रूपईयन में नईदें हैं। हम तौ- जानते ते-तुम ऐसोई करिहो। राम-राम

-सीकर भवन, न्यू दतिया पब्लिक स्कूल
ठंडी सड़क, दतिया, म.प्र.

*****

भई न बिरज की मोर

-आचार्य दुर्गाचरण शुक्ल

कातिक को महिना, थोडी-थोडी ठंड, धरती ने धारन कर लई धानी चुनरिया। बुंदेली गांव में बिरज आ बिराजो है। जो बिरज 'गौ लोक' नित्त निवास करत है बो बिरज। बुदेली माटी में 'बिंद्रावन' पिरगट हो गओ है। खिरकन-खेरन की छनकीली गोरी धना की कंचन काया में, गोपियन को भाव, उतर आओ है। उनके अंतस में कन्हैया की बांसुरी बज उठी है। मन को मोर मस्त होके नचन लगो है। उनकी मन की आंखन में है, कथा के किसन कन्हैया। सिर पे मोर मुकट, कानन में किरचवार के फूल सांवरे सरीर पे पीत-पट फहरा रओ है। गरे में बैजन्ती माला, और ओंठन पे मुररिया इठला रई है। बा मुररिया की धुन सुनके जो मन को मोर मस्त होके नच रओ है। और देख रई है जे मन की आंखन से। सो देखतई रई है। देखत रै गई है उन मन की आंखन से-

गोविन्द बेणु मनु मत्त मयूर नृत्यम
प्रेक्षाद्रिसान्व परतान्य समस्त सत्वम्।।
(भाग-पु 10/21/10)

जब होस आउत है तो होत है बैचेनी, और कसक मीठी-मीठी। बा कसक सुर बनके फूट परत है-

सखीरी, मैं तो भई न बिरज की मोर
वन वन फिरती, वन फल खाती
वन में करत किलोर
उड़ उड़ पंख गिरैं धरनी पै,
बीनत नन्दकिषोर, सखीरी............

नन्द किशोर जू कबे भै ते ? भै ते के नई भै ते ? का उसई हते, जैसे गांव के पंडित महाराज कथा में सुनाउत है ? इन बातन कों भैया बे सोचें जिनके मूड़ पै ग्यान की गठरिया धरी होय। बै सोचे जिनके पास तला की लहरे गिनवे को फलतू समै होवे। जे तो गांव की सूधी सांची घर गृहस्ती वारीं है, इनके लाने तो कातिक को महिना आनंद को महिना बन के आओ है। सो जे सब एक महिना के लाने गोपी बन गईं है । घर परिवार के बड़न ने जा वृत के करवे के लाने आग्या दे दई है। काय से जा में है इनके घर परिवार को बड़प्पन, पुरखन से चली आई जा परम्परा है, जा से जै अब ना दीन है, ना हीन है। जे तो पूरे कातिक भर की बिरज की गोपी है। भुन्सारे से दिन डूबे तक, और देर रात नो 'गोपी-भाव' में सरावोर, इनकी सांसे पुकारती है-

तुम बिन स्याम हमाओ नईया कोउ रे...........
तुम बिन स्याम हमाओ नईया कोउ रे...........

स्याम के रंग में रंगी जे गोरी धना स्यामा हो गई है। इनकी आसा है कन्हैया, इनकी अभिलासा है किसन कन्हैया। इनके प्रान किसन में है। इनके प्रान प्यारे श्री किसन है। किसन कन्हैया खों छोड़ के इनें कछु नईं चइये , धन, सम्पत, सरीर को सुख और तो और इने मुक्ती नईं चइये। इनको आसरो है कन्हैया। चांय होवे बिन्नू चांय होवे सयानी जे सबई कतक्यारी, कत्यानी (कात्यायिनी) देवी मैया की सेवा में सब छोड के लगीं है। इनको विसवास है के जे मइया इने किसन कन्हैया नों कभउ न कभउ जरूर पौंचा देहे।

जानकार बताउत है के कन्हैया जू जी कमल पे बिराजत है। ऊ कमल में आठ पंखुरी है। बा कमल की उत्तर पूरब के कौने में जो पुखरी है ऊ पंखुरी पे सिद्द पीठ है। उतेई कत्यानी देवी जू बिराजती है। सो उतई होत है उनकी पूजा अर्चा। उतई पूजा करी ती बिरज की गोपिन ने, सो जेउ अन्जानै उने पूजती है और मनाउती है।

कातिक के महिना में केई वृत होत हैं। इने सब पतो है जे सब करती है। और जो पुन्य इने मिले बो सबई कन्हैया को भेंट कर देती है। काय से इने पुन्न नईं चाने इने तो चइये किसन कन्हैया। बे किसन कन्हैया जिनकी मालकिन है 'राधा रानी'। जे उन मालकिन कों जानती है पहचानती है। जनबा बताउत है के राधा जू 'भाव' नइंया वे 'महाभाव' है। वे आंठे कों उन राधा रानी जू को जनम दिन मनाउती है। उ दिना सीतल जल से भरे कुण्ड में ऐसे अनाउती है जैसे इनके भीतर तेज आंच रग रग से फूट रई होय। काय से के इनके भीतर भरो है राधा जू को प्रेम। देखे से लगत है के इने कन्हैया जू की मालकिन राधा जू ने कितउं जरूर छू लओ है। सो गली-गली गांव-गांव स्याम सुंदर कन्हैया जू खों धूंड रई है-

कजरी वन धूंड आई स्याम न मिले
स्यान न मिले, घनस्याम न मिले। कजरी वन...........

जे तुलसी मइया से पूंछ रईं है, कदम से पूंछ रईं है, बर से पूंछ रई, पीपर से पूंछ रई है! काय से जे अपने ठाकुर की खोज में है। इनके कन्हैया कितउ हिरा गये है। जा खोज पांच दिना की है, जा इनके रास की ''पंचाध्यायी'' है।

जे वारस खों पूजती हैं दामोदर, काय पूजती है ? जा बात तो जाने दामोदर महाराज। बे महाराज जाने के दामन (रस्सी) से जे उने बांधती है के बे इने बांधत है ? इनके चहरा मौरा की दमक सीधी सांची मस्क्यान और उलटी सीधी बांते, जो इसारो जरूर कर रईं है के इनके भीतर अंतस में कौनउ गैरी बात जरूर घुर गई है। इने खबर नईया के टिपरिया से ढको कोनउ दिआ छिपत थोडें है, कितउ न कितउ से बो झांखन लगत है।

तेरस खों बत्तीस दिअन की दो सुराती सें जे भोले बाबा कों पूजती है। इनने पुरान तो पडे नइयां पे घर की परम्परा को खूब पडी है। इनके प्रस्नन को उत्तर ग्यानी से ग्यानी पंडितन के पास नइंया। कैसे होवे ? जे का साधारण रै गई है ? जे है राधा जू की सखी। सखी है राधा जू की सो धारा से जुड गई है। जिते से सबरे आ रए है।

इनके अनजानें में '' भुंवर गुफा'' के भीतर सोरा पंखुरियन बारो दोहरी जोत को जो कमल है। जी के उपर भोले संकर महाराज बिराजे है, ऊ की पूजा अर्चा हो रई है।

जई बात है, ईसे जे दो दिना वृत को कठिन अनुस्थान करती है। इने नईं पतो है के कभउ कौनउ जमाने में कासी जू के मनिकर्निका तीरत में षिव जू महाराज ने अपने पूजन खुदई करो तो। सो पासुपत वृत की परंपरा को जनम भओ तो। सो ई दिना जे अपनो पूजन करकें फिर षिव जू की अर्चना करती है।

पूने आगई। गांव की गोपी गांव की नदिया में नईं तो कौनउ तला पुखरिया में 'दीपदान' कर रईं है। पंडित जी पुरान में सुनाउत है के दीप दान को बडो महत्तम है। कीरा पतींगा, और बिरछा जल में

बिचरवे वारे जीव जो कोउ इन दियन को दर्सन करत है, बे सबई पुन्न के भागी होत है। जे सब जीवन के लाने पुन्न के जगमग आखत बगरा रई है। बडो भारी परब है जो 'कतकी पूनों'। कभऊँ भौत पुराने जमाने में जो परब सब मनाउत ते, तब जो परब त्रिपुरोत्सव कहाउत तो। रिद्धी-सिद्धी के लाने जा वृत को अनुष्टान होत तो। अब तो बस सखी मनाउती है। बे मनाउती है जिने न रिद्धी चाउने न सिद्धी चाउने, जिने चाउने सुंदर सलोने स्याम कन्हैया।

जे गोपी मनाउती है चौदा आंगुर गहरो गढ़ा। उ गढा को भरती है दूध और पानी से, उमें डारती है चंदन और दूबा। जा गढ़ा के जल में बे ''सोन मछरिया'' बनाके छोड देती है। जीकी आंखे हुये मोतियन जैसी, जी की चमक हुये चंदा की चांदनी जैसी। असल बात जा है के जा मछरिया ''महामच्छ' को रूप है। जो महामच्छ इन सखियन के भीतर अंतस में छुपी कौनउ पुरानी याद है। इनके सीधी सांचे जीवन में सनातन सत्त उतर आओ है। सो इने धारा के बीच को चीरत उपर को चडत बा पुराने महामच्छ के दर्सन जा गढा में हो गये है। सब बहें धारा में सो बहें, जे सखी तो धारा को चीरके जिते से धारा निकरी है उते पौंच रई है। भलेई जे न जानती हो बो ठिकानो।

इनने राधा जू चरनन की धूरा कों परस करो है। सो जे धारा को चीरवो जानती है। इनने प्रेम के ढाई आखर पढे है। भलेई जे पंडित नइंया पर इनकी बुद्धी तो बोई है जो बडे से बडे पंडितन की होत, और उनकीयऊ नई होत। इनकी बुद्धी इनकी अपनी थोडेई है इनकी बुद्धी तो काउ और की है। उकी है जिनके रंग में रंगके जे स्यामा हो गई है। हो गई है के नई हो गई। हम जा तो नई कै सकत है, हा भई जरूर जा रई है। काय से के जे होवे के होवे से बैचेन हैं। मीठी पीर की पीरें इने आ रई है। अंतस में जे पीरे हूक बनके कूक रई है। इनकी प्यास आस की प्यास है। घनस्याम के सबद की प्यास है। मुरलिया की तान की प्यास है।

कतिकी पूनें की रात है। किरकिचांउ (कृत्तिकाओं) के संगे चंदा रास रचा रओ है। बुंदेली माटी की बिंटियां, और राधा जू की सखियां, जे अपने भीतर के कन्हैया के संगे रास रचा रई है। जिनके भीतर इमरत झर-झर करके झर रओ होय, बे रात कें कुआं तला को पानू कैसे पिये ? जी के भीतर इमरत होत है बो कउं नदी तला को पानू पियत है ? सो जे रात भर इमरत की बूंदे पीती हैं।

कातिक को वृत्त पूरा भओ। जे गोपी ''महाभाव'' की भूम से धरती पें उतरीं। अब जे सखियां आनंद से हंसती खिलखिलाती जा रई है। सानी, पानी, चूलो, चकिया, गाय, बैल बारी गृहस्ती की तरफजे आ रई है। इन सखियन नें (मधुर रति) की इमरत भरी बूंदन को स्वाद खूब ले लओ है, सो ईसे जे गोरी धना आवे बारे दिनन में जिंदगानी के खट्टे मीठे करए कैसेउ घूंठन को हंस हंस के पीवे में पूरी समरथ हो गई है। बे कोहक रई है-

भई ना बिरज की मोर
सखीरी में तो भई ना बिरज की मोर.........

-नूतन विहार कालोनी
टीकमगढ़ (म0प्र0)

*****

तीन गज़लें

-महेश कटारे 'सुगम'

(1)

हम नईं करत बहाने भैया
दै रये काय उराने भैया
जित्तौ चाहौ हमें जोत लो
हम हैं बैल बिराने भैया
खाकें मान्स डकारें लै रये
तुम हौ जाने माने भैया
लगौ दाढ़ में खून मान्स कौ
तुम हो गए हौ दाने भैया
नापत अलग अलग फीतन सें
अच्छे लयें पैमाने भैया
सब की खुशियत खौं चर गए हौ
तौ तक नईं अघाने भैया
भये आँधरे धन के लानें
कर रये रोज़ धिगाने भैया।
जित्ते चाहौ टटा लगा लो
फिकहैं मनौ मखाने भैया।

(2)

देखत देखत यार बदल गए
सबरे रिश्तेदार बदल गए
जोंन बात साँची छापत्ते
अब तौ वे अखबार बदल गए
बैंक बने हैं नए बानियाँ
बूढ़े साहूकार बदल गए
वोटन वारी उठा पटक में
सबरे लंबरदार बदल गए
होत पाँव पखरई भड़यन की
अब सब इज्ज़तदार बदल गए
डाकू बैठे हुकुम चला रये
अब उनके अधिकार बदल गए
सांचे सब फांके कर रये हैं
देखौ तौ धिक्कार बदल गए
भरे चैत में झर लग रई हैं
भादों, सावन, क्वांर बदल गए।

(3)

नीत, न्याय की धरती कैसी हो गयी है पथरीली
साँची बातें लगत नीम सीं झूठीं लगत गुरीली
आवभगत, आदर, मर्यादा टांग धरे खूंटा पै
बोली बानी जी की देखौ ऊकी भई कंकरीली।
रौनक, रंगत सबरी उड़ गयी फैशन की आंधी में
चुस्ती, फुर्ती वारी ज्वानी हो गयी ढीली ढीली
गांवन, गांवन धुँआ उठौ है, शैरन शैरन आगी
गैलन, घाटन डरी ज़िंदगी हो गयी पीरी लीली
कैसें कयें सुख की गंगा में सबरे डुबकी लै रये
सबकी साँसें थमी थमी सीं सबकी हंसी पनीली
सुगम सुखी कोउ मिल जावै तौ ऊ सें हमें मिलैयौ
जी की दुनिया चमकदार सी जी की हंसी रसीली।

-काव्या, चन्द्रशेखर वार्ड-बीना, जिला-सागर
मो.9713024380

*****

ततूरी

-डॉ. शिरोमणिसिंह 'पथ'

साल भर भई जात है, अबधिया को मान्स छजआु घर छाडे़ कैं कऊँ चलौ गऔ अबरंई अबधिया!
सो अपयें मोड़ी-मोड़न कों लयें काम दंद करत भये अधूरों जीवन जिअत रये। अकेलें जो जीवन को कौनऊ ठौर-ठिकानों नई तौ। इतें से उते, उते सें इते भगा-दौरी करत रये जो मेन्त-मजूरी करे बासें नैने-नैने मोड़ी-मोड़न कौ और अपँओ पेट भरै। जा दिना खाबे को कछु न रये, ता दिना अबधिया पानी पीकें रै जाबै। सो सूक-सूक के छुआँरो हौन लगी। दिशाहीन अबधिया करती तौ का करती अब करमहीन सीअऊ हौन लगी ती। कछु करै-धरै नईं। मान्स के बारे में सोसत रये बस। अब एक दिना अबधिया अपयें मोड़ी-मोड़न को चपेट कैं निकर परी घर सैं। किते जाने काँ जाने कछु पतौ नइया। बस मोड़ी-मोड़ा पालने सोसत जाबे, चली जाबे के कऊँ जे मिल जाबैं। मिल जैहैं तौ नौनी है। नईं तौ कऊँ भिड़न के मौ पर गयी तो जाने का हमाओ हुए और का मौड़ी-मौड़न कौ। सुनिअई तो है कै जे सैर कों गए हैं। कौन सैर काँको सैर को जाने। अबधिया भोरई से निकरी चार छे कोस चली। सो दुफ्र होबे कौं आई जेठमास को मईना ऐसी टीका-टीक दुफरिया में अबधिया मूड़ पै पुटरिया धरें एक मोड़ी कों कइयाँ लयें एक को पीठ पै बाँधें और बड़ी मोड़ी सगुनिया कों बाकी अंगुरिया पकरें रिगाँत जाबै।

जेठमास की दुफरिया में चलबों का अंगरन पै चलबेघाँई हौत है। सो बड़ी मोड़ी सगुनिया पाँव उटका-उटका कैं चले। काय के ततूरी के मारें बाके पाँव भुँजे जा रये ते। सो सगुनियाँ सैर के किनारें ठाँड़ी दूबा मिलोने सूखे चारे पै जा ठाड़ी होबे। चलबे की न औरे काय के उपाने पाँव ततूरी में चलबे में करंई पर रयी ती। अरे बौ तो नेकसी मोड़ी ठैरी कोऊ सिआनों मान्स न चल पै है। सैर में ऐसी ताती भुल-भुल धरी ती सो सगुनिया के पाँव भुलभुला गए। फ्लका पर गए ऐसे चरपोटा से बड़े-बड़े अकेलें विचारी का करती सिवाय रोबे के सो रोत जाबै चलत जाबै। कभऊँ मताई सें कइयाँ धरबे की कये। काय के सगुनिया कछु सियानी नई ती। इतै पियास के मारें गरौ सूक रऔ तौ काय के बाकौं पानी कितैऊँ दूर-दूर नौ नई दिखात् तौ। दिखात तौ, तौ भौत लगतौ उन मताई बिटिया की आँखन में। जासें पिआस नईं बुझ सकत ती और मन के ताप कौं बढ़ा दैबे बारो पानी हतौ काय के आँसुअन सें काऊ की पिआस कभऊँ नईं मिटत। सो सगुनिया के आँसू ऊपर की तपन और ततूरी सें बगर रये ते। तौ अबधिया की आँखे मन की विलखना और दालुदरता की ताप सें ढवडबाई जा रयीं तीं। वे आसरे के मताई और नैने-नैने मोड़ी-मोडन की जा विपदा की कोऊ होड़ करबे बारो नई हतौ। काय कें मोड़ी के कष्ट के सामूँ अबधिया अपयी पनइया के फ्टे तरन में सें ततूरी से चाकबोऊ भूली ती। काय के फ्लका अबधिया केंऊ परकें फूट गए ते। गुम्म-सुम्म रोउत भई कोनऊ देवी-देवता कै भगवान सें आसरो माँग रई ती। अकेलें सुनता-बुनता कौऊ कितेऊ नई तौ। हाँ पीठ पै बँधे मोड़ा और कइयाँ लयें छोटी मोड़ी कों अबधिया के पसीना सें भींजी देओ सें कछु नेक सीरोटा जान परत तौ और फ्रि ऊपर से मताई के आँचर की छाँईं सो विचारे दोऊ मोड़ी और मोड़ा सो गये ते। सो सोउत बाल-बच्चा कों लेबे में हैरानीहोत है। सो अबधिया कइयाँ की सरकत मोड़ी पै कछु नेक खिसिया परै सुसारयी धरी-धरी सोय जिन हत्यायी। अकेलें नेक मोड़ी विचारी बाकों का पतौ मताई की विपत्ती कों और इते अबधियऊ अपयी गुस्सा कों नई जान पा रयी ती। सो अब मोड़ी कों पुचकारन लगी के बेटा देखो तौ बो का है। देखो-देखो बो बल्लर-बल्लर ऊँट जा रऔ। सो सगुनियऊ कन लगी बल्लर-बल्लर ऊँट गऔ भौजी तेरौ बाप गऔ। इतेक सुनके ओली की मोड़ी कछु नेक सोउत सें जगी ऐकसी भई सो अबधिया कौं कछु नेक बाकों लेतन में आराम भऔ। इते सगुनिया को बुरौ हाल हतौई सो वो मताई से लिपिड़-लिपिड़ जाबै चलबे में ततूरी के मारें। अब अबधिया करती का तीन-तीन मोड़ी मोड़न कों कासें लाद लेती।

सो अब सगुनिया कों बहाटान लगी के चलौ बेटा कों दद्दा हाट सें गुलगुलीं चप्पलें लिआयें। चलो वो रूख तरे सत्तायें, छेरया कैं फ्रि चल हैं। अब कोऊ गैलारोऊ नई दिखात तासें कछु थाराई बिनती करते। चलत जाबै बिलखत जाबै सो कछु देर में अब रूख तरैं पौंच के बैठ गई। अबधिया ने उसाँस लयी और सगुनिया कों खचोर कें ओली मेंधर लयी। एक कों तो पैलेई सें लयें ती अकेले का करे पेट के अड़ा हैं। कौनें कैंसें दुखी देख सकत मताई। अकेलें अपयें मान्स कों ऐन कोस रयी ती अबधिया। कये डरपौंका निकरौ। सगुनिया को बाप मजधार में हात छुड़ा के अपऔ जी बचा भगौ। ऐसी का बेजाँ हती नेक हमऊँ कों तो बताते। हम कछु कर पाते तौ करते। अकेले भड़यन घाई भग काय गए। अरे दुष्टी तोय नेक सरम नई आई। अबधिया बैठी-बैठी विलाप तो यशोधरा सो कर रयी ती। अकेले छजुआ गौतम बुद्ध की घाँई नई गऔ तौ। वो तो मसकई कछु काम दंद के लाने घर से भगौ तौ। के कछु और बात बिकत परी होवे कछु नई कई जात। कछु सूद पतौ हावै तो ढूँढ़ लैबे अबधिया काँ मौं बाँय फ्रि है। राम जाने। सुन्न सात बैठी अबधिया कों तौनो रूख पै दो पंछी चोंच में दानों लये। आकें अँपये घेंसुआ में बैठे बच्चन कों चुनात दिखा गए। अपयें मौं में से कनूका निकार निकार कैं बच्चन के मौं में डारत भये देख कें अबधिया मनई मन सोसन लगी के जौ बच्चन के मौं में कनूका डारत है। वो ऐन मताई हुए। कायके मताई कोंई मोड़ी-मोड़न के भूँख-पियास की जाँदां फिक्र होत है। बो आराम से बैठो है। बो जरूर इन बच्चन को बाप हुए। हाँ निक्कमों तौ लगत है। हो सकत मालिकी दिखा रऔ होवे बैठो-बैठो काय के मान्स है। आलसी अऊ होवे तौ का पतौ। अकेलें छजुआ घाँईं दगाबाज तौ नइयाँ। कम से कम इत्तौ तौ है के संगे लगौ है। विचारी पड़कुलिया अकेली तो नइया। बिना आसरे की तौ नइयाँ। बारे सगुनिया के बाप तोय तौ इन पखेरुअन कित्तौ ज्ञान न भऔ। तोय नेक सुर्त न आई। इने देखो पंछी होकें घेंसुआ बनाओ के अब हमाये बच्चा हुँएँ। उने पालने पर है। कनूका चोंच में भर-भर कें लिआ रये। घेंसुआ पै आतनई बच्चा कैसे उते सें चिचआत भये अपऔं मौ बा देत हैं। इने अपयें मताई बाप को सासों लाड़ पियार मिल रऔ है। बड़े होजें सो उड़न-खान लग हैं। अरे निर्दयी तेंऊ अपयें बाल-बच्चन कें पँखेरू हो जान देतौ सो अपयें जेऊ उड़न खान लगते। तैंने तौ नेकऊ ना सोसी।

इतेक बस सोसई रई ती के तौनो एक फैरी बारो साइकिल लयें चलौ आ रऔ तौ। सो बऊ उतेंई रूख की छाँईं में ठाड़ो हो गऔ के नेक पसीना मरम जाबे तब चलें। सो अबधिया कों देखकें फैरी बारे ने कई बैन तुम को हौ काँसें आई हौ। तुमाये संगे कोऊ मान्स नई दिखात काँ जैहो। सो अबधिया ने कई भइया गैलारे तुम को हो काँ से

आउत हौ सो बाने कई बैन हम मुसलमान है। हमाओ नाम रहीम है हम गाँवन में चुटिया कंगा, फीता, बाला, बूँदा बेंच के अपऔ गुजारो करत रत हैं। तुम हैरान लगतीं हों बैन हम पैऊ तौ कछु नइयाँ। हाँ बेटा पानी पिऔ सगुनिया से पूछत भई कई और एक सुराई निकार के पानी देन लगौ सो सगुनिया ने कई चाचा हम पानी पी हैं। रहीम ने सगुनिया कों पानी पिबात भये कई के बेटा चाचा नई हम तुमाये रहीम मामा हैं, मामा कहौ बेटा। फैरी बारे के इन शब्दन कौं सुनकें अबधिया भलर-भलर रौ परी और धोती के छोरा सें आँसू पोछ कें अबधिया रहीम के मौ तरें भौत दीन भाव से देखन लगत है। सोसन लगत है के सबरे मताई बाप अपयीं औलाद के लाने जिअत हैं। फिर छजुआ काय निरमोई निकरो काय नई अपये मोड़ी-मोड़न और लुगाई की राट-बाट लई। जरूर बाकी कछु मजूरी हुए। नई को हुए जो अपनिन की सुर्त न करै। जब चिटी-चांगुर, पशु-पंछी सब अपओ करम निभा रये तौ छजुआ तौ........ अरे अब जो है सो नौनोई है कोऊ नई हमें चुने लेत हमऊ अपयें मोड़ी-मोड़न को पाल लैं हैं। जमानो का कर लै है हमाओ हम हिम्मत नई हार सकत........ ।

इत्ते में रहीम ने कई काय बैन काँ खो गयीं का सोस रई हो। भौत हैरान हो चलो बैन हमायें इतै चलो। अपने गैल चलत भइया कों गैर न समझो चलो अल्ला सब अच्छो कर है। सो अबधिया ने कई नई भइया हम नई चल हैं। बैसेऊँ बैन बिटिया को मायके में रैबो सोबा नई देत है। अच्छा बैन तौ हम चलत है। अकेले मन में चैन नई रै है एक रोती बिलखती बैन को गैल में छोड़ कें कोऊ दुष्टिअई जा सकत है। चलौ बैन घरे चलो। अबधिया ने रहीम की एक नई सुनी। अकेले एक पवित्र रिस्तो ऐन गैल चलत अबधिया और रहीम कों बाँध के चलौ गऔ। रूख की छाईं में बैठी-बैठी कछु हिम्मत बाँध रई ती। आगे चलबे की दुनिया सें लरबे की और कछु देर में चल देत है। अबधिया मुँदते सूरज की ओर......

- सेंवढ़ा, जिला दतिया (म.प्र.)
मो. 9993349750

*****

नईं-नईं पोथीं अपुन के लानें

* अंतर्वेदना (कथा संग्रह)-कमलसिंह सोलंकी 'कमल'
प्रकाशक-शिव संकल्प साहित्य परिषद्, होशंगाबाद की.-100 /-
* बुन्देलखण्ड संस्कृति दर्शन
प्रकाशक-किशोर सांस्कृतिक कला संस्थान, महोबा-की.100/-
* बुन्देल भारती -महाकवि अवधेश
प्रकाशक-अंजलि प्रकाशन, झाँसी कीमत-75 /-
* बुन्देली विरासत (प्रवेशांक)-सं. सफिया खान,
प्रकाशक-बुन्देलखंड विरासत अकादमी, ओरछा (टीकमगढ़) -150/-
* बुन्देलखंड के दस्तावेज भाग-2 सफिया खान,
प्रकाशक-मरुभूमि शोध संस्थान, बीकानेर, की. 300/-
* बुन्देलखंड के दस्तावेज भाग -3-सफिया खान,
प्रकाशक-मरुभूमि शोध संस्थान, बीकानेर , की. 350/-
* स्त्री तेरे हजार नाम ठहरे-महेन्द्र फुसकेले,
प्रकाशक-सत्यशीलम् प्रकाशन, सागर - की. 50/-
* बुन्देली लोकोक्ति कोश भाग-2, डॉ. गौरीशंकर उपाध्याय 'सरल'
प्रकाशक-सरल साहित्य संगम, झाँसी, की.- 700/-
* बुन्देलखंड में साहित्य की परम्परा-प्रो. सुरेन्द्र दुबे
प्रकाशक-बुन्देलखण्ड विवि. झाँसी, की.-150/-
* प्रबोध (काव्य संग्रह)-जगदीश कुमार कुशवाहा
प्रकाशक-रचनाकार स्वयं पन्ना
* भानु रश्मि-दुर्गा प्रसाद श्रीवास 'भानु'
प्रकाशक-आदित्य साहित्य सदन, तालबेहट, की.-45/-
* खड़े रहते हैं घर - डॉ. मालती शर्मा
प्रकाशक- क्षितिज प्रकाशन, पुणे, की.-140/-
* मनोभूमि के विविध रंग-डॉ. गंगाप्रसाद बरसैया
प्रकाशक-अयन प्रकाशन, नई दिल्ली, की.-250/-
* तुलसी चरितामृत - रामसेवक पाठक
प्रकाशक-हरिकिंकर साहित्य संस्थान, तालबेहट की.-50/-
* सत्य से साक्षात्कार के रवि निर्मल चंद निर्मल-सं. सरोज गुप्ता, लक्ष्मी पांडे, घनश्याम भारती
प्रकाशक-प्रिया पुस्तक सदन, दिल्ली,की.- 850/-
* बुन्देलखंड -सांस्कृतिक वैभव-डॉ. रंजना मिश्र
प्रकाशक-अनुज्ञा बुक्स, दिल्ली, की.-500/-
* मोम दीप-डॉ. गार्गीशरण मिश्र 'मराल' सरस्वती कालोनी, चेरीताल, जबलपुर, की.-15/-
* बुन्देली काव्य-श्रीमती नवल कुँवर, टीकमगढ़
प्रकाशक-श्रीमती राकेश व श्री राजेन्द्र सिंह परमार टीकमगढ़
* बियाबानों में (गीत संग्रह) डॉ. श्यामबिहारी श्रीवास्तव
प्रकाशक-उत्कर्ष प्रकाशन, मेरठ, की.-250/-
* सरल की संस्मरणात्मक कथाएँ-डॉ. गौरीशंकर उपाध्याय
प्रकाशन-सरल साहित्य संगम, झाँसी, की.-100/-
* दतिया एकादश-सं. विनोद मिश्र 'सुरमणि'
प्रकाशक-शिवालिक प्रकाशन, दतिया, की.-150/-
* मधुकर वाणी, सं. अरविन्द श्रीवास्तव
प्रकाशक-मधुकर शोध संस्थान, दतिया
* दोहा दर्पण-देवदत्त द्विवेदी 'दत्त'
प्रकाशक-बुन्देली साहित्य प्रकाशन, छतरपुर, की.- 200/-
* भारतीय भाषाओं में रामकथा-बुन्देली सं. उदय शंकर दुबे
प्रकाशक-वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली कीमत-495/-
* लल्ला लल्ला लोरी-डॉ. मालती शर्मा-गोपिका
प्रकाशक-क्षितिज प्रकाशन, पुणे-कीमत-150/-
* बुन्देली शब्दों का व्युत्पत्ति कोश-आचार्य दुर्गाचरण शुक्ल
प्रकाशक-इंदिरा पब्लिशिंग हाउस, भोपाल, कीमत-450/-
* बुन्देलखण्ड सामान्य ज्ञान अध्ययन-व्ही के. मेहरा
प्रकाशन-निर्दलीय प्रकाशन, भोपाल, कीमत-50/-
* हिन्दी भाषा और साहित्य के संबर्धन में महिला साहित्यकारों का अवदान-डॉ. लखनलाल खरे
प्रकाशन-शास. महावि. करैरा जिला शिवपुरी
* श्रीराम कृष्णार्चनम्-कपिल देव तैलंग
प्रकाशन-तुलसी मानस प्रतिष्ठान, भोपाल, कीमत-75/-
* श्री गणपति आराधना-स्वामी प्रसाद श्रीवास्तव
प्रकाशक-श्रीमती शांति श्रीवास्तव, बजरंग नगर, छतरपुर

(शेष भाग पृ. १३२ पर)

बुन्देलखण्ड में अश्व चिकित्सा संबंधी साहित्य

- डॉ. लखन लाल खरे

भारतीय संस्कृति में गाय, बैल, हाथी और घोड़े का महत्वपूर्ण स्थान है। वैदिक साहित्य में इनके उल्लेख से विदित होता है कि गाय और बैल मनुष्य-जीवन में संचालन के प्रमुख हेतु- कृषि-के प्रधान घटक रहे हैं तो घोड़े और हाथी का योगदान आवागमन तथा विपणन के लिए होता रहा है। हाथी तथा घोड़ा प्राचीन युद्ध कला के प्रधान अवयव थे। पौराणिक मिथकों के अनुसार समुद्र मंथन से उच्चैश्रवा नामक अश्व प्राप्त हुआ था, जो असुरों के राजा बलि को सौंपा गया था। भगवान भुवन भास्कर अपने सात घोड़ों से जुते हुए रथ पर सवार होकर प्रतिदिन विश्व भ्रमण करते हैं। घोड़े के नाम पर तो एक यज्ञ अश्वमेघ यज्ञ ही प्रसिद्ध है। भगवान बुद्ध का अश्व-कंथक तथा राणा प्रताप का अश्व चेतक तो इतिहास प्रसिद्ध ही है। चेतक तो इतना लोकप्रिय नाम है कि आज अति विशिष्ट कालोनियों के नाम चेतकपुरी रखे गये हैं। राणा प्रताप की रक्षा करते हुए उनके नीलवर्णी अरबी नस्ल के चेतक ने जिस स्थान पर अपने प्राणोत्सर्ग किये थे, हल्दी घाटी में आज भी उसका स्मारक बना हुआ है, जो उसके बलिदान की याद दिलाता है। शत्रु सेना से घिर जाने पर अश्व बादल ही वह मूक प्राणी था, जो महारानी लक्ष्मीबाई को झाँसी के किले से कालपी तक सुरक्षित ले आया था और अपना कर्त्तव्य पूरा कर उसने प्राणों की आहूति दे दी थी-

रानी बढ़ी कालपी आयी कर सौ मील निरंतर पार
घोड़ा थककर गिरा भूमि पर गया स्वर्ग तत्काल सिधार

मांगलिक कार्यों में भी घोड़े का महत्व कम नहीं है। बुन्देलखण्ड में वर की राछ घोड़े पर बैठकर फिरती है। द्वारचार में वर के तिलक के पूर्व घोड़े का टीका किया जाता है।

प्राचीन युद्ध प्रणाली के समाप्त होने, राजशाही का अंत होने तथा आवागमन के नये-नये आविष्कार होने के कारण घोड़े का महत्व कम हो गया। बग्घी से उतरकर यह प्राणी तांगे में जुता, पर आज तो तांगे का अस्तित्व भी समाप्त हो गया।

ताँगे का अस्तित्व समाप्त हो गया, घोड़े का महत्व कम हो गया, परंतु पूरी तरह नहीं। सेना में आज भी घुड़सवार पल्टन है और द्वारचार कराने से लेकर नृत्य कराने तक में घोड़ा अब भी मनुष्य जीवन से जुड़ा है।

ऐसे अति महत्व के प्राणी की सेवा का भार भी मनुष्य पर था और फिर विकसित हुई अश्व-चिकित्सा की पद्धति। ज्ञात इतिहास के अनुसार विश्व इतिहास में अश्व चिकित्सा पर लिखित प्रथम ग्रंथ शालिहोत्रसंहिता है जिसका प्रणयन शालिहोत्र ऋषि ने महाभारत काल से भी पूर्व किया था। इनका समय 1350 ईसापूर्व माना जाता है। इसके पश्चात अश्व-चिकित्सा से संबंधित जो भी साहित्य सृजित हुआ उसका आधार यही ग्रंथ रहा।

हिन्दी साहित्य सम्मेलन और नागरी प्रचारिणी सभा वाराणसी की हस्तलिखित पाण्डुलिपियों के खोज विवरण में अश्व चिकित्सा संबंधी निम्नलिखित ग्रंथों का उल्लेख है-

क्र.	ग्रंथ संख्या	ग्रंथ का नाम	भाशा	प्राप्ति स्थल	स्थिति	खोज विवरण की पृ.सं.
1	8189/4634	अश्वचिकित्सा	हिन्दी	जगन्नाथ प्रसाद शुक्ल प्रयाग	आधुनिक	13
2	8056/4540	अश्वचिकित्सा	अवधी	डॉ. नबल बिहारी मिश्र सीतापुर	अपूर्ण	14
3	7882/4418	शालिहोत्र (सं.1743)	ब्रज	--''--	--''--	38
4	8671/4969	सालहोत्र	ब्रज	--''--	पूर्ण	39

(संपादक-डॉ. पारसनाथ तिवारी, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग संस्क. 1987 ई.)

डॉ. रामकुमार वर्मा के प्रधान सम्पादकत्व में हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग से सन् 1971 में प्रकाशित हस्तलिखित हिन्दी ग्रंथों की सूची में अश्व चिकित्सा से संबंधित निम्नलिखित ग्रंथों का विवरण दिया गया है:

5	73/3615	अ व रंग चेतावनी भालिहोत्र	हिन्दी		पूर्ण	19
6	74/1664	(महर्शि नकुल) लिपिका. सं. 1927	हिन्दी	राजकुमार रणंजयसिंह अमेठी	पूर्ण	19
7	75/1977	भालिहोत्र (करतार राम) (लि. 1931)	हिन्दी	कृशण कुमार वाजपेयी (देवरिया)	पूर्ण	24
8	76/976	भालिहोत्र (पद्य)	ब्रज	राव मुकुंदसिंह बूंदी	पूर्ण	19
9	77/1277	भालिहोत्र (गुरूदीन कवि)	हिन्दी	राज. रणंजयसिंह अमेठी	पूर्ण	19
10	78/4552	भालिहोत्र	संस्कृत	सूरज राज धारीवाल ग्वालियर	पूर्ण	20
11	79/1478	भालिहोत्र	हिन्दी (पद्य)		अपूर्ण	20
12	80/1674	भालिहोत्र	---''---		अपूर्ण	20
13	81/1683	भालिहोत्र	---''---		अपूर्ण	20
14	82/1683	भालिहोत्र नकुल पंडित	---''---	ई वरी सिंह अलवर	अपूर्ण	20
15	83/4660	भालिहोत्र	---''---	सूरज राज धारीवाल	अपूर्ण	20
16	84/5488	भालिहोत्र	हिन्दी	---''---	अपूर्ण	20

नागरी प्रचारिणी सभा वाराणसी से संवत 2052 में प्रकाशित तथा डॉ. श्यामसुंदर दास द्वारा संपादित हस्तलिखित हिन्दी ग्रंथों की खोज विवरणिका में अश्व चिकित्सा के एक ही ग्रंथ का उल्लेख है-

17 संवत 99 सालिहोत्र — विद्या प्रचारिणी जैन सभा पूर्ण 85 खण्ड जयपुर

उपर्युक्त ग्रंथों के अनुशीलन से यह स्पष्ट है कि अश्व चिकित्सा लेखन के क्षेत्र में बुन्देलखण्ड का कोई अवदान नहीं है। हो सकता है, बुन्देलखण्ड में इस विधा के ग्रंथों का सृजन हुआ हो, परंतु वे मेरी जानकारी में नहीं है। यदि है भी तो, मात्र एक ग्रंथ, जो सवाई पक्षपालसिंह ब्रगेडियर जनरल द्वारा लिखित है। इस ग्रंथ से इतना तो तय है कि बुन्देलखण्ड इस विधा से भी शून्य नहीं रहा है।

अश्व चिकित्सा शीर्षक से यह ग्रंथ 3 अक्टूबर 1899 को अजयगढ़ जिला पन्ना में लिखा गया। ग्रंथ की विषय सूची से विदित होता है कि अंतिम अध्याय-**घोड़े के शुभाशुभ भौंरियों के चित्र** का क्रम पृ. 105 पर है। अर्थात पुस्तक में 105 से अधिक पृष्ठ होना चाहिए, जबकि कुल 104 पृष्ठ हैं। इस दृष्टि से काली स्याही में हस्तलिखित यह पुस्तक अपूर्ण है। पृष्ठ 101 व 102 खण्डित है तथा पृष्ठ 104 पर समाप्ति सूचक इति अंकित है। हो सकता है पृष्ठ 105 व आगे के कुछ पृष्ठ चित्रयुक्त हों। लेखक का अन्य कोई भी परिचय पुस्तक में नहीं दिया गया है।

दो पृष्ठ की भूमिका सहित पुस्तक में 57 अध्याय हैं। **खेतों के बयान में, रंगों के बयान में, उम्र की पहिचान, ऐब दोष का बयान और चराई के बयान में**-ये प्रारंभिक पांच अध्याय घोड़ों की विभिन्न नस्लों, उम्र, खान-पान तथा उनके गुण दोषों से संबंधित हैं। शेष अध्यायों में घोड़ों के रोग, लक्षण, निदान और उनकी चिकित्सा समाहित है। पुस्तक की भाषा खड़ी बोली हिन्दी है परंतु उसमें अरबी फारसी का प्राधान्य है। अनेक बुन्देली शब्दों के प्रयोग से यह स्पष्ट है कि पुस्तक विशुद्ध रूप से बुन्देलखण्ड के लेखक द्वारा लिखी गई है। गुदाज (पृष्ठ 14), घसीटें (पृष्ठ 15), छनकना (26), चुरना (पृष्ठ 27), मकुइयां, नेगढ़, सूजन पटकना (पृष्ठ 34), मेख, मठा (पृष्ठ 37), कचरिया (पृष्ठ 43), गुली (पृष्ठ 48), कैंथ, बोंड़ी, हरिया थूथा (पृष्ठ 40), लेंड़ी (पृ. 47), पुंगरिया (पृ. 49), खपरिया (पृ. 61), तुमरिया (पृष्ठ 68), नोनिया (पृष्ठ 69), माड़ (पृ. 70), गुबरिया (पृ. 72), फुल्ली (पृ. 75), फुलैकर (पृ. 76), हुमसै (पृ. 77), हाड़ (पृ. 78), हाँपी (पृ. 82), चुरिया, छिपनी, फुल्ली (पृ. 85), पुटरिया (पृ. 87), मूड़ो, थन, नोन (पृ. 88), खैर, गूदा (पृ. 89), छैवला, देवल (पृ. 93), बरेदी (पृ. 103) आदि बुन्देली शब्द पुस्तक में देखे जा सकते हैं।

इतना ही नहीं, बुन्देलखण्ड की वन-संपदा और वनस्पतियों, यथा तेंदू, साल, छेवला, खैर, चरवा, महुआ, सेजा, मुनगा आदि का भी उल्लेख इस कृति में हुआ है।

निश्चित ही बुन्देलखण्ड में अश्व चिकित्सा संबंधी साहित्य पर्याप्त मात्रा में लिखा होगा परंतु इस क्षेत्र में अभी शोध कार्य संभवत: नहीं हुआ है। अश्व चिकित्सा ही नहीं, साहित्य से इतर धनुर्विद्या, गज चिकित्सा, पक्षी विज्ञान, शिल्प कला आदि पर भी गद्य पद्य में लेखन कार्य हुआ होगा। परंतु इस ओर बुन्देलखण्ड के सुधिजनों का ध्यान अभी नहीं गया है।

अब इस ओर भी ध्यान दिया जाना अपेक्षित है।

-प्राचार्य
शासकीय महाविद्यालय करैरा
जिला शिवपुरी (म० प्र०)

*****

चार अठवाई

- हरगोविन्द विश्व

सुश्री असगरी बाई नामक्षरी

सुनि टीकमगड़ भई जवाई बोली असगरि बाई।
श्री 'विश्व' भैया कबे आये, कैसें सुद है आई।।
अब तो चलबे की भई बेरा, पकर हात बैठाई।
सरगम मरगम सबइ भूल गए, तोई इक लेद सुनाई।।
गत हो रइ है का कएं तुमसें केत ऑख भर आई।
रित बसंत जा आ रई होरी सो इक फाग सुनाई।।
बा दिन की तो खबर करों जब रेडुओ पे संग गाई।
ई सुर लिखी भौत चौकड़िया तु लिख रए अठवाई।।

बसन्त अठवाई

लिगां जब तुम रेतीं हो मोरें, बसन्ता दोरें।
सबई बहारें घर घेरत है छाउत पोरें पोरें ।।
नाचत गावत रास रचाउत खुशियां खूब बटोरें।
बगरो रूप बसन्त तुमारो बसत नैन की कोरें।।
खेलत फाग मचाउत हुरदंग पिचकारिन रंग घोरें।
रेत अनंदी हर के हिय में, मन में उठत हिलोरे।।
जैसइ जात कियाउं किशोरी, जात पछारूं तोरे।
'विश्व' विचारे परे सोच में, ठाड़े दांत निपोरे।।

लोक कवि ईसुरी जू नामक्षरी

लो जू जो परनाम हमारे जस हम गाएं तुमारो।
कउं तुम होते आज इते तो हो तो हमें उआरो।।
कबताइ हम सीकते तुमसों बढ़तो ज्ञान हमारो।
विश्व रोप गए फागन बिरछा तुम फल देवे वारो।।
ई बुन्देली धरनी पे तो बअ फागन को धारो।
सुर की नदियां मे जा मिल गव ऊ धारो रसवारो।।
रीत निबाई कवि कुल की तुम तन मन धन सब वारो।
जूझत रए अनगन विघनन सें तक तक रजउ दुआरो।।

श्री भैयालाल व्यास नामक्षरी अठवाई

श्री अरू शारदा पुत्र प्यारे, भैयालाल हमारे।
भैया बड़े हते बे मोरे जिला छतरपुर वारे।।
याद आत है भौतउ उनकी बोलत ते अबढारे।
लाख टका की बात केत ते, रैयों भोरे भारे।।
लगनशील साहित्य चितेरें औरन से वे न्यारे।
व्यवहारिकता धनी हते वे सदुगन उनमें सारे।।
याने सुख-दुख में ते एक से सूदे अति बेचारे।
सदा विश्व सें हंसके मिलते नरसिंह पुरवा वारे।।

-तिलकगंज, सागर
मो. 7879702081

*****

दो बुन्देली गीत

(1) मैया मोरी पठौनी धर दै ....

-सुधा राजे

रोरी हरदी धर टीका भर माटी अँचरा छाँव की।।
अम्माँ मोरी पठौनी धर जौ माटी मोरे गाँव की।।
बाबुल मोरी पठौनी धर जौ ।माटी मोरे गाँव की ।।
थोडौ नीर नदी कौ ।थोडी धोवन तोरे पाँव की।।
अम्माँ मोरी पठौनी धर जौ माटी मेरे गाँव की।।1.
पईयाँ पईयाँ जब लरकैयाँ चली पकड़ बाबुल की बईयाँ
उतर घुटरूअन चाटी माटी मार सपाटे लै गई कईयाँ।।
तनक सियानी भएँ बाबुल नें परदेशी खौं सौंपी बईयाँ।।।।
माटी बालेपन की गुईयाँ...श्यादें छूटे ठाँव की।।
अम्माँ मोरी पठौनी धर दे माटी मोरे गाँव की।।2
बेर मकोर करौंदे टेंटी कैंथा इमली झरबेरी।।
डाँग जलेबी एहोरे भुन्टा महुक कसेरू और कैरी।।
तरस तरस गई मामुलिया खौं ।भई ससुरार महा बैरी ।।।।
ज्वार की रोटी दूध महेरी श्श् काँयष्विरन
के नाँव की।।
अम्माँ मोरी पठौनी धर दे माटी मेरे गाँव की।।3.
माटी के शंकर गनगौरें हाथी घोडेमाटी के।।।
गप्पी गल गुच्ची घरघूले चौक चितेउर माटी के।।
माटी खेलत बङगये सपनिन काया जोङेमाटी के ।।
मट्टी के वे चूल्हे बाशनऽ
बौ हाँडी गुडियाओं की।।
अम्माँ मोरी पठौनी धर दे माटी मेरे गाँव की।।4.
मिचकी पींग हिलौंरे होरी।
कीच रंग भँग हुड्दँग की।।
टेऔंनी घुटने छिले मली बौ माटी बूटी अँग अँग की।।
कंनकौए कंचे बौ अक्ती संकरात सुध सतरँग की ।।
केश धो रही भब्भी खा गयीऽऽ
सौंधी महक कथाओं की।।
अम्माँ मेरी पठौनी धर दे माटी मेरे गाँव की

(2) बापू रै गये निपट अकेले

अम्माँ मर गयीं जब सैं बापू रै गये निपटअकेले ।
डिडक हिलक कैं कै रये बिन्नू!!!!
को जौ जीबौ झेलै तज गईं को जौ जीबौ झेले

1. जौ लौं अम्माँ जियत
रहीं बाबूजी की चलती रयी ।
डाँट पडी अम्मईं पै चाँयें कोऊ
करी गलती रयी ।
अब कै रये पछता कैं हमखौं काय न भेजौ पैलै
बिन्नू को जौ जीबौ झेले ।

2. अम्माँ डाँटें
रयीं थुमियाँ सौं ठाट बडेरे घर के ।
इत्ती तनक कमाई में जोरी मुलक
गिरस्थी मरकें
बाबूजी तब दारू पीकैं खूबई रुतबा ठेलें
बिन्नू को जौ जीबन झेले ।

3. लरका बऊ ने कब्जा लओ अब
मड़ा पौर में बैठें।
अम्मां खौं गरियाऊते
बैई अब बऊ की सुन सुन ऐंठे ।
नातिन कै रयी टोकत
कित्तो डुकरा कितै पहेलें ।
बिन्नू को जौ जीबन झेले

4. सुधा आयीं बिटियां सो हिलके जे ई लगत तीं खोटीं।
बेई सुना गयीं भज्जा खों कये दै रओ
सूकी रोटी ।
बिटियन के डर सें भब्भी
जौ पथरा मुडीं ढकेलें।
बिन्न को जौ जीबन झेलें

5. अम्मां हतीं दबाउत गोङेमूंङपै चिकनई धरतीं
नग नग दुख रये गोली खा रये ।नत बऊ ठूंक पबरतीं।
सबखौं भाबई लगे पैन्शन मिल रयी जाये सकेलें
बिन्नू को जौ जीबौ झेले

6 अम्मां हतीं मिलत तीं चुपरी ।बई पै टाठी फेंकी ।
कौनऊ परी विपत् अम्मईं ने झखरा बन बन छेंकी
जई सें सुधा जोर कर कै रयीं।
घरवारी संग रै ले
बिन्नू को जो जीबौ झेले।

-511/2 पीतांबरा आशीष बडी हवेली
चौधरियान वार्ड, फ्तेहनगर
'शेरकोट' (बिजनौर)246747 उ.प्र.
मोबाईल 9756373114

*****

(१२९ का शेष भाग)

* बुन्देली लोक साहित्य-डॉ. बहादुर सिंह परमार
प्रकाशक-ए.के. पब्लिकेशन, नई दिल्ली, कीमत-695/-
* बुन्देलखण्ड में साहित्य की परंपरा-सं. प्रो सुरेन्द्र दुबे
प्रकाशक-बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी, कीमत 500/-
* प्रतिप्रश्न (उपन्यास)-सुरेन्द्र कुमार नायक, कोंच
प्रकाशक-पवनपुत्र पब्लिकेशन, लखनऊ, कीमत 200/-
* आत्ममंजरी (विशाल सतसई)-डॉ. रामविशाल चँसौरिया
प्रकाशक-प्रदीप चंसौरिया, छतरपुर, कीमत-100/-
* विस्मृत बुंदेली भाषा और संस्कृति - सं. राकेश व्यास
प्रकाशक-राकेश व्यास, 204 बाश्ले नगर रूस्तम बाग की. 101/-
* बुन्देलखंड केसरी छत्रसाल-राकेश व्यास कीमत-101/-
प्रकाशक-एन्रस्बे ईको राइटर्स, बंगलूरू
* लोकसाहित्य और वैश्वीकरण-सं. सरोज गुप्ता
प्रकाशक-अनुभूति पब्लिकेशन, इलाहाबाद, कीमत-495/-
* बुन्देली स्वास्थ्यपरक गीत-सं. डॉ. सरोज गुप्ता
प्रकाशक-कृष्णा कम्प्यूटर्स, सागर, कीमत-60/-
* वेदना के मौन स्वर-सुशील खरे वैभव
प्रकाशक-आयुष प्रकाशन, पन्ना, कीमत-101/-
* परमवीर छत्रसाल-शंकरलाल भारद्वाज
प्रकाशक-सरस्वती शिक्षा परिषद् महाकौशल प्रांत जबलपुर की.-12/-

बुन्देली सोहर गीत

-डॉ. महेशचन्द्र शांडिल्य

अवध में जनमें राम-सलोना।।
वन्दन-वार बँधे दरवाजे
दियला लिसे चारऊ कोना, अवध में।।
राजा दशरथ के लाल भये हैं,
रानी कौशल्या के छोना, अवध में
रानी कौशल्या की कूँख जुड़ानी,
राजा दशरथ के नैना, अवध में।।
हीरा-लाल जड़े पलना में,
जादू लगे ना टोना, अवध में।।
तुलसीदास आस रघुवर की
जे दिन सबको देना, अवध में।।

स्थायी- स्वरलिपि - ताल - दादरा

							सा ग अ ऽ
गि ग - व ध ऽ	म - पध में ऽ ऽऽ	पम ग म ऽऽ ऽ ज	- रे ग न में ऽ	सा रे म रा ऽऽ	म ग ग म ऽ स	रे ग रे लो ऽ ना	सा सा ग ऽ अ ऽ
×	०	×	०	×	०	×	०

अन्तरा

						सा वं	- ध नि ऽ दं नं
सा - - वा ऽ ऽ	सा - रे र ऽ बँ	ग - - ऽ ऽ	म प म द र ऽ	ग - - वा ऽ ऽ	ग रे सा जे ऽ ऽ	- - सा ऽ ऽ दि	थ प थ य ला लि
प नि ध खे ऽ ऽ	ध प म चा रऊ ऽ	म प म को ऽ ना	ग सा ग ऽ अ ऽ	ग ग - व ध ऽ	म प - में ऽ ऽ	- - सा ऽ ऽ दि	प थ थ य ला लि
प नि ध से ऽ ऽ	ध पम म चा रऊ ऽ	प म ग को ऽ ना	सा ग ग ऽ अ ऽ	ग - म व ध में	पधु पमु ग ऽऽ ऽऽ ऽ	ग -रे ज न में	ग ऽ,
×	०	×	०	×	०	×	०

नोट - शेष अन्तरे इसी तरह गाये जाएंगे।

बुन्देली द्वार-चार गीत

-पं. जयराम त्रिवेदी 'आचार्य'

कलस धरे दियला जरे,
इल्ल टींका खाँ आये

हथियन पे ब्राजे श्रीराम जू
सोभा बरनी ना जाये

माथे मुकुट कलगी लगी
मुख में पान रचाये

नैना कारे काजरा
वस्त्र सुन्दर सजाये

कानन कुण्डल झूम रहे,
धोती पीताम्बर पैर आये

ठाँड़े बाराती चौतरन,
सखियाँ मंगल गाये।

कलस धरे, दियला जरे,
दूल्हा टीका खाँ आये

स्थायी- स्वरलिपि - ताल - दीपचन्दी

ध सा - क ल ऽ	सा - रे ग स ऽ ध ऽ	सा रे सा रे ऽ ऽ	रे ग ग - दि ऽ य ऽ
रे सा - वा ऽ ऽ	रे ग ग ग ऽ ऽ ज ऽ	रे सा - रे ऽ ऽ	रे ग ग - दू ऽ ल्हा ऽ
रे - - टी ऽ ऽ	रे - रे - का ऽ खाँ ऽ	सा - - आ ऽ ऽ	सा - - - ये ऽ ऽ ऽ

अन्तरा-

ध सा - कृ थि ऽ	सा - ग य न पे ऽ	सा रे सा ब्रा जे ऽ	रे ग ग - श्री ऽ ऽ ऽ
रे सा - ऽ ऽ ऽ	रे ग ग - रा ऽ म ऽ	रे सा - जू ऽ ऽ	रे ग ग - शो ऽ का ऽ
रे रे - ब र ऽ	रे - रे - नी ऽ ना ऽ	सा - - जा ऽ ऽ	सा - - - ये ऽ ऽ ऽ

नोट: शेष अन्तरे भी इसी तरह गाये जाएंगे-

*****

बुन्देली के तीन महत्वपूर्ण ग्रंथों की समीक्षायें

-डॉ. गंगा प्रसाद बरसैंया

(1)
बुन्देली शब्दों का व्युत्पत्ति कोश

आचार्य दुर्गाचरण शुक्ल प्रणीत बुन्देली शब्दों का व्युत्पत्ति कोश बुन्देली संबंधी अब तक प्रकाशित ग्रन्थों की श्रेणी की प्रथम पंक्ति के शीर्ष पर वे बेहिचक रखा जा सकता है। संभवत: ऐसा अनूठा ग्रन्थ पहली बार प्रस्तुत हुआ है। जिसमें बुन्देली के पन्द्रह सौ शब्दों का 484 पृष्ठों में व्युत्पत्तिगत विशद विश्लेषण है। गद्य-पद्य की अनेक कृतियों के साथ बुन्देली के शब्दकोश, कहावत -मुहावरे कोश एवं इतिहास ग्रंथ अरसे से प्रकाशित होकर सामने आते रहे है। उनकी महत्ता भी निर्विवाद है, जिससे बुन्देली-भाषा-साहित्य की समृद्धि का पता चलता है।

शुक्लजी ने अपने व्युत्पत्ति कोश में केवल शब्दार्थ ही नहीं दिये उनके प्राचीनतम स्रोतों को आचार्यो के उद्धरणों द्वारा पुष्ट भी किया है। इसमें ज्ञात होता है। कि बुन्देली के अनेक शब्द वैदिक काल से संस्कृत-साहित्य में प्रयुक्त होते रहे हैं। उनका मूल उन से जुड़ा है। भले ही समय के साथ उनके स्वरूप और भावार्थो में परिवर्तन हुआ हो। भाषाशास्त्र में अर्थोपकर्ष और अर्थापकर्ष स्वाभाविक प्रक्रिया है। लोक भाषा और लोकमानव अपनी सुविधा के लिए भी उसमें परिवर्तन करता रहा है। यह भी प्रमाणित तथ्य है कि किसी भाषा के साहित्य में लोक भाषा का उद्भव पहले होता है और साहित्य में प्रयोग उनसे उनकी प्राचीनता का भी अनुमान लगाया जा सकता है।

शुक्ल जी ने शब्दों के अर्थ देने के साथ ही उनके मूल रूप का संस्कृत के तमाम आचार्यो-कात्यायन, पाणिनि, पतंजलि, द्वारा प्रयुक्त संदर्भो का भी उल्लेख किया है। उन्होंने शब्दों का व्याकरणिक विश्लेषण किया है। वह उनकी विद्वतापूर्ण शोध और ज्ञान का परिचायक है। एक शब्द प्रयोग के कारण कितने अर्थो का बोधक है, इसे ग्रंथ को पढ़कर ही जाना जा सकता है। संज्ञा, क्रिया, विशेषण, लिंग के साथ उनके परंपरा रूढ़, तद्भव एकार्थी, विकारी होने का भी उल्लेख रेखांकित करने योग्य है। मूल धातु की खोज एक बड़ा कार्य है। इसके लिए प्राचीन ग्रंथों का विशद अध्ययन एवं बुन्देली शब्दों की जानकारी आवश्यक है। यह किसी संस्कृत और भाषा शास्त्री द्वारा ही संभव है।

बुन्देलखण्ड में बुन्देली का एक रूप ही नहीं है, उसके क्षेत्रों के अनुसार अनेक रूप प्रचलित है। जिससे अर्थों या प्रयोगों को लेकर कुछ मतभिन्नता हो सकती है। जैसे बुन्देलखण्ड में गुंड शब्द का प्रयोग पानी भरने के धातु के बड़े बर्तन के लिए किया जाता है। उसका उल्लेख ग्रंथ में नहीं है। 'गेरूआ' खेती का एक रोग है, जिसकी चर्चा गेय शब्द में नहीं है, अच्छारा देवी की तरह टीकमगढ़ जिले में 'अछरू माता का भी मंदिर है।'' चोली शब्द का प्रयोग संस्कृत में भले ही उर आच्छादन के लिए आया हो पर बुन्देली में उसका आशय वक्ष या छाती ढकने से है।

शुक्ल जी ने साधारण से साधारण प्रचलित शब्दों के भिन्नार्थ प्रयोगों सहित उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किये है जैसे- घोंटबौ, चरबौ, झरबौ, पूजबौ, रटबौ, लुटबौ, और चोली आदि। चोली तो सन्दर्भगत अर्थ बदलते-बदलते चूल्हा तक पहुँच गई। सबसे बड़ी उल्लेखनीय विशेषता है। बुन्देली भाषा के वाक्यों का सहज प्रयोग। वे बड़े आत्मीय, मधुर और नितान्त घरेलू लगते है। उनको पढ़ने सी लगता है। जैसी बुन्देली शब्द-यात्रा संबंधी कोई संवाद-अंशपढ़ रहे है। घरू बातचीत का अंग जिसे सभी वर्ग के लोग सरलता से समझ सकते है। भाषा शास्त्री, संस्कृतज्ञ द्वारा इस रूप में आंचलिक भाषा का प्रयोग प्रशंसनीय है।

प्रूफ और प्रेस की अशुद्धियों से किसी कृति का अछूता रहना सम्भव नहीं है विशेषकर हिन्दी में। इसमें भी यत्र-पत्र कतिपम त्रुटियां खटकती है, जैसे - कथरी की जगह कथनी (पृ. 97) सर्व की जगह ऐसे विद्वत्तापूर्ण अनूठे- 'बुन्देली शब्दों को व्युत्पत्ति कोश के लिए उन्हें शतश: बधाइयां। ऐसी कृतियाँ कालजयी होती है। शुक्ल जी के अन्य ग्रंथ भी है जिन्हें ऐतिहासिक महत्व की श्रेणी में रखा जा सकता है।

(2)
बुन्देली भाषा कोश

साहित्य अकादमी दिल्ली के बुन्देली सम्मान तथा उत्तर प्रदेश के मैथिलीशरण गुप्त सम्मान सहित अनेकों सम्मानों, अंलकारों एवं पुरस्कारों से अभिमंडित डॉ. रामनारायण शर्मा मूलत: पेशे से चिकित्सक हैं और रहे हैं किन्तु सेवानिवृत्ति के बाद उन्होंने साहित्य की पूरी शक्ति और निष्ठा से ऐसी समर्पित सेवा की कि अब तक वे हिन्दी और बुन्देली के दो दर्जन से अधिक ग्रन्थों से माँ भारती के भण्डार में अपना योगदान दे चुके हैं। गद्य और पद्य दोनों में रचित इन कृतियों को देखकर सहसा इस पर विश्वास नहीं होता है कि वे पति-पत्नी दोनों लगभग तीस-पैंतीस वर्षों तक शासन की चिकित्सीय सेवा में रहे हैं। उनकी कृतियों में भी इसकी झलक नहीं मिलती। बुन्देली और बुन्देलखण्ड की धरती के प्रति उनके मन में गहरा अनुराग और सम्मान है। वे संस्कृत, अंग्रेजी, हिन्दी तथा बुन्देली के अच्छे जानकर अध्यवसायी साहित्यकार हैं। निरन्तर अध्ययन, लेखन और दूसरों को प्रोत्साहन देना उनका स्वभाव है। इसी सतत् अध्ययनशीलता का प्रमाण बुन्देली भाषा साहित्य का इतिहास और बुन्देली के रचनाकार जैसे महत्वपूर्ण वृहद ग्रंथ हैं, जो उनकी कीर्ति को आलोकित करने वाले हैं। इसी क्रम में उनका नवीनतम विशाल ग्रन्थ बुन्देलीभाषा कोश है जो उनकी ख्याति में चार चाँद लगा देगा।

वैसे हिन्दुस्तान में कोश ग्रन्थों के प्रकाशन की श्रृंखला सन् 1800 के लगभग प्रारम्भ होती है। तब तक ये अंग्रेजी में थे। हिन्दी में पहला कोश ''**हिन्दी कोश**'' के नाम से सन् 1829 में कलकत्ता से प्रकाशित हुआ था। यह क्रम सन् 1900 के लगभग अंत तक चलता रहा। इस अवधि में अनेक शब्दकोश विभिन्न रूपों में सामने आये। सबसे महत्वपूर्ण कोश नागरी प्रचारिणी सभा, काशी ने ''**हिन्दी शब्द सागर**'' नाम से सन् 1929 में दस खण्डों में प्रकाशित किया जिसमें लगभग एक लाख शब्द थे। इसके प्रकाशन में अनेक विद्वान सहयोगी थे। इसके बाद तो सैकड़ों शब्दकोश सामने आ चुके हैं। इस क्रम में बुन्देली पीछे नहीं है। बुन्देलखण्ड के अनेक साधक साहित्यकारों ने बुन्देली शब्दों का संग्रह एवं प्रकाशन अलग-अलग नामों से किया। कन्हैयालाल शर्मा ''**कलश**'', लक्ष्मीचन्द ''नुना'', डॉ. कमिनी, दुर्गाचरण शुक्ल, कैलाश बिहारी द्विवेदी, मोहनलाल गुप्त ''चातक'', लता दुबे, रमेश गुप्त, (सुरेन्द्र शर्मा, आचार्य दुर्गाचरण शुक्ल के प्रकाशनाधीन है) आदि के नामों का उल्लेख स्वंय डॉ. शर्मा ने अपने ग्रन्थ में किया है।

डॉ. शर्मा के ग्रन्थ में लगभग 25 हजार शब्द हैं जो तीन भागों में विभाजित हैं-1. बुन्देली शब्दकोश, 2. बुन्देलीशब्द सामर्थ्य,

3.बुन्देली शब्द सम्पदा। उन्होंने शब्दों को अकारादि क्रम से रखा है और डॉ. शर्मा भाषा विज्ञान के जानकार नहीं हैं फिर भी जितना बन सका उतने की व्युत्पत्ति और सटीक अर्थ देने की चेष्टा की है।

दूसरे भाग में युग्म शब्द हैं। इन्हें भी अकारादि क्रम से रखा गया है। जीवन में बातचीत में सहज प्रयुक्त होने वाले इन शब्दों के स्वरूप और गिनती पर ध्यान नहीं दिया जाता परन्तु इस कोश में उन्हें देखने से पता चलता है कि उनकी संख्या भी पर्याप्त है। ये युग्म निरर्थक न होकर संबंधित भाव को अधिक बल देने के लिए प्रयुक्त किये गये हैं और ये भी दीर्घजीवी हैं।

तीसरे खण्ड में जीवन जगत के विभिन्न क्षेत्रों में प्रचलित शब्दों को विषयबद्ध करके रखने की चेष्टा की गई है ताकि उनकी अगल से पहचान हो सके।

कोश का यह तीसरा खण्ड विशेष रूप से उल्लेखनीय इसलिए है कि ऐसा विभाजन अन्य कोशों में प्राय: नहीं मिलता है। जैसे-बुन्देलों में प्रचलित शब्द, बुन्देलों के पदनाम शब्द, बन्देलों के ब्योआरी शब्द। अब बुन्देलों के राज-रजवाड़े तो नहीं रहे, परन्तु शब्द समाप्त नहीं होते। वे अपनी सार्थक पहचान बनाये रखते हैं। वे हमारी भाषा की सम्पदा हैं। बहुत अरसे से एक अभाव खटकता था कि वैज्ञानिक युग के प्रभाव, औद्योगिक विस्तार और कुटीर उद्योगों की समाप्ति से जातीय कारोबर पहले जैसे नहीं रहे। प्रगति के प्रभाव से जातीय रोजगार के अस्त्र-शस्त्र, कल-पुर्जे, खान-पान, वेशभूषा, रीति-रिवाज, गीत-संगीत, खेती-पाती, यातायात के साधान आदि सभी में बदलाव आने से पुरानी चीजें विलुप्त होती जा रहीं हैं। उनका नाम-पता लोग भूल रहे हैं। यहाँ तक कि पढ़ाई-लिखाई, पूजा-पाठ, संस्कार, पर्व-त्यौहार, बर्तन-भांड़े, आभूषण आदि के नामों का अलग अलग अंकन किया है जो आजकल लगभग प्रचलन से बाहर हैं। उदाहरण के लिए-कुंजड़ों, लोहगढियों, कबूतरों,साइकिल सुधारने वालों, कृषि संबंधी सामग्री-यंत्र, फसल कटाई, बैलागाड़ी पशु तथा उनका खाना-पीना, नाना प्रकार के आनाज, पेड़-पौधे, रोग फल-तरकारी, व्यंजन, बढ़ई, सुनार, लोहार, बसोरर, मोची, तमोली, कुम्हार, लखेरा, कोरी, छिपी, तेली, तमेरे, व्योपारी, दिन तिथि, गृह-नक्षत्र, रितुयें, गिनती-पहाड़ा, समय सूचक शब्द, छंद, पीसना-कूटना, फूल-फल पूजा की सामग्री आदि से संबंधित शब्दों को अलग से उल्लिखित किया है।

संस्कृत, अरबी, फारसी, तुर्की, पुर्तगाली, कन्नड़, छत्तीसगढ़ी, भोजपुरी, कुमाईनी, राजस्थानी, अंग्रेजी आदि के वे शब्द जो बुन्देली में दैनदिन जीवन में प्रयुक्त होते हैं, उनकी भी चर्चा है। बुन्देली के बहुअर्थी शब्द बुन्देली में प्रयुक्त शरीर सम्बंधी शब्द, सांस्कृतिक परम्परा से जुड़े शब्द, संस्कार संबंधी बुन्देली शब्द, लोकनृत्य, गान-वाद्य, पशु-पक्षियों की बोलियाँ, मिष्ठान्न, प्रयुक्त गालियां, अचार, सिक्का, कहावत-मुहावरे, अटके-आने, सरकारी कर्मचारी, कार्यालयों के नाम सभी अंकित हैं।

इन सबसे अनुमान लगाया जा सकता है कि डॉ. शर्मा ने इन सबके संकलन, वर्गीकरण, सम्पादन में कितना श्रम किया होगा। यद्यपि इसमें कुछ शब्दों की पुनरावृत्ति भी हुई है। ध्यान देने की बात यह है कि मनुष्य के साथ शब्द भी यहाँ से वहाँ निरन्तर यात्रा करते हैं। एक क्षेत्र का व्यक्ति जब दूसरे क्षेत्र में जाता है तो अपनी भाषा और संस्कार भी ले जाता है। फलत: एक क्षेत्र के शब्द दूसरे क्षेत्र की शब्दावली में अनायास समाहित होकर प्रचालित हो जाते हैं जिन्हें तुरन्त पहचानना, अलगाना कठिन होता है। यही नहीं जिस प्रकार जीवन और जगत में बदलाव आता है, उपयोगिता, अनुपयोगिता की भावना कार्य करती है, उसी प्रकार शब्दों में भी होता है। समय के साथ न केवल शब्दों के स्वरूप में परिवर्तन होता है अपितु बहुत सारे नये शब्दों का आगमन हो जाता है। इस कोश में भी ऐसे सैकड़ों शब्द हैं जो प्रचलन में नहीं हैं, परन्तु उनकी महत्ता समाप्त नहीं होती। वे हमारी शब्द-सम्पदा हैं। जिस प्रकार संग्रहालयों में तमाम पुरानी महत्वपूर्ण सामग्री संकलित की जाती है जो हमारी अतीत की साक्षी होती है, उसी प्रकार प्रचालित शब्दों को जानकर विद्वान अपने शब्द-संग्रहों में संग्रहित कर न केवल सुरक्षित करते हैं बल्कि नई पीढ़ी को जानकारी के लिए उपलब्ध भी कराते हैं। डॉ. शर्मा के इस भाषाकोश में सैकड़ों शब्द हैं जिनका नई पीढ़ी प्राय: प्रयोग नहीं करती और उसका भावार्थ भी नहीं समझ पाती। इस दृष्टि से उनका बहुत महत्व है। यदि हम इनकी अनदेखी करें तो न केवल हमारी सम्पदा क्षीण होगी अपितु इतिहास की प्राचीनता के सूत्र भी घट जायेंगे। कतिपय विद्धानों ने अपने व्युत्पत्ति कोशों में बुन्देली शब्दों के सूत्र वैदिक साहित्य से जोड़े हैं, जो हमारी प्राचीनता के द्योतक हैं। यदि वे पुराने शब्द न होते तो सूत्र कैसे जुड़ते। डॉ. शर्मा बुन्देली के महान त्रिद्धान हैं, जानकर हैं, परिश्रमी हैं। उसी का सुफल उनका यह भाषाकोश है जो उन्हें साहित्य जगत में यशस्वी बनाएगा। हम उन्हें इस उपलब्धि के लिए हार्दिक बधाई देते हैं। यह उनकी साहित्य समृद्धि में अनुपम योगदान है।

(3)

महाराजा छत्रसाल

सुरेश कुमार वर्मा मध्य प्रदेश के ऐसे साहित्यकार हैं, जो विगत लगभग 40-45 वर्षो से प्रचार -प्रसार और प्रदर्शन से दूर साहित्य -साधना में रत हैं। उन्होंने कहानी, नाटक और आलोचना से सम्बन्धित किताबें लिखी है। यहीं नहीं भाषा -विज्ञान के क्षेत्र में भी उन्होंने महनीय कार्य किया है। धर्म और अध्यात्म से सम्बधित पुस्तक करमन की गति न्यारी भी प्रकाश में आयी है तथा एक उपन्यास भी सबका मालिक एक ऐतिहासिक उपन्यासों की रचना में उनकी विशेष अभिरुचि रही है। मुमताज महल और 'रेस्मान' के बाद हाल ही उनका एक नया उपन्यास साया हुआ है 'महाराजा छत्रसाल' जिसमें बुदेलखंड के संस्थापक और उसकी अस्मिता के प्रतीक महाराज छत्रसाल के सम्पूर्ण जीवन का निरूपण किया गया है। छत्रसाल के जीवन पर अनेक कृतिकारों ने गद्य और पद्य में रचनाएँ लिखी है। कतिपय उपन्यासकारों ने तथ्यों की सही जानकारी न होने के कारण ऐतिहासिक सच के साथ हस्तक्षेप किया है। कोई भी साहित्यकार किसी रचना के साथ तब तक न्याय नहीं कर सकता, जब तक कि उसे उपजीव्य पात्र के क्रियाकलापों, समकालीन परिस्थितियों एवं तथ्यों की सम्यक्र जानकारी हासिल न हो। उसे यत्किंचित् कल्पना का प्रयोग भी करना पड़े, तो वह इतिहास का हिस्सा प्रतीत हो। डा0 वर्मा ने अनेक वर्षों तक छत्रसाल के सम्बन्ध में खोजबीन की, वांछित सामग्री का संचयन किया और रचना के कलेवर को यथाशक्य इतिहास-सम्पूर्ण बनाने की दृष्टि के लिए बुंदेलखण्ड के कई क्षेत्रों का भ्रमण किया, विद्वानों और जानकारों से सम्पर्क किया, पत्राचार किया और अपेक्षित सामग्री संकलित की। जब उनके मन-मस्तिष्क में आश्वस्तकारी खाका तैयार हो गया, उन्होंने छत्रसाल पर कलम उठाई उपन्यास का रचाव कथ्य समग्रता का सहज ही एहसास करा देता है।

छत्रसाल का जीवन और समय उथल -पुथल और संघर्ष का काल था। सर्वत्र मुगलों का आतंक था बुंदेलखण्ड के तमाम राजे-रजवाड़े मुगलों के अधीन थे, आक्रमण झेलते -झेलते कमजोर हो

चले थे और निरन्तर भय के साये में रहते थे। उनके स्वाभिमान ने मुगलों की चौखट पर दम तोड़ दिया था। उन रीढ़विहीन राजाओं में अपने पैरों पर खड़े होने की ताकत खत्म हो चुकी थी। भयभीत इतने थे कि न तो वे खुद मुग़लो की सत्ता को चुनौती दे सकते थे और न दूसरा यदि कोई चुनौती दे रहा हो, तो उसकी सहायता के लिए हाथ बढ़ा सकते थे। वही कारण है जब छत्रसाल ने मुगलों की सत्ता को ललकारा तो उसकी मदद के लिए कोई हाथ नहीं उठा। लिहाजा बुंदेलखण्ड की माटी को माथे पर लगाकर आजादी के उस दीवाने को अपने लिए स्वयं रास्ता बनाना पड़ा। पॉच घुड़सवार और पन्द्रह सैनिकों के साथ उसने मुगलों के खिलाफ जो अभियान छेड़ा तो उसके साथ खड़े थे सिर्फ उसके दो बड़े भाई रतनसिंह और अंगद तथा चाचा दीवान और साथ थी कुछ थोड़े -सो लोगों की सहानुभूति लक्ष्य था संगठन के द्वारा शक्ति को बढ़ाना, उपलब्ध साधनों को व्यवस्थित करना, बुंदेलों में आत्मसम्मान जार्गत करना और उनमें मुग़लों से आजाद होने की छटपटाहट विकसित करना। उसने मिर्जा राजा जयसिंह की सेना में भरती होकर मुग़लों के दावपेच जाने-समझे और शिवाजी की शरण में आकर सैनिक संगठन और युद्धकौशल का प्रशिक्षण और आशीर्वाद प्राप्त किया। यह सब उसके अभियान की आधारशिला बनें। लेखक ने उन तमाम तथ्यों का कहीं विस्तार से कहीं संक्षेप में चित्रण किया है। साथ ही विवाह आदि पारिवारिक प्रसंगों का भी यथासमय संयोजन किया है।

उल्लेखनीय बात यह है कि छत्रसाल के विस्तृत अभियान का लेखक ने संक्षेप में दिग्दर्शन कराया है, जिसमें सैकड़ों गांवों, ठिकानों और घटनाओं का विवरण है। धीरे-धीरे मुग़लों शासकों के लिए भी छत्रसाल भारी पड़ने लगा। अनेक राज -रजवाड़े उसके साथ हो गये। मुगलों के अनेक ठिकाने उसने हथिया लिये। उनके धन-दौलत को अधिकृत कर लिया कितनों से हरजाना, चौथ वसूल किया। विस्तार से बचने के लिए लेखक ने इनमें से अनेक घटनाओं का उल्लेख मात्र किया है। छत्रसाल ने जहाँ एक ओर मिर्जा राजा जयसिंह की सेना में रहकर तथा महाराजा शिवाजी का सान्निध्य पाकर तमाम युद्धपरक ज्ञान अर्जित किया, वहीं दूसरी ओर स्वामी प्राणनाथ के सत्संग से भावी जीवन का दिशाबोध, आत्मज्ञान और आत्मशक्ति प्राप्त की। एक विकट युद्ध में तो स्वयं भाग लेकर प्राणनाथ ने छत्रसाल का मार्गदर्शन किया। उन्हीं के कहने से छत्रसाल ने पंन्ना को राजधानी बनाया था। उन्होंने विधिपूर्वक छत्रसाल की राज्याभिषेक कर बुंदेलखंड को स्वतंत्र प्रभुतासम्पन्न राज्य घोषित किया।

डॉ वर्मा ने यों तो तमाम अभियानों का संक्षिप्त निरूपण किया है, किन्तु धामौनी जैसे कुछ प्रसंगों को विस्तार देकर छत्रसाल के शौर्य, युद्धकौशल और दूरदृष्टि का परिचय दिया है। बंगस के आक्रमण के विरुद्ध छत्रसाल ने जिस साहस में मोर्चाबंदी कर पूरी शक्ति से मुकाबला किया, उसका जीवंत चित्रण उपन्यास के कलापक्ष को एक पायदान और ऊपर उठा देता है। ऐसा लगता है डॉ0 वर्मा ने तत्कालीन युद्ध कला का भी अच्छा अध्ययन किया था। अपनी कमजोर स्थिति को ऑककर छत्रसाल सूझबूझ का प्रमाण था। बंगस की पराजय के बाद बाजीराव पेशवा द्वितीय के स्वागत में आयोजित समारोह में मस्तानी के नृत्य का वर्णन भी डॉ. वर्मा ने विस्तार और कौशल से किया है। ऐसा लगता है कि वे नृत्यकला के भी जानकार हैं। सामान्य लेखक नृत्य का चित्रण इतनी बारीकी से नहीं कर पाते। ये सब प्रसंग ऐसे हैं, जो उपन्यासकार की कलम को ऊँचाइयों का स्पर्श कराते हैं।

एक अच्छी बात यह है कि उपन्यास में संवादों का लम्बा सिलसिला नहीं है। अन्यन्त आवश्यक पात्रों तक ही संवाद सीमित हैं। चाहे भाइयों से चर्चा का प्रसंग हो अथवा रनिवास में बतियाने का। पात्र भी संख्या में अधिक नहीं हैं, जिससे उपन्यास बोझिल होने से बचा रहा। संवादों की भाषा पात्रों और प्रसंगों के अनुकूल है। चाहे वह परिवार के मध्य हो या राजदरबार में। शिष्टाचार और मर्यादा को कहीं भंग नहीं होने दिया गया। असल में महानायक के विस्तृत काल-कर्म-विन्यास में कहीं भी किसी घटना, प्रसंग, वार्ता आदि के विस्तार की गुंजाइश नही थी। कोई चीज छूटने न पाये और हर चीन का यथायोग्य उपचार हो, इस योजना के साथ रचना का तानाबाना बुना गया है। छत्रसाल का व्यक्तित्व जितना पूर्ण था, उसी के अनुरूप रचना भी पूर्ण बन सके, इस बात को दृष्टि-पथ पर रखकर रचना के सुडौल साँचे से कथानक को विकसित किया गया है। उपन्यास की कथा की आदि से अन्त तक ही अव्याहत यात्रा इस बात को भलीभाँति प्रमाणित करती है। राजबधुएँ बुंदेलखंड की मर्यादा का पूरी तरह पालन करती हैं, और इस क्षेत्र की तत्कालीन नारियों की गौरवमयी अस्मिता का आख्यान करती हैं। उनके स्वाभिमान, साहस और शौर्य की भी अवसरानुकूल झॉकी प्रस्तुत की गई है। नारियाँ भी अपने जातीय स्वाभिमान को लेकर संवेदनशील हैं। रानी देवकुँवरि को यह कतई अच्छा नहीं लगा कि छत्रसाल मिर्जा राजा जयसिंह की नौकरी स्वीकार मुग़लों के अधीन कार्य करे। वह यह भी पसंद नहीं करती कि उसका पति औरंजजेब्र के दरबार में हाजिरी देकर बुंदेलखण्ड के मान-सम्मान को अवरोहित करे। बुंदेली नारियों के साहस और शौर्य की एक झलक जैतकुँवरि में मिलती है, जब वह अपने घायल पति कुँवर जगतराज को मुग़लों से प्रत्यक्षत: जूझते हुये युद्धक्षेत्र से सुरक्षित निकाल लाती है।

लेखक ने छत्रसाल की श्रेष्ठता, महानता, स्वाभिमान, जातीय अस्मिता और साहसिक संघर्षो के अधिकाधिक आलोकित करने की चेष्टा की है। यह स्वाभाविक भी है, क्योंकि वह रचना का महानायक है। मैहर पर अधिकार होने के बाद जब वहाँ की महारानी अपने अल्पवयस्क बालक को लेकर पन्ना आती है, उस समय छत्रसाल का सदाशयी व्यवहार, मर्यादा और औदार्य को नयी उँचाई पर पहुँचा देता है। वह न केवल जीते हुये राज्य को लौटा देता है, अपितु बालक के सिर पर ममत्व अभय का हाथ भी रख देता है। इसी प्रकार हम्रा नामक स्त्री अपनी अतीव सुन्दर नवयौवना पुत्री को लेकर उसकी शरण में आती है और अपनी विपदा सुनाती है, तब वह न केवल संरक्षण देता है, बल्कि उसकी बेटी को अपनी बेटी कहकर सुरक्षा का आश्वासन देता है। फिर बाजीराव के माँगने पर, माता-पिता की सहमति से उस युवती को उस मराठा सरदार के संरक्षण में चले जाने की स्वीकृति प्रदान करता है। ये ऐतिहासिक घटनाएँ हैं। छत्रसाल से सम्बन्धित प्राय: समस्त ऐतिहासिक प्रसंग और जनश्रुतियों का उपन्यास की व्यापक कथा-फलक पर निरूपण हुआ है। कतिपय काल्पनिक प्रसंग भी है, क्योंकि इतिहास के द्वारा छोड़ी हुई कड़ियों को जोड़ने के लिए उनका विनिवेश आवश्यक था, पर वे कल्पनाप्रसूत पात्र और प्रसंग ऐतिहासिक है और क्या काल्पनिक। ऐतिहासिक रचनाकार की यह बड़ी सफलता होती है। कि वह अपनी रचना के इन्द्रधनुषी तिलिस्म में इतिहास और कल्पना के भेद को मिटा देता है।

छत्रसाल स्वयं आदर्शवादी भक्तकवि था। वह कवियों को 'कीरत का बिरवा' मानता था। उसके दरबारी संरक्षण में लाल कवि सहित इक्यासी कवि बताये जाते हैं, जिन्हें गाँवो के पट्टे आदि दिये

गये। लाल कवि ने 'छत्रप्रकाश' महाकाव्य में छत्रसाल की जीवनी अंकित की है। छत्रसाल ने भूषण जैसे वीरकाव्य के अनुगायक को अपने राज्य में आमंत्रित कर उनकी पालकी पर कंधा लगाकर सम्मानित किया था। इस प्रसंग के हिन्दी की कवि-परम्परा आज भी अपने को गौरवान्वित अनुभव करती है। महत् और बड़प्पन को सम्मान देने की अपनी प्रकृति के चलते छत्रसाल ने प्रणामी सम्प्रदाय के संस्थापक संत प्राणनाथ की पालकी को भी कंधा दिया था। छत्रसाल नें कभी अपने स्वाभिमान पर आँच नहीं आने दी। वह अन्य राजाओं और मुग़ल शासकों से भी आत्मसम्मान के वज़न पर बराबरी से व्यवहार करता था। यहाँ तक कि जब बादशाह औरंगज़ेब से उसके दरबार में जाकर मिला, वहाँ न हाथ बाँधे, न सिर झुकाया, न पगड़ी भेंट की और न तलवार। मुग़ल दरबारों की परम्परा में शायद यह पहला अवसर था, जब किसी हिन्दू राजा ने अस्मिता की रक्षा करते हुये, अपने सम्पूर्ण स्वाभिमान के साथ दरबार में बादशाह के साथ ऐसी भेंट की हो।

यों तो इतिहासकारों ने छत्रसाल के परिवार के विषय में अनेक बातें लिखी हैं। किसी ने उनके सात विवाह बताये, किसी ने पन्द्रह और किसी ने उन्नीस, इसी प्रकार पुत्रों की संख्या भी पचास से ऊपर पहुँचा दी गई है। डॉ. वर्मा ने इस पचड़े में न पड़कर छत्रसाल के तीन विवाह और मुख्यत: दो पुत्रों की ही चर्चा की है। अन्तत: इन्हीं दो पुत्रों में राज्य का बँटवारा हुआ था, यह ऐतिहासिक सच है। उपन्यास में कुछ बातें खटकती हैं। बुंदेलखंड प्राकृतिक संपदा से सम्पन्न वसुंधरा है, इस बिन्दु पर जिसकी प्रशंसा प्राय: सभी ने की है। उपन्यास में प्रकृति-चित्रण के प्रसंग नगण्य हैं। उपन्यास की पूरी कथा छत्रसाल के विषय जीवन के उतार-चढ़ाव की कथा है। इसमें गंभीरता से मंथन के अनेक अवसर थे, किन्तु मनोवैज्ञानिक चित्रण के प्रसंग प्राय: नहीं हैं। मनोविज्ञान मानव-चरित्रों पर केन्द्रित कथा का आवश्यक तत्त्व हुआ करता है। अवसर के अनुकूल इसका उपयोग अपेक्षित था। छत्रसाल के निधन का प्रसंग लोकविश्वास पर आश्रित है। मृत्यु के साथ ही वे विलीन हो जाते है, केवल उनका जामा रह जाता है। मऊ सहानियाँ में उनका स्मारक आज भी विद्यमान है। 'इत जमुना उत नर्मदा, इत चंबल उत टौंस' की सीमाओं में आबद्ध ऐश्वर्यशाली बुंदेलखंड के संस्थापक छत्रसाल का ऐतिहासिक फलक बहुत व्यापक है। डॉ. वर्मा ने बड़ी कुशलता से 'थोरे में सब कहउँ गोसाई' की तर्ज पर उनका जीवन अंकित किया है। इसमें कहीं भी सूत्र न खंडित होते हैं, न बिखरते हैं। पाठकों की जिज्ञासा रचना के अंत तक अनवरत, एकरस यात्रा करती है। पाठक को इस प्रकार बाँधकर रखना और बिना किसी ऐतिहासिक विकृति के रचना के कलेवर को सुष्ठ और सुनियोजित रखना डॉ. वर्मा की औपन्यासिक कला का वैशिष्ट्य है। इस उपन्यास को पढ़कर उनके द्वारा रचित पूर्व उपन्यास 'मुमताज महल' और रेस्मान' की याद ताज़ा हो जाती है।

-ए-फारचून पार्क
जी-3, गुलमोहर, भोपाल (म.प्र.)
462039

*****

बीसवें बुन्देली उत्सव में सम्मानित विभूतियाँ

राव बहादुर सिंह बुन्देला स्मृति सम्मान २०१६
बुन्देली साहित्य सर्जना हेतु
श्री श्यामबहादुर श्रीवास्तव 'श्याम'

जालौन जिले के ग्राम बिनौरा, तह.कालपी में 10 सितम्बर 1951 को जन्में श्री श्याम बहादुर श्रीवास्तव 'श्याम' को प्रदान किया गया। इनकी रचनाऐं बुन्देला सपूत हरदौल,संत परसुराम, मृत्युंजयी, अभिशप्त सीता, युवा गौरव लक्ष्मण, बनो लुटेरो संत, नहला पै दहला, आओ गाँव चले, मन मसोस रै जात, आदि है। इन्हे देश के अनेक सम्मानों से सम्मानित किया जा चुका है।

लोकविद् डॉ. नर्मदा प्रसाद गुप्त स्मृति सम्मान २०१६
लोक गायकी हेतु
पं. हरगोविन्द 'विश्व' सागर

बुन्देली लोक गायकी के लिए प्रसिद्ध सागर के पं. हरप्रसाद जी माथुरिया के घर जन्में पं. हरगोविन्द विश्व सागर को यह सम्मान प्रदान किया गया। इन्होनें बुन्देली लोक साहित्य, लोक संगीत, लोक नृत्य के साथ आल्हा गायकी के रूप में विशेष प्रसिद्ध पायी है। आप रेडियो, दूरदर्शन के प्रसिद्ध कलाकार है आपको मदर टेरेशा, अमरदान, संतोष सिंह बुन्देला सम्मान, बुन्देली गौरव सम्मान, आदि प्राप्त हो चुके हैं। कवि भूषण आगर से आप को साहित्य सरस्वती प्रदान की गई है।

राव बहादुर सिंह बुन्देला स्मृति सम्मान २०१६
बुन्देली समीक्षा हेतु
डॉ. पन्नालाल असर झाँसी

झाँसी में जन्मे डॉ. पन्नालाल असर ने बुन्देली लोक गीतों को हिन्दी तथा अंग्रेजी में अनूदित कर महत्वपूर्ण कार्य किया है। जिस कार्य को देखते हुऐ उन्हे राव बहादुर सिंह बुन्देला स्मृति सम्मान प्रदान किया गया।

डॉ. हरिराम मिश्र स्मृति सम्मान २०१६
श्रेष्ठ पत्रकारिता हेतु
श्री रामकिशोर अग्रवाल एवं श्री रसीद खान

सरिला स्टेट जिला-हमीरपुर में 12 जून 1962 में जन्मे श्री रामकिशोर अग्रवाल ने पत्रकारिता के क्षेत्र में अपनी अनूठी पहचान बनाई है। उन्होंने दैनिक राष्ट्रभवन, देशबन्धू, भास्कर, टूडेन्यूज, छतरपुर भ्रमण, दैनिक जागरण सहित कई अखवारों में अपनी सेवायें देकर एक विशेष पहचान बनाई है। वर्तमान में वे दैनिक राज की दुनिया के कार्यकारी संपादक हैं।

इलेक्ट्रोनिक मीडिया के क्षेत्र में उल्लेखनीय काम करने के दूरदर्शन के जिला सम्वाददाता अब्दुल रसीद खान को यह सम्मान प्रदान किया गया। श्री रसीद खान की शिक्षा टीकमगढ़ एवं छतरपुर में हुईइन्होंने प्रेस फोटोग्राफर के रूप में अपना सफर प्रारम्भ किया और आज इमानदारी व निष्पक्षता के कारण विशेष पहचान बनाई है जिसके कारण इन्हे सम्मानित किया गया।

*****

बुन्देली लोकोक्ति कोश : लोक संपदा का अमूल्य संग्रह

-डॉ. बहादुर सिंह परमार

भाषा मानव जीवन की ऐसी अनिवार्य अमूल्य सम्पदा है जिसका संसार में कोई विकल्प नहीं है। जिस प्रकार बिना प्रकाश के संसार का कार्य व्यापार नहीं चल सकता, उसी प्रकार बिना भाषा के मनुष्य जड़ हो जायेगा। संवेदना मनुष्य होने की पहचान है। इसी संवेदना में व्यक्ति के सुख-दुख समाहित रहते हैं जिन्हें वह व्यक्त करना चाहता है और संवाद के माध्यम से दूसरों तक पहुँचाकर परस्पर जुड़ना चाहता है। भाषा शब्दों से बनती है जिसका निर्माता मनुष्य है। अत: शब्दों का इतिहास उतना ही पुराना है जितना मनुष्य। शब्दों से बनी भाषा की प्राचीनता भी असंदिग्ध है। मनुष्य अपनी अन्तभविनायें अकृत्रिम रूप में सहज व्यक्त करता रहा है। यह मनुष्य ही लोक का मनुष्य है और उसकी संवेदना और अभिव्यक्ति का प्रगट रूप लोक साहित्य है। लोक का साहित्यकार और उसका साहित्य प्रगति करता हुआ शिष्ट रूप में ज्ञानी साहित्यकार और अभिजात्य साहित्य कहलाता है। साहित्य की जड़ और उसका प्राण-रस लोकसाहित्य में है। इसी लोक से चलकर कहावतें , मुहावरे, लोकोक्तियाँ, पहेलियाँ आदि साहित्य का अंग बनी। **इसीलिए आज** हम देखते है कि जो तमाम कोश सामने आ रहे हैं उनमें साहित्य और लोकसाहित्य की यह सम्पदा मिली जुली है। लोक की सम्पदा ही अधिक निखरकर साहित्य का अंग बनी।

आवश्यकतानुसार मनुष्य ने अपनी प्रतिभा और समता के अनुसार अपनी अपनी क्षेत्रीय भाषाओं की संरचना की। आज विश्व में प्रचलित भाषाओं की संख्या हजारों में है। अकेले भारत में ही लगभग छः सौ भाषायें बताई जाती हैं। इसमें लोकभाषायें भी शामिल हैं। इसीलिए चाहे लोकानुभूतियाँ हों अथवा अभिव्यक्तियाँ कहावतें मुहावरे हों या लोकोक्तियाँ प्राय: परस्पर बहुत कुछ मिलती हैं। कई बार केवल भाषिक अन्तर होता है। हिन्दी साहित्य के इस प्रकार के तमाम संग्रहों में बुन्देली का लोक साहित्य समाहित है। इसीलिए जब बुन्देली के शब्दकोश या कहाबतें मुहावरे वा लोकोक्तियों के कोश देते जाते है तो उनमें हिन्दी खड़ी बोली साहित्य की अधिकांश सामग्री समाहित रहती है। यह अस्वाभाविक कतई नहीं है। शब्द सबसे तीव्रगामी यात्री हैं। वे कुछ ही समय में कहीं के कही पहुँचते हैं। व्यक्ति अपने साथ भाषा और संस्कार ले जाकर दूर तक पहुँचाता है और अपने यहाँ लाकर शामिल करता है। विभिन्न क्षेत्रों की यह लोक- सम्पदा दूसरे का अंग कब और कहाँ बन गई इसे जान पाना सर्वथा असंभव है।

अच्छी बात यह है कि हमारी बुन्देली के लोकसाहित्यकार बड़ी निष्ठा से अपनी सम्पदा की खोज, संकलन, सम्पादन और प्रकाशन में तन-मन-धन से जुटे हुये हैं। डॉ. गौरीशंकर उपाध्याय 'सरल' ऐसे समर्पित, कर्मठ, जानकार बुन्देली के साहित्यकार हैं। जिन्होंने शब्दकोश के बाद बुन्देली लोकोक्ति कोश के दो भाग दो बृहद ग्रंथों में प्रकाशित कराये हैं जिनमें हजारों की संख्या में लोकोक्तियाँ, मुहावरे तथा पहेलियाँ संकलित हैं। डॉ. सरल उनमें नहीं है जो घर या कार्यालय में बैठे यहाँ-वहाँ से सामग्री बटोर कर ग्रंथ कर लोक मुख से सामग्री एकत्र करते है। इसीलिए उन संग्रहों में बुन्देली का मूल स्वरूप देखने को मिलता है। उन्होंने जीवन के अनेक वर्ष इसी में लगाये हैं। गाँवों की खाक छानी है। तभी वे लोकोक्तियों का **रत्न** संग्रहित कर सके हैं। लोकोक्तियाँ और मुहावरे सचमुच **लोकसाहित्य** के वे रत्न हैं जो लोकजीवन के अनुभूत सूत्र और मंत्र है जिनमें अनुभवों का सार सूत्र रूप में निहित है। डॉ. सरल ने इन सूत्र-मंत्र-रत्नों का संकलन बड़े परिश्रम से किया है। उल्लेखनीय बात यह है कि वर्णक्रम से संकलित संयोजित लोकोक्तियों एवं मुहावरों का अर्थ भी दिया हुआ है। जिससे पाठकों को निहित भावों को समझने में आसानी हो।

बुन्देली लोकोक्ति कोश भाग-1 के तीन भाग हैं- 1. लोकोक्तियाँ, 2. कहावतें और 3. बुझौअल। इनका संग्रह बहुत कुछ विलुप्त लोकसम्पदा का संग्रह है। बुन्देली लोकोक्तियाँ बुन्देली की पहचान हैं **उन्हें** संजोना अपनी सर्जना-सम्पदा को सहेजना है। **इनकी महत्ता** अक्षुण्य है। लोकोक्तियाँ और मुहावरे थोड़ा लिखा बहुत समझना की उक्ति को चरितार्थ करते हैं। जहाँ भी इनका प्रयोग होता है वे उस प्रसंग को नया भावालोक प्रदान करती हैं। एक तवा की रोटी, का पतरी का छोटी, अरूआ नातो परूआ गोत्र, गर्रानी लुंदरिया फूली-फूली **फिरै,** चमचोली को बाप, बकलफोर, तीन लुचईं हुरदंगनखों नेबतो, हरा न सकै, पेट को पीटै जैसी अनेक लोकोक्तियाँ विशुद्ध बुन्देली की देन हैं। संग्रहों को देखकर पता चलता है कि हमारी बुन्देली कितनी सम्पन्न है और बुन्देली लोक कितना कल्पनाशील तथा प्रतिभावान है जो सामान्य को असामान्य बना देता है।

बुन्देली लोकोक्ति कोश-भाग-2 पहले भाग से हटकर है। प्रथम भाग में जहाँ लोकजन के सम्पर्क से प्राप्त लोकोक्तियों-मुहावरों का संग्रह है, वही दूसरे भाग में विभिन्न विषयों और क्षेत्रों से संबंधित लोकोक्तियों-कहावतों का विभाजन है। ये अधिकांश पद्यबद्ध हैं जो अनेक साहित्यकारों, पत्रिकाओं, कृतियों आदि से चयनित कर संग्रहित की गई हैं। यहाँ गाँवों की खाक भले न छानी गई हो, पर पत्र-पत्रिकाओं ग्रंथों से पढ़कर निकालना भी सहज कार्य नहीं है। इसमें भी अनेक वर्षों कर श्रम परिलक्षित होता है। विषयानुकूल अलग-अलग अंकित करने से देखने-पढ़ने की अधिक सुविधा हो गई। जैसे-सामान्य कहावतें, लोकोकियाँ, कृषि, स्वास्थ्य रोग, ज्योतिष, नारी, दान-दहेज ज्योतिष, परिवारिक, पालतू जानवरों सबंधी, व्यापार, नशा, आध्यात्मिक, क्रीड़ा, हास-परिहास, बुन्देल भूमि की महत्ता, अटका, तंत्रमंत्र आदि। इनमें तुलसीदास आदि से लेकर घाघ, भड्डुरी तथा अन्य कवियों की पंक्तियाँ दी गई हैं जिनमें लोकोक्तियों, कहावतों का प्रयोग है। विशेष बात यह है कि लोकजीवन में प्राय: आधी अधूरी पंक्तियों के साथ ही लोकोक्तियों कहावतों का उल्लेख हो जाता है। डॉ. सरल ने प्रयोग की पूरी पंक्तियाँ देकर लोगों को ज्ञान वृद्धि की है-जैसे-अंधरा बाँटे रेबड़ी चीन्ह चीन्ह

कै देय। विधना ने जो भी लिखो हँसी खुसी से लेय। प्राय: लोग

अर्धाली ही उद्धृत करते है। एक दो उदाहरण और लें...

खिसियानी बिलइया खंभा नोचै धाय।

आबर में जो मिलगओ, सबखों लुड़का जाय।

धोबी को कुत्ता दिखै, घर को नाही घाट।

धोबी के पाछूँ फिरै, जीवन बाराबाट।

सैकड़ों लोकोक्तियाँ ऐसी है जिनका साहित्य से अधिक जीवन-संचालन में अत्यधिक महत्व हैं। उनमें उपयोगी ज्ञान, जानकारों और निर्देश निहित है-चाहे वे खेती -पाती से संबंधित हो या स्वास्थ्य से। डॉ. सरल ने तंत्र-मंत्र संबंधी पंक्तियाँ भी सँजोई हैं और हास्य विनोद की वे लोकोक्तियाँ और कहावतें जो कहने-सुनने में अभद्र और अशिष्ट प्रतीत होती हैं। परन्तु वे बराबर प्रचलित हैं। डॉ. सरल की भाग-दो में काव्यपंक्तियों की लोकोक्तियाँ कम महत्वपूर्ण नहीं है। यद्यपि यह प्रश्न उठाया जा सकता है कि उन्हें बुन्देली कैसे कहा जा सकता है। इसका उत्तर यही है कि उनमें से अधिकांश बुन्देली जन जीवन में व्याप्त हैं। भले ही वे अन्यत्र के रचनाकारों द्वारा प्रयुक्त हुई हों।

डॉ. सरल का यह बुन्देली लोकोक्तियों का संग्रह अत्यन्त महत्वपूर्ण और ऐतिहासिक महत्व का है। संग्रहों के माध्यम से जहाँ हम अपनी विलुप्त सम्पदा को खोजकर प्रकाशित करते हैं, वहीं संग्रहित कर, सुरक्षित कर, आनेवाली पीढ़ी को सौंपकर उसे ज्ञानवान और सम्पन्न बनाते हैं। हर रचना का अपनी मातृभूमि की सेवा करना परम कर्त्तव्य है। जो कार्य में लगे है वे वरेण्य हैं, प्रणम्य हैं। डॉ. गौरीशंकर उपाध्याय उन्हीं साधकों में से हैं। उनकी जितनी प्रशंसा की जाय, कम है।

-न्यू हाउसिंग बोर्ड कॉलोनी
छतरपुर (म.प्र.) 471001

*****

रचनाकारों से अनुरोध

बुन्देली बसंत हेतु समस्त रचनाकारों से मौलिक रचनायें वर्ष भर आमंत्रित हैं। आप संपादक के अनुरोध पत्र की प्रतीक्षा न कर बुन्देलीधरा पर बिखरी साहित्यिक, सांस्कृतिक तथा ऐतिहासिक धरोहरों को सहेजने व विश्लेषण से युक्त आलेख रचें व संपादक के पास प्रकाशन हेतु प्रेषित करें।

बुन्देलखण्ड अंचल के रचनाकारों, साहित्यकारो, इतिहासविदों एवं संस्कृति से जुड़े कलाकारों को बुन्देली विकास संस्थान द्वारा उनके रचनात्मक अवदान को रेखांकित करने हेतु विभिन्न सम्मान प्रदान किये जाते हैं। इस संदर्भ में आपसे अनुरोध है कि आपके अंचल में या आपकी दृष्टि में कोई पात्र हो तो उसका विवरण समिति के पास प्रेषित कर सहयोग करने का कष्ट करें।

-संपादक

बीसवें बुन्देली उत्सव में सम्मानित विभूतियाँ

राव बहादुर सिंह बुन्देला स्मृति सम्मान २०१६
बुन्देली संस्कृति हेतु
श्री वीरेन्द्र शर्मा कौशिक

पं. हरप्रसाद शर्मा एवं श्रीमती कृष्णादेवी शर्मा के घर मऊरानीपुर जिला-झाँसी में जन्में श्री वीरेन्द्रशर्मा कौशिक को यह सम्मान उनके बुन्देलखण्ड अँचल की संस्कृति को प्रोत्साहित करने हेतु किये गये लेखन के लिये प्रदत्त किया गया।

म.प्र. शासन शिक्षा विभाग में अध्यापक पद से सेवा प्रारा कर प्राचार्य के पद तक आपने अपनी सेवायें दी।

आपके आलेख विभिन्न राष्ट्रीय पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित होने के साथ आकाशवाणी व दूरदर्शन पर प्रसारित हुये हैं।

आपने मामुलिया, जयतारा तथा अनामिका आदि पत्रिकाओं संपादन किया।

दिवान प्रतिपाल सिंह बुन्देला स्मृति सम्मान २०१६
बुन्देलखण्ड के इतिहास हेतु
श्री श्रवणसिंह सेंगर, गुरसराँय को

कैरोखर हाउस, गुरसराँय के श्री श्रवण सिंह सेंगर ने अपने लेखन के द्वारा बुन्देलखण्ड के इतिहास के अनेक अनछुये पहलुओं को उद्घाटित किया है। आपने स्वतंत्रता संग्राम में बुन्देलखण्ड की महिलाओं के योगदान पर विशेष कार्य किया है।

आप उ.प्र. शासन की प्रशासकीय सेवा में रहते हुये इतिहास लेखन में लगातार संलग्न रहे।

आपकी इन्हीं सेवाओं को देखते हुए यह सम्मान प्रदत्त किया गया।

गौरिहार नरेश प्रताप सिंह स्मृति सम्मान २०१६
बुन्देली उत्सव के उन्नयन हेतु
डॉ. मुन्नालाल पिपरसानियाँ को

छतरपुर के लक्ष्मी प्रसाद पिपरसानियाँ व श्रीमती सावित्री देवी पिपरसानियाँ के घर 9 सितम्बर 1951 को जन्में डॉ. मुन्नालाल पिपरसानियाँ बुन्देली विकास संस्थान के उन आधार स्तम्भों में से हैं जिन्होंने इसकी नीव रख उसे ऊचाइयाँ प्रदान की।

आपने बनर्जी टूर्नामेंट सहित अनेक सामाजिक व सांस्कृतिक आयोजनों में सक्रिय भागीदारी कर विशेष पहचान बनाई है।

मानुस होनें कै ना होनें, रजऊ बोल लो नौनें।
जियत-जियत लों सबकें नाते, मरें घरी भर रौनें।।
कितनी बेरा प्रान छोड़ दये, की के सगै कौनें।
ईसुर हात लगै ना हंड़िया आवै सीत टटौनें।।
हंसा फिरें विपत के मारें, अपने देश बिना रे।
अब का बैठे ताल तलैया, छोड़े समुद किनारे।।
चुन-चुन मोती उगले उननें ककरा चुगत विचारे।
ईसुर कात कुटुम्ब अपने सें, मिलबी कौन दिना रे।।

-ईसुरी

समीक्षा-

वृहद बुन्देली शब्दकोश

-प्रभुदयाल मिश्र

डॉ. सरोज गुप्ता का उत्तरप्रदेश भाषा संस्थान लखनऊ द्वारा प्रकाशित 'प्रमाणिक बृहद बुँदेली शब्दकोश' सच्चे अर्थों में बृहद इसलिए है कि पुस्तक के १×३/४ फीट के आकार के अतिरिक्त इसके मूल के 400 से अधिक तथा परिशिष्ट भाग के लगभग १०० पृष्ठ हैं, एक व्यक्ति के कौशल और क्षमता से इतने बड़े अनुष्ठान की सम्पन्नता बिस्मय में लाकर छोड़ती है। डॉ. गुप्ता सिद्धहस्त, संस्कारवान सफल लेखिका तो हैं ही किन्तु वे अपने साहित्यिक और शैक्षणिक जीवन के समाहार सहित इतना बड़ा संकल्प भी साध रखे थीं, इसका मुझे अनुमान नहीं था, मैं उनके इस विराट यजन की पूर्ति पर उन्हें प्रथमतः ही साधुवाद देना चाहता हूँ।

किसी भाषा विशेष के शब्दकोश की उपयोगिता केवल उस भाषा को समझने की रुचि वाले की ही आवश्यकता न होकर उस भाषा को जानने वाले की भी लगभग उतनी ही होती है, यह इस कृति से सहज प्रकट हो जाता है। यह कितना आश्चर्य नहीं है कि भाषागत जीवन का निरंतर व्यवहार करते हुए भी हम स्वयं में इस कोश को संजोकर भी इससे अज्ञात जैसे स्वयं कंगाल ही बने रहते हैं- तब जब तक कि इस प्रकार कोई जोहरी हमारे कोश का उद्घाटन न कर दे। फिर तो चरितार्थता तुलसी के इस कथन की ही प्रकट होती है- 'नाम निरूपन नाम जतन ते, इम प्रकटत जिमि मोल रतन ते'

भारत के महानतम भाषाविद श्री भतृहरि ने अपने वाक्यपदीय (२-१३७) में कहा है-

एकास्यापि च शब्दस्य निमितैः अव्यविस्थतैः

एकेन बहुभिश्चार्थो बहुधा परिकल्पते

अर्थात्- एक शब्द का अर्थ बदली हुई स्थितियों के कारण किसी एक व्यक्ति के द्वारा भी और अनेक व्यक्तियों के द्वारा अनेक प्रकार से कल्पित किया जाता है। यह शास्त्र सिद्धांत बुन्देली की प्रचलित इस कहावत को ही चरितार्थ करता है कि 'कोस कोस पर पानी बदले चार कोस पर बानी' वाणी का यह कौतिक जन सामान्य को इस विविधता भरे संसार में निरंतर 'एक्देशीयता' की पहचान में सचेष्ट रख छोड़ता है वह अपने व्यवहार और वाणी में स्वभावतः न्यूनतम कृत्रिम रहकर ही निर्भार (भार रहित) होकर सामान्य विकास कर पाता है। प्रश्न उठता है कि कोश किसकी आवश्यकता है - एक भाषविद की अथवा एक सामान्य जन की? यह स्पष्ट है कि यद्यपि एक सामान्य जन को लोक व्यवहार के लिए कोश की आवश्यकता की तीव्रता नहीं रहती, किन्तु कुशल और प्रभावी संचार में मानक अभिव्यक्ति सदा ही आवश्यक होती है। हमारा भाषायी संवाद परस्पर केवल कान से टकराकर अपनी पूर्णता प्राप्त नहीं कर लेता। सच्चे अर्थो में एक शब्द कर्ण कुहर से प्रवेश कर किसी मनुष्य के अन्तःकरण में समाश्रित किसी शब्द विशेष के बिम्ब, ध्वनि तरंग, अर्थ विस्तार और उसके प्रयोग की भूमिकाओं को मूर्तिवंत करता है। इस प्रकार शब्द के उच्चारण अथवा श्रवण के साथ ही एक सामाजिक भूत और भविष्य के इतिहास तथा भूगोल का पारायण कर वर्तमान की भूमिका विनिश्चित करता है और यदि वह एक शब्द पारखी है तो उसकी गति और निर्णय सदा परिपूर्ण हो सकते हैं। वह जीवन में आप्तकामता प्राप्त कर सकता है।

शोधार्थी, भाषविद और साहित्यकार के लिए जहां यह अध्ययन दिशा अपरिहार्य है, वहीं मानविकी विधाओं के अध्येताओं के लिए इनकी सदा से उपयोगिता रही है। लोक पहले है अथवा वेद, शब्द प्रधान है अथवा अर्थ और भाषा प्रयोग प्रथम है अथवा उसका मानकीकरण, इसका दोनों विषयों के प्रवक्ता प्रायः अपने ही मत के समर्थन में ढेर सारे तर्क जुटा रखते हैं, किन्तु इन दोनों ही समानांतर धाराओं में एक साथ किसी एक के चल पाने की यदि गति हो तो कोई उसका उत्तर दे। यह पुस्तक शोध की इसी धारा की समर्थक है।

इस प्रसंग में मैं एकबार फिर 'वाक्यपदीय' की ओर लौटता हूँ। सूत्रकार भर्तृहरि का (२/१३६) पुनः कहना है-

एकास्मिन्नपि दृश्येऽर्थदर्शनं भिद्यते पृथक

कालान्तरेऽपि वै कोऽपि तं पश्यत्यन्यथा

अर्थात् एक ही दृश्य पदार्थ को अलग-अलग व्यक्तियों के देखने में अंतर होता है। कुछ समय बाद तो वही व्यक्ति उसी पदार्थ को दूसरी ही तरह से देखता है।

इस सामान्य व्यवहार की क्रिया में शब्द का अर्थ भेद तो और भी स्वाभाविक है। इससे जहां संचार क्रिया दुस्तर होती है वहीं अनेक मूल सन्दर्भो के विलुप्त हो जाने का खतरा भी उत्पन्न होता है। निश्चिय ही इस विराट खाई को पाटने का काम इस प्रकार के कोश ही कर सकते हैं। आज बुन्देली भाषा काफी दूरी तक अपने आपको खड़ी बोली में अंतर्विलीन करती है, किन्तु उसके मूल और उसके अंतरतम में प्रवेश कर ही हम उस संस्कृति और धरोहर का साक्षात्कार कर सकते हैं जो एक अर्थ में भारतीयता की भी पहचान है।

इस पुस्तक की प्रायः प्रत्येक भूमिकाकार ने तथा अन्य जिस किसी से भी मेरी बात हुई है, सभी ने इसके परिशिष्ट भाग की मुक्त कंठ से प्रशन्सा की है। मैं भी उन सभी के साथ हूँ अनेक स्थलों पर मुझे स्वतः चमत्कृत होना पड़ा है। और यह चमत्कार दोनों ही स्तर पर होता है चाहे वह भाषाई शक्ति का साक्षात्कार हो अथवा कि

लेखिका की गहन और पैनी शोध सामर्थ्य।

विदुषी लेखिका डॉ. सरोज गुप्ता को मेरी भूरिशः बधाई

कृति - प्रमाणिक वृहद बुन्देली शब्दकोश

-कृतिकार-डा. सरोज गुप्ता

प्रकाशक - उत्तरप्रदेश भाषा संस्थान, लखनऊ

-३५ ईडन गार्डन, चूनाभट्टी, कोलार रोड भोपाल

*****

बुंदेली लोक साहित्य

- नन्दकिशोर पटेल

डॉ. बहादुर सिंह परमार की नई पुस्तक 'बुन्देली लोक साहित्य' ए.के. पब्लिकेशन्स, शाहदरा, नई दिल्ली से जुलाई 2016 में प्रकाशित हुई। एक सौ उन्नीस पृष्ठीय इस पुस्तक में कुल बारह लेख है, जिसमें बुन्देली लोक साहित्य को नये व मौलिक ढंग से प्रतिपादित किया गया है। ये लेख हमें प्राचीन बुन्देली लोक साहित्य से लेकर उसके वर्तमान स्वरूप से भी अवगत कराते हैं। वर्तमान में बदलते लोक परिवेश तथा उस पर वैश्वीकरण के प्रभाव से भी परिचित कराते हैं।

लोक साहित्य प्रकृति से ज्यादा सम्पृक्त होता है और प्रकृति से सब कुछ सीखा जा सकता है, बहुत ताकत है उसमें। लोक साहित्य हमें आल्हादित व आनंदित करता है, क्योंकि उसमें प्रकृति के तत्व ज्यादा मात्रा में मिलते है। डॉ. परमार बुन्देली के अच्छे विद्वान है। उनका बुन्देली लोक साहित्य से अनन्य लगाव है। बुन्देलखण्ड की सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक व सांस्कृतिक तत्वों को उन्होंने व्यावहारिक रूप में देखा व समझा ही नहीं बल्कि जिया भी है इसलिए, यह पुस्तक बेजोड़ बन पड़ी है।

प्रस्तुत पुस्तक में कुल 12 लेख है। जिनमें 'बुन्देली लोक साहित्य की परम्परा', बुन्देलखण्ड का साहित्यिक वैभव, छतरपुर जिले की साहित्यिक परम्परा, बुन्देली लोक साहित्य में राष्ट्रीयता, बुन्देली लोक साहित्य में प्रकृति प्रेम, बुन्देली लोक साहित्य में पर्यावरण, बुन्देलखण्ड का जयदेव-ईसुरी, सामाजिक सरोकारों के जनकवि ईसुरी, बुन्देली लोक चेतना के कवि छत्रसाल, बुन्देली साहित्य में सामाजिक समरसता, बुन्देली साहित्य सर्जना की दशा एवं दिशा, तथा बुन्देली लोकभाषा पर वैश्वीकरण का प्रभाव शामिल हैं। इन मौलिक लेखों में बुन्देलखण्ड के जन-जीवन, उनकी चित्तवृत्तियों की ऐसी झलक मिलती है, जिसमें उसके मनोभवों, प्रेम, राष्ट्रीयता, पर्यावरणीय जागरूकता, लोक चेतना, सामाजिक समरसता के साथ-साथ जीवन के अनेक उदस्त पक्षों का विश्लेषण मिलता है। बुन्देलखण्ड के लोक कवि जैसे ईसुरी, छत्रसाल महाराज आदि अनेक कवियों के व्यक्तित्व व साहित्यिक चेतना में लोक की चेतना देखने को मिल जाती है। ऐसे ही अनेक कवियों के बहुआयामी जीवन का चित्रण इस पुस्तक में मिलता है। इन सभी पक्षों को प्रकाश में लाने का श्रेय डॉ. परमार के व्यापक दृष्टिकोण, व्यापक लोक जीवन की समझ व अथक परिश्रम को जाता है।

प्रथम लेख है बुन्देली लोक साहित्य की परम्परा। इसमें लोक काव्य, लोक कथा, लोक गाथा, लोक नाट्य, लोक नृत्य तथा लोकोक्तियां आदि बुन्देली साहित्य की परम्परा विश्लेषणात्मक चित्रण किया गया है। लोकमंगल ही लोक साहित्य का आधार होत है और लोकमंगल जीवन आस्था और विश्वास पर आश्रित होता है। यहाँ लोकत्व ही प्रमुख गुण है जो लोक साहित्य को परम्पराबद्ध करता है। लोक साहित्य का पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरण के पीछे लोकभाव, लोक विवेक तथा लोक कल्पना जैसे तत्व होते है। इन तत्वों के प्रभाव से लोक मंगल और लोकरंजन अन्वय होकर संचरण करते है - विवाह के समय कन्यापक्ष से स्त्रियां सामूहिक स्वर में आ जाती है-

कुत्ता पाल लेओ, ओ मोरे नये जजमान, कुत्ता पाल लेओ,
कुत्ता की खुरी जैसे मैदा की पुरी, दो और लेओ।

दूसरे लेख 'बुन्देलखण्ड का साहित्यिक वैभव में 'डॉ. परमार' ने जगनिक से लेकर केशवदास, प्राणनाथ, छत्रसाल, पद्माकर, गंगाधर व्यास, वृंदावन लाल वर्मा, बनारसी दास चतुर्वेदी, संतोष सिंह बुन्देला, विंध्यकोकिल भैयालाल व्यास, नर्मदा प्रसाद गुप्त, अवधकिशोर जड़िया, ज्ञान चतुर्वेदी, मैत्रेयी पुष्पा, कैलाश बिहारी द्विवेदी, डॉ. दुर्गेश दीक्षित, डॉ. कांति कुमार जैन, डॉ. श्याम सुन्दर दुबे के अतिरिक्त अनेक साहित्यकारों द्वारा प्रणीत रचनाओं का उल्लेख समीक्षात्मक दृष्टि से किया गया है। जिससे पता चलता है कि बुन्देली का साहित्य कितना वैभव पूर्ण है।

तीसरे लेख 'छतरपुर जिले की साहित्यिक परम्परा' में छतरपुर की स्थापना के बाद के साहित्यकारों का उल्लेख किया गया है। जिनमें महबूब कवि आलीपुरा,
गुमान त्रिपाठी, 'मान' प्राणनाथ, ठाकुर, मित्रबंधु, भानुप्रताप सिंह, गंगाधर व्यास, ख्याली राम लोधी, ईसुरी, देवी प्रसाद प्रीतम, लाला भगवानदीन 'दीन' बिहारी लाल ब्रह्मभट्ट, बाबू गुलाबराय, वियोगी हरि भैयालाल व्यास 'विंध्यकोकिल', डॉ. नर्मदा प्रसाद गुप्त, डॉ. गंगा प्रसाद गुप्त 'वरसैया', हशमत छतरपुरी, डॉ. कांति खरे, डॉ. गायत्री बाजपेयी, रमेशचन्द्र चौरसिया 'प्रशांत', श्रीमती मालती श्रीवास्तव, सुरेन्द्र शर्मा सुमन, के अतिरिक्त सैकड़ों साहित्यकारों का उल्लेख उनकी रचनाओं की विशेषताओं के साथ किया गया है। साथ ही नवोदित पीढ़ी में भविष्य के साहित्यकारों को देखा जा रहा है।

राष्ट्रीयता सामूहिक रक्षा का व्यापक धर्म है। बुन्देलखण्ड में राष्ट्रीयता आदिकाल से हो रही है। आल्हा-ऊदल से लेकर महाराज छत्रसाल वीरांगना लक्ष्मीबाई की वीर गाथाएं समूचा भारत वर्ष जानता है। जिनका शौर्य गान अनेक बुंदेली कवियों ने किया है। 'बुन्देली साहित्य में राष्ट्रीयता' नामक लेख में डॉ. बहादुर सिंह परमार ने बुन्देलखण्ड की राष्ट्रीयता से परिचित कराया है। महाराष्ट्र में शिवानी के अतिरिक्त बुन्देलखण्ड में महाराज छत्रसाल की समूचे मुगल साम्राज्य विरुद्ध जिहाद छेड़े हुए थे। इनकी राष्ट्रीयता का प्रभाव भारत की स्वतंत्रता तक तथा वर्तमान में देश के दुश्मनों से लड़ने की प्रेरणा तक रहा है। बुन्देलखण्ड के शौर्य, पराक्रम नीति व राष्ट्रीयता के प्रतीक छत्रसाल की प्रशस्ति में 'प्रेमी' कवि लिखते है -

'रण' बाँकरे बुन्देला वीर छत्रसाल धाक गहरात घनघोर घटा छाई है।
मुगल पठान तुरकान सब जोर करे, नेकऊ डरात तोरी नाम धौंस पाई है।

पाँचवाँ लेख 'बुन्देली लोक साहित्य में प्रकृति प्रेम' है। जिसमें बताया गया है कि बुन्देली लोक मन प्रकृति के बिना अधूरा है। जिसमें बताया गया है कि बुन्देली लोकमन प्रकृति के बिना अधूरा है। उसकी प्रकृति के प्रति अनन्य आस्था है। नदियों, पेड़-पौधों, पशु-पक्षियों, मेघ, पर्वत आदि प्राकृतिक उपादानों में दैवत्व के गुण मानकर उनकी पूजा यहां हमेशा से होती आयी है।

वन बिरछा लगाव महाराज
ध्याव मन देखवे खों।
झर-झर बरसे मेघ - रसीले
पग-पग पै बिरछा उगाव महाराज।

नीम, आंवला, पीपल, बरगद, जामुन आदि वृक्ष, नदियां, पर्वत आदि पूजनीय है। गहन आस्था और विश्वास है इनकी पूजा में। महुए को कटता देख लोक कवि ईसुरी कह उठते है–

''इन पै लगे कुलरियां घालन, मौआ मानस पालन।''

यहां पुष्प में भी ईश्वरीय वास मानते हैं। बसंत के मौसम में वातावरण सुहावना हो जाता है लोक कवि गंगाधर व्यास कह उठते है–

''दिन ललित बसंती आन लगे, हरे पत्र पिपरान लगे।
घटन लगी सजनी अब रजनी, रवि के रथ ठहरान लगे।''

कुल मिलाकर बुन्देली लोक में प्रकृति प्रेम आदिकाल से ही रहा है। छठें लेख बुन्देली लोक साहित्य में पर्यावरण में पर्यावरण का महत्व बताया गया है और उसकी रक्षार्थ लोकमानस तत्पर है। वैश्विक संदर्भ में पर्यावरण संरक्षण के लिए आज सम्मेलन होने लगे है, बुन्देली लोक जीवन ऐसे प्रयास आदिकाल से ही कर रहा है प्राकृतिक उपादानों को मौलिक स्वरूप में बने रहने देने का आग्रह लोकमन में बहुत प्रबल है।

रसवारी के भौरां रे
चम्पा की चार कली, वगिया गुलजार। रसवारी के भौंरा रे।
आम नीम महुआ और कचनार। रसवारी के भौंरा रे।
निबुआ उर सन्तरा रसीले अनार। रसवारी के भौंरा रे।
इनखों ने काटियों, करियो बस प्यार। रसवारी के भौंरारे।

सातवें लेख 'बुन्देलखण्ड का जयदेव-ईसुरी' में लोक कवि ईसुरी की तुलना जयदेव से की गई है। जयदेव हिन्दी साहित्य में श्रृंगारिक परम्परा के पहले कवि मानते जाते है। ईसुरी की प्रधानतः श्रृंगारिक कवि है। उन्होंने अपनी प्रेमिका रजऊ को आलंबन बनाकर काव्याभिव्यक्ति की है। नायिका का श्रृंगार वर्णन –

हमखां बिसरत नहीं बिसारी, हेरन हँसन तुम्हारी।
ईसुर कात हमारी कोदौं, तनक हेर लेव प्यारी।।''

सामाजिक सरोकारों के जनकवि ईसुरी नामक लेख सें यह पता चलता है कि ईसुरी कैसे लोकवि बने? उनके काव्य में सामाजिक समरसता, पथ-प्रदर्शन, दया, प्रेम, पर्यावरण रक्षा, नीति, मर्यादा, धर्म, पाप-पुण्य, भाग्य-कर्म, करूणा, उपकार व सहयोग आदि मानवीय-मूल्यों की सुन्दर अभिव्यक्ति मिलती है। बिहारी ने राजा जयसिंह का पथ-प्रदर्शन किया था तो ईसुरी ने कोंनिया के दीवान साहब का।

भौंरा जात पराये बागै, तनक लाज न लागै।
घर की कली कौन कम फूली, काये न लेत परागै।
जब चाओ रस लेउ मौज से, छिन-छिन छबि अनुरागै।
कैसे जात लगाउत हुइयो, और के आग से आँगै।
ईसुर जूठी-जाँठी पातर, भावै कूकर कागे।।

यह फाग सुनकर दीवान साहब पर स्त्रीगमन छोड़ देते हैं। लोक कवि ईसुरी का मानना है कि दया ही धर्म का मूलाधार है।

दीपक दया धरम कौ जारौ, सदा रहत उजियारौ।
धरम करे बिन करम खुलै न, कुची बिना ज्यों तारौ।।
जीवन की नश्वरता का चित्रण देखें-
बखरी रैयत है भारे की, दई पिया प्यारे की।
कच्ची भींत उठी माटी की, छाह फूस चारे की।।

कुल मिलाकर ईसुरी समाज में समरस भाव भरने में अग्रणी रहे है। अनेक मूल्यों की उद्भावना उनके काव्य में मिलती है। उन्होंने ऐसे मूल्यों की स्थापना पर जोर दिया है जहां पक्षपात, धोखेबाजी, भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी के लिए कहीं स्थान नहीं है।

नौंवे लेख 'बुन्देली लोक चेतना के कवि छत्रसाल' में महाराज छत्रसाल को लोकनायक व लोक कवि दोनों से सफल बताया गया है। उनके आजीवन संघर्ष के पीछे नैतिक बल काम करता है। उन्होंने राजधर्म के साथ-साथ साहित्य धर्म भी निभाया और अनेक सरस्वती पुत्रों को संरक्षण दिया।

कवि कीरति के बिरवा है, इन्हें कभऊँ मुरझान न दीजों।

महाराज छत्रसाल के काव्य में राष्ट्रधर्म, भक्ति, सत्य, ईमानदारी, त्याग, नीति, तपस्या व पारस्परिक सहयोग आदि मानवीय मूल्यों की सशक्त अभिव्यक्ति हुई है–

'निज स्वारथ सों पाप नहिं, पर स्वारथ सो पुन्न।

जनता का साथ कैसे मिलता है?–

छत्रसाल राजन को, बर्जित सदा अनीति।
द्विरद दंत की नीति सों, करत न रैयत प्रीति।।

दसवें लेख बुन्देली लोक साहित्य में सामाजिक समरसता' में लोक की सामूहिकता और उसकी समरसता की अभिव्यक्ति हुई है। यहाँ मातृभूमि प्रेम, आपसी भाई-चारा, वाणी की मिठास, अस्पृश्यता का विरोध, मानवीय धर्म के पालन का आग्रह, धार्मिक व जातीय एकता सब है। इस लेख से यह साबित होता है कि साहित्य समाज का पथ प्रदर्शक होता है- वाणी की मिठास –

सबसें बोलो मीठी बानी, थोरी है जिन्दगानी।
ऐई बानी सुरलोक पठवै, ऐई नरक निसानी। ईसुरी

भाई-बहन का प्रेम – 'लौट आई मोरे घर दोज
मनाहै अब मैं सावन रोज
मिठौआ ई कुंआ कौ नीर, छँयरौ पीपर कौ गंभीर।

अस्पृश्यता पर चोट– जातें बनी न उतै काउ की, सबरी इतई बना लईं।
छुआछूत की भीतैं अपने, मनसे इतई उठा लईं।।

ग्यारहवें लेख बुन्देली साहित्य सर्जना की दशा एवं दिशा से बुन्देली साहित्य में शिल्पगत व भावगत परिवर्तन का पता चलता है। यहाँ के कवियों ने उद्योग-धंधों, बेरोजगारी, स्त्री व दलित समाज की पीड़ा, धन लोलुपता, दहेज प्रथा, आतंकवाद, पर्यावरण जागरूकता आदि नवीन विषयों पर लेखन मिलता है। साथ ही रेडियो लेखन, साक्षात्कार तथा पत्रकारिता से प्रभावित लोक साहितय का भी अंकन मिलता है।

दलित समाज पर लेखन –

जुगन-जुगन सें पाछें रओ जौ, अपनौ दलित समाज,
हाँत पकर कें इनैं उठालो, आगें बढ़कें आज।

पलायनवादी प्रवृत्ति का चित्रण –

इतै कमी रानी रोटी की, सबसैं ज्यादां खल रई।
गाँव छोड़कै भग रई जनता, जैसें-तैसें पल रई।।

'बुन्देली लोक भाषा पर वैश्वीकरण का प्रभाव' अंतिम लेख है जिसमें परमार ने चिंता व्यक्त की है कि वैश्वीकरण के प्रभाव से सबकुछ बदल रहा है, पूरी जीवन शैली, आधुनिक यंत्रीकरण में बदल रहीं है, भाव हीनता की स्थिति बनती जा रही है। बुन्देली की मिठास गायब हो रही है। पहनावा-ओढ़ावा, संस्कार खानपान, कृषि पद्धतियां, भाषा-बोली, गायन-वादन सभी में परिवर्तन देखने को मिल रहे हैं। इन सबके पीछे सूचना क्रांति का हाथ है। लगभग सभी लेखों के अंत में परिवर्तन के विन्दु मिल रहे है।

–छत्रसाल नगर, छतरपुर

*****

बुंदेलखंड की कवियित्रयों का विवरण

-एन.डी.सोनी

साहित्य शब्दों का एक ऐसा महासागर है जिसकी थाह आज तक कोई भी साहित्यकार नहीं पा सका। फिर भी इसमें गोते लगाने वालों की संख्या दिनों-दिन बढ़ती ही जा रही है। पं. हरि विष्णु अवस्थी ने 'बुन्देलखण्ड की कवियित्रयाँ' पुस्तक लिखकर इसी साहित्य सागर से एक अंजुरी जल उलीचा है, जो हमें संतृप्त करने के लिए पर्याप्त है। जिस प्रकार ओरछा राज्य में बुन्देलों के स्थापित हो जाने पर वहाँ साहित्य लेखन का विकास हुआ था, उसी प्रकार अवस्थी जी ने बुन्देलखण्ड के इतिहास और संस्कृति के जानकार के रूप में स्थापित हो जाने पर ही इस महत्वपूर्ण पुस्तक का लेखन किया है। बुन्देलखण्ड के इतिहास और संस्कृति से संबंधित साहित्य का एक बहुत बड़ा जखीरा उनके पास संचित है जिसका अध्ययन-मनन करने पर उनका ध्यान इस ओर गया कि पुरुष प्रधान समाज ने साहित्य के क्षेत्र में भी नारी की उपेक्षा की है। बुन्देलखण्ड क्षेत्र में मध्यकाल से अब तक पर्याप्त कवियित्रियाँ होने के बाद भी किसी ने उनके बारे में लिखने का प्रयास नहीं किया। यही बात इस ग्रंथ के लेखन का मूल है। बुन्देलखण्ड के इतिहास, पुरातत्व संस्कृति और कलाओं पर आसक्त अवस्थी जी ने उपलब्ध संदर्भ ग्रंथों का अध्ययन कर दो वर्ष से अधिक समय में बुन्देलखण्ड की जानी-अंजानी कवियित्रयों के साथ न्याय करते हुए इस पुस्तक के माध्यम से उन्हें प्रकाश में लेकर साहित्य क्षेत्र की एक बहुत बड़ी कमी को पूरा किया है।

यह पुस्तक समाज में नारी के सम्मान को बढ़ाने में महती भूमिका का निर्वाह करेगी जिसकी बातें सरकार द्वारा की जा रही हैं। -यह पुस्तक कवियित्रियों की उपेक्षा का परिष्कार करते हुए पुरुषों के दम्भ पर भी एक चोट करेगी। पुस्तक में कवियित्रयों की जानकारी तीन भागों में दी गई है। प्रथम भाग में सोलवीं से बीसवीं शताब्दी तक (सन् 1500 से 1947 तक) की कवियित्रयों को लिया गया है। इस काल की कवियित्रयों की अधिकांश रचनायें भक्ति व रीति काव्य से प्रभावित हैं। कुछ ने सामाजिक विषयों पर भी कवितायें लिखी हैं। साहित्यकारों के मन में एक भ्रम था कि मध्यकाल में राज परिवार की महिलाओं ने ही काव्य लेखन किया है। इस भ्रम का निवारण यह पुस्तक करेगी। अथक परिश्रम करके अवस्थी जी ने खोज के साथ सप्रमाण जिन कवियित्रियों का वर्णन किया है, उससे सिद्ध होता है कि मध्यकाल में भी काव्य कला खासो-आम दोनों के लिए थीं।

प्रथम खण्ड में तीन प्रकार की कवियित्रयों का वर्णन है। पहले वर्ग में रानियाँ-महारानियाँ हैं, जिनमें गनेश कुँवरि, चन्द्रावती, बखत कुँवरि 'प्रिया सखी' नारायण कुँवरि 'प्रेमलता' कमल कुँवरि 'युगल प्रिया', रूप कुँवरि, और कंचन कुँवरि जैसी कवियित्रयां हैं जिनके पद और गीत आज भी बुन्देलखण्ड के संगीतज्ञ और आम आदमी गाते हैं। दूसरा वर्ग रानियों से प्रभावित राज्याश्रित पुरुषों की पत्नियों व अन्य महिलाओं (जैसे दासी व सेविकायें) का है जिन्होंने ग्रंथ या फुटकर रचनायें लिखीं। इनमें तीन तरंग (ग्रंथ संगीत अखाड़) बिलोच नयना (ग्रंथ कोक शास्त्र), मधुर अली, रसिक अली, प्रवीण राय (कई ग्रंथ) कनकलता खबासिन (कई ग्रंथ) आदि महत्वपूर्ण कवियित्रियाँ हैं। ओरछेश इन्द्रजीत सिंह को पति रूप में मानने वाली उनकी प्रेयसी नृत्यांगना प्रवीण राय साहित्य जगत में जानी-मानी इतनी कुशल कवियित्री थी जिसकी कविता से बादशाह अकबर तक प्रभावित हुए और महाकवि केशवदास ने अपनी इस शिष्या की प्रशंसा में कविप्रिया ग्रंथ की रचना की। अवस्थी जी ने प्रवीण राय रचित ग्रंथों की चर्चा के साथ ही विभिन्न प्रकार की रचनाओं के उदाहरण सप्रमाण पुस्तक में दिये हैं। चर्चित काल के तीसरे वर्ग में आम या सामान्य वर्ग की कवियित्रियों की संख्या उक्त दो वर्गों से कम नहीं है। इनमें से कुछ को छोड़कर बाकी कवियित्रयों के बारे में जानने का सुयोग इसी पुस्तक के माध्यम से हो रहा है। इनमें इन्द्रामति बाई, प्रेमसखी, राजरानी देवी 'वियोगिनी' तोरन देवी, राम कुमारी चौहान, ऊषा देवी मित्रा, चन्द्रसखी (चर्चित हैं) सुभद्रा कुमारी चौहान (साहित्य प्रसिद्ध), फूलवती, विमला सक्सेना, डॉ. छाया श्रीवास्तव (प्रसिद्ध साहित्यकारों में) व विट्टन उपाध्याय जैसी लगभग चालीस कवियित्रयां हैं। अवस्थी जी ने न केवल कवियित्रयों का परिचय दिया है बल्कि उनकी रचनाओं और ग्रंथों की खोज का विवरण भी दिया है। केवल प्रथमखण्ड हेतु लगभग 50 से अधिक संदर्भ ग्रंथों का अध्ययन किया गया जो आसान काम नहीं हैं।

आलोच्य पुस्तक के दूसरे खण्ड में बुन्देलखण्ड की 1947 से 1996 तक जन्मी सौ कवियित्रियों का परिचय जन्म तिथि के वरिष्ठता क्रम से दिया गया है। परिचय के साथ यथा संभव उनकी रचनाओं की बानगी भी दी है। पुस्तक में भक्ति और रीति काव्य धारा, रहस्यवाद छायावाद तथा छन्द मुक्त काव्य सभी की कवियित्रयाँ हैं। इनकी जानकारी प्राप्त करने हेतु अवस्थी जी ने जहाँ संदर्भ ग्रंथों और पत्रिकाओं का सहारा लिया वहीं डाक द्वारा परिचय प्राप्ति का श्रम साध्य और धैर्यवान कार्य भी किया है जो हर किसी के बस की बात नहीं हैं। सौ से अधिक पृष्ठों के इस द्वितीयखण्ड की अधिकांश कवियित्रियाँ ऐसी हैं जिनके नाम भी अनेक साहित्यकारों तक ने नहीं सुने होंगे। हम लोग उन्हीं कवियित्रियों के बारे में जान पाते हैं जो या तो कवि सम्मेलनों में भाग लेती हैं या पत्र-पत्रिकाओं में जिनकी रचनायें प्रकाशित होती रहती हैं। अब यह पुस्तक हमें बुन्देलखण्ड की 90 प्रतिशत से अधिक जानी-अंजानी कवियित्रियों से परिचित करवा रही है।

पुस्तक के अध्ययन से स्पष्ट है कि अवस्थी जी ने पुस्तक को दो खण्डों में पूरा करने का यत्न किया था, लेकिन पुस्तक छपने की प्रक्रिया के दौरान देर से जिन कवियित्रियों की जानकारी प्राप्त हो गई उन्हें भी शामिल करने हेतु तीसरा खण्ड तैयार किया। इस खण्ड में तीस पृष्ठों में चालीस कवियित्रियों का संक्षिप्त परिचय है। इस प्रकार कुल दो सौ छब्बीस कवियित्रियों के परिचय से सजी यह पुस्तक बुन्देलखण्ड के शोधार्थियों, साहित्यकारों और छात्रों के लिए एक महत्वपूर्ण संदर्भ ग्रंथ का काम करेगी। प्रथम खण्ड की कवियित्रियों में जहाँ पुरानी रियासतों की कवियित्रियाँ अधिक हैं वहीं पूरी पुस्तक में जबलपुर-सागर क्षेत्र से सर्वाधिक कवियित्रियाँ अधिक हैं। इसके बाद छतरपुर, दमोह, टीकमगढ़, झाँसी, दतिया, उरई, महोबा तथा अन्य जिलों की कवियित्रियाँ घटते क्रम में हैं।

साहित्य की इस धरोहर की रचना करके लेखक ने यह सिद्ध कर दिया है कि वे बुन्देलखण्ड की ऐतिहासिक वा साहित्यिक जानकारी के सजीव गजेटियर हैं। इस ग्रंथ के संकलन और संपादन में उनके द्वारा पूर्व में सम्पादित अनेक स्मृति ग्रंथों से प्राप्त अनुभव की कुशलता और दक्षता ने उनके मनोबल को बढ़ाये रखा। इस पुस्तक के प्रकाशन के पूर्व उन्होंने भक्तिकाल के संत कबीर, फिर स्वतंत्रता संग्राम के सेनानियों और बुन्देलखण्ड के शिलालेखों पर पुस्तकें प्रकाशित कर अपनी कलम से लोगों को परिचित कराया है। पत्र-पत्रिकाओं, स्मारिकाओं और पुस्तकों में निरन्तर छपने वाले उनके ऐतिहासिक और सांस्कृतिक आलेखों से उनकी ख्याति बुन्देलखण्ड के अतिरिक्त देश के अन्य क्षेत्रों तक पहुँची है जिससे अनेक शोधार्थी उनसे सहयोग लेने आते हैं।

पुस्तक- बुन्देलखण्ड की कवियित्रियाँ
लेखक- हरि विष्णु अवस्थी
प्रकाशक- सरस्वती साहित्य संस्थान,इलाहाबाद

-राजमहल के पास, टीकमगढ़ (म.प्र.)
मोबा. 9993750271

*****

मत चूको चौहान का यथार्थ

-सन्तोष कुमार पटैरिया

इतिहास का शाब्दिक अर्थ होता है एसा प्रसिद्ध हुआ। इति का अर्थ ऐसा या समाप्त, ह का अर्थ हुआ, इति से आशय है कि जिसके बारे में लिखा जा रहा है वह अब नही है।यद्यपि काव्य को इतिहास नहीं माना जा सकता क्योंकि उसमें कल्पना भी निहित होती है, किन्तु कभी-कभी काव्य के साथ जनश्रुति का योग हो जाने के कारण उसे सत्य माना जाने लगता है। पृथ्वीराज चौहान तृतीय और शहाबुद्दीन गौरी के बीच सन 1192 में तराइन में हुए युद्ध मैं चौहान पराजित हुए जिन्हें बन्दी बना कर गजनी ले जाया गया। वहाँ उन्हे नेत्रहीन किया गया। गजनी में चौहान द्वारा शब्दबेध बाण से मुहम्मद गौरी को मारे जाने के उल्लेख में चंद कवि द्वारा कहा गया पृथ्वीराज रासो का तथाकथित दोहे का बहुत सहयोग है-

चार बाँस चौबीस गज, अंगुल अष्ट प्रमान।
ता ऊपर सुल्तान है, मत चूको चौहान।।

बस,जनमानस मैं स्थापित हो गया कि पृथ्वीराज चौहान तृतीय ने गौरी को मार डाला और चौहान चंद्र परस्पर कटार मार कर मर गए। प्रख्यात नाटककार डा0 रामकुमार वर्मा ने पृथ्वीराज की आंखे भाग 1 और 2 एकांकी नाटक लिखे। सन 1183 मे इन पंक्तियों के लेखक को महोबा और इलाहाबाद मैं डा0 वर्मा का सानिध्य प्राप्त होने पर वास्तविकता की जिज्ञासा प्रगट की तो उत्तर मिला जैसा सुना वैसा लिख दिया। तभी से जिज्ञासा हुई और अध्ययन यात्रा आरम्भ की, परिणाम सन्तोष जनक निकला।

उपर्लिखत दोहा चन्द्रकृत पृथ्वीराज रासो की प्राप्त पाण्डुलिपियों में नहीं है और ना ही दोहा में बारहवी शताब्दी की भाषा है। शब्दवेधी वाण मारने वाले को लक्ष्य की दूरी बताने की आवश्यकता नहीं होती है। वहाँ तो चौहान के समीप चंद्र थे, राजा दशरथ के समीप लक्ष्य की दूरी बताने वाला कोई नही था, उन्होनें शब्दवेधी वाण मारा, परिणामस्वरूप्प श्रवण कुमार का निधन हुआ फ्रि इतनी तो गौरी समझ लेता की उसकी ओर संकेत किया गया है।

नागरी प्रचारणी सभा द्वारा प्रकाशित पृथ्वीराज रासो में 69 समय (अध्याय) है। उसमें 67 वाँ समय बानबेध शीर्षक से है जिसमें उल्लेख है कि चंदवरदाई पृथ्वीराज चौहान को उसके अतीत के पौरूष का स्मरण कराता है ताकि गौरी की हुंकार का संकेत सुनकर चौहान शब्दवेध बाण मार दे। विरूदावली का अंतिम छंद है-

पुरराम मीर पसु सम सतीम। सौ सूर जीत चतुरंग कीन।
सुरतान टेक ढाहे सुपास। अदभुत चरित्त मुक्कै न गास।[1]

चंद पृथ्वीराजरासो की अधूरी पाण्डुलिपि अपने पुत्र जल्हन को सौंपकर गजनी गये थे अत: बात का बर्णन जल्हन द्वारा लिखा गया। अबग वास्तविकता की ओर दृष्टिपात करें चौहान अपनी उदारता के कारण पराजित हुथे और असावधानी भी एक कारण है। सन 1192 में दूसरी बार तराइन के मैदान में पहुँचने पर चौहान के सन्धि प्रस्ताव पर गौरी ने उत्तर में लिखा कि भाई से पूँछकर बताऊँगा। इतने से संतुष्ट चौहान निश्चिन्त हो गये और सैनिक नित्यकर्म में लग गये, तभी गौरी ने हमला कर दिया जिसका सामना शस्त्र हीन सैनिक न कर सके, सरस्वती नदी के तट पर चौहान को बन्दी बनाया गया।[2]यह जनश्रुति बिल्कुल असत्य है कि गौरी ने सत्रह बार आकमण किया। चौहान से सन् 1191 और सन् 1192 दो ही युद्ध हुये हैं।

अस्तु, जब चंद के निवेदन पर गौरी ने चौहान के शब्दवेधी वाण मारने के कौशल के प्रदर्शन के लिये स्वीकृती दे दी।सात घड़ियाल (घण्टे एक सीध में बँधबाये गये थे जिन्हें एक ही वाण से बेधने की बात कही थी ताकि गौरी को मारा जा सके। गौरी ने डमरू बजाकर संकेत किया और वाण मारा गया जो एक घड़ियाल को फोड़कर आगे गया।

एक कहावत है कि प्राण सबको प्यारे होते हैं, गौरी को भी आभाष था कि सम्भव है उसे वाण लग जाये।अत: उसने लोहे की मूर्ती के आगे होकर डमरू बजायी थी या हुँकार भरी थी हुँकार भरते ही अलग हट गया और वाण मूर्ती को लगा जिसका स्वर चंद और चौहान ने भी सुना पूर्व निर्णय के अनुसार दोंनों परस्पर वार करके मर गये।

मुहम्मद गौरी ने सन् 1194 में इटावा के समीप चंदावर मैदान में हुये युद्ध में जयचंद को मारा जिससे कन्नौज और काशी पर उसका अधिकार हो गया क्यों कि गहरवारों(राठौर) का शासन दोनों स्थान पर था गौरी ने बच्चों तक को मरबाया महिलाओं पर घोर अत्याचार किया और चाटुकार इतिहास कार ने उसे जीभ एंठने वाली भारी भरकम उपाधी दी

सुल्तानउल गाजी मुदज्जदुन्या बाउद दीन अबब्दुल मुजफ्फर मोहम्मद बिन साम [3]

गजनी के गौर स्थान का होने के कारण नाम के बाद गौरी लगाया। साम का पुत्र था मुगल बंशावली में बल्द के लिये बिन शब्द लगाया जाता है जो हिन्दी में पुत्र और अंग्रजी मैं ध्व होता है गौरी ने सन् 1195 ई0 में बयाना(पुर्व में तहनकर) और ग्वालियर पर आक्रमण किया। सन् 1202 में बिहार पर और सन् 1203 में उसके प्रतिनिधि कुतुबुददीन ऐवक ने कालिंजर पर आक्रमण करके अधिकार किया था। गौरी ने सन् 1205 में बंगाल पर आक्रमण किया।[4] तारीख ए फरिस्ता में उल्लेख मिलता है खरव्रबर जंगली जाति के मुखिया में गौरी के समक्ष प्रस्तुत होकर इस्लाम धर्म स्वीकार किया था तो उसे पर्वतीय क्षेत्र का शाशक नियुक्त कर दिया था मुखिया (अमीर) ने जाति के बहुत लोगों को मुस्लिम बनबाया किन्तु कुछ कट्टर खरव्रबर जाति के लोगों ने अपनी परम्परा का ही निर्वाह किया और गौरी से घृणा करने लगे।[5]

जब गौरी गजनी लौट रहा था तब झेलम जिले में धमवाक स्थान पर खेमे में रात्रि में रूका जहां 15 मार्च सन् 1206 को खरव्रबर जाति के लोगों ने गौरी को मार डाला।[6] इस प्रकार गौरी् पृथ्वीराज चौहान तृतीय के मरने के बाद चौदह बर्ष जीवित रहा। कासिम के 300 बर्ष बाद महमूद गजनबी आया और गजनबी के 140 बर्षों बाद मुहम्मद गौरी आया।

ज्ञातव्य है कि पृथ्वीराजरासो ने निहित 'वाणवेध समय' जनश्रुति के बाद किसी कवि द्वारा जोड़ा हो सकता हो या गौरी ने स्वयं के मरने का समाचार प्रचारित कर दिया हो क्यों कि सन् 1192 में गजनी जाने के बाद दो बर्षों बाद सन् 1194 में भारत आया आश्चर्य की बात यह है कि एक दोहा के समक्ष इतिहास गौंण हो गया क्यो कि मुहम्मद गौरी विदेश का था अत: उसके सन् 1192 के मरने के भ्रामक समाचार पर कोई प्रतिकार नहीं किया गया

1 पृथ्वीरारासो- सम्पादक मोहन लाल विष्णुलाल पण्डया व श्याम सुन्दरदास बीए पान भेद समय - छंद 536
2 हिन्दु इतिहास - हारो की दास्तान- डा0 सुरेन्द्र कुमार शर्मा अज्ञात पृष्ठ 26
3 भारत में मुस्लिम सुल्तान-पुरूषोत्तम नागेश ओक पृष्ठ 94
4 भारत का सम्पूर्ण इतिहास - आविद रिजबी पृष्ठ 139
5 तारीख ए फरिश्ता- अनुवादक नरेन्द्र बहादुर श्रीवास्तव भाग 2 पृष्ठ 131
6 OXFORD History Of India - B.Smith page 222 1920 A.D.

-रत्नम् ज्वैलर्स,सर्राफा बाजार महोबा(उ0प्र0)

*****

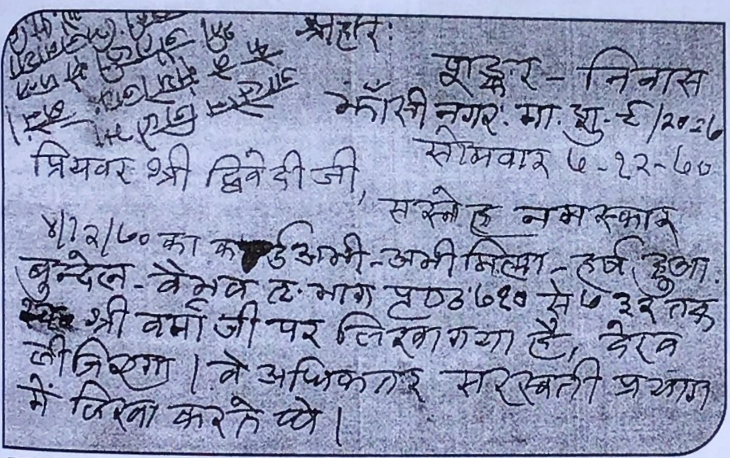
गौरीशंकर द्विवेदी के पत्र

-रामशंकर द्विवेदी

पं. गौरीशंकर द्विवेदी 'शंकर' (जन्म सन् 1896 लालबेहट ललितपुर संभावित मृत्यु 1980 ई. के आसपास) बहुअधीन, बहुश्रुत साहित्यकार थे। इन्हें राष्ट्रभाषा हिन्दी से बेहद प्रेम था। वे आजीवन बिना किसी स्वार्थ के साहित्य की सेवा करते रहे। वे पोस्ट ऑफिस में काम करते-करते पोस्टर के पद तक पहुँचे थे। जहाँ-जहाँ सेवा में रहे वहाँ साहित्यिक वातावरण बनाना, साहित्यिक संस्थाओं की स्थापना कर वहाँ के स्थानीय लोगों को साहित्य सेवा के लिए प्रेरित करना इनका मुख्य काम था। पं बनारसीदास चतुर्वेदी से लेकर वासुदेवशरण अग्रवाल और वियोगी हरि तथा डॉ. नगेन्द्र आदि से इनकी गहरी आत्मीयता थी। टीकमगढ़ में वीरेन्द्र केशव साहित्य परिषद् तथा कबीन्द्र केशव शोध संस्थान की स्थापना इनका प्राय: महत्वपूर्ण काम था। सुधा, माधुरी, सरस्वती, धर्मयुग, साप्ताहिक हिन्दुस्तान, कादम्बरी आदि, विश्वभारती (शान्ति निकेतन) आदि पत्रिकाओं में वे बराबर लिखा करते थे। इनके शोध लेखों का कोई संग्रह नहीं निकला। इनकी कीर्ति का कारण बुन्देलखण्ड के साहित्यिक इतिहास का 10 खण्डों में लेखन है जिसके बुन्देल वैभव के नाम से सिर्फ तीन खण्ड छपे हैं। शेष बिना छपे रह गये। इन्होनें सनाढ्य वंश में हुए कवियों का वृत्त खण्डों में लिखा है जिसमें सुकति सरोज के नाम से सिर्फ 2 खण्ड छप पाए हैं। बुन्देली लोकगीतों पर भी इन्होंने काम किया है। बुन्देली बसंत के पाठकों के लिए यहाँ उनके कुछ पत्र प्रस्तुत किया जा रहे हैं। ये पत्र उनके व्यक्तित्व के कई पहलुओं को व्यक्त करते है। जैसे साहित्य के बारे में वे क्या सोचते थे। उनकी रूचि किस प्रकार के साहित्य लेखन में थी, उनका स्वभाव कैसा था, वे दूसरों की मंगल कामना और स्वास्थ्य के नियमों के पालन की ओर उनका ध्यान सदा आकर्षित किया करते थे। पत्रों से उनकी भाषा शैली और उनके वैष्णवी स्वभाव का भी पता चलता है। पत्र किसी भी साहित्य की धरोहर होते हैं। हो सकता है कुछ अन्य साहित्यकारों के पास भी द्विवेदी जी के पत्र सुरक्षित हों। इन पत्रों को पढ़कर वे भी शायद उन्हें छपाने को प्रेरित हों।

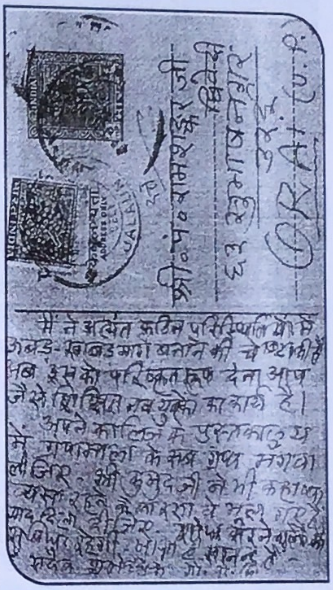
-रामनगर उरई जिला जालौन उ.प्र.

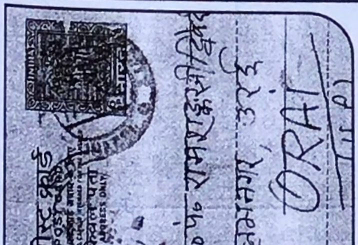
*****

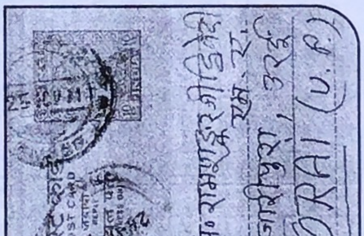


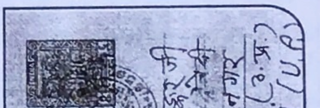
श्री हरिः
शंकर-निवास
झाँसी नगर. मा. शु. ६/२०१६
सोमवार ५-१२-६०

प्रियवर श्री द्विवेदी जी,
सस्नेह नमस्कार
४/१२/६० का कार्ड अभी-अभी मिला - हर्ष हुआ।
बुन्देल-वैभव द्वि. भाग पृष्ठ ७१० से ७३२ तक श्री वर्मा जी पर लिखा गया है, देख लीजिएगा। वे अधिकतर सरस्वती प्रयाग में लिखा करते थे।









श्रीहरिः

शङ्कर-निवास
झाँसी: फा.शु-११/२०२३
बुद्धवार २२/३/६७.

प्रियवर श्री द्विवेदी जी,
सस्नेह नमस्कार,

— आप का २१/३/६७ का कृपा-कार्ड प्राप्त हुआ, प्रसन्नता हुई।
— स्व० श्री रसिकेन्द्र जी पर 'जागरण' के इसी रविवार अङ्क में पढ़िएगा – स्व० मुंशी अजमेरी, काली कवि, बेनीमाधव तिवारी, ब्रजमोहन वर्मा आदि पर इसलिए ही प्रकाश डाल रहा हूँ, कि वर्तमान-पीढ़ी उन की स्मृति-रक्षा के लिए जागरूक होकर अपना कर्तव्य-पालन करे। —
— 'बुन्देल-वैभव' में बुन्देलखण्ड के प्रायः २००० कवियों को १० भागों में है – अभी तीन भाग ही छपे हैं...

श्रीहरिः

शङ्कर-निवास
झाँसी नगर, पौष कृ. २/२०१७
सोमवार १४-१२-६०.

प्रियवर श्री द्विवेदी जी
सस्नेह नमस्कार.

९/१२/६० का विस्तृत-पत्र प्राप्त हुआ, प्रसन्नता हुई। मेरी आंतरिक-अभिलाषा है कि आपका शोध-प्रबंध सब प्रकार पूर्ण होकर आप को सफलता प्रदान करे। आप सर्वथा डाक्टरेट प्राप्त करने के अधिकारी हैं।
चिरगाँव के गुप्त-संस्थान में आपके प्रस्ताव को समर्थन मिला होगा – मिलना चाहिए। आपने अंत पद के प्रति जैसी लगन और निष्ठा आप में और प्रियवर कुमुद में है उस से मुझे आशा बंधती है मेरे स्वप्न साकार होकर रहेंगे –

झाँसी नगर: पौष कृ. ५/२०१७
शुक्रवार १८-१२-६०

प्रियवर श्री द्विवेदी जी
सस्नेह नमस्कार
२८/१२/६० का कार्ड प्राप्त हुआ, अति प्रसन्नता हुई।
आप जिस लगन से कार्य कर रहे हैं उस के अनुसार आप को प्रस्तुत शोध-प्रबंध पर पी-एच० डी० तो मिल ही जाएगी – आगे चल कर आप डी लिट् भी प्राप्त कर सकते हैं बुन्देलखण्ड का विषय ले कर।
बुन्देलखण्ड के कवियों और साहित्यकारों पर बढ़िया शोध-प्रबंध प्रस्तुत किया जा सकता है।
'बुन्देल-वैभव' के सम्पादन में मुझे प्रायः १५ वर्ष लगे। प्रायः बीस हजार हस्तलिखित ग्रंथों का अनुशीलन करना पड़ा। सम्पादनादि में प्रकाशन में प्रायः बीस हजार रुपए लगे फिर भी भाग अभी अप्रकाशित ही पड़े हैं। प्रायः दो हजार कवियों का विवरण संग्रहीत है।
प्रथम और द्वितीय भाग समाप्त हो गए हैं – आप को द्वितीय भाग निजी पुस्तकालय से भेज रहा हूँ – आप का काम चल जाएगा। प्रथम भाग की केवल एक प्रति ही रह गई है। द्वितीय संस्करण की व्यवस्था की जा रही है। सहयोग के अभाव में कितनी ही कठिनाईयाँ पार करना पड़ती हैं।
बुन्देलखण्ड के साहित्य की ऐसी विवरणिका आप तैयार करना...

...मुझ से तैयार की थी — "भारतीय-लोक-साहित्य: प्रकाशित लेखों की सूची" "हिन्दी-अनुशीलन" के दो अङ्कों में यह सूची सन् १९६४ में प्रकाशित हुई थी डा० गुप्त को आप मेरा उल्लेख करते हुए पत्र लिखिए कि प्रतिमुद्रण वर्ष १६ अङ्क १-२ और वर्ष अङ्क ३-४ के आप भेज सकें तो उत्तम हो।
मुझे विश्वास है प्रतिमुद्रण की अतिरिक्त प्रतियाँ उनके पास सुरक्षित होंगी।
उन का पता है: —
डा० श्री शालिग्राम गुप्त
एम० ए० डी-फिल
हिन्दी विभाग, विश्व भारती
शान्ति-निकेतन (बङ्गाल)
प्रथम आप अपने शोध-प्रबंध को भेज कर पी० एच० डी० प्राप्त कर लीजिए तब इस ओर कार्य कीजिएगा।
आप की इच्छानुसार निम्नलिखित पुस्तकें रजिस्टर्ड पार्सल से भेजता हूँ: —
बुन्देल-वैभव द्वितीय तृतीय भाग
सुकवि-सरोज प्रथम द्वितीय भाग
ईसुरी-प्रकाश (द्वितीय संस्करण)
कामरूप-कथा-महाकाव्य
लेखों के कुछ प्रतिमुद्रण भी भेजे जा रहे हैं।
आशा है आप सस्वास्थ्य और सानन्द हैं
सदैव शुभाकांक्षी
गौ० शं० द्विवेदी

पोस्ट कार्ड
POST CARD
केवल पता
ADDRESS ONLY
INDIA

श्री पं० रामशङ्कर जी द्विवेदी
एम० ए०
हजारीपुरा
उरई
ORAI (U.P.)

श्रीहरिः

शङ्कर-निवास
झाँसी नगर: पौष कृ. ७/२०१८
गुरुवार ८-१२-६१.

प्रियवर श्री द्विवेदी जी,
सस्नेह शुभाशीष
५/१२/६१ का कार्ड मिला – प्रसन्नता हुई। अपने स्वास्थ्य का भरपूर ध्यान रखते हुए पहिले आप अपना शोध-कार्य पूरा कीजिए पश्चात अन्य विषयों के लिए सोचिए।
मैं ने आप के अनुरोधानुसार श्री कृष्णबलदेव वर्मा और श्री ब्रजमोहन वर्मा पर लेख लिखे हैं जो जागरण में निकल गए हैं।

बीसवें बुन्देली उत्सव 2016 का प्रगति प्रतिवेदन

-कु. नेहा सिंह बुन्देला

बुंदेलखण्ड की बुंदेली लोक कलाओं को सहेजने तथा संस्कृति के पोषक छ: दिवसीय ''बुंदेली-उत्सव 2016'' का 17 फरवरी बुधवार दोपहर 12 बजे पर्यटन ग्राम बसारी मे भव्य शुभारंभ हुआ। मुख्य अतिथि के रूप मे राजनगर विधायक माननीय श्री विक्रम सिंह ''नातीराजा'' का आगमन हुआ। मुख्य अतिथि के द्वारा महाराजा छत्रसाल की प्रतिमा के समछ दीप प्रज्जवलन एवं पुष्पहार भेंट करने के बाद रंगबिरंगे गुब्बारो एवं कबूतरों को आसमान में उड़ाकर कार्यकम का भव्य शुभारंभ किया गया। इसी बीच डी.पी.एस स्कूल छतरपुर एवं आर.डी.एस. बमीठा के छात्र-छात्राओं के द्वारा सांस्कृतिक कार्यकम प्रस्तुत किये गये।

कार्यक्रम के मुख्य अतिथि माननीय श्री विक्रम सिंह ''नातीराजा'' ने अपने उद्‌बोधन मे कहा कि '' बुन्देली लोक कलाओ एवं संस्कृति को सहेजने मे बुन्देली उत्सव का बहुत बडा योगदान है '' उन्होनें बुन्देली विकास संस्थान के संरक्षक शंकर प्रताप सिंह ''मुन्ना राजा'' एवं क्षेत्रवासियों को आयोजन कराने के लिये धन्यवाद का पात्र माना। इसी बीच प्रतिवर्ष प्रकाषित होने वाली पत्रिका ''बुन्देली वसंत-2016'' का विमोचन मुख्य अतिथि द्वारा किया गया। परम्परागत तरीके से संरक्षक महोदय शंकर प्रताप सिंह बुंदेला ''मुन्ना राजा'' द्वारा मुख्य अतिथि एवं अन्य अतिथियों का माल्यार्पण कर स्वागत किया साथ ही अपने उद्‌बोधन मे सम्मिलित मेहमानो का हार्दिक आभार प्रकट करते हुऐ क्षेत्रीय नागरिको की भूरी-भूरी प्रशंसा की। उसके बाद स्वागत करने वालो मे आदित्य शंकर बुंदेला अध्यक्ष बुंदेली विकास संस्थान लखन दुवें, राम बाबू ताम्रकार, डॉ0 एच.एम. आर त्रिपाठी, अतीन्द्र मणि त्रिपाठी सहित गणमान्य नागरिक पत्रकार बंधु तथा आयोजन समिति के पदाधिकारी शामिल रहे।

17/फरवरी/ उत्सव के प्रथम दिन कार्यकमों की श्रंख्ला मे रंगोली प्रतियोगिता बुंदेली आधारित बच्चों की प्रतियोगिताये कुश्ती,कबड्डी, बॉलीवाल, चौपड एवं गिल्ली डंडा एवं प्रमुख रूप से पुरूष एवं महिला पहलवान दंगल प्रतियोगिताऐ भी प्रस्तुत की गई। इस अवसर पर संस्थान द्वारा सम्मानित होने वाले महानुभावो की श्रंख्ला मे आज श्री रामकिशोर अग्रवाल एवं श्री अब्दुल रशीद खान को ''डा0 हरिराम मिश्र सम्मान-2016 से सम्मानित किया गया सम्मान मे सम्मान पत्र शाल, श्रीफ्ल एवं उपहार स्वरूप 3100/- रूपयें की राषि भेट की गई।

18 / फरवरी / उत्सव के दूसरे दिन चौपड, कबड्डी, बालीवाल, गिल्लीडंडा जारी रही और साथ बुंदेली व्यंजन प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। कबड्डी एवं बालीवाल प्रतियोगिता में मुख्य अतिथि के रूप मे अजय पाल सिंह ''राव साहब'' उपस्थित रहे। कार्यक्रम की अध्यक्षता देवेन्द्र प्रताप सिंह ''दिल्लू राजा'' ने की। खेल कूद की श्रृंखला मे कबडडी और बॉलीवाल आर्कषण का केन्द्र रही जिससे खचाखच भरा स्टेडियम समय-समय पर तालियो की गडगडाहट से गूँजता रहा। द्वितीय आर्कषण का केन्द्र रही चौपड की प्रतियोगिता मे विजेता श्री राजेन्द्र प्रसाद अग्रवाल, पंकज खरे (देरी रोड, छतरपुर) एवं उपविजेता श्री गोविन्द सिंह, रामदास पाल दौरिया रहे इन्हे कमश: 1100 रूपये, 500 रूपये करी सम्मान राषि प्रदान की गई।

वही दूसरी ओर बुंदेली व्यंजन प्रतियोगिता मे बुंदेलखण्ड मे प्रचलित तमाम व्यंजनो के साथ 150 डुबरी, विरचुन, मालपुआ, गुलगुला, भटागकड़िया जैसे व्यंजनो को शामिल किया गया जो पाश्चात्य व्यंजनो के अतयधिक प्रचलन के कारण कम देखने को मिलते है। इसमे कु. सोनिया, कु. प्रीति गुप्ता प्रथम, कु. जीविका अग्रवाल द्वितीय, किरन दीपा अग्रवाल ने तृतीय स्थान प्राप्त किया क्रमष: 2000/- रूपये साथ बजाज मिक्सर ग्राइनडर, 2000/- रूपये गैस चूल्हा आदि प्रादन किया गया। अश्वनृत्य प्रतियोगिता मे रविन्द्र पाल गंज प्रथम, मंगल यादव मवासी द्वितीय, एवं बिहारी पाल गंज ने तृतीय स्थान प्राप्त करते हुऐ क्रमश: 3100 रूपये, 2100 रूपये एवं 1100 रूपये की राशि प्राप्त की।

19/फरवरी/ उत्सव के तीसरे दिन रस्साकशी एवं बॉलीवॉल, कबडडी प्रतियोगिताओं के संमीफाइनल, फाइनल मुकाबले आयोजित हुये जिसमे मुख्य अतिथि के रूप मे जिला पंचायत अध्यक्ष छतरपुर राजेश प्रजापति रहे। जिन्होने अपने उद्‌बोधन मे बुंदेली उत्सव के आयोजक शंकर प्रताप सिंह बुंदेला ''मुन्ना राजा'' की भूरि-भूरि प्रसंशा करते हुऐ कहा कि 'बुंदेली उत्सव' न केवल बुंदेलखण्ड बल्कि पूरे मध्यप्रदेश के गौरवमयी आयेजनक के रूप मे अपना स्थान अर्जित किया है।

कबड्डी प्रतियोगिताओ का फाइनल मुकाबला सिंहरावन एवं बसारी के बीच खेला गया जिसमे सिंहरावन की टीम विजय घोषित हुई जिसे आयोजन समिति द्वारा 11001/- रूपये एवं शील्ड एवं उपविजेता टीम को 7001/- रूपये देकर पुरस्कृत किया गया। इसी प्रकार बॉलीवॉल का फाइनल मुकाबला लखरोनी एवं पडवार के बीच हुआ जिसमे लखरोनी की टीम विजयी हुई जिसे 11001/- रूपये तथा उपविजेता टीम को 7001/- रूपये शील्ड पुरस्कार के रूप मे प्रदान किया गया। साथ ही सभी निर्णायकों को स्मृति चिन्ह देकर सम्मानित किया गया। कार्यक्रम की आगे की श्रृंखला मे रस्साकषी प्रतियोगिता मे पुरूषो मे छत्रसाल चौराहा बजरंग मण्डल बसारी ने प्रथम तथा हरसागर धाम बसारी ने द्वितीय स्थान प्राप्त किया वही महिलाओं में गोमती हरिजन प्रथम तथा रूकमन अहिरवार द्वितीय स्थान पर रही। जिन्होंने कमश: 1101/- रूपये तथा 7001/- रूपये पुरस्कार स्वरूप प्रदान किये गये।

20/फरवरी/ उत्सव मे चौथे दिन रात्रिकालीन कार्यक्रमो की श्रृंखला शुरू हुई जिसमे मुख्य अतिथि के रूप मे विधायक नागौद माननीय श्री यादवेन्द्र सिंह उपस्थित रहे। माननीय मुख्य अतिथि जी ने अपने उद्‌बोधन मे बुंदेलखण्ड की आन बान और शान पर गर्व व्यक्त किया तथा कहा कि बुंदेलखण्ड का साहित्य, वीरता तथा कला का बेजोड संगम हैं। साथ ही बुंदेली संस्कृति के संवर्धन और संरक्षण के लिये शंकर प्रताप सिंह ''मुन्ना राजा'' बधाई के पात्र है। कार्यक्रम की अध्यक्षता श्री बी.एस.राठौर (प्राचार्य केन्द्रीय विधालय छतरपुर) द्वारा की गई। कार्यकम का संचालन शिवेन्द्र शुक्ला एवं प्रोफेसर बहादुर सिंह परमार द्वारा किया गया।

सांस्कृतिक प्रस्तुतियो मे कछियाई, सैर, कहरवा, कीर्तन, ख्याल, बनरे, अलगोजा, गारी, दिवारी, लमटेरा एवं अहिरवारी बैठक आदि हुई। कछयाई की प्रस्तुति भागचंद कुशवाहा (बसारी) एवं राजा रंक कुशवाहा महोबा, दिवारी - महेश कुशवाहा (बसारी) एवं राजेन्द्र

सिंह (खजुराहो), बधाई गीत - सतीश तिवारी (खजुराहो), सपना रंगमंच (बसारी) एवं दीपू चंदेल सागर ने बुंदेली के विभिन्न रंगो की अदभुद छटा बिखेरी। इसी कम मे बुंदेली कीर्तन - बेबी प्रजापति (बमीठा), सपना रंगमंच (बसारी) एवं बद्री प्रसाद खरे (छतरपुर), कहरवा - करन सिंह अहिरवार, बनरे कंदू रैकवार (बसारी) आदि ने अपनी विशेष प्रस्तुतियाँ दी।

दक्षिण मध्य क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र संस्कृति मंत्रालय भारत सरकार द्वारा भेजे गये लोकदलों ने भी अपनी विशेष प्रस्तुतियाँ दी।

श्री वीरेन्द्र शर्मा ''कौशिक'' को ''राव बहादुर सिंह बुंदेला सम्मान-2016'' एवं श्री हरगोविन्द विश्व को ''डॉ0 नर्मदा प्रसाद गुप्त स्मृति सम्मान 2016'' से सम्मानित किया गया।

इस मनोरम बेला मे विशिष्ट अतिथि के रूप में दीवान त्रिलोक सिंह, आदित्य शंकर बुंदेला, सिद्धार्थ शंकर बुंदेला, लखन दुवें, स्वरूप चंद्र जैन, प्रतिभा सिंह, अरविन्द महलोनिया, फैयाज अली, शहजाद अली, अतीन्द्र मणि त्रिपाटी, बॉबी मोदी, दरवारी कुषवाहा, रामरूप द्विवेदी, पंकज शुक्ला सहित कई गणमान्य और अपार जन समूह उपस्थित रहा।

21/फरवरी/ उत्सव के पाँचवे दिन रात्रिकालीन कार्यकमों मे दलदल घोडी, बहुरूपिया, गोटे, बधाई गीत, कार्तिक गीत, आल्हा, बिलवारी, कांडरा, रावला, सोहरे हास्य आधारित बुंदेली एकांकी, ढिमरयाई, अलगोजा की मनोरम प्रस्तुतियाँ हुई जिनमें मुख्य अतिथि के रूप मे माननीय श्री कुणाल चौधरी (प्रदेश युवा काँग्रेस अध्यक्ष) एवं माननीय इंजीनियर अभय दरे (महापौर सागर) पधारे। कार्यक्रम की अध्यक्षता श्री बी.एल.तिवारी (प्राचार्य महाविधालय झाँसी) ने की।

दलदल घोडी की प्रस्तुति बजरंग मंडल (बसारी), गोटे की प्रस्तुति मुलचंद पाल (बंछोरा) एवं अखलेश पाल (पीरा), कार्तिक गीत बेबी प्रजापति (बमीठा) एवं गफूर खाँ (पवई अमानगंज) आल्हा प्रस्तुति रामअवतार (महोबा), कांडरा मे हरिचंद रजक (टीकमगढ), ढिमरयाई मे चुन्नी लाल रैकवार (कर्रापुर) एवं देवेन्द्र कुशवाहा (बसारी) आदि के द्वारा दी गई। वही निर्णायक मण्डल मे डॉ0 एच.सी. शर्मा, श्री सुरेन्द्र शर्मा ''शिरीष'' एवं वद्री प्रसाद खरे ''निरंकार'' का निर्णय सराहनीय रहा। निश्चित पुरस्कार राषियाँ उपहार स्वरूप प्रस्तुतिकर्ताओ को उत्सव के पदाधिकारियों द्वारा भेंट की गई। पन्नालाल ''अमर'' को ''राव बहादुर सिंह बंदेला-2016'' तथा श्रवण सिंह सेंगर को ''दीवान प्रतिपाल सिंह बुंदेला'' सम्मान-2016 से सम्मानित किया गया।

22/ फरवरी/ उत्सव के छठवे और अंतिम दिन दोपहर के समय बैलगाडी दौड़ प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। जिसमे मुख्य अतिथि के रूप मे आलोक चतुर्वेदी ''पज्जन भैया'' पधारे। जिन्होने अपने उद्‌बोधन मे ''बुंदेली उत्सव की प्रशंसा की साथ ही बुंदेली संस्कृति को संजोये रखने के लिये माननीय शंकर प्रताप सिंह बुंदेला ''मुन्ना राजा'' को तहेदिल से धन्यवाद देते हुऐ कहा कि आने वाले समय मे ऐसे विशिष्ट कार्यो मे सराहनीय योगदान करने के लिये श्री मुन्ना राजा का नाम इतिहास के पन्नो मे लिखा जायेगा

बैलगाडी दौड प्रतियोगिता मे 14 प्रतिभागियो ने भाग लिया जिसमे कोमल यादव (बनियन) ने प्रथम स्थान एवं जीतेन्द्र कारपेन्टर (बनियन) ने द्वितीय स्थान प्राप्त किया।

रात्रिकालीन कार्यक्रमो मे मुख्य अतिथि के रूप मे काँग्रेस के वरिष्ट नेता एवं पूर्व मंत्री माननीय श्री यादवेन्द्र सिंह ''जग्गू राजा'' टीकमगढ उपस्थित रहे। जबकि कार्यक्रम की अध्यक्षता महाराज नखतरा श्री वीरेन्द्र सिंह जू देव ने कि थी। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि एवं अध्यक्ष जी का बुंदेली विकास संस्थान के अध्यक्ष आदित्य शंकर बुंदेला तथा सिद्वार्थ शंकर बुन्देला ने मल्यापर्ण करके स्वागत किया।

बुंदेली के मंच सं आज श्री श्याम बहादुर श्रीवास्तव श्याम को ''राव बहादुर सिंह बुन्देली सम्मान-2016'' एवं डा0 एम.एल. पिपरसानिया को ''गौरिहार महाराज प्रताप सिंह स्मृति सम्मान-2016'' प्रदान किया गया। इसके पश्चात फाग, एवं राई की विशेष प्रस्तुतियो ने दर्शको का मनोरंजन किया जिससे समय-समय पर बसारी स्टेडियम गुँजायमान होता रहा इसी के साथ ''बुंदेली उत्सव'' -2016 का समापन हुआ।

-महल परिसर, छतरपुर (म.प्र.)

*****

BUNDELI VIKAS SANSTHAN BASARI, CHHATARPUR (M.P.)

INCOME & EXPENDITURE FOR THE YEAR 2014-2015

EXPENDITURE	Rs.	Rs. (R)	INCOME	Rs. (R)
Bundeli Utsav Expenses		1.352.399.00	From Jan Sahyog	2,747,511.00
Medical Camp. Exp.	7.276.00		Membership Fees	4,680.00
Hasya Kabi Sameelan	40.034.00		Smarika Advertisement	345,900.00
Plantation Expenses	22.935.00		Interest From Bank	1,641.00
Agriculture Trainning & Seed Di	18.924.00	89.169.00	Grant NTPC Chhatarpur	343,000.00
Other Expenses			Fortune stone Ltd. Chhatarpur	1,00,000.00
Salary	166.937.00		Delhi Public School, Chhatarpur	50,000.00
Honararium	139.755.00			
Audit Fees & Income Tax	5.000.00			
Misc Exp.	23.962.00			
Stationary & Printing	28.869.00			
Teaching learning Exp.	40.095.00			
Ismarika Printing Exp.	193.000.00			
Postage	4.634.00			
Sangosthi (Meeting)	38.964.00	641.216.00		
Add Excess of Income		1.509.948.00		
TOTAL Rs.:		**3,592,732.00**	**TOTAL Rs.:**	**3,592,732.00**

BUNDELI VIKAS SANSTHAN BASARI,CHHATARPUR (M.P.)

RECEIPTS & PAYMENTS A/C FOR THE YEAR 2014-2015

RECEIPTS	Rs.	Rs. (R)	PAYMENTS	Rs	Rs. (R)
OPENING BALANCE			**BUNDELI UTSAV EXPENSES**		1.352.399.00
Cooperative Bank (46)	5,594.00		Medical Camp. Exp.	7.276.00	
Canara Bank (S/A) 1608	1,275.00	806,869.00	Hasya Kabi Sameelan	40.034.00	
F.D.R. Canara Bank	800,000.00		Plantation Expenses	22.924.00	
			Agriculture Traning & Seed Dis.	18.924.00	89.169.00
From Jan Sahyog		2,747,511.00	**OTHER EXPENSES**		
			Salary	166.937.00	
Membership Fee		4,680.00	Honararium	139.755.00	
			Audit Fees & Income Tax	5.000.00	
Smarika Advertisement		345,900.00	Misc Exp.	23.962.00	
			Stationary & Printing	28.869.00	
Interest From Bank		1,641.00	Teaching learning Exp.	40.095.00	
			Ismarika Printing Exp.	193.000.00	
Grant NTPC Chhatarpur		3,43,000.00	Postage	4.634.00	
			Sangosthi (Meeting)	38.964.00	641.216.00
Fortune Stone Ltd. Chhatarpur		1,00,000.00	**Construction**		
			Building Construction	270.000.00	
Delhi Public School, Chhatarpur		50,000.00	Virasat Dwar Construction	220.000.00	490.000.00
			Loan Return to Swami Pravanand Homeo College		500.000.00
			CLOSING BALANCES		
			Co-operative Bank (46)	5,594.00	
			Canara Bank (S/A) 1608	521,223.00	
			F.D.R. Canara Bank	800,000.00	1.326.817.00
TOTAL Rs.:		**4,399,601.00**	**Total Rs.**		**4,399,601.00**

Certified that the above statement is correct.

R.V. Agrawal
Chartered Accountants

President **Secretary** **Sagar : 25-07-2015**

BUNDELI VIKAS SANSTHAN BASARI, CHHATARPUR (M.P.)

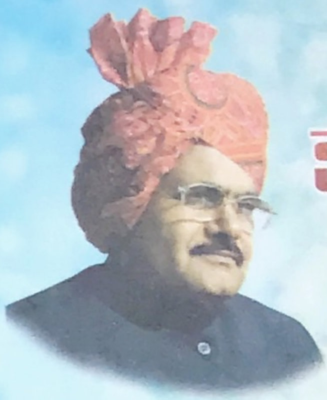
BALANCE SHEET AS AT 31-3-2015

FUNDS	Rs.	Rs. (R)	ASSETS	Rs.	Rs. (R)
Society Fund			**Fixed Assets**		308,646.00
As per L.BS	3,808,162.00		Land (As per last B.S.)		
Add The year	1,509,948.00	5,318.110.00			
Loans & Deposit			**Building Construction**	2,060,600.00	
Nehru Yuva Club Basari			**Add this year**	270,000.00	2,330,600.00
			Virasat Dwar Construction	1,246,000.00	
		132,216.00	**Add This Year**	220,000.00	
			Furniture (As per last B.S.)		1,466.000.00
					9,597.00
			Dead Stock (W.D.V)		8,666.00
			CLOSING BALANCES		
			Cooperative Bank (46)	5,594.00	
			Canara Bank (S/A) 1608	521,223.00	
			F.D.R. Canara Bank	800,000.00	1,326,817.00
TOTAL Rs.:		**5,450,326.00**	**Total Rs.**		**5,450,326.00**

We certify that receipts & Utilization of funds & Closing Balance (as above) are correct.

AUDIT REPORT
W/e have checked (enclosed) receipts and utilization a/c and Balance Sheet as on 31-03-2016 if any we certify them as correct.

President **Secretary** **Sagar : 25-06-2016** *R.V. Agrawal*
Chartered Accountants



बुन्देली लोक संस्कृति के संरक्षण व संवर्धन हेतु आयोजित

इक्कीसवें "बुन्देली उत्सव - 2017"

में पर्यटक ग्राम बसारी (बुदेलखण्ड) में पधारे
अतिथियों एवं कलाकारों का हम हार्दिक अभिनंदन करते हैं।



योजनायें :

1. पात्र हितग्राहियों का वृद्धावस्था पेंशन का लाभ दिलाना।
2. रोजगार गारंटी योजना के तहत हर हाथ को 100 दिन के काम की गारंटी
3. समग्र-स्वच्छता अभियान के तहत शौचालयों का निर्माण करवाना।
4. भू-जल संवर्धन के लिए वृक्षारोपण करवाना।
5. कपिल धारा योजना के तहत कूपों का निर्माण करवाना।
6. शासन की मंशानुरूप गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वालों को योजनाओं का लाभ दिलाना।



अपील:

1. जन्म-मृत्यु का पंजीयन अवश्य कराएं।
2. नगर को साफ स्वच्छ और हरा बनाएं रखने में मदद करें।
3. पानी अमूल्य है कृपया इसे बर्वाद न करें।
4. बच्चों को नियमित स्कूल भेजें।

जे.एस. तिवारी
सीईओ

समस्त जनपद
सदस्यगण

श्रीमती ऊषा अहिर
अध्यक्ष

सौजन्य से -

जनपद पंचायत, राजनगर

जिला-छतरपुर (म.प्र.)